उपन्यास और ऐतिहासिक रोमांस

(प्रेमचन्द पूर्व)

डॉ. गुरदीपसिंह खुल्लर

ऐतिहासिक उपन्यास
और
ऐतिहासिक रोमांस

[प्रेमचन्द पूर्व]

[पंजाब यूनिवर्सिटी की पी-एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध]

डॉ० गुरदीपसिंह खुल्लर

रिसर्च पब्लिकेशन्स इन सोशल साइंसेज

अन्य महत्त्वपूर्ण साहित्य

1	डॉ मोतीलाल गुप्त	आधुनिक भाषा-विज्ञान	25/-
2	डॉ छविनाथ त्रिपाठी	मध्यकालीन कवियों के काव्य सिद्धान्त	30/-
3	डॉ एम पी भारद्वाज	मध्यकालीन रोमांस	30/-
4	डॉ वी एन शेट्टी	सूरसागर में प्रतीक योजना	25/-
5	डा एम के गोस्वामी	नागपुरी शिष्ट साहित्य	25/-
6	डा रामगोपाल शर्मा	स्वाधीनता कालीन हिन्दी साहित्य के जीवन-मूल्य	15/-
7	डॉ हरिचरण शर्मा	नयी कविता नये धरातल	30/-
8	प्रो शम्भूसिंह मनोहर	मीरां पदावली	30/-
9	डॉ नेमीचन्द जैन	बिहारी सतसई	35/-
10	प्रो कृष्णा एव शर्मा	घनानन्द कवित्त	25/-
11	प्रो नगेन्द्र	प्रेमचन्द और गबन	25/-
12	प्रो राजकुमार पाण्डेय	साहित्यिक निबन्ध	30/-
13	डॉ नेमीचन्द जैन	प्रसाद और चन्द्रगुप्त	15/-
14	डॉ नेमीचन्द जैन	वेलि क्रिसन रुकमणी-री	30/-
15	प्रो राजकुमार शर्मा	गुप्त और उनका साकेत	40/-
16	प्रो राजकुमार शर्मा	प्रसाद और कामायनी	15/-
17	प्रो राजकुमार शर्मा	निराला और तुलसीदास	15/-
18	प्रो राजकुमार शर्मा	पन्त और उनका आधुनिक कवि	20/-
19	प्रो राजकुमार शर्मा	सूरदास और भ्रमरगीत	40/-
20	प्रो राजकुमार शर्मा	जायसी और पद्मावत	40/-
21	डॉ राजकुमार पाण्डेय	आधुनिक काव्य कलाधर	2/-
22	श्री ताराप्रकाश जोशी	समाधि के प्रश्न	3/-
23	प्रो ओमप्रकाश शर्मा	आलोचना के सिद्धान्त	10/-
24	प्रो ओमप्रकाश शर्मा	हिन्दी भाषा तथा देवनागरी का इतिहास	5/50
25	प्रो सत्येन्द्र	बालकाण्ड	5/-
26	डॉ उदयवीर शर्मा	पालि दर्शन	20/-
27	प्रो. राजकुमार शर्मा	उपाध्याय और प्रियप्रवास	25/-
28	किंकर	श्रीमर्तृहरिशतक:	5/-

ATIHASIK UPNYAS AUR ATIHASIK ROMANCE

PRINTED IN INDIA

Published by P. Jain for Research Publications in Social Sciences, Daryaganj, Delhi—6.
Printed at Hema Printers, Jaipur

ISBN 81 - 85789

स्वर्गीय श्री कुन्दनलाल जी खुल्लर

को

श्रद्धा सहित समर्पित

प्राक्कथन

समाज के इतिहासकार और कला (उपन्यास/कथा) मे इतिहासकार की सामग्री और विधाएँ काफी भिन्न हैं लेकिन ऐतिहासिक चेतना और ऐतिहासिक शक्ति की पुनरचना दोनो को ही करनी पडती है। इसलिए दोनो को ही प्रतिबद्धता के घेरो तथा आदर्शों के प्रभामडलो का आमना-सामना करना पडता है। इतिहासकार को प्रामाणिकता और वस्तुनिष्ठता की बुनियादी जमीन नही छोडनी पडती लेकिन कलाभिमुख इतिहासकार को विश्वसनीयता और आतरिकता की अवचेतन दूरियो के पीछे चलना होता है।

इतिहासकार के सामने इतिहास की पुनर्प्रस्तुति के लिए तथ्यो की प्रामाणिक तथा प्रमानक राशि होती है किन्तु बिना विचारो, अभिप्रेरणाओ और सिद्धान्तो की सिद्धि के वह सामाजिक परिवर्तनो तथा सामाजिक विकास को छू तक नही सकता। इस बिन्दु पर कलारूप इतिहास लेखको का सार्थक और सुहृद अनुप्रवेश होता है। वे कला और यथार्थता को इतिहास और समकालीनता को, वैज्ञानिकता और रोमाटिकता को एकतान करने का ज्यादा मौका पा जाते हैं। यदि वे इस खेल में 'इतिहास रस' के मधुपायी हो जाते है तो इतिहास को मिथितिहास बनाकर दिग्भ्रमित कर डालते हैं। वे इतिहास यात्रा के बजाय अपनी स्वप्नगाथा कहने लगते हैं। 'मध्यकालीन रोमासो' से लेकर 'ऐतिहासिक रोमासो' के पीछे यही मत्तभूमि भिलमिलाती है।

तथापि 'निजधरों' से 'ऐतिहासिक यथार्थ' (उपन्यास) की परवर्ती-सहवर्ती दिशाओ में केवल राजवश और महाचिन्तन ही नही, बल्कि जनगण और लोकजीवन भी, केवल इच्छा शक्ति और तर्कही नही बल्कि भौतिक कर्म और वर्ग-सघर्ष मिलकर सामाजिक विकास की महाशक्ति बनते हैं। इस तरह मात्र कामनाएँ और इच्छाएँ तिरोभूत होने लगती हैं। इतिहास का सही रूप बहिर्गत सामाजिक दशाओ द्वारा प्रक्षेपित होने लगता है। इस उपक्रम मे दास युग और सामत युग की सस्कृति के इतिहास-चित्रो की रचना मे उपन्यासकारो ने रोमास तथा यथार्थ के भ्रूवार्तो का द्वद्वपरक (द्वद्वात्मक रूप) सदुपयोग किया है।

11 प्राक्कथन

डॉ० गुरदीपसिंह खुल्लर ने अपनी इस शोध पुस्तक मे प्रेमचन्द-पूर्व हिन्दी-उपन्यासो की दुर्लभ, लुप्तप्राय तथा विलक्षण सामग्री का सर्वप्रथम सर्वांगीण उपयोग करके इतिहास, इतिहास दर्शन और इतिहास लेखन की त्रयी को वरीयता दी है। इसलिए विश्वास है कि यह पुस्तक ऐतिहासिक रोमासो और ऐतिहासिक उपन्यासो के अध्ययन की दिशा मे एक महत्त्वपूर्ण पहल है। यदि इस पुस्तक के प्रकाशन से ऐतिहासिक विधाओ के अध्ययन-अनुशीलन मे अब तक छिपी हुए भ्रातियो के महाजाल विच्छिन्न हो सकें, तो नए ज्ञान का एक और दीप आलोकित होगा। हम सब यही कोशिश भी करते आ रहे हैं।

प्रोफेसर एव अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरु नानक विश्वविद्यालय, अमृतसर

रमेश कुंतल मेघ

अनुक्रमणिका

भूमिका

आधुनिक युग मे 'इतिहास' केवल तथ्य सकलन का अनुक्रमाकित विवरण नही है। वह इतिहास का दर्शन भी है। इसी तरह इतिहास लेखन केवल निजी शैली नही है बल्कि कलारूप एव तथ्यरूप मे ढल कर इतिहासकारो तथा कलाकारो का भी प्रतिपाद्य हुआ है।

इतिहास के कलारूप प्रतिपादन मे कलाकार (विशेषत उपन्यासकार) के युग, उसके जीवन दर्शन और उसकी जीवन दृष्टि के सयोग मे जो ऐतिहासिक कला कृति प्रणीत होती है वह समग्र रूप से अप्रामाणिक होकर भी एक महत्त्वपूर्ण एव विश्वसनीय सांस्कृतिक दस्तावेज़ हो जाती है। विभिन्न पद्धतियो के आधार पर इतिहास केंद्रित उपन्यास भी प्राय ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमास मे बँट जाता है, यद्यपि इन दो रूपो के बीच एक कठोर रेखा खीचना असगत है।

इस शोध-विषय को चुनते समय हमारे सम्मुख एक तो ऐतिहासिक उपन्यास और ऐतिहासिक रोमास के आरभिक स्वरूपो तथा स्थितियो के अनुशीलन की चुनौती प्रस्तुत हुई, दूसरे उन स्वरूपो का आधुनिक इतिहास-दर्शनो (Philosophies of History) तथा इतिहास लेखन प्रकारो (Historiographies) के सदर्भ मे पुनर्मूल्याकित करने का न्योता भी मिला। इन दोनो के लिए प्रेमचन्द पूर्व युग की ऐतिहासिक सरचना ही एक समृद्ध रचना-ससार प्रस्तुत कर सकती है। अतएव हमने प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो और ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास दर्शन तथा इतिहास लेखन के सदर्भो को प्रस्तुत करना ही अपना ध्येय बनाया। फलस्वरूप यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत हुआ।

प्रमुख प्रकाशित ग्रन्थो की उपलब्धियाँ—किन्तु प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमासो पर कुछ प्रकाशित एव अप्रकाशित समीक्षात्मक पुस्तकें भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। उनमे इस विषय का सर्वांगीण अध्ययन प्रस्तुत नही किया जा सका है क्योकि लेखको का मुख्य प्रतिपाद्य विषय यह नही रहा। उदाहरणत डॉ० गोपालराय के शोध-प्रबन्ध मे विवेच्य इतिहास कथा पुस्तको की रचना प्रक्रिया पर केवल पाठको की रुचि के प्रभाव को ही मुख्य स्थान दिया गया है। इसी प्रकार डॉ० गोविन्द जी ने अपने अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास का प्रयोग' मे केवल ऐतिहासिक दृष्टि तथा उपन्यासो मे वर्णित घटनाओ की ऐतिहासिक प्रामाणिकता को ही सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया है।

डॉ० कैलाश प्रकाश का शोध प्रबन्ध 'प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी-उपन्यास' इस विषय से सम्बन्धित प्रथम कृति है। डॉ० कैलाश प्रकाश ने अपने शोध प्रबन्ध में विवेच्य कृतियों का अध्ययन 'ऐतिहासिक उपन्यास' शीर्षक के अन्तर्गत किया है। किशोरीलाल गोस्वामी की कृतियों के अतिरिक्त इन्होंने विवेच्य कालखण्ड के मथुराप्रसाद शर्मा के 'नूरजहाँ बेगम', जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान', ब्रजनन्दन सहाय के 'लालचीन' तथा मिश्र बन्धुओं के 'वीरमणि' उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। वे केवल तेरह उपन्यासों को ही चुनती हैं, जबकि इस कालखण्ड में लगभग पाँच दर्जन ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों की रचना की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ० कैलाश प्रकाश विषय का अध्ययन केवल उदाहरण के रूप में ही कर पाई हैं। यद्यपि उन्होंने विषय का अध्ययन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं आलोचनात्मक पद्धति से किया है, परन्तु वे इस कालखण्ड के ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक रोमांसों की समग्र इतिहास-चेतना को नहीं पकड़ पाई है। इसके साथ ही वे पण्डित बलदेव प्रसाद मिश्र के 'पानीपत', जयन्ती प्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान' तथा गंगाप्रसाद गुप्त, बाबू लालजीसिंह, युगलकिशोर नारायण सिंह, ब्रजौरी कृष्ण प्रकाश सिंह आदि की महत्त्वपूर्ण कृतियों को नहीं ले पाई हैं। इस प्रकार उनके अध्ययन का क्षेत्र पर्याप्त सीमा तक सीमित रहा है।

डॉ० कृष्णानाग ने 'किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों का वस्तुगत और रूपगत विवेचन' नामक अपने शोध-प्रबन्ध में गोस्वामीजी के ऐतिहासिक उपन्यासों का 'गोस्वामी जी के उपन्यासों का कथावस्तु की दृष्टि से शास्त्रीय अध्ययन" शीर्षक के अन्तर्गत किया है। उन्होंने गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों का अध्ययन वस्तुगत एवं रूपगत विवेचन के आधार पर किया है। गोस्वामीजी के ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों के कथानकों का अध्ययन करते समय डॉ० नाग ने उनके 'ऐतिहासिक रूप' अथवा ऐतिहासिक घटनाओं' का ब्यौरा प्रस्तुत किया है, परन्तु इन घटनाओं की ऐतिहासिक प्रामाणिकता तथा उनके ऐतिहासिक स्रोतों की ओर कोई संकेत नहीं किया गया। साथ ही इससे विवेच्य काल खण्ड में प्रणीत ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों की इतिहास-चेतना का समग्र रूप नहीं उभर पाया है। वास्तव में यह डॉ० कृष्णानाग का उद्देश्य भी नहीं था।

यद्यपि किशोरीलाल गोस्वामी विवेच्य काल खण्ड के कर्णधार मूर्धन्य एवं प्रतिनिधि उपन्यासकार हैं तथापि उनकी कृतियों का यह अध्ययन विवेच्य युग को इतिहास कथा पुस्तकों के सम्पूर्ण बिम्बों को आंशिक रूप में ही उभार पाया है। इस शोध-प्रबन्ध की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि लेखक के व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं तथा जीवन दर्शन के परिप्रेक्ष्य में इन उपन्यासों का साहित्यिक एवं दार्शनिक विवेचन है।

"हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास का प्रयोग" नामक अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध के आरम्भिक अध्यायो मे लेखक डॉ० गोविन्दजी ने इतिहास-दर्शन तथा इतिहास लेखन की अन्यान्य धारणाओ एव मान्यताओ के परिप्रेक्ष्य मे मानवीय अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण की ऐतिहासिक एव साहित्यिक प्रक्रिया का वैज्ञानिक अध्ययन किया है। यहाँ उपन्यास के अन्यान्य तत्त्वो एव घटको का भी विवरण प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि स्वय मे यह एक स्तुत्य प्रयास है तथापि लेखक ऐतिहासिक उपन्यासो मे ऐतिहासिक घटनाओ की प्रामाणिकता तथा ऐतिहासिक उपन्यास के नितान्त आधुनिक स्वरूप एव मानदण्डो के आधार पर विवेच्य उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की आलोचना करने के कारण इस कालखण्ड के उपन्यासो के साथ ऐतिहासिक रूप से न्याय नही कर पाए।

डॉ० गोविन्द जी ने स्थान-स्थान पर विवेच्य उपन्यासकारो तथा उनकी कृतियो की कटु आलोचना की है, जो बहुधा निराधार है।

डॉ० गोविन्द जी सपादित 'ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप" पुस्तक मे मौलिक ऐतिहासिक उपन्यासकारो तथा आलोचको के ऐतिहासिक उपन्यासो के सम्बन्ध मे अन्यान्य पत्रिकाओ मे प्रकाशित लेखो का सग्रह किया गया है। यहाँ रवीन्द्रनाथ टैगोर, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, राहुल सांस्कृत्यायन, वृन्दावन लाल वर्मा सभी के निबन्धो को सगृहीत किया गया है। मूल लेखको एव समीक्षको के ऐतिहासिक उपन्यासो के सम्बन्ध मे निबन्धो को एक ही स्थान पर एकत्रित एव प्रकाशित करना डॉ० गोविन्द जी की महत्त्वपूर्ण सफलता है।

वस्तुत इन विद्वानो एव विदूषियो ने प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो का अध्ययन प्रसगवश ही किया है। यह उनका वास्तविक ध्येय भी नहीं था। उपर्युक्त मत के लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ। अस्तु।

अब प्रत्येक अध्याय के मूल प्रतिपाद्य तथा प्रमुख स्थापनाओ का क्रमिक सर्वेक्षण प्रस्तुत करने की अनुमति चाहूँगा।

प्रथम अध्याय

प्रबन्ध के प्रथम अध्याय को दो खण्डो मे विभाजित किया गया है—

(i) तथ्यरूप इतिहास (ii) कलारूप इतिहास।

तथ्यरूप इतिहास के अन्तर्गत हमने आधुनिक इतिहास क्या है? मानवीय अतीत के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक ढग से अध्ययन एव विचार करने की पद्धतियाँ तथा उन्नीसवी शताब्दी के अन्यान्य इतिहास दार्शनिको यथा जे० बी० बरी, क्रोचे, लांगलाइस आदि की आधुनिक इतिहास के सम्बन्ध मे धारणाओ तथा परिभाषाओ का वर्णन एव विवेचन किया है।

निश्चयवाद अथवा स्वेच्छावादी इतिहास-सिद्धान्त का तथ्यरूप इतिहास लेखन की प्रक्रिया पर गहन प्रभाव पडता है। मार्क्स, हीगल तथा अन्यान्य दार्शनिको के मतो

का अध्ययन करने के पश्चात् यह पाया गया है कि मानवीय अतीत में घटित होने वाली घटनाएँ ऐतिहासिक एजेंटों की क्रियाशीलता द्वारा ही मुख्यत नियोजित होती हैं। यद्यपि शत-सहस्रों लोग भी इस प्रक्रिया मे अपना योगदान देते है। यहाँ मार्क्स तथा क्रोचे के इतिहास दर्शनो का अध्ययन करते समय लेनिन तथा कॉलिंगवुड की इतिहास थ्योरी को भी ध्यान मे रखा गया है।

घटनाएँ एव समस्याएँ तो तथ्यरूप इतिहास लेखन के महत्त्वपूर्ण घटक के रूप मे उभरती हैं। यहाँ स्वय घटनाओ तथा घटित हुई घटनाओ के विवरण को इतिहास के रूप मे स्वीकार किया गया है।

व्यक्ति बनाम समूह तथा जनता बनाम राष्ट्र इतिहास लेखन की मुख्य समस्याएँ हैं। मानवीय अतीत के अध्ययन मे काल के प्रवाह को एक निश्चित दिशा प्रदान करने मे क्या कुछ महान् राजनैतिक, सामाजिक एव धार्मिक नेता ही एक नियोजक शक्ति के रूप मे उभरते हैं अथवा लाखो मनुष्य। यहाँ इस निर्णय पर पहुँचा गया है कि यद्यपि लाखो अनाम मनुष्यो ने इतिहास प्रवाह मे तथा मानवीयता के विकास मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था तथापि कुछ नेताओ अथवा महान् व्यक्तियो ने समूहो के पूरक के रूप मे इतिहास की धारा को एक विशिष्ट एव निश्चित दिशा प्रदान की। जनता एव राष्ट्र के सम्बन्ध मे, मैं कनिंघम द्वारा सिख साम्राज्य को तथा टॉड द्वारा राजपूत रजवाडो को राष्ट्र कहे जाने के पक्ष मे हूँ।

लिखित दस्तावेज, भौगोलिक अध्ययन, अतीत की राजनीति आदि तथ्यरूप इतिहास लेखन के महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं। इनका वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया गया है। इतिहास को विज्ञान मानने वाले इतिहास दार्शनिक दस्तावेजों के साथ अत्यधिक महत्त्व जोडते हैं परन्तु हम ई० एच० कार के इस मत के पक्ष मे हैं कि दस्तावेज केवल उसके लेखक तथा अभिलेखकर्त्ता के दृष्टिकोण को ही स्पष्ट करते हैं। भौगोलिक स्थिति एवं अतीत की राजनीति का भी ऐतिहासिक प्रामाणिकता की दृष्टि से अध्ययन एव विवेचन किया गया है। भूगोल, इतिहासकारो तथा ऐतिहासिक उपन्यासकारो को वह रगमच प्रदान करता है जिस पर अतीत के पात्रो ने कार्य किए। अतीत की राजनीति के सम्बन्ध मे इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि यद्यपि केवल राजनीति ही समस्त मानवीय अतीत का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती फिर भी हम हीगल के इस मत से सहमत है कि अतीत के केवल वही व्यक्ति हमारे ज्ञान मे आते हैं जो राज्य का निर्माण करते हैं। अतीत की सामाजिक एव धार्मिक संस्थाओ की भी लगभग यही स्थिति है।

कलारूप इतिहास का अध्ययन भी (क) इतिहास के कई सामान्य रूप, (ख) उपन्यास तथा (ग) जीवनी शीर्षकों के अन्तर्गत किया गया है। यह एक बहुचर्चित एव महत्त्वपूर्ण विवाद है कि इतिहास को विज्ञान की एक शाखा माना जाए अथवा कला की। चूँकि कला मूलत सौन्दर्यपरक होती है इसलिए इतिहास को भी इसी प्रकार का होना चाहिए। इस प्रकार इतिहासकार को कई ऐसे साहित्यिक

उपकरण उपलब्ध हो जाएँगे जिनसे वह अतीत के नीरस तथ्यो के सकलन के स्थान पर इतिहास को महान् पुरुषो के कार्यो के साथ-साथ अतीत के लाखो लोगो के सामाजिक, धार्मिक एव सास्कृतिक पक्षो को भी प्रस्तुत कर पाएगा । उपन्यास भी इतिहास लेखन का एक कलारूप है । यहाँ इतिहास तथा उपन्यास की अन्यान्य-प्रवृत्तिमूलक समानताओ तथा भिन्नताओ का अध्ययन करते हुए उपन्यास का इतिहास के साथ निकट का सम्बन्ध होना प्रामाणित किया गया है । जीवनी के रूप मे साहित्य एव इतिहास का सगम कलारूप इतिहास-धारणा को अधिक प्रामाणिक बनाता है । कालिंगवुड जीवनी को गैर-ऐतिहासिक ही नही प्रति-ऐतिहासिक मानते हैं । हमारा विचार है कि जीवनी निश्चित रूप से मानवीय अतीत के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्षो का सफलतापूर्वक उद्घाटन करती है, जैसा कि ट्रेविलियन ने कहा था कि एक मनुष्य की जीवनी पथभ्रष्ट कर सकती है परन्तु बहुत से मनुष्यो का जीवनियाँ इतिहास मे अधिक हैं ।

कलारूप इतिहास के तीन मुख्य तत्त्व—(क) मानवीय प्रकृति (ख) महा पुरुषो की जीवनियाँ तथा (ग) शत-सहस्र सामान्य लोग हैं । मानवीय प्रकृति, मानवीय अतीत के अध्ययन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटक होती है क्योकि ए० एल० राउस के मतानुसार इतिहास मे हमे सदैव मनुष्यो के साथ व्यवहार करना होता है और इ० एच० कार के अनुसार इतिहास की घटनाओ को मानवीय प्रकृति ने बहुत सीमा तक प्रभावित किया है । महान्-पुरुषो तथा शत-सहस्र लोगो के इतिहास-प्रवाह मे योगदान के सम्बन्ध मे हमने यह निष्कर्ष निकाला है कि वे एक ही प्रक्रिया के दो महत्त्वपूर्ण अगो के रूप मे उभरते है, जिन्होने ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को प्रभावित एव नियोजित किया ।

इतिहास बनाम साहित्यकला के सम्बन्ध मे हम इस निर्णय पर पहुँचे है कि अतीत के मनुष्यो के विचार, उनकी भावनाएँ, भावावेग, परम्पराएँ, रूढियाँ विश्वास तथा जीवन के मौलिक सिद्धान्तो का अध्ययन केवल साहित्य एव कला के उपकरणो की सहायता के साथ ही किया जा सकता है ।

इतिहास और विज्ञान—यद्यपि बहुत से इतिहास-दार्शनिक उन्हे एक ही मानने के पक्ष मे हैं, कई प्रवृत्ति मूलक अन्तरो के कारण एक-दूसरे से भिन्न है । हमने इतिहास तथा विज्ञान की विपरीतता (Anti-thesis) के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है ।

इतिहास का रोज़मर्रा के जीवन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है । ए एल राउस इस मत के पक्ष मे है । हमारा निष्कर्ष यह है कि इतिहास मनुष्य को अतीत का सुनिश्चित ज्ञान एव भविष्य के सम्बन्ध मे बेहतर पथ-प्रदर्शन कर सकता है ।

कलारूप इतिहास की प्रक्रिया का अध्ययन (क) कार्य-कारण-श्रृंखला-घटना, प्लाट, (ख) समझने की प्रक्रिया, तथा (ग) लेखन की शर्तें, अभिव्यक्ति, शीर्षको के अन्तर्गत किया गया है । यहाँ ऐतिहासिक घटनाओ की कार्य परिणाम

'शृंखला' का अध्ययन ऐतिहासिक घटनाओ तथा औपन्यासिक प्लाट के सन्दर्भ मे किया गया है। हमारे मतानुसार मानवीय अतीत के अध्ययन तथा इतिहास को बुद्धिगम्य बनाने के लिए उसके लेखन की प्रक्रिया मे कार्य-कारण शृंखला का एक स्पष्ट एवं सुनिश्चित स्वरूप होना आवश्यक है। इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार द्वारा अपने अध्ययन के युग को समझना इस अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण अग है। अतीत मे मनुष्यो की अन्यान्य परिस्थितियो के प्रति प्रतिक्रिया के स्वरूप का अध्ययन भी इसी का एक पक्ष है। इतिहासकार अपनी खोज एव अध्ययन के पश्चात् जो निष्कर्ष निकालता है उनकी अभिव्यक्ति के लिए उसे भाषा तथा साहित्य के कई उपकरणो का आश्रय लेना पडता है।

कला रूप इतिहास की उपलब्धियों के साथ-साथ यहाँ कला रूप इतिहास की सीमाओ की ओर भी सकेत किया गया है। यह अध्ययन (i) सत्य की सीमा (ii) जीवनी का एक पक्ष, (iii) कल्पना तथा (iv) अन्तर्दृष्टि शीर्षको के अन्तर्गत किया गया है। सामान्यतः मानवीय भावनाओं एव भावावेगो मे ऐतिहासिक तथ्य धूमिल पड जाते हैं। जीवनी स्वय मे मधुर एव उपयोगी होने पर भी ज्ञान का एक सीमित स्रोत है। कल्पना का प्रयोग कई बार इतिहास के उद्देश्य को तिरोहित कर सकता है। अन्तर्दृष्टि का प्रयोग भी इतिहास की प्रक्रिया को सीमित कर सकता है।

इस प्रकार पहले अध्याय मे इतिहास के दोनो रूपो—कलारूप तथा तथ्यरूप इतिहास दर्शन का अध्ययन किया गया है।

दूसरा अध्याय

इस अध्याय मे (क) "इतिहास व्याख्या के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यास" तथा (ख) "इतिहास पुनर्रचना के रूप मे ऐतिहासिक रोमान" शीर्षको के अन्तर्गत क्रमश. इतिहास और तथ्यात्मकता तथा इतिहास और अतिकल्पना के सम्मिलन का अध्ययन किया गया है। इस अध्याय में इसी दार्शनिक पृष्ठभूमि के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमानो की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन किया गया है।

(क) इतिहास व्याख्या के कई पक्षों मे—(i) राजनैतिक पक्ष (ii) आर्थिक पक्ष (iii) सामाजिक पक्ष, (iv) धार्मिक पक्ष तथा (v) सांस्कृतिक पक्ष आदि का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। एस० टी० बिडाफ की पुस्तक "एप्रोचिज टू हिस्ट्री" मे इतिहास लेखन के इन सभी पक्षों का अलग-अलग विधिवत अध्ययन किया गया है, हमने उसी के आधार पर मानवीय अतीत के इन पक्षों का अध्ययन प्रस्तुत किया है। साथ ही विवेच्य उपन्यासो में उपलब्ध इन पक्षो के स्वरूपो की ओर भी सकेत किया गया है।

जिस प्रकार इतिहासकार अपने तथ्यो एव घटनाओ की व्याख्या करते हैं उसी प्रकार कई कलात्मक पद्धतियों से ऐतिहासिक उपन्यासकार भी ऐतिहासिक

सामग्री की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। विवेच्य उपन्यासकार इतिहास की धार्मिक व्याख्या के पक्ष मे थे।

इतिहास लेखन की प्रक्रिया का अध्ययन हमने (i) सामान्यीकरण करने (ii) प्रवृत्तिया देखने (iii) नियम पाने (iv) निर्णय देने अथवा भविष्यवाणी करने तथा (v) लेखक के दृष्टिकोण आदि शीर्षकों के अन्तर्गत किया है। हमारा विचार है कि इतिहास एव ऐतिहासिक उपन्यास लेखन की प्रक्रिया मे कई स्तरो पर सामान्यीकरण किए जा सकते है। लेखक स्थान एव काल मे बद्ध एक निश्चित काल खण्ड की प्रवृत्तियो को चित्रित कर सकते है। इसी प्रकार वे कुछ नियम पा कर निर्णय भी दे सकते हैं। यद्यपि निर्णय देना अथवा भविष्यवाणी करना इतिहासकार का कार्य नही है तथापि वे भविष्य मे घटित होने वाली घटनाओ के प्रवाह के स्वरूप की ओर सकेत कर सकते हैं। इसी प्रकार लेखक इतिहास लेखन की प्रक्रिया मे अतिशयोक्ति पूर्ण कल्पना तथा सत्य की तथ्यात्मकता को अपने उद्देश्य एव रुचि के अनुरूप प्रयोग मे ला सकता है। यहाँ हमने इतिहास तथा ऐतिहासिक उपन्यास लेखन की प्रक्रिया का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया है।

ऐतिहासिक उपन्यासो के परिप्रेक्ष्य मे घटनाएँ, पात्र, विचार, परिवेश एव विवरणात्मक वातावरण तथा समस्याओ एव परिस्थितियो के सम्बन्ध मे अलग-अलग विश्लेपण किया है, जो इतिहास तथा ऐतिहासिक उपन्यास की बेहतर समझ के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध होगा।

(ख) इतिहास और अतिकल्पना के मिलने से इतिहास की पुनर्रचना के रूप मे ऐतिहासिक रोमास उभर कर आते है यहाँ इतिहास और रोमास के तत्वो के ऐतिहासिक रोमास मे समन्वित होने की प्रक्रिया का अध्ययन किया गया है। ऐतिहासिक रोमासो मे मानवीय प्रकृति और मानवीय स्वप्नो का प्रयोग होता है। यहाँ किसी एक महापुरुष के स्थान पर सामान्य जनो के अतीत या किसी अज्ञात व्यक्ति के रहस्य रोमाच का वर्णन किया जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे यह तत्त्व प्रचुर मात्रा मे उभर कर आए है जिनके परिणाम स्वरूप ऐतिहासिक रोमासो मे ऐतिहासिक अतीत पृष्ठभूमि मे चला जाता है तथा लोकातीत उभर कर आता है। ताल एव प्लाट रहित इतिहास को रोमास के तत्त्वो से मिलाने पर कथा के प्लाट एवं पात्रो का कलेवर प्राप्त होता है। इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे भारतीय मध्ययुगो का पुनर्निर्माण करने की प्रक्रिया मे इतिहास तथा रोमास के तत्त्वो का समन्वय कलात्मक ढग से किया गया है।

ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत अति कल्पना के कार्यों का विवरण एव चित्रण किया जाता है अति कल्पना के प्रयोग के कारण यहाँ देश-काल के बन्धन ढीले पड जाते है। अति कल्पना के प्रयोग द्वारा ऐतिहासिक वातावरण की उत्पत्ति की जाती है जिसके परिणामस्वरूप देश एव काल की कठिनाई दूर होने के साथ-साथ ऐतिहासिक अतीत के रिक्त स्थान भरे जाते है। इस प्रकार हमारे विचार से

ऐतिहासिक रोमासो मे मानवीय अतीत का अति सजीव एव सत्य पूर्ण, यह तथ्य पूर्ण नही भी हो सकता, चित्र उभारा जाता है ।

यद्यपि इतिहास मूलत. तथ्याश्रित होता है, परन्तु अतिकल्पना पर तथ्य और प्रामाणिकता के बंधन नहीं होते जिसके फलस्वरूप मानवीय अतीत के मनुष्यो के भावावेग एव आकाक्षाएँ अधिक स्वच्छन्दता पूर्ण तरीके से उभर कर आती हैं। ऐसा करते हुए यदि लेखक मानवीय प्रकृति तथा तत्कालीन परम्पराओं के अनुकूल पात्रो एव घटनाओ को उभारे तो अतिकल्पना के माध्यम से वह एक वृहत्तर सत्य का प्रतिपादन कर सकता है । ऐतिहासिक रोमासो मे ऐतिहासिक निश्चयवाद के स्थान पर स्वच्छन्द मानवीय इच्छा क्रियाशील होती है । इस प्रकार यहाँ अति कल्पना के लिए अधिक स्थान रहता है ।

ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास की पुनर्रचना की जाती है। जब भी मानवीय अतीत की पुनर्रचना की जाएगी तो वह स्पष्ट रूप से इतिहास के अलिखित रूप के अधिक निकट होगा । इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे मिथको, निजधरो, लोक कथाओ तथा लोक प्रथाओ का विपुल मात्रा मे प्रयोग किया जाता है जो देश काल के कठोर अनुशासन से विमुख होना है । ऐतिहासिक रोमासो मे अन्यान्य प्रकार के विवरणो की बहुलता होती है । प्राचीन महलो, किलो, नगरो, गुफाओ, खण्डहरो तथा तिलिस्मी एव ऐयारी के विवरणो के माध्यम से भी इतिहास की पुनरचना मे सहायता मिलती है क्योकि यह सब मानवीय अतीत के अग थे ।

ऐतिहासिक रोमासो मे अति मानवीय, अति प्राकृतिक, अति लौकिक तथा जादू टोना आदि मध्ययुगीन अध-विश्वासो का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे अति उपसर्ग की प्रधानता होती है । इसका पात्रो के चरित्र-चित्रण पर भी प्रभाव पडता है । नायिकाएँ अति सुन्दर, नायक अत्यत वीर एव शौर्यता पूर्ण अथवा खलनायक अति दानवीय रूप मे उभारा जाता है यहाँ असामान्य एव अनपेक्षित प्रस गो तथा स दर्भो द्वारा चमत्कार एव कुतूहल की सृष्टि की जाती है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे यह गुण गोथिक एव हीरोइक रोमासो मे से आए हैं।

ऐतिहासिक रोमास का प्रधान रूप कुछ बिन्दुओ पर आधारित होगा यदि इनके पात्र एव घटनाएँ ऐतिहासिक नही है तो इनका वातावरण ऐतिहासिक हो, यदि पात्र ऐतिहासिक न हो तो कुछ घटनाएँ ऐतिहासिक होनी चाहिएँ । इसी प्रकार यदि घटनाएँ ऐतिहासिक न हो तो कुछ प्रमुख पात्र ऐतिहासिक होने चाहिएँ ।

इस प्रकार हमने इस अध्याय मे इतिहास का तथ्यात्मकता तथा अति कल्पना से सम्बन्ध दिखाते हुए ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन किया है ।

तीसरा अध्याय

तीसरे अध्याय का (1) ऐतिहासिक उपन्यास व ऐतिहासिक रोमास की तुलना व (2) प्रेरणा स्रोत के अध्ययन से सम्बन्ध है । यहाँ हमने इन दो साहित्यिक विधाओ

की तुलना की है तथा उनके प्रेरणा स्रोतो का अध्ययन किया है। सामान्यत ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमास को एक ही कोटि की साहित्यिक विधाएँ समझा जाता है।

इसलिए सैद्धातिक आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की तुलना करते हुए उनकी समानताओ एव असमानताओ का अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है।

ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमास की तुलना इतिहास उपचार के दो कोणो के अध्ययन के माध्यम से की जा सकती है —तथ्यात्मक ऐतिहासिकता तथा भावात्मक ऐतिहासिकता। यहाँ हमने ऐतिहासिक उपन्यासकार एव ऐतिहासिक रोमासकार द्वारा अतीत का चित्रण करने के दो विभिन्न दृष्टि कोणो का सैद्धातिक अध्ययन किया है।

समानताएँ—प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे कई सामान्य विशेषताएँ भी उपलब्ध होती हैं जैसे (i) जन-जीवन के प्रति उपेक्षा का भाव, (ii) भावना या धर्म के मुकाबले यथार्थ का परित्याग, (iii) अति प्राकृतिक व अन्धविश्वासो का ग्रहण तथा (iv) कथा सयोजन मे बर्बरता व कामुकता का समावेश यह सभी प्रवृत्तियाँ ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासों में लेखको की रचना प्रक्रिया के सिद्धात के अन्तर्गत एक साथ उभर कर आई हैं। जहाँ कहीं इन प्रवृत्तियो के अपवाद विवेच्य कृतियो मे मिले है वहाँ उनकी ओर सकेत कर दिया गया है।

असमानताएँ—(i) ऐतिहासिक उपन्यास मे मानवीय अतीत का पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्व्याख्या करते समय गम्भीरता की तकनीक का आश्रय लिया जाता है जबकि ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास की पुनर्रचना करते समय रहस्य एव रोमांस की प्रवृत्तियो को मुख्य स्थान दिया जाता है। यह प्रवृत्तियाँ हीरोइक रोमास गोथिक रोमास तथा पिक्चरेस्क आदि से ही आई हैं

(ii) ऐतिहासिक उपन्यासो मे शास्त्रीय परपराओं का प्रतिपादन किया जाता है जबकि ऐतिहासिक रोमासो मे शास्त्रीयता का विरोध अन्यान्य धरातलों पर किया जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे शास्त्रीयता की परपरा को सीधे महाकाव्यो से तथा आशिक रूप से रासो काव्यो की शास्त्रीय परपरा से ग्रहण किया गया है। इनका विवेचन करते हुए हमने ऐतिहासिक रोमासो मे शास्त्रीयता विरोध के अन्यान्य धरातलो यथा असाधारण, अति मानवीय, अति प्राकृतिक तथा अलौकिक तत्त्वो एव उपकरणो को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे प्रयुक्त किए जाने के फलस्वरूप उनमे शास्त्रीय परपरा की सरलता, सहजता, गरिमा, स्पष्टता, वस्तुनिष्ठता, सुनिश्चितता तथा रचना की पूर्णता आदि विशेषताओ का अभाव रह जाता है और वे ऐतिहासिक रोमासो मे शास्त्रीयता विरोध के रूप मे उभरते हैं ।

(iii) ऐतिहासिक उपन्यासो मे मूल्यो की बौद्धिक परपरा का पालन किया जाता है, जबकि ऐतिहासिक रोमासो मे बौद्धिक मूल्यो के विरोध मे भावावेश तथा मानवीय भावावेगो को मुख्य स्थान प्रदान किया जाता है।

(iv) इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास, लेखक की सामयिक चेतना के बोध को लेकर चलता है जबकि ऐतिहासिक रोमास अपनी असामान्य एव अति लौकिक प्रवृत्तियो के कारण सम सामयिकता के विरोध मे मध्ययुगो मे पलायन की प्रवृत्ति का प्रतिपादन करता है। हमने विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे इन प्रवृत्तियो का अध्ययन करते हुए समसामयिक बोध तथा अतीत युगीन बोध की अन्तर्प्रक्रिया को अधिक महत्त्व प्रदान किया है।

(v) ऐतिहासिक रोमासो मे मर्यादावादी नैतिकता का विरोध किया जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे इस प्रकार का विरोध कामुकता एव अश्लीलता के धरातलो पर उभारा गया है।

(vi) ऐतिहासिक रोमांसो मे अति प्राकृतिक सशक्तता का प्रदर्शन किया जाता है। पात्रो मे इस प्रकार की सशक्तता मध्य युगीन नाइट्स के समान उभरती है। इसी प्रकार नायिका का उद्धार करने के लिए अथवा युद्ध मे असाधारण वीरता का प्रदर्शन इसी अति प्राकृतिक सशक्तता की धारणा द्वारा ही रूपायित होता है। इसके साथ ही ऐतिहासिक रोमासो मे उग्रता और अतिशयता पर जोर दिया जाता है। यह युद्धो की भयावहता का अतिरंजित चित्रण करने के माध्यम से उभारा जाता है।

(vii) लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे कुल तथा जाति का अभिमान पात्रो के क्रिया-कलापो तथा घटनाओ की नियोजक शक्ति के रूप मे उभरता है।

(viii) अन्त मे अपने ऐतिहासिक उपन्यासो मे लोक तत्त्वो के क्रियात्मक स्वरूप का अध्ययन प्रस्तुत किया है। लोक तत्त्व मानवीय अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटक के रूप मे उभरते है। वे ऐतिहासिक तथ्यो एव घटनाओ को कलात्मक रूप मे प्रस्तुत करने तथा सम्पूर्ण अतीत को उभारने मे बहुत सहायक सिद्ध होते हैं।

इस अध्याय के दूसरे खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास रूपो के अभ्युदय के लिए अपेक्षित प्रेरणाओं का अध्ययन किया है।

(i) विदेशी इतिहासकारों की ऐतिहासिक कृतियो से विवेच्य लेखको ने ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो का सृजन करने के लिए प्रेरणाएँ प्राप्त की हैं। इन ऐतिहासिक कृतियो मे टॉड, ब्रिग्स फिच, सर टामस रो, बर्नियर मनूची तथा ग्राट डफ आदि अंग्रेज इतिहासकारो की ऐतिहासिक कृतियो ने विवेच्य लेखको के लिए प्रेरणा स्रोत का कार्य किया है। इसी प्रकार 'इंडियन शिवलरी' नामक अंग्रेजी पुस्तक तथा एक अनाम ब्रिटिश लेखक द्वारा प्रणीत पुस्तक 'दी लाइफ आफ इन ईस्टर्न किंग' का भी विवेच्य कृतियो मे प्रयोग किया गया है।

विदेशी इतिहासकारो की कृतियो के साथ-साथ विवेच्य लेखको ने (ii) प्राचीन भारतीय इतिहास ग्रन्थों व रासो काव्य ग्रन्थो से भी प्रेरणा प्राप्त की है। इनमे कल्हण की राजतरंगिणी तथा पृथ्वीराज रासो मुख्य हैं।

(iii) समकालीन भारतीय भाषाओ के इतिहास-ग्रन्थो ने भी विवेच्य लेखको को प्रभावित एव प्रेरित किया। इनमे बंकिमचन्द्र की 'राजसिंह अथवा चचलकुमारी', नीरजमल की 'पानीपत का युद्ध' तथा बाबू क्षीरो प्रसाद तथा सुरेन्द्रनाथ राय लिखित 'पद्मिनी' नामक पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। उसके अतिरिक्त हिन्दी मे राजा शिवप्रसाद की इतिहास तिमिर नाशक तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'बादशाह दर्पण' आदि इतिहास पुस्तकें भी उल्लेखनीय है।

(iv) विदेशी यात्रियो के यात्रा वृत्तातो तथा पुरातात्विक खोजो से भी विवेच्य लेखको ने प्रेरणा प्राप्त की है। इनमे इब्न बेतुल की भारत यात्रा के वृत्तान्त, डॉ० मूथानिसी के इतिहास वृत्तान्त आदि का मुख्य रूप से प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार हमने इस अध्याय मे ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो की सैद्धान्तिक धरातल पर तुलना करने के साथ-साथ विवेच्य लेखको पर ऐतिहासिक कृतियो तथा यात्रा वृत्तान्तो के प्रभावो तथा उनसे प्रेरणा प्राप्त करने का अध्ययन किया है।

चौथा अध्याय

चौथे अध्याय मे (i) प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो के अभ्युदय की सामाजिक तथा ऐतिहासिक परिस्थितियाँ तथा (ii) ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो की प्रवृत्तियो का अध्ययन एव विवेचन किया गया है।

हिन्दी मे ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो के अभ्युदय की सामाजिक स्थिति का अध्ययन हमने (क) साम्प्रदायिक मतभेद तथा (ख) आधुनिक सभ्यता एव सस्कृति के सघात-शीर्षको के अन्तर्गत किया है।

हिन्दू-मुस्लिम मतभेद—वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जिसने विवेच्य लेखको की जीवन दृष्टि तथा इतिहास धारणा को गहराई तक प्रभावित किया। यहाँ मैंने साम्प्रदायिकता के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए विवेच्य कृतियो मे उसके आरोपण की पद्धति की ओर सकेत किया है।

हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि सास्कृतिक पुनर्जागरण, साम्प्रदायिक मतभेद तथा सस्कृतियो के सम्मिलन एव टकराहट वह अपेक्षित सामाजिक परिस्थितियाँ थी जिन्होने इन ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो के अभ्युदय के लिये उपयुक्त स्थिति का निर्माण किया।

इन कृतियो की निर्माण की ऐतिहासिक स्थिति के लिए हमने (क) पुरातात्त्विक खोजें, (ख) भारतीय इतिहासकार, (ग) यूरोपीय इतिहासकार, तथा (घ) बगाली

एवं मराठों के इतिहास-द्रष्टा शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन किया है। पुरातात्त्विक खोजों, वास्तुकला के अवशेषों, प्राचीन भारतीय ग्रन्थों एवं संस्कृत साहित्य पर मैक्समूलर, एम विंटर नित्ज़, एलबर्ट वेबर तथा ए० बी० कीथ आदि विद्वानों की खोजों ने, आर० जी० भण्डारकर तथा आर० के० मुखर्जी की राष्ट्रीयता परक पुस्तकों ने तथा बंकिमचन्द्र एवं रखालदास वंद्योपाध्याय की ऐतिहासिक कृतियों ने उन विशिष्ट ऐतिहासिक परिस्थितियों का निर्माण कर दिया था जिनके प्रभाव स्वरूप विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक रोमांसों का प्रणयन किया गया।

दूसरे खण्ड में हमने प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक रोमांसों की प्रवृत्तियों का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया है। हमारे विचार से प्रेमचन्द-पूर्व की इन इतिहास-आश्रित कथा पुस्तकों की प्रवृत्तियों का अध्ययन ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमांस के मध्य एक स्पष्ट सीमा रेखा खींचने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों में (क) जनता से कट कर अन्तःपुर एवं राज सभाओं की ओर जाने की प्रवृत्ति उभर कर आई है। ऐतिहासिक उपन्यासों में अन्तःपुर एवं राज सभाएँ राजनैतिक एवं कूटनीतिक मामलों के महत्त्वपूर्ण मंत्रणा गृह के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। यहां दरबारी संस्कृति की मध्ययुगीन इतिहास धारणा के अनुरूप राज्य सभा तथा राजा एवं शासक वर्ग समस्त राजनैतिक निकाय को गति एवं दिशा प्रदान करने वाली नियोजक शक्ति के रूप में उभर कर आये हैं। इसके विपरीत ऐतिहासिक रोमांसों में अन्तःपुर तथा राजसभाओं को प्रेम-क्रीड़ाओं, लीलाओं तथा मधुचर्या के विहार स्थलों के रूप में चित्रित किया गया है।

लगभग सभी ऐतिहासिक (ख) उपन्यासों में रोमांस की ओर जाने की प्रवृत्ति मुख्य रूप से उभर कर आई है। इस प्रवृत्ति के अन्तर्गत विवेच्य उपन्यासकार अपनी कृतियों में इतिहास का चित्रण करने के साथ-साथ रोमांस के तत्त्वों को भी सम्मिलित करते चलते हैं।

प्रेमचन्द पूर्व लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों में (ग) काल की धार्मिक धारणा द्वारा ही घटना प्रवाह एवं पात्रों का चरित्र नियोजित होता है। प्राचीन भारतीय इतिहास धारणाओं के साथ समस्त मानवीय क्रिया-कलाप, कर्मचक्र नियति चक्र, काल चक्र तथा पुरुषार्थ चक्र द्वारा स्थापित होते हैं तथा मनुष्य जगत की सभी घटनायें एक अलौकिक शक्ति द्वारा नियोजित की जाती हैं। हमारे विचार में इसी इतिहास चेतना के आधार पर अध्ययन किए जाने पर विवेच्य ऐतिहासिक कृतियों के साथ न्याय किया जा सकता है।

(घ) हिन्दु पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण तथा (ङ) हिन्दू राष्ट्रीयता की धारणा लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों में एक मूल-कल्पना-विचार तथा इतिहास विचार के रूप में उभरे हैं। लगभग सभी विवेच्य

लेखक सनातन हिन्दू-धर्म की मान्यताओं तथा हिन्दू राष्ट्र की स्थापना की धारणाओं के प्रति प्रतिबद्ध थे। अपनी इन्ही मान्यताओं एव धारणाओं को विवेच्य लेखको ने भारतीय मध्य युगो मे प्रक्षेपित किया है।

(च) सेक्स के माध्यम से मनोरजन प्रेमचन्द पूर्व के उपन्यास साहित्य का मुख्य कला-विचार था जो कुछ परिवर्तित रूप मे ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे भी उभरा है। यहाँ भी अश्लीलता एव कामुकता के धरातलो पर सेक्स का चित्रण किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि विवेच्य लेखक सेक्स का वर्णन करते समय स्वय उसमे रस लेने लगते हैं।

(छ) पुराणो आदि से उपदेश देने की प्रवृत्ति कई विवेच्य कृतियो मे उभर कर आई है। उपदेश देने की इस प्रवृत्ति से कई बार उपन्यास-कला तथा शिल्प पर बुरा प्रभाव पडा है।

(ज) स्वामीभक्ति एव राजभक्ति की मध्ययुगीन प्रवृत्तियो का विवेच्य कृतियो मे एक मुख्य इतिहास विचार के रूप मे चित्रण किया गया है। भारतीय मध्ययुगो के पुन. निर्माण एव पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया में इस प्रवृत्ति को सम्मिलित करने से कृतियाँ अत्यधिक सजीव एव स्वाभाविक बन पडी हैं। क्योकि यह प्रवृत्तियाँ भारतीय मध्ययुगो की अत्यन्त महत्वपूर्ण एव चरित्रो की नियामक प्रवृत्तियाँ थी।

इन ऐतिहासिक कृतियो मे (झ) शृगार एव प्रकृति का वर्णन रीतिकालीन ढग से किया गया है। यह नायिका के नखशिख वर्णन तथा नायको की विलासिता एव शौर्यता के विवरणो द्वारा स्पष्ट रूप से उभर कर आया है।

अद्वितीय शौर्य एव (ञ) युद्धो का वर्णन रासोकालीन पद्धति से किया गया है। इस प्रकार के वर्णन एव चित्रण रासो काव्यो से अपनी प्रेरणा एव स्रोत प्राप्त करते है। यह दोनो प्रवृत्तियाँ विवेच्य लेखको को विरासत मे प्राप्त हुई थी। साहित्यिक रुचि सम्पन्न एव रसिकतापूर्ण होने के कारण कतिपय विवेच्य लेखको ने इन दोनो प्रवृत्तियो को अत्यन्त कलात्मक एव रुचिकर ढग से प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार हमने इस अध्याय मे ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो के अभ्युदय की सामाजिक एव ऐतिहासिक परिस्थितियो के साथ साथ उनकी मुख्य प्रवृत्तियो का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया है।

पाँचवाँ अध्याय

पाँचवें अध्याय मे ऐतिहासिक उपन्यासकारो की इतिहास धारणाएँ एव पुनर्व्याख्याएँ तथा उपन्यासो के शिल्प चक्रो का अध्ययन किया है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासो मे अपनी अन्यान्य इतिहास धारणाएँ तथा पुनर्व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं।

उपन्यासकारो की इतिहास धारणाओ का अध्ययन (क) स्वच्छन्द इच्छा एव महान् व्यक्ति (नायक पूजा) की धारणा (ख) काल चक्र, नियति चक्र, कर्म चक्र, (ग) हिन्दू दृष्टिकोण, (घ) धार्मिक एव नैतिक ग्रन्थ चरित्र के नियामक (ङ) स्वयवर एव दिग्विजय (च) हिन्दू इतिहास के स्वर्णयुग को आदर्श काल एव पौराणिक युगो के प्रतिबिंब के रूप मे तथा (छ) सामान्य इतिहास धारणाएँ शीर्षको के अन्तर्गत किया है ।

(क) लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासकार मानव की स्वच्छन्द इच्छा तथा एक महान् व्यक्ति को समस्त ऐतिहासिक घटना-प्रवाह की नियोजक शक्ति के रूप मे स्वीकार करते हैं । महान् व्यक्ति की यह धारणा यहाँ पर नायक पूजा की धारणा के साथ जुड कर उभरी है । लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासो के नायक एव सामान्य पात्र अपनी स्वच्छन्द इच्छा के अनुसार काय करते हैं ।

(ख–ग) प्राचीन भारतीय इतिहास दर्शन के अनुरूप ही विवेच्य लेखक काल-चक्र, नियति-चक्र, कर्म-चक्र तथा इतिहास के सबध मे हिन्दू दृष्टिकोण को लेकर चलते हैं । इस प्रकार की इतिहास धारणाएँ यद्यपि आधुनिक एव वैज्ञानिक इतिहास दर्शन के सिद्धान्तो के अनुरूप नही हैं फिर भी अपने आप मे यह एक सपूर्ण इतिहास दर्शन का निर्माण करती हैं जिसका विवेच्य लेखको ने अपनी कृतियो में प्रयोग किया है ।

(घ) प्राचीन धार्मिक एव नैतिक ग्रन्थ तथा उनमे दिए गए उपदेश उपन्यासो के चरित्रो को नियोजित करते हैं । चरित्रो के साथ साथ इन ग्रन्थों की धारणाएँ एव मान्यताएँ घटना प्रवाह को भी प्रभावित करती हैं ।

(ङ) स्वयवर एवं दिग्विजय भारतीय इतिहास चेतना के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण इतिहास-विचार हैं जिनका विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे प्रयोग किया गया है । कई बार यह प्रयोग स्वयवर एव दिग्विजय का पूर्ण अर्थ न देते हुए भी उनका आभास मात्र दे जाते हैं ।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार (च) प्राचीन हिन्दू इतिहास के स्वर्ण युग को आदर्श काल के रूप मे तथा पौराणिक युगो के प्रतिबिंब के रूप मे स्वीकारते हैं । इस इतिहास विचार को स्पष्ट एव सीधी अभिव्यक्ति देने के स्थान पर विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण करते समय, मध्ययुगो मे उनका प्रक्षेपण किया है । हमारे विचार मे विवेच्य लेखकों की इस इतिहास-धारणा के पीछे उनकी अपनी सनातन हिन्दू धर्म की मान्यताओ के प्रति प्रतिबद्धता क्रियाशील थी ।

(छ) इतिहास की पुनर्व्याख्या करने की प्रक्रिया मे विवेच्य लेखकों ने मुसलमानो को प्रत्येक बुराई के मूल मे देखा है । यहाँ मैंने मुसलमान शासकों को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे स्वीकार करते हुए डॉ० मेघ की धारणा के अनुरूप विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे इसका अध्ययन किया है ।

विवेच्य लेखक मध्ययुगो के सामाजिक पतन के मूल मे कलयुग, दुर्भाग्य अथवा वर्णाश्रम व्यवस्था के भग होने को ही स्वीकार करते है।

हमारा विचार है कि इतिहास की यह पुनर्व्याख्याएँ लेखको की मुसलमानो, मुसलमान शासको तथा मुसलमान इतिहासकारो के प्रति अविश्वास की धारणा के परिणाम स्वरूप उभर कर आई हैं।

दूसरे खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यासो मे चरित्र तथा इतिहास चेतना का अध्ययन किया है यहाँ मध्ययुगो के पात्रो के चरित्र तथा मध्ययुगीन इतिहास चेतना के अन्तर्संबन्धो का वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण किया गया है।

इन ऐतिहासिक उपन्यासो मे लगभग सभी हिन्दू पात्र हिन्दू राष्ट्रीयता एव हिन्दू नैतिकता की धारणा द्वारा परिचालित होते हैं। यही धारणा उनके क्रिया-कलापो तथा गतिविधियो को प्रभावित करती है । जातीय दर्प की सामन्ती धारणा भारतीय मध्य युगो के पात्रो के चरित्र की वह मौलिक प्रवृत्ति है जो उनके चरित्र के लगभग सभी पक्षो को नियोजित करती है मैंने विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे इन धारणाओ की खोज की है।

दरबारी सस्कृति की मध्ययुगीन इतिहास-धारणा के अनुरूप इन ऐतिहासिक उपन्यासो मे शौर्य, प्रतिद्वन्द्वता तथा भोग की चारित्रिक विशेषताएँ उभर कर आई है। भारतीय मध्य युगो का पुन प्रस्तुतिकरण करते समय इन ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने इन तीनो चारित्रिक विशेषताओ का मध्ययुगीन इतिहास चेतना के अनुरूप चित्रण किया है। इसके साथ ही एकान्तिक एव व्यक्तिगत प्रेम की चारित्रिक प्रवृत्तियो का भी चित्रण किया गया है।

इस प्रकार इस खण्ड मे हमने भारतीय मध्य युगो की इतिहास चेतनातथा ऐतिहासिक परिस्थितियो के अनुरूप चरित्र चित्रण का अध्ययन किया है।

तीसरे खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यासो मे घटनाओ की प्रामाणिकता का अध्ययन किया है। यहाँ ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास की स्थिति के सबध मे अन्यान्य आलोचको एव मौलिक ऐतिहासिक उपन्यासकारो के विचार प्रस्तुत करने के पश्चात् ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित घटनाओ को इतिहास-पुस्तको द्वारा प्रमाणित किए जाने का अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि सामान्यत सभी ऐतिहासिक उपन्यास, इतिहास की पुस्तको द्वारा अपनी सामग्री तथा मुख्य घटनाओ की ऐतिहासिक प्रामाणिकता को ध्यान मे रखते हैं। यद्यपि इसके अपवाद स्वरूप कई अनैतिहासिक घटनाओ एव प्रसगो की उद्भावना की गई है। परन्तु वह अत्यन्त नगण्य है।

चौथे खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यासो मे देशकाल तथा वातावरण का अध्ययन किया है। इस अध्ययन को (1) काल एव (II) देश दो भागो मे विभक्त कर लिया गया है।

(i) काल के अन्तर्गत हमने ऐतिहासिक यथार्थवाद की इतिहास धारणा का सैद्धान्तिक विवेचन किया है जिसके अनुसार मानवीय अतीत का अध्ययन आधुनिक दृष्टिकोण से किया जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे आदर्श हिन्दू राज्य की प्राचीन धारणा का भारतीय मध्ययुगो मे प्रक्षेपण किया गया है। यह विवेच्य लेखकों के युग की मूल इतिहास मान्यताओ के अनुरूप ही किया गया है।

(ii) देशकाल के नियामक तत्वों के रूप मे वस्त्राभूषण, पात्रों का आचार व्यवहार एवं शिष्टाचार, भित्ती चित्र एव महलों क अवशेष, शासकों की उपाधियाँ एव सबोधन आदि विषयो को लिया गया है। इन सभी तत्वो की विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे खोज की गई है तथा उनके द्वारा प्राचीन काल के प्रभाव एव वातावरण के निर्माण में पहुँची महायता की ओर भी सकेत किया गया है।

(iii) देश के अन्तर्गत स्थूल प्राकृतिक तथा भू-चित्रों का वर्णन, अतीत युगीन घटनाओ के घटित होने के लिए एक रगमच का निर्माण करता है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे इन दोनो तत्वों का विपुल मात्रा मे प्रयोग किया गया है तथा उनसे एक विशिष्ट युग के वातावरण के निर्माण में सहायता प्राप्त हुई है।

लोक कथाएँ, लोक गाथाएँ एव लोक-गीत आदि लोक-तत्वों के प्रयोग ने ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने भारतीय मध्ययुगो का चित्रण करते समय उसे अधिक सजीव एव बुद्धिगम्य रूप मे प्रस्तुत किया है।

भारतीय मध्ययुगों के सामन्ती जीवन का चित्रण करने मे तथा मध्ययुगीन पात्रों को उभारने मे कालानुरूप राजनैतिक, सामाजिक धार्मिक एव जातीय मानदण्डो को दृष्टिगत रखा गया है। मैंने इन सभी तत्वो को विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे ढूढा है तथा उनके माध्यम से वातावरण निर्माण मे मिली सहायता की ओर सकेत किया है। इसके साथ ही भारतीय मध्ययुगो के राजा तथा प्रजा के कर्त्तव्यो की ओर भी सकेत किया गया है।

पाँचवें खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यासों मे उपन्यासकार के युग के प्रतिबिंब का अध्ययन किया है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो में उपन्यासकार का युग दो प्रकार से उभर कर आया है—वर्तमान का प्रत्यक्ष चित्रण तथा लेखक के युग का अप्रत्यक्ष प्रक्षेपण।

(क) वर्तमान के प्रत्यक्ष चित्रण द्वारा विवेच्य लेखको ने ऐतिहासिक स्थितियो का चित्रण करते समय एक दम ऐतिहासिक झटका लगाते हुए वर्तमान अथवा निकट अतीत के उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जो निश्चित रूप मे एक कलात्मक त्रुटि है।

(ख) लेखक के युग का भारतीय मध्य युगो में अप्रत्यक्ष प्रक्षेपण इन लेखकों की एक कलात्मक उपलब्धि है। यहाँ पुनरुत्थानवादी हिन्दू धारणा, सनातन हिन्दू धर्म परक धारणाएँ एव मान्यताएँ मध्य युगो मे प्रक्षेपित की गई है।

इस प्रकार इस खण्ड मे हमने ऐतिहासिक उपन्यासो मे लेखको के युग के प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष प्रतिबिम्बन का अध्ययन किया है।

छठे खण्ड मे हमने विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे उपन्यासकारो की जीवन-दृष्टियो एव जीवनदर्शन का अध्ययन किया है। यहाँ विवेच्य लेखको की हिन्दू धर्म, हिन्दू राष्ट्रीयता, नारी, दास प्रथा तथा अन्य जीवन-दृष्टियो एव जीवन दर्शनो के सम्बन्ध मे अध्ययन किया गया है तथा इन प्रवृत्तियो की विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे खोज की गई है।

सब मिलाकर इस अध्याय मे हमने प्रेमचन्द पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यासो मे प्रयुक्त इतिहास धारणाओ तथा उपन्यासो के शिल्प चक्रो का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया है। ऐसा करते हुए प्राचीन भारतीय इतिहास चेतना तथा आधुनिक इतिहास-दर्शनो एव थ्यूरियो के सन्दर्भ मे ही ऐतिहासिक उपन्यासो की ऐतिहासिकता तथा उपन्यास-कला का अध्ययन किया है।

छठा अध्याय

छठे अध्याय मे 'ऐतिहासिक रोमासकार तथा ऐतिहासिक रोमांसों मे रोमांस के अनेकरूपेण सम्बन्ध' मे प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक रोमांसो का अध्ययन इन सात खण्डो मे किया गया है—

ऐतिहासिक रोमासो मे (क) रोमास के तत्त्व, (ख) रोमांटिकता, (ग) अश्लीलता, (घ) कामुकता, (ङ) साम्प्रदायिकता (च) तिलिस्म एव जासूसी तथा (छ) इतिहास की स्थिति।

पहले खण्ड 'ऐतिहासिक रोमासो मे रोमांस के तत्त्व' मे विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे (i) बौद्धिकता विरोध, शास्त्रीयता विरोध, समकालीनता विरोध व जादू टोना, (ii) रोमासो का नायक, (iii) वातावरण एव पात्र तथा (iv) कथावस्तु (प्लाट) मे साहसिकता पूर्ण कार्य, नायक व खलनायक मे प्रबल सघर्ष नायक के दैवी कार्यों तथा मिथक निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। यहाँ हमने ऐतिहासिक रोमासो मे हीरोइक रोमासो, गोथिक रोमासो तथा पिक्चरेस्क आदि के तत्त्वो के सम्मिलन की प्रक्रिया का सैद्धान्तिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

दूसरे खण्ड 'ऐतिहासिक रोमांसो मे रोमांटिकता' मे प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक रोमासो मे (i) रोमाटिक नायक · आदर्श प्रेमी (ii) प्रेम शृंगार एव मधुचर्या (iii) नायक नायिका आदर्शों के लिए बलिदान तथा (iv) कवित्वपूर्ण वातावरण निर्माण आदि का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। विवेच्य रोमासकार भारतीय मध्ययुगो की पुनर्रचना की प्रक्रिया मे जिस रोमाँटिक वृत्ति को उभारते हैं वह वास्तव मे इनकी अपनी भावनाओ तथा विचारो का अतीत मे प्रक्षेपण है। इनकी सहायता से वे मध्य युगो की अधिक सजीव एव बुद्धिगम्य पुनर्रचना करने मे सफल हुए हैं।

xviii ऐतिहासिक उपन्यास और ऐतिहासिक रोमांस

तीसरे खण्ड मे ऐतिहासिक रोमासो मे अश्लीलता का विभिन्न धरातलो पर अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन (i) नग्नता एवं खुला सम्भोग (ii) अनैतिकता (iii) अचारित्रिकता तथा (iv) निर्वसनता एवं नग्नता आदि तत्त्वो के अन्तर्गत किया गया है। यहाँ विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे इन तत्त्वो की खोज की गई है तथा अश्लीलता एवं कामुकता की भिन्नताओ का सैद्धान्तिक विवेचन किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि अश्लीलता के अन्यान्य तत्त्वो को मुसलमान शासको के माध्यम से उभारा गया है, जो सामान्यत खलनायक एवं अतिदानवीय रूपो मे चित्रित किए गए हैं।

चौथे खण्ड मे ऐतिहासिक रोमासों मे कामुकता का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसे तीन भागो मे विभाजित किया है–(i) कामुकता की धारणा, (ii) कामुकता की रोमानिक धारणा मे उदात्तीकरण तथा (iii) नखशिख वर्णन। मध्ययुगो में कामुकता की धारणा सामान्यत शूरता की धारणा से जुड़ कर उभरती है जिनके कलात्मक सम्मिलन से रोमानिक वातावरण एवं पर्यावरण की उत्पत्ति मे सहायता प्राप्त होती है। कामुकता का वर्णन एवं चित्रण सामान्यत राजपूत एवं हिन्दू शासको एवं राजकुमारियो के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है, इससे उनमे उदात्तीकरण तथा नैतिक जिम्मेदारी के भाव अधिक महत्त्वपूर्ण रूप मे उभरते हैं। गोस्वामी जी ने अपने ऐतिहासिक रोमासो मे नायिकाओ के नखशिख का चित्रण अलग परिच्छेदो मे प्रस्तुत किया है।

पाँचवे खण्ड मे ऐतिहासिक रोमासो मे साम्प्रदायिकता का अध्ययन दो उपखण्डो के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है—(i) हिन्दू धर्म के प्रति प्रतिबद्ध, तथा (ii) हिन्दू पावन एवं श्रेष्ठ, मुसलमान अशुद्ध एवं हीन सामान्यत लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकार सनातन हिन्दू धर्म की अन्यान्य धारणाओ एवं मान्यताओ के प्रति व्यक्तिगत रूप मे प्रतिबद्ध थे। इसी के परिणामस्वरूप वे मध्ययुगीन मुसलमान शासको तथा उनके आश्रित मुसलमान इतिहासकारो के प्रति गहरी घृणा तथा पूर्वाग्रह से युक्त रवैया अपनाते हैं। अपनी कृतियों मे वे हिन्दू नायको को अत्यन्त पावन, शूरवीर एवं श्रेष्ठ रूप मे प्रस्तुत करते है जबकि मुसलमान शासको को खलनायक, अतिदानवीय, अशुद्ध एवं हीन रूप मे चित्रित करते हैं।

छठे खण्ड मे ऐतिहासिक रोमासो मे तिलिस्म एव जासूसी के अन्यान्य तत्त्वो एवं उपकरणो का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। मध्ययुगो मे इन तत्त्वो का चित्रण करते समय इनमें कई परिवर्तन आ गए हैं जिनकी ओर संकेत कर दिया गया है। वास्तव में तिलिस्म एवं जासूसी प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास का इतना महत्त्वपूर्ण तत्त्व बन चुका था कि उसके प्रयोग के बिना उपन्यास को अपूर्ण समझा जाता था। तिलिस्म तथा ऐयारी के वर्णनो के माध्यम से भय, आतंक एवं रोमांच के भावो की उत्पत्ति में भी सहायता प्राप्त हुई है।

सातवें खण्ड मे ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास की स्थिति का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। सामान्यत विवेच्य रोमासकार ऐतिहासिक घटनाओ एव प्रसगो का वर्णन उपोद्घात अथवा निवेदन मे कर देते थे और फिर रोमासिक प्रवृत्तियो एव रोमास के तत्त्वो के चित्रण मे उलझ जाते है। कई बार सक्षेप मे ऐतिहासिक घटना का चित्रण करने के पश्चात् वे अन्य विषयो को मुख्य रूप से प्रस्तुत करते है। इस प्रकार सामान्यत ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास एक आरोपित तत्त्व अनुभव होता है।

इस अध्याय मे हमने कुल मिला कर ऐतिहासिक रोमासो मे रोमास के अनेकरूपेण सम्बन्धो तथा रोमाटिकता के तत्त्वो का अध्ययन प्रस्तुत किया है।

सातवां अध्याय

इस अध्याय में हमने (क) ऐतिहासिक रोमासो मे वैयक्तिक तत्त्वो की अतिरजना पूर्ण अभिव्यक्ति तथा (ख) ऐतिहासिक रोमासो मे तथ्यो तथा घटनाओ की अवर्नमिल विकृतियो का अध्ययन किया है। पहले खण्ड मे लेखक के समकालीन युग के विशिष्ट तत्त्व तथा ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्वो की अतिरजित अभिव्यक्ति का अध्ययन किया है।

नारी उद्धार तथा समाज सुधार लेखको का समकालीन विचार है जिसे उन्होंने मध्ययुगो मे प्रक्षेपित किया है। यद्यपि विवेच्य लेखक सनातन हिन्दू धर्म के परम्परावादी स्वरूप के पुन स्थापना के पक्ष मे थे,परन्तु इस प्रकार की सुधार भावना को वे आंशिक रूप से स्वीकार करते है।

(ii) ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्वो मे हमने स्वयवर एव दिग्विजय तथा हिन्दू मुस्लिम सघर्ष के इतिहास विचारो की विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे खोज की है। हमने यह पाया है कि यद्यपि स्वयवर एव दिग्विजय के इतिहास विचार अपने पूर्ण अर्थो मे यहाँ उभर कर नही आ सके, परन्तु मध्ययुगो मे हिन्दू राजाओ के कम सख्या मे होने पर भी प्रबल शत्रु पर विजय अथवा उनका सामना करना दिग्विजय का आभास देता है। इसी प्रकार नायक एव नायिका का विवाह से पहले मिलना तथा एक दूसरे का चुनाव करना स्वयवर की इतिहास धारणा का आभास देता है।

शूरता तथा कामुकता की मध्ययुगीन धारणाएँ विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे प्रचुर मात्रा मे उभर कर आई हैं। वहाँ इनका स्वरूप अतिमानवीयता तथा अति दानवीयता की इतिहास धारणा के साथ जुड कर उभरा है। शूरता तथा कामुकता दोनो ही मध्ययुगो तथा ऐतिहासिक रोमासो के अभिन्न अगो के रूप मे चित्रित किए गए है।

अन्त पुर, राज्य सभा, युद्धस्थल,मत्रणा गृह तथा आश्रम भी ऐतिहासिक काल के वे विशिष्ट तत्त्व हैं जिनकी मैंने विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे खोज की है।

मैंने यह पाया है कि लगभग सभी ऐतिहासिक रोमास लेखक भारतीय मध्ययुगो का पुनर्निर्माण करते समय अन्त पुर तथा राजसभाओ को शासको के व्यक्तिगत मामलो तथा अति कामुकता पूर्ण कार्यो के स्थल के रूप मे प्रस्तुत करते हैं यहाँ युद्ध स्थल अत्यन्त भयानक तथा आश्रम अत्यन्त शाति पूर्ण वातावरण को उभारते हैं।

इस प्रकार इस खण्ड मे हमने ऐतिहासिक रोमासो मे लेखको के उनके समकालीन युग के तथा ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्वो का सैद्धातिक विवेचन किया है।

इस अध्याय के दूसरे खण्ड मे हमने (ख) ऐतिहासिक रोमासो मे तथ्यो तथा घटनाओ की अवनर्मिल विकृतियो का अध्ययन किया है। यह अवनर्मिल विकृतियाँ अलौकिक, असम्भव तथा रोमास के अन्यान्य तत्त्वो के ऐतिहासिक रोमासो मे मिलने से उभरी हैं।

यहाँ हमने (i) सैक्स (ii) जाति (iii) घटनाओ एव (iv) युग के आधार पर तथ्यो एव घटनाओ की विकृतियो का अध्ययन किया है। (i) सैक्स के अन्तर्गत मुसलमान शाहजादियो की ख्वाबगाहे तथा राजपूतो के अन्त पुर उनकी विलास लीलाएँ तथा मधुचर्या का विकृत रूप में वर्णन, पतन दिखाते-दिखाते पतन का भोग करने की प्रवृत्ति विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे सेक्स के चित्रण को विकृत कर डालती है। लगभग यही स्थिति प्रेम तथा नारी के सबध मे ऐतिहासिक रोमासो मे उभर कर आई है।

(ii) जाति के आधार पर भी तथ्यो तथा घटनाओ को अवनर्मिल रूप से विकृत करके प्रस्तुत किया गया है। यहाँ हिन्दू पात्रो को बहुत अच्छा तथा मुसलमान पात्रो को बहुत बुरा प्रदर्शित किया गया है।

(iii) घटनाओं तथा (iv) युग के सबध मे भी विवेच्य लेखको की धारणाएँ अवनर्मिल रूप धारण कर लेती हैं। इन ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दुओ के कार्यो को बलिदान के रूप मे तथा मुसलमानो के कार्यों को छल कपट एव यौनाचार के रूप मे उभारा गया है इसके साथ ही वे प्राचीन हिन्दू स्वर्ण युग को आदर्श युग के रूप मे तथा वर्तमान युग अर्थात् मुसलमान युग को बेहद भ्रष्ट रूप मे प्रस्तुत करते हैं।

हमारा विचार है कि मध्य युगो के अध्ययन के समय विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे आध्यात्म तथा यौन दो परस्पर नितात विपरीत ध्रुवो के परिणाम स्वरूप धर्म एव काम के दो ध्रुवो के बीच की अन्तर्प्रक्रिया के माध्यम से ही इस समस्या को भली भाँति समझा जा सकता है।

आठवाँ अध्याय

कला पक्ष—इस अध्याय मे हमने हिन्दी मे प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमास धारा की (क) उपन्यास कला (ख) चरित्राकन के तकनीक तथा (ग) भाषा और शैली का अध्ययन किया है।

इस अध्याय मे हमने विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो तथा ऐतिहासिक रोमासकारो द्वारा उनकी कृतियो मे अतीत के चरित्रो को चित्रित करने के लिए प्रयुक्त तकनीको का अध्ययन प्रस्तुत किया है। भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण करते समय इन लेखको ने कई पात्रो की उद्‌भावनाएँ की हैं जो अतीत को सजीव रूप से प्रस्तुत करने मे सहायक बन पडे हैं।

सामान्यत, सभी लेखको ने (i) पात्रो की दो विरोधी कोटियो को उभारा हैं, जो एक दूसरे के विपरीत ऐतिहासिक एवं औपन्यासिक घटनाओ की प्रक्रिया मे क्रियाशील रहती है। सामान्यत हिन्दू नायक तथा मुसलमान खलनायको को उपन्यास के कैन्वस पर उभारने का प्रयत्न किया गया है। उनमे प्रवृत्तिगत एव चरित्रगत विभिन्नताएँ कलात्मक ढग से प्रस्तुत की गई हैं। उनके आपस के भयानक सघर्ष तथा अन्त मे न्यायपूर्ण एव सत्यव्रती नायक की विजय लगभग सभी विवेच्य कृतियो मे प्रस्तुत की गई हैं।

पात्रो की इन परस्पर विरोधी कोटियो के साथ-साथ विवेच्य कृतियो में (ii) पात्र-द्वय की तकनीक का भी प्रयोग किया गया है। इस तकनीक के अनुरूप सामान्यत विवेच्य कृतियो मे नायक के साथ उसके सहायक, सखा अथवा मत्री के रूप मे एक पुरुष पात्र तथा नायिका के साथ उसकी किसी सखी आदि की उद्‌भावना की गई है। नायक तथा नायिका के सहयोगी पात्र अत्यन्त स्वामी भक्ति पूर्ण ढग से एक दूसरे की अन्यान्य कार्यो मे सहायता करते हैं तथा अन्त मे नायक नायिका के मिलन एव विवाह के साथ-साथ इन सहयोगी पात्रो के मिलन का भी चित्रण किया गया हैं।

(iii) चरित्रो मे विरोधाभास अथवा पात्रो के मानस के अन्तर्द्वन्द्वो को प्रस्तुत करने की तकनीक यद्यपि प्रेमचन्द पूर्व के हिन्दी उपन्यास मे अपने पूर्ण रूप मे नही उभर पाई थी फिर भी 'लालचीन', 'वीर मणि' तथा 'पानीपत' आदि उपन्यासो मे चरित्र चित्रण की इस तकनीक के उच्च स्तरीय एव कलात्मक उदाहरण देखने को मिले हैं।

चरित्र चित्रण की इन तकनीको के साथ-साथ विवेच्य लेखको ने अपनी कृतियो मे (iv) चरित्राकन की सीधी अथवा वर्णनात्मक शैली का भी प्रयोग किया है। इस प्रकार का चरित्र चित्रण कलात्मक दृष्टि से अत्यन्त सामान्य स्तर का समझा जाता है।

इन ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे पात्रो के व्यक्तिगत चरित्राकन के साथ-साथ (v) सामूहिक चित्राकन भी किए गए है। विवेच्य लेखकों ने सेनाओ, मन्दिरो एव जातियो आदि के सम्बन्ध मे इस प्रकार की तकनीक के माध्यम से उनके सामूहिक चरित्र को उभारने का प्रयत्न किया है।

(vi) घटनाओ, कथोपकथनों तथा अन्य पात्रो के माध्यम से चरित्रो का उद्‌घाटन करने की तकनीक का भी विवेच्य लेखको ने अपनी कृतियो मे प्रयोग किया

है इस प्रकार पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ के सम्बन्ध मे स्वय कोई वक्तव्य देने के स्थान पर उन्हे घटनाओ, कथोपकथनो तथा पात्रों के माध्यम से उभारते हैं। चरित्र चित्रण की यह तकनीक भी कलात्मक दृष्टि से उच्च कोटि की मानी जाती है जिसे विवेच्य लेखको ने पर्याप्त सफलता पूर्ण ढग से प्रयुक्त किया है।

हमारा विचार है कि प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे चरित्र चित्रण की अन्यान्य तकनीको के प्रयोग द्वारा विवेच्यलेखक पात्रो के चरित्रो को सफलता पूर्वक उभार पाए हैं, जो एक कलात्मक उपलब्धि है।

प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यासों की (ङ) भाषा शैली के सम्बन्ध में सामान्यत विद्वानों का दृष्टिकोण पूर्वाग्रही है। परन्तु मैंने इस खण्ड में विवेच्य लेखको की भाषा शैली के सम्बन्ध मे उनकी उपलब्धियो को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

(i) ऐतिहासिक पात्रो द्वारा अपने पद, जाति एव स्तर के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया जाना विवेच्य लेखको की एक महत्त्वपूर्ण कलात्मक उपलब्धि है जिसे हमने स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

विवेच्य कृतियो मे (ii) अलंकृत एव काव्यात्मक भाषा के प्रयोगों द्वारा नारी सौन्दर्य एव प्रकृति चित्रणो का प्रस्तुतिकरण किया जाना भी एक कलात्मक उपलब्धि है जिसका हमने सैद्धान्तिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

(iii) मुहावरे, लोकोक्तियाँ, भाषा को अधिक स्पष्ट एव बुद्धिगम्य बनाती हैं। विवेच्य लेखको द्वारा इस प्रकार की वाक्याश परक भाषा के प्रयोगों के अध्ययन द्वारा मैंने विवेच्य कृतियो के इस गुण की ओर सकेत किया है।

प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमासों मे (iv) सस्कृत, उर्दू तथा अग्रेजी भाषा के शब्दो के प्रयोग से यद्यपि कई स्थानों पर भाषा सम्बन्धी समस्याएँ उभरी हैं,परन्तु कुल मिला कर इन भाषाओ के शब्दो के प्रयोग द्वारा लेखक अपने विषय को अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत कर पाए हैं।

(v) ऐतिहासिक स्थितियों के अनुकूल भाषा का प्रयोग भी विवेच्य लेखको की एक कलात्मक उपलब्धि है जिसकी ओर हमने सकेत किया है।

ग्रामीण भाषा के प्रयोगों द्वारा जहाँ एक ओर विवेच्य लेखको ने भारतीय मध्ययुगों के पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण अधिक सजीव ढग से किया है, वहीं उपन्यासो मे आचलिकता के रगों को भी उभारने में सहायता मिली है।

हमारे विचार से कुछ दोषों के होते हुए भी इन ऐतिहासिक कृतियो की भाषा अपने आप में एक कलात्मक उपलब्धि है।

सामान्यत इन कृतियो मे लेखको ने कथावाचको जैसी शैली का प्रयोग किया है वे एक किस्सागो के समान पाठको को सम्बोधित करते हुए भारतीय अतीत की कहानी कहते हैं।

इस प्रकार इस अध्याय मे, प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास-रोमास धारा के कथा-शिल्प, चरित्राकन तथा भाषा शैली का सैद्धान्तिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

इसलिए अन्त मे, अत्यन्त विनय के साथ मैं कह सकता हूँ कि इस अध्ययन के लिए मैंने सविस्तार मूल सामग्री का सीधा उपयोग किया है और इसी वजह से अनेकानेक पूर्वाग्रहो तथा भ्रातियो का एक महाजाल विच्छिन्न किया जा सका है। यही सतोष है कि मुझे अपने लक्ष्य मे पर्याप्त सफलता मिली है, यद्यपि मेरी तथा विषय की अनेक सीमाएँ भी रही है। यह निश्चित है कि इस विषय क्षेत्र मे अभी भी विपुल सभावनाएँ विद्यमान हैं।

आभार एव समापन—मैं अपने निदेशक डॉ॰ रमेश कुन्तल 'मेघ' के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने मुझे इस विषय पर कार्य करने की प्रेरणा प्रदान की। उनके निर्देशन के अतिरिक्त उनके निजी पुस्तकालय से भी मुझे सहायता मिली है।

डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान तथा डॉ॰ मैथिलीप्रसाद के प्रति भी आभारी हूँ। समय-समय पर उनकी सम्मति तथा सहायता मुझे प्राप्त होती रही है।

शोध प्रबन्ध के निर्माण मे मैं श्री इन्द्रजीत कोच्छड तथा अमरजीत कोछड के सहयोग के लिए उनका आभारी हूँ। इस कार्य मे मैं रिसर्च पब्लिकेशन्स के श्री पी॰ जैन का भी आभारी हूँ।

पाठ्य सामग्री के अध्ययन सकलन के लिए मैं पजाब यूनिवर्सिटी, चण्डीगढ के पुस्तकालय तथा आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी, के अधिकारियो एव कर्मचारियो की सहायता के प्रति भी अनुगृहीत हूँ।

टकन की प्रतियो का सशोधन पूरी तरह कर लिया गया है, फिर भी, मशीन तथा मानवीय सामर्थ्य की सीमाएँ होती हैं। इनके लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ।

मेरी यह सहज अभिलाषा है कि यह शोध प्रबन्ध प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो के सम्बन्ध मे फैली भ्रातियो का निराकरण करने के साथ-साथ उनकी बेहतर समझ मे सहायक सिद्ध हो। मेरा विनम्र विश्वास है कि इस क्षेत्र मे यह शोध प्रबन्ध पहला सर्वांगीण प्रयास माना जाएगा।

—गुरदीपसिंह खुल्लर

1 इतिहास दर्शन एवं इतिहास लेखन के रूप-प्रतिरूप

इतिहास लेखन शब्द (Historiography), इतिहासवाद (Historicism) तथा इतिहास दर्शन (Philosophy of History) के संयोग से फलीभूत होता है।

इस उपक्रम में इतिहास या तो तथ्यरूप में लिया जाता रहा है, अथवा रचनारूप में। हमारे अध्ययन के वृत्त में रचनारूप में इतिहास लेखन आता है। आधुनिक हिन्दी उपन्यास जगत में प्रेमचन्द से पहले उसके 'ऐतिहासिक रोमांस' तथा 'ऐतिहासिक उपन्यास' नामक भेद-प्रभेद उन्मीलित हो रहे थे। इन दोनों भेदों में भारत के उन पुरातन कवि-इतिहासकारों, पौराणिक-आख्यानकारों तथा सूतमागध-गायकों का भी योगदान रहा है जिन्हें हमने रचनारूप इतिहासकारों की परम्परा में समाविष्ट कर लिया है।

अतः यह अध्याय इस पूरे शोध-प्रबन्ध को दर्शन और कला के सभी मूलाधारों के संदर्भ में प्रस्तुत करने का समारम्भ है।

1. इतिहास के दो रूप · तथ्य रूप इतिहास

(क) आधुनिक इतिहास क्या है—उन्नीसवीं शताब्दी में विज्ञानों की अनुपम उन्नति, तथा तद्युगीन वैज्ञानिक विचारधारा के प्रबल वेग से प्रभावित होकर इतिहास-दार्शनिक तथा इतिहास-वेत्ता[1] इतिहास ज्ञान को विज्ञान की एक शाखा बनाने तथा इतिहास-खोज की प्रक्रिया में वैज्ञानिक पद्धति व विचारों के प्रयोग को आवश्यक समझने लगे। रैंके (1830 का दशक) एक्टन (1890 का दशक) जे. बी. बरी तथा ग्रैडग्रिंड (Gradgrind) इस विचारधारा के मुख्य इतिहास-वेत्ता हैं।

(ख) वैज्ञानिक ढंग एवं विचार—इस काल खण्ड में वैज्ञानिक पद्धति से ज्ञान प्राप्त करने की परम्परा अत्यन्त लोकप्रिय तथा सशक्त हो गई थी। इसी के प्रभावस्वरूप उनके कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत न होने पर भी इतिहास को विज्ञान की एक

1. Hans Meyerhoff के मतानुसार 'इतिहासकार नहीं प्रत्युत इतिहास दार्शनिक अपने अनुशासनों की वैज्ञानिक प्रतिष्ठा (Scientific respectability) का पक्ष लेते हैं, जो अपने वस्तुपरकवादी इतिहास की सम्भाव्यता के लिए सशक्त बहस करते हैं।"—"The Philosophy of History in our Time", Page 16

शाखा स्वीकार किया गया तथा मानव-अतीत का अध्ययन, प्रकृति के अध्ययन के समान किया जाने लगा।

इस प्रकार के इतिहासकारों को हेतुवादी, सिद्धान्तवादी (Academic), वस्तुपरकवादी (Objectivist) तथा आलोचना-परक आदि संज्ञाएँ दी गई हैं।

हेतुवादी एवं सिद्धान्तवादी इतिहासकार अतीत का 'ठीक वैसा ही प्रस्तुतिकरण करने जैसा कि वास्तव में घटित हुआ था' का दावा करते हैं। वे दस्तावेजों को 'सर्वोपरि' मानते हैं। उनकी कार्य प्रणाली में दस्तावेजों का सूक्ष्म परीक्षण, उनका सत्यापन, उन पर विचार तथा विश्लेषण करना और उनको सुव्यवस्थित करना आदि मुख्य हैं।[1] इतिहास को विज्ञान बनाने के दावे के अनुरूप हेतुवादियों ने तथ्यों की यथारूपता तथा सर्वोच्च स्थिति की धारणा को अधिक सशक्त बनाया।[2] वे तथ्यों को मूल में रखने के पश्चात् उन्हीं में से निर्णय लेने के पक्ष में हैं।

इस प्रकार तथ्यरूप इतिहास आधुनिक वैज्ञानिक इतिहास के रूप में उभरता है। ए० एल० राऊस के मतानुसार, 'आज आधुनिक इतिहास, जिसे नया इतिहास भी कहा जा सकता है, जैसा कि वह पुराने इतिहास से भिन्न है। नया इतिहास उनके द्वारा लिखा जाएगा जिनके विश्वास के अनुसार इतिहास 'सरल साहित्य' (Bells letter) का एक विभाग तथा केवल एक रमणीय, शिक्षाप्रद तथा मनोरंजक विवरण ही नहीं विज्ञान की एक शाखा है।'[3] तथ्यरूप अथवा वैज्ञानिक इतिहास में साक्ष्य की परीक्षा करने व निर्णय लेते समय प्रत्येक बिन्दु पर सतर्क रूप से एकदम ठीक रहना तथा पक्षपात के भय से निरन्तर सतर्क रहना अत्यन्त आवश्यक है। यह इतिहास-लेखन के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था। इस प्रकार, इस इतिहास रूप के अन्तर्गत दस्तावेजों, शिलालेखों, खण्डहरों, अवशेषों, भौगोलिक स्थितियों तथा अतीत के राजनीतिक मामलों का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया जाता है।

हिन्दी के आरंभिक उपन्यासकार भी नए-नए पुरातात्विक उद्घाटनों से प्रेरित और मुग्ध होकर ऐसे ऐतिहासिक तथ्यों को कल्पना, रोमांस और रोमांच से अतिरंजित करके प्रस्तुत करने की नई विधा का प्रतिविन्यास करने लगे।

(ग) परिभाषाएँ—मनुष्य के जीवन के अतीत की घटनाएँ, स्वयं तथा उन घटनाओं का विवरण दोनों ही इतिहास हैं। क्रोचे के मतानुसार "समस्त इतिहास समसामयिक इतिहास है। अर्थात् हम अतीत का ज्ञान केवल साक्ष्यों द्वारा प्राप्त करते हैं, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वर्तमान में उपलब्ध हैं।"[4] इस प्रकार तथ्य जो इतिहासकार की अनिवार्य सामग्री का निर्माण करते हैं, इतिहास-लेखन का अनिवार्य घटक होने पर भी स्वयं इतिहास नहीं है।

1 The Problem of History and Historiography, P-41
2 What is History E H Carr, P-9
3 "The Use of History" A L. Rouse, P 86
4 Ibid, P-44

ई. एच कार के मतानुसार, "इतिहास, इतिहासकार तथा उसके तथ्यो के अन्तर्सम्बन्धो की निरन्तर प्रक्रिया है, वर्तमान व अतीत के बीच समाप्त न होने वाला सवाद है।"[1] अतीत केवल वर्तमान के प्रकाश मे ही बुद्धिगम्य होता है, तथा हम वर्तमान को भी केवल अतीत के ही प्रकाश मे समझ सकते हैं। अतीत के समाज को समझना तथा वर्तमान के समाज पर अधिक अधिकार पाना, इतिहास का दोहरा कार्य है।[2] इस प्रकार इतिहास समाज मे मनुष्य के अतीत की खोज की प्रक्रिया के साथ-साथ अतीत के निरतर प्रवाह मे वर्तमान का स्पष्टीकरण करने की प्रक्रिया है।

मार्क्स ने इतिहास का सबध मनुष्य व उसकी परिस्थितियो से जोड कर उसके क्षितिज का विस्तार किया है। 'इतिहास की भौतिकवादी धारणा' मे मार्क्स ने कहा था 'परिस्थितियाँ मनुष्य का उतना ही निर्माण करती है, जितना कि मनुष्य परिस्थितियो का।' उनके मतानुसार इतिहास सदैव एक 'बाह्य मानक' के साथ लिखा जाता है।[3] जीवन का वास्तविक पुन निर्माण इतिहास होता है, जबकि इतिहास स्वय सामान्य जीवन से अलग किया गया प्रतीत होता है। इस प्रकार मनुष्य के प्रकृति व इतिहास से सबध भिन्न-भिन्न है, जो इतिहास व प्रकृति मे प्रतिपक्षता स्थापित करते हैं। इसलिए इतिहास को समझने के लिए मनुष्य की प्रकृति, प्राकृतिक-विज्ञान तथा उद्योग को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

कालिगवुड के विपरीत मार्क्स ने यह धारणा स्थापित की कि व्यक्ति निष्क्रिय एजेण्ट ही नही होते प्रत्युत वे स्वय अपने इतिहास का निर्माण करते है,[4] परन्तु उनके कार्य कतिपय परिस्थितियो के अधीन होते हैं। काल के प्रवाह मे परिस्थितियो तथा उद्योगो के स्वरूप एव पद्धतियाँ बदलने से मनुष्यो के सामाजिक सम्बन्धो मे अनिवार्य परिवर्तन आते है। इसलिए 'नैतिकता, धर्म, ब्रह्मशास्त्र तथा अन्य आदर्श और इनसे सम्बन्वित अन्य चेतनाएँ अपना स्वायत्त अस्तित्व नही रखती, उनका कोई इतिहास नही, मनुष्य ने अपना विकास करते समय उन्हे भी परिवर्तित किया।[5] इतिहास के प्रति मार्क्सवादी द्वन्द्ववाद वाले दृष्टिकोण को 'इतिहास की भौतिकवादी धारणा' अथवा 'ऐतिहासिक भौतिकवाद' कहा जा सकता है।[6]

बर्कहार्ट ने कहा था, 'इतिहास एक युग का वह अभिलेख है, जिसे अन्य युग मे लिपिबद्ध करने के योग्य समझा जाए।'[7] इसके अन्तर्गत इतिहासकार द्वारा चुनाव की प्रक्रिया तथा नैतिक निर्णय लेने की अप्रत्यक्ष स्वीकृति आ जाती है।

1 E H Carr, "What is History", P 30
2 E H Carr, "What is History", P 55
3 Theories of History, Edt By Patrick Gardiner, P. 127
4 The Use of History, Page 124
5 Materialistic Conception of History by Marx, quoted from "Theories of History", P 129
6 विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक भौतिकवाद एव ऐतिहासिक यथार्थवाद का अध्ययन चौथे अध्याय के आरम्भ मे किया जाएगा।
7 What is History, P 54

इसलिए इतिहास का अध्ययन करने तथा उसकी आलोचना करने के लिए कुछ नियमो अथवा पद्धतियो का निर्माण किया जा सकता है। इतिहास की घटनाएँ अनुपम (Unique) होने पर भी 'साधारणीकरण' के कार्य-क्षेत्र मे लाई जा सकती हैं।[1]

2. कार्य-सिद्धान्त

(क) निश्चयवाद एवं स्वेच्छा :—वैज्ञानिक पद्धति से मानवीय अतीत अथवा तथ्य रूप इतिहास का अध्ययन करते समय सर्वप्रथम निश्चयवाद तथा मनुष्य की स्वच्छन्द इच्छा की समस्या उभरती है। यथार्थ रूप मे घटित घटनाएँ, जो घटित होने के पश्चात् एकदम अतीत मे सरक जाती है—और इस प्रकार तथ्य व निर्णय बन जाती है, उनके घटित होने के मूल मे जो नियामक शक्ति अथवा प्रेरणा कार्य करती है, उसका स्वरूप निर्धारित करना आवश्यक है। इस सम्बन्ध मे दो परस्पर विरोधी सूत्र इतिहास-दार्शनिको तथा इतिहास वेत्ताओ द्वारा प्रतिपादित किए गए हैं—निश्चयवाद तथा मनुष्य की स्वेच्छा।

पैट्रिक गार्डीनर के मतानुसार प्रोफेसर इसाया बर्लिन ने सर्वप्रथम इस दृष्टिकोण पर विचार किया कि मानवीय इतिहास मे जो कुछ भी घटित होता है, वह पूर्ण रूपेण अथवा अधिकांशत मनुष्यो के नियन्त्रण स बाहर की बातो द्वारा 'निश्चित' होता है।[2] ई. एच कार के अनुसार, 'निश्चयवाद' एक विश्वास के समान है कि जो कुछ भी घटित होता है उसके एक या अनेक कारण होते हैं, तथा वह भिन्न रूप से घटित नही हो सकता जब तक कि कारण अथवा कारणो मे कोई भिन्नता न आजाए।[3] एस डब्ल्यू. अलेकजेण्डर के विचारानुसार, निश्चयवाद का अर्थ है, स्वीकृत तथ्य (Data) वे जो भी हैं, जो कुछ भी घटित होता है, निश्चित रूप से घटित होता है तथा वह भिन्न नही हो सकता था। यह सिद्ध करने को कि यह (अर्थात् भिन्न) हो सकता था, का अर्थ है कि यह केवल तभी हो सकता था यदि स्वीकृत तथ्य (Data) भिन्न होते।[4]

इस प्रकार निश्चयवाद का इतिहास दर्शन, घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया मे मनुष्य की स्वेच्छा अथवा इच्छा शक्ति की प्रेरणा को अनिवार्य मानने

1. देखिए—Philosophy of History by W H Dray, P 15 17
   यहाँ इतिहास की हेतुवादी धारणा में साधारणीकरण के सम्बन्ध में हेम्पल, माइकेल स्कायवेन, निकोलस रेस्चर तथा ऐलन डोनागन आदि के मत दिए गए हैं। वे हेतुवादी होने पर भी साधारणीकरण को सीमित रूप से स्वीकारने के पक्ष मे हैं।
2. Patrick Gardiner Introductory note to Issiah Berlin's essay in 'Theories of History", Page 319-320
3. E H Carr . "What is History", Page 93
4. S W Alexander in 'Essay Presented to Earnst Cassires' 1936, P 18 reprinted in 'What is History' . E H Carr, P 93

वाले इतिहास विचार के प्रतिपक्षी (Antithesis) के रूप मे उभरता है। मार्क्स ने मनुष्य को इतिहास मे एक सक्रिय एजेंट के रूप मे स्वीकार करके भी उसे परिस्थितियो के अधीन माना है। मनुष्य स्वेच्छा से परिस्थितियाँ न तो चुन सकते हैं, न उनका निर्माण कर सकते है। ए. एल. राउस के अनुसार, निश्चयवाद तथा स्वच्छन्द इच्छा एक मौलिक प्रश्न है, जो प्रत्येक युग तथा मानसिक वातावरण मे किसी ने किसी रूप मे उभरता है, चाहे ब्रह्म-शास्त्रीय चिन्तन के युगो मे इसे सामान्यत ब्रह्म-शास्त्रीय रग ही दिया गया है।[1] विशेष रूप से हीगेल के आध्यात्मिक इतिहास दर्शन (Metaphysical) के सदर्भ मे निश्चयवाद ऐतिहासिक घटनाओ को एक रहस्यवादी स्वरूप प्रदान करता है।

इसाया बर्लिन के मतानुसार यदि निश्चयवाद मानवीय व्यवहार की वैध थ्योरी है, तो घटनाओ के घटित होने के वास्तविक तथ्यो तथा अन्य सभावनाओ मे किसी अन्तर की परिकल्पना उचित नही होगी। 'हम सदैव निर्धारित स्थितियो के सम्बन्ध मे वार्तालाप करते है कि एक दत्त घटना की सर्वोत्तम व्याख्या, उसकी पूर्व घटना के अवश्यभावी प्रभाव स्वरूप मनुष्य के नियन्त्रण से बाहर की, अनिवार्य स्थिति मे घटित हुई है, अथवा इसके विपरीत मनुष्य की स्वच्छन्द इच्छा के कारण।'[2]

इस समस्या को समूह एव व्यक्ति के इतिहास के प्रवाह मे योगदान की दृष्टि से भी देखा जा सकता है। मानवीय अतीत का अध्ययन करते समय इतिहासकार के सम्मुख मुख्य रूप से अध्ययन की दो इकाइयाँ होती है। वह उनमे से किसी का भी प्रयोग करता है। पहली इकाई है राष्ट्र, जाति, वर्ग, जन समूह अथवा कबीले की तथा दूसरी इकाई हैं—एक व्यक्ति की।

समूहो की प्रतिक्रिया लगभग निश्चित सिद्धान्तो द्वारा परिचालित होती है। समूहो की प्रतिक्रियाओ मे सादृश्य ढूढा जा सकता है। 'समूहो की स्थिति मे वैज्ञानिक विश्लेषण सर्वाधिक उपयुक्त है।'[3] समूहो मे व्यक्तियो की अधिक सख्या होने के कारण उनके सम्बन्ध मे हमारा ज्ञान पर्याप्त सीमा तक निश्चित होता है। किसी भी राष्ट्र अथवा जाति के अस्तित्व अथवा स्वतन्त्रता को हानि पहुँचाए जाने पर वे लगभग एक ही प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करेंगे।

इतिहास मे हम समूहो के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एव सवैधानिक स्थितियो तथा राज्यो के सम्बन्धो को प्रभावित करने वाले कार्यो से सम्बन्धित है न कि उनके 'घरेलू कार्यों' से।

1 A L Rouse ' The Use of History", P-102
2 Issiah Berlin 'Determinism Relativism and Historical Judgment' essay taken from "Historical Inevitability' Oxford University Press, Reprinted in "Theories of History' Page 321
3 A L Rouse "The Use of History", P. 103

यदि निश्चित परिस्थितियों के प्रवाह को इतिहास की धारा का नियामक स्वीकार कर लिया जाए, तो मनुष्य की इच्छा शक्ति एव प्रेरणा का ऐतिहासिक घटनाओं पर प्रभाव तथा मनुष्य की प्रकृति व परिस्थितियों पर अद्वितीय विजय की धारणा पर आघात पहुँचता है । ई एच कार के मतानुसार, सामाजिक-वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री अथवा इतिहासकार को मानवीय व्यवहार के उस स्वरूप पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, जिसमें उसकी इच्छा-शक्ति (Will) सक्रिय है, यह उसे यह निश्चित करने के लिए करना चाहिए कि मनुष्यों ने जो उसके अध्ययन के उद्देश्य हैं, उस कार्य को करने की इच्छा क्यों की, जो कि उन्होंने किये ।[1]

'स्वच्छन्द इच्छा' के इतिहास-विचार के अनुसार व्यक्ति स्वय ही अपनी इच्छा के अनुकूल कार्य करके ऐतिहासिक घटनाओं के प्रवाह का निर्माण करते हैं । इसाया बर्लिन इस पर रोक लगाने के पक्ष मे है ।[2] अतीत मे मनुष्यो द्वारा अन्यान्य सभावित कार्यो मे से किसी एक का चुनाव करने की प्रक्रिया को समझने के लिए तथा उसके अध्ययन की वैधता सिद्ध करने पर, 'स्वच्छन्द इच्छा' का इतिहास-विचार आधारित है । मनुष्य की स्वच्छन्द इच्छा तथा चुनाव करने की मानसिक प्रक्रिया का स्पष्टीकरण कार्य-परिणाम की थ्योरी से नहीं किया जा सकता, जैसा कि भौतिक एव प्राकृतिक विज्ञानो मे सभव है ।

मनुष्य स्वय अपनी जाति, देश, प्रान्त, परिवार, स्कूल, धार्मिक सस्थाओ तथा मित्रो के सपर्क तथा सानिध्य मे उत्पन्न तथा प्रभावित सामाजिक निर्मिति है ।[3] उसके चरित्र तथा व्यवहार के विविध पक्षो का अध्ययन इन सामाजिक, धार्मिक एव राजनैतिक सस्थाओ के सदर्भ मे किया जा सकता है, चाहे उसमे कतिपय नितान्त विशिष्टताएँ भी क्यो न हो । इस रूप मे व्यक्ति के कार्यों को एक सीमा तक निश्चित किया जा सकता है ।

अतीत के व्यक्तियो के एक समूह अथवा जाति के अश के रूप मे अध्ययन करने मे मनोविज्ञान की सहायता ली जा सकती है । उन्नीसवी शताब्दी के उदार व्यक्तिवादी के रूप मे फ्रायड मनुष्य को सामाजिक एकक के स्थान पर प्राणी शास्त्रीय एकक के रूप मे लेता था । वह सामाजिक परिवेश को ऐतिहासिक रूप से निश्चित स्थिति के रूप मे लेता था न कि मनुष्य द्वारा स्वय निर्माण एव परिवर्तन की निरन्तर प्रक्रिया के रूप मे । मनोविज्ञान की सहायता से ऐतिहासिक व्यक्तियों के कार्यों का वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता है । ई एच कार को इस पर आपत्ति

1 *E H Car "What is History"*

2 रुचि के अनुसार कार्य अर्थात् जो पूर्णरूपेण अपनी पूर्ववर्ती घटनाओं अथवा प्रकृति तथा व्यक्तियों या वस्तुओं की स्वाभाविक विशेषताओं के कारण घटित नहीं हुआ, की धारणा को कोई अर्थ देना चाहिए अन्यथा इनका उत्तरदायित्व किस पर डालेंगे । "Theories of History", P 321.

3 A L Rouse "The Use of History", P 105

है ।[1] उनके मतानुसार मनोवैज्ञानिक अध्ययन सूक्ष्म परीक्षा द्वारा ही हो सकता है, जो कि मृत व्यक्तियो के साथ नही की जा सकती । हमारा मत है कि यद्यपि मनोविज्ञान की प्रक्रिया मे सूक्ष्म परीक्षा आवश्यक है, परन्तु इतिहास लेखन की प्रक्रिया मे सामान्य ज्ञान परक मनोविज्ञान का प्रयोग, ऐतिहासिक व्यक्तियो के विचारो एव कार्यों की व्याख्या करते समय उसे अधिक से अधिक सुस्पष्ट एव बुद्धिगम्य बनाने मे सहायक सिद्ध होता है । इसी प्रकार मानवीय अतीत के अध्ययन मे व्यक्तियो की इच्छा अथवा प्रेरणा शक्ति के अधिकाधिक स्पष्टीकरण के लिए मनोविज्ञान सहायक सिद्ध होता है ।

समूहो का व्यवहार तथा व्यक्ति की स्वच्छन्द इच्छा दोनो ही इतिहास अध्ययन मे एक दूसरे की पूरक के रूप मे उभरती है । 'तथ्य यह है कि सभी मानवीय क्रियाएँ स्वच्छन्द तथा निश्चित दोनो ही होती है, यह उन पर विचार करने वाले के दृष्टिकोण पर निर्भर करता हे ।[2] व्यक्ति अपनी समस्त विशिष्टताओ के होते हुए भी एक समूह, राष्ट्र अथवा जाति का अग होता है, इसलिए इनके पारस्परिक सम्बन्ध इतने जटिल एव दृढ होते हैं कि उन्हे अलग-अलग करने से अन्यान्य समस्याएँ उभरेंगी । इतिहासकार को व्यक्ति एव समूह को एक दूसरे के पूरक के रूप मे देखना चाहिए, इसी से वह ऐतिहासिक सत्य को पा सकेगा ।

मार्क्स क्रोचे—इतिहास दर्शन के क्षेत्र मे मार्क्स का द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद तथा क्रोचे की इतिहासवाद की व्याख्या अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है । मार्क्स ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की प्रक्रिया हीगल से प्राप्त की थी, तो क्रोचे का इतिहासवाद, 1880 व 1890 के दशको मे जर्मनी के इतिहास दार्शनिक डाइल्थी आदि से अपने मतो एव सिद्धान्तो के लिए प्रेरणा एव शक्ति प्राप्त करता था । इतिहास चेतना की निरतर प्रक्रिया के धारा प्रवाह को अधिक स्पष्ट करने के लिए लेनिन तथा कालिगवुड की इतिहास थ्योरी का भी अध्ययन करना उपयुक्त है, जो मार्क्स व क्रोचे के इतिहास-विचारो को आगे बढाते है, अथवा उनकी नवीन एव अधिक उपयुक्त व्याख्या करते है ।

मार्क्स इतिहास मे महान पुरुषो अथवा नेताओ के स्थान पर समूहो को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार करता था । 'समूहो के प्रधान महत्त्व के स्वीकृत सिद्धान्त (Assumption) मे ही इतिहास मे विकासशील सिद्धान्त लागू करना सभव हो सका है ।'[3] इतिहास को 'मनुष्यो के स्वभाव, प्राकृतिक विज्ञान तथा उद्योग' की सहायता के बिना नही समझा जा सकता । भौतिकवाद की इतिहास धारणा के अनुसार 'सामाजिक निर्माण मनुष्यो को कुछ निश्चित सम्बन्धो मे बाँधते हैं, यह उनकी स्वेच्छा से स्वतन्त्र होता है । निर्माण के ये सम्बन्ध उनकी निर्माण की

1 E H Carr "What is History" P 139
2 "What is History" – E H Carr, P 95
3 'The Use of History" – A L Rouse, P 119

भौतिक शक्तियो की एक निश्चित स्थिति की ओर सकेत करते हैं।[1] निर्माण के यह सम्बन्ध समाज के आर्थिक ढाँचे का निर्माण करते हैं। यह वास्तविक आधार है जिस पर विधान तथा राजनीति का निर्माण होता है जिनके अनुरूप निश्चित सामाजिक चेतना उभरती है। इसी कारण आर्थिक आधार बदलने पर सारा सामाजिक ढाँचा तीव्रता से बदलता है।

मार्क्स नैतिकता, धर्म, ब्रह्मशास्त्र, आदर्श और राजनैतिक विचार तथा मनन के स्वायत्त अस्तित्व को नकारते हैं। इनका महत्त्व उसी सीमा तक स्वीकारा जा सकता है, जब कि वे निर्माण के तथ्यो को प्रतिबिंबित करें, अथवा आर्थिक हितो की टकराहट का प्रदर्शन करें। उन्हे ऐतिहासिक शक्तियो के रूप मे स्वीकार करना त्रुटिपूर्ण होगा।

मार्क्स, क्रोचे व कालिंगवुड के विचारो के विरुद्ध यह मत व्यक्त करते हैं कि 'मनुष्य स्वय अपने इतिहास का निर्माण करते हैं, परन्तु यह वे अपनी इच्छानुसार, अथवा स्वय चुनी हुई परिस्थितियो मे नहीं करते।'[2] कालिंगवुड, जो इतिहास मे सक्रिय एजेंट के विचारो के इतिहासकार के मानस मे पुन निर्माण को अत्यन्त आवश्यक स्वीकारते हैं, मार्क्स का यह मत उसके विपरीत है। मार्क्स के अनुसार मनुष्य इतिहास मे केवल एजेंट ही नही हैं, वे स्वय अपनी स्थिति व समस्याओ के सम्बन्ध मे सोचते हैं, उनके अपने विचार ही उनके कार्यो को गति देते हैं। 'इतिहास स्वय कुछ नही करता, यह न तो अतुल सम्पदा रखता है, न ही लडाइयाँ लडता है। मनुष्य, वास्तविक मनुष्य ही सब कुछ करते हैं, जिनके पास सम्पदा थी और जिन्होंने लडाइयाँ लडी थी।'[3]

मार्क्स ने विश्व के युक्तिमूलक (Rational) नियमो द्वारा परिचालित होने की धारणा का प्रतिपादन किया। अपने अन्तिम विश्लेषण मे वह इतिहास के अर्थ मे तीन वस्तुओ को लेता था, जो एक दूसरे से पृथक् नही की जा सकती, और जो न्याय सगत (Coherent) तथा युक्ति मूलक इकाई हैं प्रयोजन (Objective) तथा मुख्यत आर्थिक नियमो के अनुसार घटनाओ की गति, द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया द्वारा स्थिति के अनुरूप विकास, श्रेणी-सघर्ष के रूप मे, अनुरूप क्रिया, जो क्रान्ति के अभ्यास (Practice) तथा थ्योरी (Theory) मे एकरूपता स्थापित कर उन्हे एकत्रित करता है।[4]

19वी शताब्दी के अन्तिम दशको मे जर्मनी मे एक नवीन विचारधारा की उत्पत्ति हुई, जिसमे 'इतिहास मे तथ्यो की प्राथमिकता तथा स्वायत्त सत्ता के सिद्धान्त

1 "The Materialistic conception of History" — Marx, reprinted in "Theories of History", Page 131
2 The Use of History, A L Rouse, P 124
3 "What is History", E H Carr, Page 49
4 "What is History', E H Carr, Page 136

पर आक्षेप किया गया। इस सिद्धान्त को जर्मनी मे हिस्टोरिसम अथवा 'इतिहासवाद' तथा ब्रिटेन मे 'ऐतिहासिक पद्धति' कहा गया। डाइल्थी इस मत का मुख्य प्रतिपादक था। इस शताब्दि के आरम्भ मे यह विचार जर्मनी से इटली मे लोकप्रिय हुआ, और क्रोचे ने जर्मनी के मूल सिद्धान्तो के आधार पर एक इतिहास दर्शन उपस्थित किया।

डाइल्थी के इतिहास विचार को प्रो० हाजिस ने सक्षेप मे इस प्रकार व्यक्त किया था इतिहास ज्ञान द्वारा चेतना के इस विस्तार के परिणाम निरर्थक है। प्रत्येक युग जीवन के प्रति अपने रवैए को निश्चित सिद्धान्तो व व्यवहार द्वारा व्यक्त करता है, जो कि उस युग मे नितान्त वैध समझे जाते हैं। इतिहासकार अपने अध्ययन के प्रत्येक युग से इन मूल्यो को ढूढता है, परन्तु वह यह भी चीह्नता है कि वे हर युग मे वदलते है, सदैव ही पूर्णता का दावा करने पर भी, वदली परिस्थितियाँ सदैव वदले सिद्धान्तो का निर्माण करती हैं, जो ऐतिहासिक रूप से सापेक्ष्य हैं। इतिहास इन सब विचारो की सापेक्ष्यता का अभिलेख करते हुए अपनी सापेक्ष्यता की ओर इगित करता है, तथा हमे उस स्थिति मे लाता है जो इतिहासवाद अथवा ऐतिहासिक सापेक्ष्यवाद के रूप मे जाना जाता है।'[1]

इतिहासवाद के अनुसार सर्वप्रथम अघविश्वासो से व भ्रांतियो से छुटकारा पाना और फिर मानवीय जीवन की वहुरूप क्षमता का उद्घाटन किया जाना चाहिए। इतिहास-लेखन की प्रक्रिया मे सर्वप्रथम ऐतिहासिक तथ्यो को खोजना, उनकी परीक्षा करना, फिर आवश्यक तथ्यो का चयन करके उन्हे व्यवस्थित करना आदि सम्मिलित है। इतिहासवादियो के अनुसार इतिहास-लेखन की यह प्रक्रिया चित्रोपम प्रक्रिया के समान नही है क्योकि फिर वह एक यांत्रिक-प्रक्रिया वन जाएगी। यहाँ हमे तथ्यो का मूल्यांकन, इतिहासकार के युग के प्रमुख जीवन दर्शन के आधार पर करना चाहिए।[2]

क्रोचे के मतानुसार, 'इतिहासवाद (इतिहास का विज्ञान), वैज्ञानिक रूप से कहते हुए यह सुनिश्चित करता है कि जीवन एव वास्तविकता इतिहास, केवल इतिहास ही है। इस निश्चयीकरण मे अनिवार्य उपसिद्धान्त उस सिद्धान्त का निषेध करना है जिसके अनुसार वास्तविकता को उच्चतर (Super) इतिहास तथा इतिहास अर्थात् विचारो व मूल्यो का विश्व तथा उन्हे प्रतिविवित करने वाले निम्न विश्व मे विभाजित किया जा सकता है।[3] इस प्रकार क्रोचे घटनाओ तथा विचारो,

1 "The Use of History", P 143-44.

2 देखिए—"Philosophy of History", W H. Dray, Page 37-38
यहाँ लेखक ने इतिहास-लेखन मे मूल्यो के सम्बन्ध मे विस्तार से वर्णन किया है, जिसमें हेतुवादियो व सापेक्ष्य वादियो की परस्पर विरोधी दलीलें प्रस्तुत की गई हैं।

3 "The Use of History", A L. Rouse, P 145

दोनों को ही इतिहास प्रवाह के भाग के रूप में स्वीकारते हैं। इतिहास-लेखन का स्थापक (Constitutive) तत्त्व निर्णय श्रेणियों की व्यवस्था है।

क्रोचे समस्त इतिहास को 'समकालीन इतिहास' के रूप में देखता था। यह प्रत्येक ऐतिहासिक निर्णय की प्रायोगिक आवश्यकता है जो सारे इतिहास को 'समकालीन इतिहास' बना देती है, क्योंकि, इस प्रकार चाहे कितने भी प्राचीन युग की घटनाओं का वर्णन प्रस्तुत किया जाए, वास्तव में इतिहास वर्तमान आवश्यकताओं तथा वर्तमान परिस्थितियों के संदर्भ में होता है, जहाँ वह घटनाएँ गूंजती (Vibrate) हैं।[1] क्रोचे का तात्पर्य यह है कि अतीत की समस्त घटनाएँ एवं तथ्य वर्तमान में उपलब्ध साधनों द्वारा ही जानी व समझी जाती हैं। उन तथ्यों के साथ मूल्य जोड़ना, मूल्यों के आधार पर उनका चुनाव करना तथा उन्हें व्यवस्थित करना यांत्रिक प्रक्रिया न होकर इतिहासकार के इतिहास दर्शन तथा प्रतिभा की उपज है। इतिहास की घटनाएँ तथा विचार दोनों ही इतिहास के अभिन्न अंग हैं। इसलिए वास्तविकता का विभाजन कर उनमें अन्तर नहीं किया जा सकता।

मार्क्स व क्रोचे दोनों ही विश्व को प्रकृति के युक्ति संगत (एवं न्यायपूर्ण) नियमों द्वारा परिचालित होने की धारणा के पोषक थे। दोनों ही विभिन्न युगों के मनुष्यों के व्यवहार, उनकी परम्पराओं तथा मान्यताओं का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करने के पक्ष में थे। किन्तु मार्क्स पदार्थवादी और क्रोचे भाववादी नींव पर खड़े थे।

क्रोचे इतिहास-लेखन में महान व्यक्ति अथवा सक्रिय ऐतिहासिक एजेंट के उन कार्यों तथा विचारों को महत्त्वपूर्ण स्वीकार करता था जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में वर्तमान साधनों द्वारा साक्ष्यांकित हों, इसके विपरीत मार्क्स समूहों के महत्त्व से ही इतिहास में विकासशील सिद्धान्तों के औचित्य पर बल देता था। उसके मतानुसार मनुष्य केवल एजेंट ही न होकर स्वयं अपनी स्थितियों तथा समस्याओं के सम्बन्ध में विचार करते हैं, परन्तु यह सब कार्य वे अपनी इच्छित अथवा चुनी हुई परिस्थितियों में नहीं करते।

क्रोचे ने ऐतिहासिक तथ्यों के साथ मूल्य जोड़ने, उन्हीं के आधार पर उनका चुनाव करने तथा उन्हें व्यवस्थित करने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जबकि मार्क्स सारे नैतिक, धार्मिक, ब्रह्मशास्त्रीय, सामाजिक तथा राजनैतिक मूल्यों की स्वायत्तता का अस्वीकार करके उन्हें आर्थिक स्थितियों तथा निर्माण के सम्बन्धों के अधीन मानते थे।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार इन इतिहास-धारणाओं से आंशिक रूप में ही प्रभावित हुए हैं।

1. B Croce "History as the Story of Liberty Eng. Trans, 1941, P 19

3. लेखन के रूप

(क) घटनाएँ एवं समस्याएँ—तथ्यरूप इतिहास-लेखन की प्रक्रिया मे, घटनाएँ स्वय तथा उनके घटित होने से उत्पन्न समस्याग्रो, फिर उन समस्याग्रो के समाधान के लिए किए गए प्रयत्नो के फलस्वरूप किए गए कार्यो का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करना तथा उन सब क्रियाग्रो मे कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करना प्राथमिक रूप से महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार तथ्यरूप इतिहास की घटनाएँ एव समस्याएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटक है।

भौतिक तथा प्राकृतिक विज्ञानो की घटनाग्रो की प्रकृति के विपरीत ऐतिहासिक घटनाएँ विशिष्ट, अनुपम, अद्भुत नितान्त विशेष तथा पुन अघटनीय होती है। किन्तु ऐतिहासिक घटनाग्रो के वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करने पर आकशाट जैसे विचारक को आपत्ति है।

यद्यपि ऐतिहासिक घटनाग्रो के सबध मे आकशाट की यह धारणा स्वत सिद्ध है तथापि तथ्यरूप इतिहास का विशाल प्रासाद घटनाग्रो की आधारशिला पर ही निर्मित किया जाता है। घटित होने के पश्चात् घटनाएँ तथ्य बन जाती है। सामान्यत सभी इतिहासकारो के सम्मुख लगभग एक से ही तथ्य होते है। ये तथ्य इतिहास के मेरुदण्ड का निर्माण करते हैं। ई० एच० कार के मतानुसार 'यह तथाकथित मौलिक तथ्य, जो सभी इतिहासकारो के लिए समान होते है, सामान्यत उनकी सामग्री से सम्बन्धित है न कि स्वय इतिहास है।'[1] मौलिक तथ्यो मे से भी इतिहासकार को चुनाव करना होता है, और इस चुनाव की प्रक्रिया मे इतिहासकार तथा अभिलेखकर्त्ता दोनो के व्यक्तित्व एव वैयक्तिक रुचि तथा रुझान का आ जाना स्वाभाविक है, इससे इतिहास के हेतुवादी चरित्र की धारणा पर आघात पहुँचता है।

ऐतिहासिक घटनाग्रो तथा विज्ञान-सम्बन्धी घटनाग्रो मे मौलिक अतर है। वैज्ञानिक जिन घटनाग्रो का अध्ययन करता है, वह नियत्रित परिस्थितियो मे घटित होती है तथा वे पुन घटनीय होती हैं, ऐतिहासिक घटनाएँ अनियत्रित तथा पुन घटनीय होती है। वैज्ञानिक घटनाग्रो का चरित्र सामान्य व साधारणीकृत होता है, अर्थात् निश्चित तत्त्वो को एक निश्चित प्रक्रिया से गुजारने पर निश्चित परिणामो तक पहुँचा जा सकता है, जबकि ऐतिहासिक घटनाएँ परिवर्तनशील, नितान्त वैयक्तिक, विशिष्ट, स्वपरिस्थितिवश व देशकाल आबद्ध होती हैं। उनके घटित होने का कोई सार्वलौकिक नियम नही होता। कार्य-कारण सम्बन्धो की शृ खला मे बद्ध ऐतिहासिक घटनाएँ निश्चित परिवेश मे निश्चित परिस्थिति वश घटित होती है, जो दोबारा कभी उपस्थित नही की जा सकती। इस प्रकार इतिहासकार वैज्ञानिक के समान अपने विषय के मेरुदण्ड अर्थात् घटनाग्रो के घटित होने की प्रक्रिया का पर्यवेक्षण नही

1. E H. Carr "What is History", P 11

कर सकता। कालिंगवुड ने इसके लिए कल्पना-मूलक सर्जनात्मक विचारों की परिकल्पना की है जिसके अनुसार इतिहास लिखते समय इतिहासकार अपने मानस में ऐतिहासिक एजेंट द्वारा किए गए कार्यों तथा उसके निर्णयों की प्रक्रिया का पुन निर्माण कर सकता है।

ऐतिहासिक घटनाओं का मानव जीवन से अटूट सम्बन्ध है। 'इतिहास को न तो जीवन से दूर किया जा सकता है, न वह है, क्योंकि यह अध्ययन की जाने वाली घटना में जीवन की समस्त क्रियाशीलता को देखता है।' 'ऐतिहासिक ज्ञान में, घटना का आलोचनात्मक ढंग से अध्ययन तथा प्रतिबिंबन किया जाता है। चाहे घटनाएँ इतिहास की ओर विभाजित न की जाने वाली इकाइयाँ हैं, वे ऐतिहासिक बिम्ब को सीमित नहीं करती।'[1]

तथ्यरूप इतिहास में घटनाओं को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया जाता है क्योंकि इन्ही के माध्यम से अतीत का अत्यन्त प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। प्रामाणिक अतीत ज्ञान के लिए, दस्तावेजों, भौगोलिक स्थितियों तथा अतीत की राजनैतिक घटनाओं की सहायता ली जाती है। हमें ध्यान रखना होगा कि केवल घटनाएँ इतिहास का निर्माण नहीं कर पाएगी यदि वे किसी विशिष्ट इतिहास-दर्शन से अनुप्राणित नहीं की जाएँगी।

(ख) व्यक्तिपात्र बनाम समूह—इतिहास मे हम सदैव मानव जीवन के अतीत का अध्ययन करते है, और वहाँ हमें सदैव मानवीय प्रकृति को दृष्टिगत रखना होता है। कालिंगवुड के मतानुसार मनुष्यों के नितान्त वैयक्तिक कार्य अर्थात् 'पाशविक प्रवृत्तियाँ भावनात्मक इच्छाएँ, तथा क्षुधाएँ गैर-ऐतिहासिक[2] हैं। इस प्रकार मनुष्यों की वह सामाजिक क्रियाएँ ही इतिहासकार के कार्यक्षेत्र मे आती हैं जिनकी बनावट मे मनुष्य अपनी प्राकृतिक भावनाओं तथा क्षुधाओं को शांत करते हैं। भारतीय संदर्भ मे विवाह आदि इसके उत्तम उदाहरण हैं।

व्यक्ति अपने परिवेश की उत्पत्ति तथा अपने समाज की निर्मिति है, यद्यपि व्यक्तियों के व्यवहार, उनकी कामनाओं, विजयों तथा पराजयों की खोज इतिहासकार के अध्ययन का विषय है तथापि समूहों का अध्ययन अपेक्षाकृत अधिक निश्चित एवं वैज्ञानिक होगा।

समूहों के अध्ययन मे लोगों का लोक-व्यवहार ही खोज का विषय होता है। उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा सर्वैधानिक क्रियाकलापों का अध्ययन एवं विवरण तथ्यरूप इतिहास-निर्माण की प्रक्रिया मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ए० एल० राउस के मतानुसार "समूहों के लोक-व्यवहार के क्षेत्र में सर्वोत्तम

1 V V Joshi : The Problem of History and Historiography, P 102

2 R.G Collingwood : "Idea of History", Reprinted in Theories of History, P 253

सामान्यीकरण किया जा सकता है तथा किसी सीमा तक उसके सम्बन्ध मे भविष्यवाणी भी की जा सकती है।"[1]

तथ्यरूप इतिहास मे व्यक्ति तथा समूह को एक दूसरे के पूरक के रूप मे लिया जाता है। किन्ही परिस्थितियो मे व्यक्ति समूह का ही एक अग होता है। एक्टन के मतानुसार, "मनुष्य के इतिहास के प्रति दृष्टिकोण मे किसी व्यक्ति के चरित्र मे रुचि लेने से अधिक त्रुटिपूर्ण व बुरा और किसी कारण से नही होता।"[2] इसी प्रकार ई० एच० कार के मतानुसार, 'एक मनुष्य का एक व्यक्ति के रूप मे दृष्टिकोण इतना भ्रांतिकर नही है, न ही उसे एक वर्ग के सदस्य के रूप मे देखना जितना भ्रान्तिकर उन दोनो स्थितियो मे अन्तर ढूँढना।'[3]

वर्ग के सदस्य के रूप मे व्यक्ति, तथा व्यक्तियो का सामूहिक रूप दोनो ही ऐतिहासिक खोज का विषय होते है। इतिहास-लेखन की प्रक्रिया मे इतिहास-लेखक महान राजनैतिक, धार्मिक सामाजिक एव सांस्कृतिक नेताओ के जीवन चरित्र, उनके सामाजिक एव लोक-व्यवहार के उन कार्यो पर अपना अध्ययन केन्द्रित करता है जिन्होने विश्व, राष्ट्र अथवा समुदाय के विकास अथवा पतन को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया हो। महान व्यक्तियो के जीवन की वह क्रियाएँ ऐतिहासिक महत्त्व की नही होती, जो सक्रिय राजनीति अथवा लोकहित को प्रभावित न करें। इसीलिए कालिगवुड जीवनी को न केवल गैर-ऐतिहासिक ही, प्रत्युत्त प्रति-ऐतिहासिक कहता है।[4]

समूहो के व्यवहार, उनकी रुचियाँ तथा प्रतिक्रियाएँ भी इतिहास-खोज का अनिवार्य अग है। अतीत के जन परिणामों ने एक निश्चित कार्य ही क्यो किया ? जन-समूहो ने अन्यो की अपेक्षा एक निश्चित रूप से घटित ऐतिहासिक घटना मे ही क्यो रुचि ली ? अथवा हमारे पूर्वजो ने विभिन्न परिस्थितियो मे किस प्रकार अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की ? अतीत के समूहो के यह व्यवहार, रुचियाँ अथवा प्रतिक्रियाएँ—इनकी दिशाएँ तथा स्वरूप इतिहास-खोज का विषय है।

तथ्यरूप इतिहासकार इन समस्याओ का समाधान लगभग वैज्ञानिक पद्धति से, निश्चित दस्तावेजो, भौगोलिक स्थितियो तथा राजनीतिक मामलो के सम्बन्ध मे उपलब्ध साक्ष्यो के आधार पर करता है। ऐसा करते हुए वह व्यक्ति व समूहो का अलग-अलग तथा एक साथ अध्ययन करता है।

1 A L Rouse : "Use of History", P 104
2 Acton "Home and Foreign Review", January 1863, P. 219, reprinted in "What is History," P 47.
3 E H Carr "What is History', P 47
4 Collingwood : "Idea of History", reprinted in Theories of History, P 258

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो एव ऐतिहासिक रोमांसकारो ने भारतीय मध्ययुगो के सामती जीवन का अध्ययन करते समय सामान्यत महान व्यक्तियो मे, सामान्य जनो की अपेक्षा अधिक रुचि प्रदर्शित की है।

(ग) जनता बनाम राष्ट्र—बीसवी शताब्दी मे इतिहास-लेखन के क्षेत्र मे अनेक पद्धतियो एव दृष्टियो से मानवीय अतीत का अध्ययन किया गया है। इनका मुख्य आधार मनुष्य-जीवन के राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक एव सांस्कृतिक पक्ष हैं। इनमे से किसी एक पक्ष को केन्द्र मे स्थापित कर मानवीय अतीत का अध्ययन किया जाता है,[1] परन्तु सदैव प्रत्येक स्थिति मे जनता तथा राष्ट्र ही इतिहास-लेखक की खोज का विषय होते हैं। इतिहास को जनताओ तथा राष्ट्रो के उत्थान व पतन की गाथा भी कहा गया है।

तथ्यरूप इतिहास-लेखन मे व्यतीत युग की जनता के जीवनयापन के साधन, उनकी सामाजिक, धार्मिक एव सांस्कृतिक रुढियो, परम्पराओ एव सस्थाओ का अध्ययन उपलब्ध साक्ष्यो तथा पुरातत्व सामग्री के आधार पर किया जाता है। सभ्यताओ के उत्थान व पतन की ऐतिहासिक खोज के लिए वह अनुभववादी (एम्पायरीकल) पद्धति के प्रतिपादक हैं। जनता अथवा मानवीय अतीत की सभ्यताओ का तथ्यपूर्ण अध्ययन जो एक निश्चित एव विशिष्ट इतिहास दर्शन से अनुप्राणित हो—आधुनिक इतिहास-अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण घटक है।

बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे राष्ट्र एव राष्ट्रीयता की धारणा उत्पन्न हुई और प्रथम महायुद्ध के ठीक पहले राष्ट्रीयता की भावना अपने चरित्र की चरम पराकाष्ठा तक पहुँच चुकी थी। दो महायुद्धो के पश्चात् राष्ट्रीयता की भावना का स्वरूप बदला और सयुक्त राष्ट्रसघ अस्तित्व मे आया।

तथ्यरूप इतिहासकार अपनी खोज की प्रक्रिया मे किसी एक राष्ट्र अथवा देश को एक इकाई के रूप मे स्वीकार करता है। गम्भीर रूप से कूटनीतिक-इतिहास का अध्ययन इसी शताब्दी मे आरम्भ हुआ, परन्तु दो महायुद्धो ने इसे अधिक गति दी है।[2] राष्ट्रो, व उनकी जनताओ का विविध-पक्षी अध्ययन तथ्यरूप इतिहास का मुख्य अग है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार एक आदर्श हिन्दू राष्ट्र की धारणा के पोषक थे। वे बिखरे हुए हिन्दू रजवाडो को एक राष्ट्रीय इकाई के रूप मे स्वीकार करते हैं।

1 देखिए--H P R Finberg "Approaches to History" इस पुस्तक में राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सार्वलौकिक (Universal) स्थानीय तथा भौगोलिक स्थितियों में से किसी भी एक को केन्द्रबिन्दु बना कर इतिहास-लेखन के विभिन्न रूपों का अध्ययन किया गया है। [Published by Routled and Kegan Paul, London]

2 S T. Bindoff, "Political History", essay printed in "Approaches to History" Edt by H P R Finberg, P. 9-10

विशेषत टाड द्वारा राजस्थान के सभी राज्यो को राष्ट्र की सज्ञा प्रदान करने तथा जे० डी० कनिंघम का सिख राज्य को राष्ट्र कहने[1] का इन पर उल्लेखनीय प्रभाव पडा।

4. लेखन के दृष्टिकोण

तथ्यरूप इतिहास-लेखन मे मुख्यरूप से तथ्य ही इतिहास-निर्माण का मेरुदण्ड होते है और इतिहासकार मुख्यत लिखित दस्तावेजो, अतीत की भौगोलिक स्थितियो के उपलब्ध अभिलेखो तथा प्राचीन युग की राजनीतिक घटनाओ से अपने तथ्य प्राप्त करते है।

इतिहास-लेखन के क्षेत्र मे तथ्यो के निरपेक्ष तथा निर्वैयक्तिक होने की समस्या पर हेतुवादियो (Positivists) तथा सापेक्ष्यवादियो के विवाद की एक लम्बी एव निरन्तर शृ खला है। हेतुवादी अथवा सिद्धाँतवादी (Academic) इतिहासकार तथ्यो की 'अँथारिटी' कहते है, और उनकी खोज, उनका निश्चयन तथा उनकी व्यवस्था को इतिहास-अध्ययन का चरम-लक्ष्य स्वीकार करते है। इसके विपरीत सापेक्ष्यवादी इतिहास-वेत्ता सामान्य एव ऐतिहासिक तथ्यो मे अन्तर स्थापित करते हुए इतिहासकार द्वारा तथ्यो के चुनाव की प्रक्रिया पर दवाव डालते हुए तथ्यो की सापेक्ष्यता पर जोर देते है। तथ्यो का निर्वैयक्तिक चरित्र उसी समय नष्ट हो जाता है, जवकि इतिहासकार उसे अभिलेख करने के योग्य समझता है।[2] यही कारण है कि इतिहासकार हमे वह सव कुछ नही वताता, जो कि वह जानता है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो का अतीत के प्रति मध्ययुगीन दृष्टिकोण था जो सामन्ती राजनीतिक एव सामाजिक व्यवस्था तथा परम्परा एव रुढि-परक धार्मिक विश्वासो द्वारा प्रभावित था। वे सनातन हिन्दू धर्म के सिद्धान्तो एव

1 "The Medieval Indian State and Some British Historians" —J S Grewal, Page 4 "James Tod, for example, thought of the Rajputs as a "Nation" within the broad frame of Hindu society, and the political organisation of the Rajputs for him was an expression of their national life at a given time in their history Similarly, J D Cunningham, who treated the Sikhs as a ' nation", thought of their political organisation as best suited to their national needs"

राजपूत इतिहास से सम्बद्ध अन्यान्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव जयरामदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' पर जिसमें सिख राष्ट्र की धारणा को स्वीकारा गया है, यह उक्ति अक्षरश सत्य सिद्ध होती है।

2 ई० एच० कार, व्हाट इज हिस्ट्री का आवरण पृष्ठ, साधारणत वही इतिहास के तथ्य होते हैं, जिन्हें इतिहासकार छानबीन के लिए चुनते हैं। लाखो व्यक्तियो ने रुबीकेन को पार किया है, परन्तु इतिहासकार हमे बताते हैं कि सीजर का उसे पार करना महत्त्वपूर्ण था। सारे ऐतिहासिक तथ्य, इतिहासकार के युग के मानको द्वारा प्रभावित, व्याख्यात्मक चुनावों के फलस्वरूप हमारे सम्मुख आते हैं।

क्रियाकलापो के प्रति प्रतिबद्ध थे और इन्ही का प्रतिपादन उन्होंने अपने उपन्यासो मे किया है।

(क) लिखित दस्तावेज—तथ्यरूप इतिहास-वेत्ता लिखित दस्तावेजो को अत्यन्त विश्वसनीय सामग्री के रूप मे स्वीकार करते है तथा उसे 'अॅथारिटी' कहते हैं। ऐतिहासिक खोज की प्रक्रिया मे वे दस्तावेजो को ही सर्वोपरि स्वीकार कर उनका सत्यापन व मूल्यांकन करने के पश्चात् उन्हें शृंखलाबद्ध करने के पक्ष मे हैं। दस्तावेज अतीत के मनुष्यो के विचारो तथा कार्यों के वर्तमान युग मे उपलब्ध अवशेष हैं। दस्तावेजों की अनुपस्थिति में अतीत की मानवीयता के युगो की नियति सदैव के लिए अज्ञात रहने की होगी।[1] वाइको के मतानुसार 'वास्तव मे, दस्तावेज मे निहित विवरण प्राप्त किए बिना, इतिहास-ज्ञान मे कोई प्रगति नही की जा सकती, केवल दस्तावेज ही इतिहास विवरण को सुनिश्चित करने, सुधारने तथा समृद्ध करने मे सक्षम है।' क्रोचे के मतानुसार, 'दस्तावेज विश्वसनीय सूचना के प्राथमिक स्रोत हैं।'[2]

दस्तावेज निश्चित रूप से तथ्यो का ज्ञान एव विवरण प्राप्त करने के प्राथमिक स्रोत के रूप मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु वे केवल दस्तावेज लिखने वाले तथा उनका अभिलेख करने वाले का ही विचार, दृष्टिकोण तथा पक्ष स्पष्ट करता है।[3] इसके अतिरिक्त दस्तावेज असबद्ध तथ्यो का ही प्रामाणिक विवरण उपलब्ध कर पाते है, जो कि इतिहासकार की सामग्री है, न कि स्वय इतिहास। अन्यान्य असबद्ध एव विशृंखलित तथ्यो को सार्थक एव दर्शन पूर्ण इतिहास का रूप प्रदान करने के लिए विश्लेषणात्मक अध्ययन एव सपादन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार दस्तावेज इतिहास के तथ्यो का साक्ष्यांकन करते हैं तथा विश्वसनीय सूचनाओ का स्रोत है।

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' में ऐतिहासिक दस्तावेजो का बहुलता से प्रयोग किया है। 'दरबार' नामक परिच्छेद मे इनके अत्यधिक प्रयोग से उपन्यास की कला एव रोचकता पर बुरा प्रभाव पडा है।

(ख) टोपोग्राफी अर्थात् भौगोलिक अध्ययन—इतिहास मे हम मानवीय क्रिया कलापों की शृंखलाओ का कालानुसार अध्ययन करते हैं। इतिहास की घटनाओ पर भूमि तथा उसके अन्य घटक नदियो, पर्वत, सागर, वातावरण तथा कृषि एव खनिज उर्वरता का प्रत्यक्ष प्रभाव पडता है। भूमि अथवा भूगोल के

1 Longlois and Seignobos

2 देखिए—The Problem of History and Historiography, P 41-42

3 देखिए—What is History, E H Carr, Page 3-4.

कार ने वेमार (Wiemar) गणराज्य के विदेशमन्त्री द्वारा छोड़े गए दस्तावेजों के 300 बक्सों का उनके सचिव द्वारा 600 पृष्ठों की 3 पुस्तकों में सपादन व प्रकाशन का उदाहरण देकर दस्तावेजो द्वारा इतिहास खोज की प्रक्रिया की समस्याएं उद्घाटित की हैं।

रगमच पर इतिहास की घटनाओ का नाटक होने की धारणा अत्याधुनिक इतिहास-खोज मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। भौगोलिक इतिहास अथवा ऐतिहासिक भूगोल का अध्ययन[1] तथ्य रूप इतिहास का महत्त्वपूर्ण अग है।

महत्त्वपूर्ण नगरो एव देशो की अतीत मे रही भौगोलिक स्थिति उनके घटनाचक्र को उतना ही प्रभावित करती है, जितनी कि उनकी कृषि एव खनिज उत्पादको की उर्वरता। ऊँचे पर्वत तथा सागर, नदियाँ तथा बन्दरगाहे भी ऐतिहासिक घटनाओ को विशिष्ट एव निश्चित दिशा प्रदान करती हैं। भारत पर हिमालय के दर्रों तथा सागर की ओर से आक्रमण के कारणो मे भारत की समृद्धि तथा भौगोलिक स्थिति दोनो ही महत्त्वपूर्ण है। इसलिए तथ्य रूप इतिहास मे तत्युगीन भूगोल तथा भौगोलिक स्थितियो का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है।

(ग) राजनीति—यद्यपि इस शताब्दी के आरम्भ तक यह तथ्य सर्वस्वीकारणीय हो गया था कि इतिहास केवल अतीत की राजनीति ही नही है, प्रत्युत इसमे मानवीय समाज, धर्म, सस्कृति, सभ्यता तथा आर्थिक सभी विषय सम्मिलित है, परन्तु तथ्य रूप इतिहास मे राजनीति तथा इससे सम्बन्धित मामले एव घटनाएँ मुख्य होती हैं। हीगेल के मतानुसार "केवल वही व्यक्ति हमारे ज्ञान मे आते है, जो राज्य का निर्माण करते हैं।"[2] गिब्बन "युद्ध तथा लोक मामलो के प्रशासन को इतिहास का मुख्य थीम"[3] स्वीकारने के पक्ष मे है। अतीत की राजनीति इतिहास के मेरुदण्ड का निर्माण करती है। यही कारण है कि आज भी विश्व के मानक इतिहास-साहित्य मे दो तिहाई भाग राजनीतिक मामलो को तथा एक तिहाई भाग अन्य मानवीय क्रियाकलापो को दिया जाता है।[4] यह इतिहास-लेखन का एक मानक ढाँचा स्वीकारा गया है।

अरस्तू ने कहा था कि "मनुष्य एक राजनीतिक पशु है।" राजनीति आदि युग

1 "Approaches to History" P 127, 156
यहाँ ऐतिहासिक भूगोल तथा भौगोलिक इतिहास का अध्ययन किया गया है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने भौगोलिक स्थितियों का कलात्मक चित्रण किया है। दिल्ली, आगरा, चित्तौड, माण्डलगढ एव देवगढ आदि की भौगोलिक स्थितियो एव विशेषताओ का विस्तृत वर्णन किया गया है। वीर चूडामणि, पानीपत, कोरबाला, जयश्री, रानी दुर्गावती, तथा सौन्दर्य कुसुम व महाराष्ट्र का उदय आदि उपन्यासों में युद्धो का चित्रण करते समय भौगोलिक स्थितियो का चित्रण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त भू-चित्रो के माध्यम से भी भौगोलिक स्थिति का वर्णन किया गया है।

2 *"Lectures on the Philosophy of History" (English Trans, 1884) P 40*

3 Gibbon, reprinted in "The Problem of History and Historiography" P 32

4 देखिये—"Political History" By S T Bindoff, "Approaches to History," Edtd by H P R. Finberg, P 1-12
बिडॉफ ने इग्लैण्ड के इतिहास का उदाहरण देकर इतिहास-लेखन मे राजनीतिक मामलों का महत्व सिद्ध किया है।

से ही मनुष्य के जीवन के लोक पक्ष का एक महत्त्वपूर्ण अग रही है। इसलिए तथ्यरूप इतिहास मे अतीत की राजनीतिक घटनाओ का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन किया जाता है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे मध्ययुगीन भारत के सामन्ती समाज एव राजनीति को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया गया है। सामान्यत इतिहास-सम्मत राजनीतिक घटनाओ एव क्रियाकलापो को इन उपन्यासो मे कलात्मक ढग से पुन प्रस्तुत किया गया है।

(ख) कलारूप इतिहास

(1) इतिहास के कई सामान्य रूप

ऐसा प्रतीत होता है कि अतीत का मनुष्य के मानस पर एक अपरिवर्तनीय आकर्षण होता है, जो लगभग भावावेगात्मक आकर्षण की सीमा को छूता है। मानस की अतीत की घटनाओ के सम्बन्ध में कुछ निश्चित पूर्व धारणाएँ होती हैं, जिन्हे वह इतना प्रिय समझता है कि वह उन्हे अधिक समृद्ध तथा प्रामाणिक बनाना चाहता है, क्योकि अतीत के सम्बन्ध मे हमारे विचार जितने प्रामाणिक होंगे, वे उतने ही अधिक आकर्षक बन जाते है।

अतीत के प्रति मनुष्य की इन्ही निश्चित पूर्वधारणाओ तथा उसके मानस पर अतीत के अपरिवर्तनीय वश के फलस्वरूप मनुष्य मे अतीत के पुनर्निर्माण की प्रवृत्ति अत्यन्त प्राचीन काल से है।

आदिम मनुष्य के शिकार लडाई व बाद मे जोतना बीजना आदि व्यवसाय एव कृत्य यदि वे पर्याप्त रुचि एव महत्त्व के होते थे, तो डायेनान अथवा धार्मिक कृत्य (Rite) का विषय होते थे।[1] इन्ही के प्रभाव स्वरूप युद्ध-नृत्य, वर्षा-नृत्य तथा आखेट-नृत्य उपजे, जिन्होंने बाद मे धार्मिक कृत्यो का स्वरूप ग्रहण कर लिया। यह अतीत के पुनर्निर्माण का प्रथम रूप है। जब अतीत के प्रति मनुष्य के मानस की धारणा समृद्ध तथा प्रामाणिक होने लगी तो सर्वप्रथम उसने धार्मिक कथाओ तथा ग्रामीण कथाओ से अभिव्यक्ति प्राप्त की।

मनुष्य एक इतिहास-चेतन पशु है। इतिहास अभिलेख के अन्यान्य कारण तथा स्वरूप हैं, परन्तु ऐतिहासिक रुचि के उदय का प्रथम कारण धार्मिक था। यही कारण है कि असभ्य मानव का प्रत्येक व्यवहार, कार्य, धार्मिक उत्सव तथा विश्वास किसी मिथक, व्यक्ति अथवा किसी अत्यन्त दूरवर्ती घटना से शृ खलित होती है।[2] इस प्रकार मिथक, निजधर-कथाएँ, ग्रामीण-कथाएँ, साहित्यिक-कथाएँ उपजी, बढी तथा धार्मिक रूप को प्राप्त हुई, जो मनुष्य में इतिहास चेतना की आरम्भिक साक्ष्य हैं।

1 "Ancient Art and Ritual" by Jane Ellen Harrison, Oxford University Press, London, Page 49

2 The Problem of History and Historiography by V V Joshi (Kitabistan, Allahabad) P 14

19वी शताब्दी मे राष्ट्रीय चेतना के विकास के पश्चात् राष्ट्रीय दृष्टिकोण ने इतिहास-लेखन को प्रभावित किया। विश्व के अन्यान्य राष्ट्रो के परस्पर निकट आने तथा महायुद्धो के बाद की राजनीतिक व आर्थिक स्थितियो ने इतिहास-लेखन की धारा को नवीन रूप दिया। इस प्रकार, राजनैतिक इतिहास, राष्ट्रीय इतिहास, विश्व इतिहास, आर्थिक इतिहास, सामाजिक इतिहास तथा स्थानीय इतिहास आदि इतिहास के अन्यान्य सामान्य रूप उपलब्ध होते है।

विवेच्य लेखक हिन्दू राष्ट्रीयता के सिद्धान्त पर आधारित इतिहास-धारणा द्वारा प्रभावित थे। यद्यपि वे सक्रिय राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन के विरुद्ध नही थे तथापि वे अग्रेजो के हिमायती तथा मुसलमानो के विरोधी थे।

(क) **इतिहास-लेखन का कलारूप**—सामान्यत "इतिहास का अर्थ, घटनाओं का विवरण तथा विवरण की गई घटनाएँ, इन दोनो को स्वय मे सजोना है।" यदि इतिहास एक विवरण है, तो वह कला बन जाता है, जिसका मूल्य हमारी भावनाओ को प्रभावित करने तथा हमारी सौन्दर्य विवक्षाओ की सन्तुष्टि मे निहित होता है, स्वरूप की सुन्दरता और सामग्री की समृद्धि तथा हमारी उचित भावनाओ पर गहन प्रभाव अधिक महत्त्वपूर्ण तथा सत्य (कम महत्त्वपूर्ण) गौण है।[1] वे घटनाएँ जिनका विवरण किया गया है, इतिहास-लेखन तथा ऐतिहासिक ज्ञान का सिद्धान्त बन जाती हैं।[2]

इस प्रकार यदि स्वय घटनाएँ इतिहास के तथ्यरूप का निर्माण करती हैं, तो उनका विवरण कलात्मक इतिहास का सृजन करता है क्योकि इतिहास का विवरण कलात्मक दृष्टि से सौन्दर्यपरक होगा। उन्नीसवीं शताब्दी से पहले इतिहास साहित्य का अभिन्न अग माना जाता था, और इतिहासकार अधिक कलात्मक इतिहास की रचना किया करते थे।

कला—कला मूलत सौन्दर्यपरक एव लालित्य पूर्ण होती है। साहित्य के मामले मे एक कलाकृति के प्रति सौन्दर्यवादी प्रतिक्रिया पहले आती है, परन्तु ऐतिहासिक आशसा किसी भी प्रकार इससे (सौन्दर्यवादी प्रतिक्रिया से) टकराती नही, प्रत्युत यह उसकी पूरक है तथा उसे पूर्ण बनाती है।[3] इतिहास अत्यन्त प्राचीन काल के शिलालेखो, दस्तावेजो तथा पुरातात्विक सामग्री पर आधारित तथ्यो का एक ककाल मात्र होता है। इन सब साक्ष्यो मे भी तालमेल स्थापित करना तथा कार्य-कारण शृ खला का निर्माण करना कलात्मक कल्पना तथा व्याख्या के बिना सम्भव नही है। इतिहास की खाइयाँ केवल कलात्मक अनुमानो द्वारा ही भरी जा सकती हैं।

1 "The Problem of History and Historiography"—Joshi, P. 11

2 वही, पृष्ठ 13

3 "The Use of History" A.L Rouse, London, P. 52

इस पर भी इतिहास केवल अनगढ अनुमान ही नही है। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ साक्ष्य की अनुपस्थिति मे हम अनुमान के अतिरिक्त और कुछ नही कर सकते, कुछ अन्य क्षेत्र हैं जहाँ अनुमान तथा कल्पनात्मक व्याख्या ही उचित टैकनीक है।[1]

ट्रेविलियन के मतानुसार, यदि हम ऐतिहासिक घटनाओ का अन्वेषण (Trace) नितान्त वैज्ञानिक ढग से करेंगे तो हम करोडो अज्ञात लोगो को नही ले पाएँगे।[2] जिनकी इतिहास-धारा मे महत्ता एव योगदान को मार्क्स ने प्रतिपादित किया था।

इतिहास-लेखन के लिए अन्यान्य बौद्धिक सहायताएँ ली जाती हैं, जो केवल वाह्य ही हैं, इतिहास की आन्तरिक आत्मा, इसकी प्रतिभा, कही और है, यह मनुष्य के जीवन तत्त्व (Spirit) मे हैं, जीवन की लौ मे है। उसे केवल कला द्वारा ही उचित रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है।[3] ट्रेविलियन के अनुसार इतिहास अध्ययन का प्रेरक अभिप्राय कलात्मक है। इतिहास विवरण की कला है तथा इसी रूप मे साहित्य का अग है।[4]

इतिहास के नीरस तथ्यो को यदि कलात्मक ढग से सयोजित किया जाए, तो इतिहास-लेखन की इस प्रक्रिया मे कला एक अनिवार्य तत्त्व होगी। कला कार्य-कारण शृ खला तथा साक्ष्यो की अनुपस्थिति में कल्पनात्मक व्याख्या द्वारा इतिहास निर्माण मे अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग देती हैं। कला रूप इतिहास निश्चय ही कला व इतिहास के सम्मिलन का सगम स्थल हैं।

इस प्रकार "इतिहास-लेखन इतिहास की कलात्मक अभिव्यक्ति है। इतिहास-लेखन कला नही है। यह केवल कलात्मक है। इतिहास जीवन का लेखा-जोखा करने वाला आलोचनात्मक विचार है।"[5]

ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमांस मानवीय अतीत को कलात्मक रूप से पुन प्रस्तुत एव पुन निर्मित करते हैं।

(ख) उपन्यास—जिस प्रकार इतिहास अतीत की घटनाओ का विवरण देता है, उसी प्रकार उपन्यास भी मानवीय जीवन के विविध पक्षो का कलात्मक उद्घाटन करता है। उपन्यास किसी भी अन्य साहित्यिक विधा की अपेक्षा इतिहास-लेखन के अत्यन्त निकट है। इतिहासकार तथा उपन्यासकार दोनो घटनाओ का क्रमिक वर्णन करते हैं, स्थितियो का विवरण देते हैं, उद्देश्य का प्रदर्शन, तथा

1 'The Use of History' By A L Rouse, P 98
2 "इग्लैण्ड का सामाजिक इतिहास"।
3 "The Use of History," P 111
4 "इग्लैण्ड का सामाजिक इतिहास", ट्रेविलियन।
5 "The Problem of History and Historiography," Joshi, P 104

चरित्रो का विश्लेषण करते हैं। इस प्रकार उपन्यास-लेखन व इतिहास-लेखन मे अन्यान्य समानताएँ हैं तथा वे एक दूसरे के निकटतम है।

निस्सन्देह, उपन्यासकार का चित्र कल्पनापरक होता है, परन्तु यह जीवन से नितान्त विमुख नही होता। इतिहास-लेखन जो चित्र उपस्थित करता है वह कल्पना-मूलक होता है। उपन्यासकार के कल्पनात्मक चित्र तथा इतिहास लेखक के कल्पना-परक चित्र दोनो के सफल सम्पादन के लिए एक ही सृजनात्मक विवक्षा की आवश्यकता है।[1] दोनो का उद्देश्य अपने-अपने चित्र को एक जीवित इकाई बनाना होता है। इसलिए इतिहास-लेखन मे महान कला की सादगी, एकता, स्फूर्ति तथा सीधापन होता है।

कढाई बुनाई करने वाली की तन्तुरचना के समान इतिहासकार की भी अपनी सामग्री के लिए एक भावना होती है। वहाँ मन की सहानुभति, विषय के लिए प्यार तथा ढूंढने व सतर्क रहने की समझ होती है। कविता अथवा बागवानी की तरह अवचेतन मानस का इतिहास लेखन मे सहयोग होता है।[2] लगभग यही बात उपन्यास-लेखन की प्रक्रिया मे होती है।

इतिहास के पात्र एक महान् उपन्यास के पात्रो के समान ही, अपनी सम्पूर्ण गहनता के साथ उभरते है। पात्रो का सघर्ष, उनकी परस्पर पसदगी और नापसदगी, प्यार और घृणा, व्यक्ति के भीतर का सघर्ष, उसकी असगतताए (अविवेक), विभाजित स्वामिभक्ति या लक्ष्य की प्राय दुर्बोध जटिलता आदि हमारे जीवन के आश्चर्यजनक उदाहरण जिनमे अधिकाश की रुचिकर घटनावली लोकपटल पर उभरती है। टालस्टॉय के "युद्ध और शाँति" उपन्यास के पात्रो मे वास्तविक इतिहास के पात्रो जैसी अपील है।[3] प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे व्रजनन्दन सहाय के "लालचीन", पडित बलदेवप्रसाद के "पानीपत", किशोरीलाल गोस्वामी के "रजिया बेगम" के पात्रो पर यह सब धारणाए अक्षरश सत्य सिद्ध होती हैं।

"इतिहास तथा उपन्यास के पात्र एक सामूहिक इकाई के अभिन्न अग के समान एक सुनिश्चित रीति से कार्य करते हैं। यहाँ प्रत्येक पात्र (चरित्र) अन्यो से बधा हुआ है, प्रत्येक पात्र का हर कार्य सामान्य योजना के अनुसार होता है।[4] कहानी मे उनके द्वारा किए गए कार्यो के अतिरिक्त उनके द्वारा किसी अन्य प्रकार के कार्य किए जाने की कल्पना भी नही कर सकते।

कलारूप इतिहास तथा उपन्यास मे इतनी समता होते हुए भी "इतिहास-लेखन, काल तथा स्थान की सीमाओ मे दृढता से बद्ध होता है। इतिहास लेखन मे

1 "The Problem of History & Historiography" P 16
2. "The Use of History"-A L Rouse P 94
3 "The Use of History"-A L Rouse, P 47
4 "The Problem of History and Historiography", P 17-18

लेखक को अपने निर्णयों, अनुमानों, स्वीकारोक्तियों (एजम्पशस) तथा विवरणों की सत्यता को बाह्य साक्ष्यों के आधार पर सिद्ध करना होता है।[1] इसके विपरीत उपन्यास आन्तरिक साक्ष्य पर आधारित होता है तथा उसकी एक समस्त कार्य-कारण शृंखला स्वयं में पूरी होती है। इतिहास लेखन में साक्ष्य ढूंढ कर सारी बनावट तथा विवरण की सत्यता को सिद्ध करना होता है। साक्ष्यों का यह अन्तर उपन्यास-लेखन तथा इतिहास-लेखन की सूक्ष्म सीमारेखा उपस्थित करता है।

लांगलाइस (Longlois) ने दस्तावेज परक साक्ष्यों के आधार पर जीवन का ज्ञान प्राप्त करने की कठिनाइयों पर प्रकाश डाला है। यह कठिनाइयां आधुनिक उपन्यासों में वर्णित आधुनिक जीवन के चित्र के मूल्य से समझी जा सकती हैं।[2] इतिहास-लेखन, यदि वह केवल दस्तावेजों तथा पुरातात्विक सामग्री पर ही आधारित हो तो वह मानव जीवन के विविध पहलुओं एवं रहस्यों का उद्घाटन नहीं कर पाएगा। उपन्यासों में वर्णित मानव-जीवन के विविध पहलू तथा विशद् सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि, ऐतिहासिक तथ्यों के साथ-साथ ऐतिहासिक सत्यों के उद्घाटन में भी सहायक होती है। इस प्रकार कलारूप इतिहास उपन्यास के अत्यन्त निकट होता है।

(ग) जीवनी रूप में साहित्य एवं इतिहास का संगम—इतिहास सदैव मनुष्य-जीवन के सम्बन्ध में होता है, जो मानव जीवन के विस्तृत क्षेत्र से अपनी सामग्री तथा प्रतिपाद्य विषय के स्रोत प्राप्त करता है। महान् पुरुषों के जीवन-चरित्र इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं। इतिहास में एक समग्र भूखण्ड की समूची घटनावली को लिया जाता है जबकि जीवनी में एक ही व्यक्ति के जीवन को उसकी परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया जाता है। "कालक्रमों में सम्बधित, परन्तु उद्देश्य एवं स्पिरिट दोनों, तथा साहित्यिक स्वरूप में उससे भिन्न समकालीन लेखकों द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध राजाओं की जीवनियाँ हैं।"[3] जीवनियाँ साहित्य का एक विशिष्ट स्वरूप ही नहीं, एक साहित्यिक विधा है।

कालिंगवुड के मतानुसार "विचार के अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु का इतिहास नहीं हो सकता। इस प्रकार, उदाहरण स्वरूप, एक जीवनी में चाहे जितना भी इतिहास क्यों न हो, ऐसे सिद्धान्तों पर निर्मित की जाती है, जो कि न केवल गैर-ऐतिहासिक हैं प्रत्युत प्रति-ऐतिहासिक हैं।"[4]

यह सत्य है कि इतिहास मूलतः इतिहासकार के मानस में अतीत के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया से उत्पन्न होता है, परन्तु महान पुरुषों की जीवनियाँ अति

1 "The Prob'em of History and Historiography" P. 17-18

2. Ibid, P 56

3 'Historians of India Pakistan & Ceylon" Edt by C H Philips Ideas of History in Sanskrit Literature by R C. Majumdar, P 18

4 Theories of History, Edt by Patrick Gardiner, London P 258.

ऐतिहासिक नही कही जा सकती । ट्रेविलियन के मतानुसार "परस्पर विरोधी राजनीतिज्ञो, योद्धाओ तथा विचारको की जीवनियाँ विभिन्न परस्पर विरोधी दृष्टिकोणो को स्पष्ट करने मे सहायक होती हैं । एक जीवनी इतिहास की अपेक्षा पथभ्रष्ट कर सकती है, परन्तु एकाधिक जीवनियाँ इतिहास से अधिक हैं ।"[1]

इस प्रकार जीवनियाँ कलारूप इतिहास लेखन के अनिवार्य घटक के रूप मे उभरती हैं । साहित्य की एक विधा के रूप मे कला, तथा कालक्रम व महान्-पुरुष के जीवन के तथ्यो के रूप मे इतिहास, जीवनी के दो महत्त्वपूर्ण पहलू है, जो इसे कलारूप इतिहास का स्वरूप प्रदान करते है । अतएव जीवनी मे साहित्य एव इतिहास का सगम होता है ।

(2) इतिहास के सभी रूपो के सामान्य तत्त्व

(क) मानवीय प्रकृति—इतिहास सामान्यत. मानवसमाज के सबध मे होता है । मानवीय प्रकृति, अतीत काल के समाज, उसके क्रमिक विकास, उसे गति देने वाले क्रियाशील तत्त्व, प्रवाह तथा शक्तियाँ, घटनाओ को दिशा प्रदान करने वाला सामान्य तथा व्यक्तिगत प्रयोजन तथा सघर्ष का ज्ञान प्राप्त करने के लिए सकेत सूत्र प्रदान करेंगी । "यह ऐसा अध्ययन है जिसमे आप सदैव मानवीय प्रकृति से सबधित (डील करते) हैं ।"[2]

एक सक्रिय प्रेरक शक्ति के रूप में मानवीय सकल्प अथवा इच्छा (Will) ऐतिहासिक घटनाओ को नवलता प्रदान करता है । मानवीय निमित्त (Agency) की प्रेरणा ऐतिहासिक कार्यों के लिए अत्यन्त आवश्यक है ।[3] यह भी पाया जाता है कि मनुष्यो अथवा सामाजिक इकाइयो द्वारा किए जाने वाले व्यक्तिगत अथवा सामाजिक कार्य निश्चित विचारो तथा दृढ-विश्वासो द्वारा रूपायित होते है । दृढ विश्वास, विचारो या विश्वासो के रूप मे मानवीय इच्छा को एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते हैं तथा उनके निर्णयो को प्रभावित करते हैं ।

अन्यान्य विचारो, विश्वासो तथा धारणाओ के रूप मे मानवीय प्रकृति तथा मानवीय इच्छा ऐतिहासिक घटनाओ की गति एव स्वरूप को प्रभावित करती है ।

मानवीय प्रकृति "देशो तथा शताब्दियो मे इतनी अधिक परिवर्तित होती है कि उसे प्रचलित सामाजिक स्थितियो तथा परम्पराओ द्वारा रूपायित एक ऐतिहासिक तत्त्व न मानना कठिन है ।[4]

इसाया बर्लिन ने सर्वप्रथम इस दृष्टिकोण पर विचार किया कि मानवीय इतिहास मे जो कुछ भी घटित होता है, वह पूर्ण रूपेण या अधिकांशत मनुष्यो के

1 "The Use of History" A L Rouse, P 46
2 "The Use of History" A L Rouse, P 16
3 "The Problem of History and Historiography," P 85
4 "What is History", E H Carr, Page 32

नियन्त्रण से बाहर की बातो द्वारा "निश्चित" होता है ।[1] इस प्रकार मानवीय प्रकृति, मनुष्य की इच्छा अथवा मानव की स्वच्छन्द रुचि के स्थान पर एक घटना का घटित होना, उससे पूर्व की घटना के प्रभाव स्वरूप, मनुष्य के नियन्त्रण से बाहर की अनिवार्य स्थिति द्वारा निश्चित होने की धारणा" "निश्चयवाद" को जन्म देती है ।

ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया पर निश्चयवाद के प्रभाव को नकारा तो नही जा सकता, परन्तु मानवीय प्रकृति तथा मनुष्य की इच्छा एव रुचि निश्चित रूप से ऐतिहासिक घटनाओ को न केवल प्रभावित ही करती है प्रत्युत उन्हें रूपायित भी करती है ।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमांसो मे "निश्चयवाद" की धारणा मार्क्स द्वारा प्रणीत "निश्चयवाद" से मिलती जुलती है । महान् ऐतिहासिक पात्रो की सकल्प शक्ति द्वारा ऐतिहासिक घटनाओ के प्रवाह का प्रभावित होना, इन दोनो इतिहास विचारो के समन्वय का प्रमाण है ।

(ख) महापुरुषो की जीवनियाँ—महान् पुरुष अपने युग के समाज, सस्कृति तथा राजनीति के केन्द्र-बिन्दु होते हैं । इतिहास के प्रवाह की उपज होने पर भी महापुरुष इतिहास के प्रवाह को एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं, और इस प्रकार वे इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण घटक हैं । ई० एच० कार के मतानुसार, "महान् पुरुष वह असाधारण व्यक्ति है, जो एकदम ऐतिहासिक प्रक्रिया की उपज तथा उत्पादक है, वह एकदम सामाजिक शक्तियो का प्रतिनिधि तथा सर्जक है, जो विश्व के स्वरूप तथा मनुष्यो के विचारो को बदल देती हैं ।"[2]

इस शताब्दी के आरम्भ तक इतिहास को अधिकारिक रूप से महान् पुरुषो का जीवन चरित्र कहा जाता था । ए० जे० पी० टेलर के कथनानुसार, "आधुनिक योरुप का इतिहास तीन शीर्षको मे लिखा जा सकता है नेपोलियन, बिस्मार्क तथा लेनिन ।"[3] असाधारण व्यक्तियो अथवा राजनेताओ का एक नकारात्मक पक्ष भी होता है । उनकी व्यक्तिगत सनक भी कई बार महान् राष्ट्रो की उन्नति को अवरुद्ध करती है या उन्हे विनष्ट कर डालती है, इसलिए उनके व्यक्तिगत निर्णयो के साथ अत्यधिक महत्त्व नही जोडना चाहिए ।

इतिहास चाहे केवल महान् व्यक्तियो के जीवन-वृत्तो से ही नही बनता, परन्तु महान् पुरुषो की जीवनियो का अध्ययन मोहक होने के साथ-साथ उपयोगी भी होता है ।[4] महापुरुषो की जीवनियो के महत्त्व को स्वीकारते हुए भी इतिहास लेखक को

1 "Theories of History" Issiah Berlin, 1909, editorial notes P 319

2 What is History, E H Carr, P 55

3 What is History E H Carr, P 53

4 The Use of History A L Rouse, P 16

उन्हें करोड़ो सामान्य लोगों के पूरक के रूप में लेना चाहिए तथा उनका अध्ययन युग की दृष्टि एवं चेतना के परिप्रेक्ष्य में करना चाहिए।

(ग) शत-सहस्त्र सामान्य लोग—महान् राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक नेता अपने युग तथा समाज का नेतृत्व करते हुए इतिहास की सामग्री का निर्माण करते है, परन्तु "इतिहास केवल महान् पुरुषो के जीवन चरित्र के साथ ही डील नही करता, यह उन करोड़ों गौण पुरुषों तथा स्त्रियों के जीवन की तलछट को भी स्वयं में सजोता है, जो कोई नाम नही छोड गए, परन्तु जिन्होंने इतिहास के प्रवाह मे अपना योगदान दिया था, उनके जीवन ने इतिहास की सामग्री का निर्माण किया है।"[1]

इतिहास की आधुनिक धारणा के अनुसार सामान्य जन इतिहास के मेरुदण्ड का निर्माण करते है। मध्ययुग की दरबारी संस्कृति के प्रभावाधीन लिखित इतिहास में सामान्यत, सामान्यजन की अवहेलना कर राजा, राज दरबार तथा राजसी कीर्ति की चरम सीमा की संकुचित परिधि मे घटित घटनाओं को ही इतिहास का मुख्य विषय माना जाता था। आधुनिक तथा मध्य युगीन इतिहास चेतना में यह मौलिक अन्तर है।

सर्वप्रथम उन्नीसवीं शताब्दी मे मार्क्स ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद तथा इतिहास की भौतिकवादी धारणा का प्रतिपादन करते हुए इतिहास की धारा में करोड़ो सामान्य लोगों के योगदान एवं महत्त्व को प्रकाशित किया।

लेनिन ने कहा था—"राजनीति भीड़ो से आरंभ होती है, जहाँ हजारो नही लाखो हो, वहाँ से गम्भीर राजनीति का आरम्भ होता है।"[2] लाखो नाम रहित व्यक्ति अचेतन रूप मे एक साथ कार्य करते हुए एक सामाजिक शक्ति का निर्माण करते है। अन्यान्य आन्दोलनों मे कतिपय नेता तथा उनके असंख्य अनुयायी होते हैं। आन्दोलनो की सफलता के लिए असंख्य लोगों या अनुयायियो का होना अनिवार्य है। संख्या का इतिहास में महत्त्व होता है।

असंख्य सामान्य जन इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण घटक होने पर भी अपनी स्वच्छन्द इच्छा द्वारा काल-प्रवाह तथा घटनाओं के घटित होने की प्रक्रिया को एक निश्चित दिशा प्रदान नहीं कर पाते।

मार्क्स के मतानुसार, "सामाजिक उत्पादन व उत्पादन के साधनों के क्षेत्र में मनुष्य कुछ निश्चित एवं अनिवार्य संबंधो मे बंधते हैं, जो उनकी इच्छा से बाहर होते हैं।"[3]

1. The Use of History, A L Rouse, P 17
2. What is History, E H Carr, P 50
3. "Critique of Political Economy" Marx, Preface

बटरफील्ड के अनुसार "ऐतिहासिक घटनाओं के स्वभाव में कुछ ऐसा होता है, जो इतिहास की धारा को ऐसी ओर मोड़ता है जिसकी किसी मनुष्य को कामना न हो। इसी प्रकार टालस्टॉय तथा वुडरोविल्सन मनुष्य को मानवता के ऐतिहासिक सार्वलौकिक उद्देश्यों की पूर्ति का एक साधन मानते हैं।"[1] प्रकट में मनुष्य यह सब कुछ स्वयं के लिए करता है परन्तु अचेतन रूप में वह शताब्दियों पुरानी इतिहास की धारा का एक अंश होता है।

इतिहास का सम्बन्ध व्यक्ति के एकान्त में किए गए कार्यों से नहीं होता प्रत्युत उन सामाजिक अथवा राजनैतिक कार्यों द्वारा होता है, जो युग की विचारधारा तथा परिस्थितियों को प्रभावित करते हैं।

कालिंगवुड के मतानुसार, "मनुष्य की पाशविक वृत्तियाँ, उसकी प्रेरणाएँ तथा क्षुधाएँ अनैतिहासिक होती हैं। इन क्रियाओं की प्रक्रिया प्राकृतिक होती है। इस प्रकार इतिहासकार उन सामाजिक परम्पराओं में रुचि लेता है जिन्हें मनुष्य विचार द्वारा लोक सम्मत व्यवहार तथा नैतिकता द्वारा समर्थन प्राप्त तरीकों से यह कामनायें परितुष्ट करने के लिए निश्चित स्वरूप प्रदान करते हैं।"[2]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों एवं रोमांसों में सामान्यतः महान् पुरुषों की जीवनियों को ही उपन्यासों में मुख्य स्थान दिया गया है। कई बार भारतीय मध्य-युगों के सामान्य व्यक्तियों का चरित्र भी उत्तम ढंग से चित्रित किया गया है परन्तु वे भी राजा अथवा शासक से सम्बद्ध होते थे।

(3) इतिहास बनाम साहित्य और कला

साहित्य व कला का इतिहास से जन्म का सम्बन्ध है। प्रारम्भिक स्थिति में इतिहास, साहित्य व कला एक ही विषय के विभिन्न घटकों के रूप में अस्तित्ववान थे। उन्नीसवीं शताब्दी से पहले तक इतिहास, साहित्य का ही एक अभिन्न अंग था। मध्य युगीन "भारत में इतिहास लिखने का कार्य भी अलंकृत दरबारी कविता से सम्बन्धित था।"[3] प्राचीन भारत में भारतीय इतिहास-लेखन में इतिहास के अन्यान्य घटक एवं स्वरूप अपने विषय की गत्यात्मकता तथा स्तर की तरलता के कारण निरन्तर अपना स्वरूप बदलते रहते थे, अथवा एक-दूसरे में मिल जाते थे। परिवर्तन की यह प्रक्रिया उनके मूल साहित्य रूपों के परिवर्तन के कारण होती थी।

मिथक, निजन्धर-कथाएं, ग्रामीण-कथाएं तथा किस्से मनुष्य की इतिहास-चेतना के अत्यन्त प्रारम्भिक साक्ष्य हैं। वीरगीतों, महाकाव्यों तथा पुराणों में

1 What is History E.H Carr, p 51.
2. "Idea of History" by Collingwood Quoted in "Theories of History" Page 253
3 A History of Indian Literature Winternitz Trans. by Miss H Kohn Vol III, Fasc. I p 69

वर्णित इतिहास का अ श तथा मध्य युग मे दरबारी कवियो या भाटो द्वारा राजाओ अथवा कबीले के मुखियो के परिवार की महानता का अभिलेख रखा जाना, इतिहास व साहित्य के निकट सम्बन्धो का प्रमाण है। इस स्थिति तक इतिहास साहित्य के पूरक के रूप मे, अथवा साहित्य के एक अग के रूप मे अस्तित्ववान था।

19वी शताब्दी के बाद जब साहित्य व इतिहास दो स्वतन्त्र विषय बन गए, तब भी उन दोनो का घनिष्ट सम्बन्ध बना रहा जो इतिहास की अभिव्यक्ति से सम्बन्धित था। इतिहास लेखक लेखन की प्रक्रिया मे अन्यान्य खोजो द्वारा कतिपय निर्णयो पर पहुँचता है, उनकी अभिव्यक्ति वह भाषा के माध्यम से करता है। अभिव्यक्ति की इस कला के लिए एक सृजनात्मक कुशलता की आवश्यकता होती है। इस प्रकार वह इतिहास-लेखक के साथ-साथ, साहित्यकार का भी कार्य करता है, क्योकि अभिव्यक्ति जितनी सुन्दर, स्पष्ट व आकर्षक होगी, इतिहास-लेखन उतना ही सफल होगा।

कला—इतिहास-लेखन की आध्यात्मिक अथवा सौन्दर्यवादी पद्धति बौद्धिक अथवा वैज्ञानिक पद्धति की पूरक होती है। सौन्दर्यवादी लेखन पद्धति की स्थिति मे इतिहास का कला से अत्यन्त निकट सम्बन्ध होता है। दूरबीन अथवा खुर्दबीन के स्थान पर दो मानवीय आँखो द्वारा इतिहास विश्व का अवलोकन करता है। इस प्रकार वह सापेक्ष होने के साथ-साथ कला-परक भी हो जाता है।

अतीत के मानवीय समाज, उनकी भावनाओ, भावावेगों, परम्पराओ, रूढियो, विश्वासो तथा जीवन के मौलिक सिद्धान्तो के अध्ययन मे सृजनात्मक कुशलता के साथ-साथ इतिहास-लेखक को अपने लेखन-युग के लोगो से किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध अथवा सम्पर्क स्थापित करना होगा। इसके फलस्वरूप लिखित "कलात्मक इतिहास (Fabulatory History) की तर्कहीन व भावनाहीन इतिहास से कही गहन अपील होगी।[1]

(4) इतिहास बनाम विज्ञान

इतिहास व विज्ञान की सामग्री एव क्रिया-प्रणाली मे मौलिक अन्तर होने पर भी 19वी शताब्दी के आरम्भ मे भौतिक विज्ञानो की अन्यतम उन्नति के प्रभाव-स्वरूप कई इतिहास-वेत्ताओ ने इतिहास को विज्ञान की एक शाखा बनाने मे ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति समझी।

इस प्रकार "जिस पद्धति से विज्ञान प्रकृति के विश्व का अध्ययन करता है, उसे मानवीय मामलो के अध्ययन पर लागू किया गया।"[2] इस पक्ष के इतिहास-दार्शनिको का मत था कि यदि हम अतीत की घटनाओ का अत्यन्त सूक्ष्म, निरपेक्ष,

1 The Problem of History and Historiography, V.V Joshi, page 15

2 E H Carr, "What is History" p 56

निर्वैयक्तिक तथा गहन अध्ययन करना चाहते हैं, मानवीय अतीत को एक विशिष्ट एव निश्चित मानदण्ड के आधार पर समझना व अभिव्यक्त करना चाहते हैं तो हमे इतिहास-अध्ययन तथा इतिहास-लेखन की एक वैज्ञानिक पद्धति को अपनाना होगा, जे० बी० बरी ने सन् 1903 के अपने उद्घाटन भाषण मे इतिहास को "विज्ञान, न इससे कुछ अधिक न कम" कहा था।[1]

सैद्धान्तिक (एकेडेमिक) स्कूल के इतिहास-वेत्ताओ का दावा था कि वह इतिहास-लेखन के कार्य मे वैज्ञानिक पद्धति अपनाते हैं और उन्होंने दस्तावेजो को जाँचने की एक निश्चित (Accurate) पद्धति ढूँढ निकाली है। इस प्रकार दस्तावेजों के आलोचनात्मक अध्ययन से प्राप्त ज्ञान की तुलना, निश्चितता तथा पद्धति दोनो मे भौतिक विज्ञानो से की जा सकती है।

डब्ल्यू० एच० वाल्श के मतानुसार "इतिहासकार के संपूर्ण दृष्टिकोण में चाहे किसी भी सीमा तक दार्शनिक तत्त्व आ जाए, इसमें कोई सन्देह नहीं कि इतिहासकार का अपने विवरणात्मक कार्य मे किसी भी वैज्ञानिक के समान निर्वैयक्तिक होना अपेक्षित है। वैज्ञानिक निर्णयो के समान ऐतिहासिक निर्णयो मे भी साक्ष्य होना चाहिए।"[2]

इतिहास खोज की प्रक्रिया मे वैज्ञानिक धारणा का महत्त्व निश्चय ही स्वीकार किया जा सकता है। परन्तु इतिहास को नितान्त विज्ञान कहना उचित नही होगा। मुख्यत दोनो के प्रतिपाद्य विषय, खोज की पद्धति अथवा कार्यविधि, तथा मौलिक समझ (एप्रोच) मे इतना अन्तर है कि इतिहास को विज्ञान की शाखा कहना युक्तियुक्त प्रतीत नही होता।

वैज्ञानिक एवं इतिहासकार के प्रतिपाद्य विषय मे मौलिक अन्तर हैं। इतिहासकार नितान्त विशिष्ट, असामान्य एव वैयक्तिक सामग्री पर कार्य करता है, जबकि वैज्ञानिक की सामग्री सामान्य एव सार्वलौकिक होती है। इतिहासकार जिस सामग्री का अध्ययन करता है, वह अनुपस्थित होती है। अतीत की घटनाएँ बोले गए शब्दो के समान दोबारा कभी जीवित नही की जा सकती। इसके विपरीत वैज्ञानिक का कार्य-क्षेत्र एक अत्यन्त नियोजित प्रयोगशाला मे होता है। वैज्ञानिक-खोज की प्रक्रिया में इच्छित सामग्री तथा स्थितियाँ उपलब्ध की जा सकती हैं। प्रयोग करने के लिए उन्हें पुन दोहराया भी जा सकता है, जबकि काल व स्थान की दूरी के कारण इतिहासकार ऐसा करने मे सक्षम नही है। वह वैज्ञानिक के समान 'पर्यवेक्षण तथा प्रयोग' की विशिष्ट पद्धति का अनुसरण नही कर सकता। ऐतिहासिक स्थितियाँ एव घटनाएँ अनियन्त्रित एवं पुन अघटनीय होती हैं, यहाँ तक

1 "What is History' P 57

2 W H Walsh, "Meaning in History" First published in "Theories of History, page 301

कि समकालीन इतिहास का भी नितान्त वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन नही किया जा सकता। इसके अतिरिक्त प्रत्येक ऐतिहासिक घटना के साथ असख्य लोगो के विचार, मान्यताएँ, आदर्श, विश्वास तथा नैतिक-धार्मिक धारणाएँ जुडी हुई होती है। मानवीय भावनाओ एव भावावेगो की जटिलताओ तथा कार्यकारण परम्परा की गुत्थियाँ वैज्ञानिक पद्धति से नही सुलझाई जा सकती।

इस प्रकार इतिहास तथा विज्ञान एक सिद्धान्त परक, एव पद्धति परक विपरीतता (Antithesis) का निर्माण करते है।

(5) इतिहास बनाम रोजमर्रा-जीवन

आधुनिक युग मे इतिहास का मनुष्यो के नित्यप्रति के जीवन से सम्बन्ध घनिष्टतर होता जा रहा है। इतिहास अतीत का ज्ञान उपलब्ध कर, वर्तमान की सही समझ तथा भविष्य का मार्ग प्रशस्त करने मे सहायक है। इस शताब्दी मे मनुष्य केवल अपने युग, जाति अथवा देश के सम्बन्ध मे जानकर ही जीवित नही रह सकता, उसे वृहत्तर विश्व तथा मानवीय अतीत के ज्ञान की आवश्यकता होगी। मनुष्य का अतीत के साथ भावात्मक एव रागात्मक सम्बन्ध होता है, जो उसके नित्यप्रति के जीवन को प्रभावित करता है।

ए० एल० राउस के मतानुसार—"इतिहास का सर्वोपरि प्रयोग चाहे वह यहाँ तक ही सीमित नही है, यह है कि यह अन्य किसी भी विधा से अधिक, हमे सार्वजनिक घटनाओ, आपके युग की समस्याओ (Affairs) तथा रुचियो, प्रवृत्तियो की जानकारी प्रदान करता है।"[1]

इतिहास से शिक्षा प्राप्त करना अथवा पाठ लेना एक विवादास्पद परन्तु महत्त्वपूर्ण विषय है। चाहे इतिहास स्वय को कभी नही दोहराता और वही व्यक्ति एव स्थितियाँ फिर कभी उपस्थित नही होते, परन्तु मानवीय अतीत मे समान प्रकार की परिस्थितियो मे समान समस्याएँ समान रूप से सुलझाई गई हैं तथा लगभग समान निर्णयो तक पहुँचा गया है। इतिहास मानव के युगो से एकत्रित ज्ञान को उपलब्ध करने का साधन है, जो मनुष्यो के नित्य प्रति के जीवन को दिशा एव स्वरूप प्रदान करता है।

ई० एच० कार के मतानुसार, "इतिहास से सीखना कभी भी इकहरी प्रक्रिया नही है। अतीत के प्रकाश मे वर्तमान का अध्ययन करने का अर्थ है वर्तमान के प्रकाश मे अतीत का अध्ययन, इतिहास का कार्य वर्तमान तथा अतीत दोनो और उनके अन्तर्सम्बन्धो को समझने का बेहतर आधार प्रदान करना है।"[2] इस प्रक्रिया से मनुष्य के मानस मे वर्तमान तथा अतीत के सम्बन्ध मे एक निश्चित पैटर्न बन जाता है, जो भविष्य के कार्यो के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।

1 "Use of History" P 60
2 "What is History" P 68

इस प्रकार इतिहास का अध्ययन मनुष्य को वर्तमान मे जीने के लिए अधिक सशक्त तथा भविष्य के प्रति अधिक प्रबुद्ध बनाएगा। बहुत से विवेच्य उपन्यासकारो ने इतिहास-ज्ञान का नित्यप्रति के जीवन मे महत्त्व तथा इतिहास अध्ययन की आवश्यकता एव उसके प्रसार के सम्बन्ध मे टिप्पणियाँ की हैं।

(6) कलात्मक इतिहास की प्रक्रिया

(क) कार्यकारण शृंखला-घटना-प्लाट—इतिहास मुख्यतः मानवीय अतीत के सार्वजनिक पक्ष से सबधित होता है। मनुष्य समाज के अतीत की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एव आर्थिक घटनाएँ जो दस्तावेजो, भवनो के अवशेषो तथा शिलालेखो आदि के साक्ष्यों द्वारा प्रमाणित हो, इतिहास की सामग्री हैं। परन्तु "इतिहास किसी भी स्थिति मे परस्पर असबद्ध तथ्यों का सग्रह अथवा किसी भी प्रकार घटित घटनाओ का समूह नही है।"[1] वास्तविक अर्थों मे घटनाओं के पूर्वापर सबध ही इतिहास को अर्थवेत्ता प्रदान करते हैं। कार्य-कारण शृखला से इतिहास का स्वरूप निश्चित होता है, तथा इतिहास-अध्ययन बुद्धिगम्य बन पाता है।

ई० एच० कार के मतानुसार इतिहास का अध्ययन कारणो का अध्ययन है। हिरोडोट्स ने कारण को ऐतिहासिक घटनाओ के विश्लेषण मे सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। माटेस्क्यू के मतानुसार, "प्रत्येक साम्राज्य को उन्नत करने, उन्हें प्रचालित करने या उनका पतन होने के सामान्य नैतिक अथवा भौतिक कारण होते हैं तथा जो कुछ भी घटित होता है वह इन कारणो के अधीन होता है।"[2] इतिहास-खोज की प्रक्रिया मे कारणो का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। कतिपय इतिहासवेत्ता कारण के स्थान पर 'व्याख्या' अथवा 'स्पष्टीकरण' द्वारा इतिहास-प्रक्रिया की समस्याएँ सुलझाना चाहते हैं, परन्तु खोज के अन्त मे कार्यकारण शृखला ही ऐतिहासिक घटनाओ को अधिक बुद्धिगम्य स्वरूप प्रदान करती है।

ऐतिहासिक तथ्य अलग-अलग अस्तित्व के न होकर हर दिशा मे परिस्थितियो के जालो मे बुने रहते हैं। प्रत्येक स्थिति जो कि अपनी पूर्व की स्थिति का परिणाम होती है, अगली स्थिति को जन्म देती है। कारण इन्हें आपस में जोडते हैं। ऐतिहासिक घटनाएँ विशिष्ट, स्वपरिस्थितिवश एव स्वत स्पष्ट होती हैं। परिस्थितियो के दबाव से वे घटित होती हैं और अपने से बाद घटित होने वाली घटनाओ के लिए नवीन स्थिति का निर्माण करती हैं। इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार को घटनाओ, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य तथा कार्यकारण शृखला को दृष्टिगत रखना होता है।

1 "The Use of History" p 95
2. "What is History" p 87-88

दुर्घटनाएँ तथा अनपेक्षित घटनाएँ[1] कार्यकारण-शृ खला के सिद्धान्त का विपरीत मत (Antithesis) हैं। इतिहास-खोज की प्रक्रिया मे ये अत्यन्त जटिलता की स्थिति उत्पन्न करती हैं। इतिहासकार कह सकता है कि अनपेक्षित घटना क्यो घटित हुई ? इस मत के अनुसार इतिहास अवसर द्वारा निश्चित घटनाओ की एक शृ खला है, जो सामान्य कारणों द्वारा परिचालित होता है। सर्वप्रथम मांटेस्क्यू ने इतिहास-लेखन के नियमो की इस उल्लघन से रक्षा की।

कार्य-कारण शृ खला का इतिहास-प्रक्रिया मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। दुर्घटनाएँ तथा अनपेक्षित घटनाएँ कार्य-कारण सबधो के नियम के विपरीत होकर भी कलात्मक इतिहास-लेखन ऐतिहासिक उपन्यास व ऐतिहासिक रोमांस-लेखन की प्रक्रिया मे कार्य-कारण शृ खला की पूरक है। ऐतिहासिक रोमांसो की प्रक्रिया मे कई बार यह बधन ढीले भी हो सकते हैं।

(ख) **समझने की प्रक्रिया**—इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार सदैव मानवीय प्रकृति का अध्ययन करता है। मानवीय प्रकृति से सबद्ध घटनाओ तथा तथ्यो को समझने के लिए एक बृहत्तर अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। एक निश्चित कालखण्ड का अध्ययन करते समय इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार उसके विविध पक्षो एव स्थितियो को समझ कर इनकी पुन. अभिव्यक्ति करते हैं। इस मौलिक समझ मे वे असख्य घटनाओ तथा तथ्यो मे से चुनाव करते हैं। चुनाव की इस प्रक्रिया मे इतिहासकार का दृष्टिकोण व्यक्ति, समाज व परिवेश के *अन्तर्संम्बन्धो तथा इतिहास-निर्माण मे उनके सहयोग से प्रभावित होता है।*

लेखक का दृष्टिकोण इतिहास-लेखन की प्रक्रिया का केन्द्र-बिन्दु होता है। इतिहासकार का अपने तथ्यो के प्रति कर्त्तव्य केवल इसी से सम्पन्न नही हो जाता कि वह तथ्यो की सत्यता को निश्चित कर दे, उसे अपनी थीम तथा प्रस्तावित व्याख्या से सगत अन्य ज्ञात अथवा अज्ञात तथ्यो को प्रकाश मे लाने का प्रयत्न करना चाहिये। तथ्यो के निश्चयन के पश्चात् व्याख्या की प्रक्रिया द्वारा लेखक अपने दृष्टिकोण तथा तथ्यो को स्पष्ट करता है। यह इतिहासकार की ऐतिहासिक सामग्री की अपनी समझ होती है।

ई० एच० कार के मतानुसार इतिहासकार द्वारा तथ्यो का चयन करने, उनकी व्याख्या करने और उन्हे व्यवस्थित करने की प्रक्रिया मे अचेतन रूप से कई सूक्ष्म अथवा गहन अन्तर आ जाते हैं।[2]

इतिहास-लेखक का ऐतिहासिक मामलो के प्रति दृष्टिकोण सापेक्ष अथवा निरपेक्ष हो सकता है। लेखक की मानवीय अतीत की समझ मे निर्वैयक्तिकता प्राप्त

1 अधिक विवरण के लिए देखिए, ई एच कार "व्हाट इज हिस्ट्री" पृष्ठ 98, यहाँ प्रो० कार ने क्लियोपेट्रा की नाक तथा यूनान के सम्राट एलेक्जेंडर को उसके पालतू बन्दर द्वारा काटे जाने का उदाहरण देकर दुर्घटनाओ तथा अनपेक्षित घटनाओं की स्थिति को स्पष्ट किया है।

2 E H Carr, What is History, Page 30

करना अत्यन्त कठिन है फिर भी लेखक का दृष्टिकोण सतुलित हो सकता है। यह सतुलन शत्रु एव मित्र, विजेता[1] एव पराजित आदि मे से किसी एक की ओर अधिक न झुकने से प्राप्त किया जा सकता है।

इतिहासकार को अतीत के मनुष्यो के कार्यों को उनकी योजनाओ, कार्यक्रमों तथा परिस्थितियो द्वारा समझना एव जाँचना चाहिए। यह उन मनुष्यो के विश्वासो, रूढियो, परम्पराओ तथा विचारो के फलस्वरूप निकले परिणामो द्वारा जाना जा सकता है। वास्तविक समस्या यह है कि मनुष्य अन्यो के स्थान पर एक निश्चित कार्य क्यो करते हैं। इसे मूल रूप से समझने के लिए इतिहासकार व ऐतिहासिक उपन्यासकार को अपने विषय, पात्रो तथा उनके युग व समाज के साथ एक निश्चित धरातल पर बौद्धिक तथा हार्दिक तारतम्य स्थापित करना होगा।

कालिगवुड ने एक विशिष्ट ऐतिहासिक घटना को समझने की प्रक्रिया को 'विचार की प्रक्रिया'[2] कहा है। इस तरह इतिहास, अतीत के अनुभव का पुन सृजन है। समस्त इतिहास इतिहासकार के मानस के भीतर विचार द्वारा उपजा हुआ है। इतिहासकार केवल इतिहास का पुन निर्माण ही नही करता, प्रत्युत ऐसा करते हुए अपनी समझ के अनुकूल उसकी आलोचना भी करता है, इसके मूल्यों पर अपना निर्णय देता है तथा इसकी त्रुटियो को दूर करता है। कालिगवुड के मतानुसार इतिहासकार ऐतिहासिक घटनाओ को देखता नही, प्रत्युत उनके भीतर के विचार द्वारा उन्हें रूप देता है। इस प्रकार इतिहासकार को ऐतिहासिक एजेंट के निश्चित कार्यों तथा निर्णयों को समझने के लिए उसी मानसिक प्रक्रिया से गुजरना होगा जिसमे से कि ऐतिहासिक एजेंट गुजरा था। इससे ऐतिहासिक सामग्री केवल वही हो सकती है जिसे इतिहासकार अपने मानस मे पुन विचार सके, इस दृष्टि से प्रकृति का कोई इतिहास न तो है न हो सकता है।

इतिहासकार की समझ एव कालिगवुड की थ्योरी पर अन्यान्य आक्षेप[3] लगाए गए हैं, परन्तु कलात्मक इतिहास के क्षेत्र मे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह मानवीय इतिहास को अधिक स्पष्ट एव बुद्धिगम्य बनाती है।

(ग) लोगो की प्रतिक्रिया—इतिहासकार को समाज मे मनुष्य के अतीत की खोज की प्रक्रिया मे करोड़ों सामान्य लोगों के विचारों, विश्वासो, रूढियो तथा परम्पराओ के सदर्भ मे उनकी विशिष्ट कार्यों तथा घटनाओ के प्रति प्रतिक्रिया को समझना तथा स्पष्ट करना होता है। समाज का अग होने पर भी एक निश्चित स्थिति मे एक व्यक्ति की प्रतिक्रिया को सुनिश्चित करना अत्यन्त कठिन काम है यद्यपि यह किया जा सकता है। उसके विपरीत भीडो, समूहों तथा राष्ट्रों की परिस्थितियो के प्रति प्रतिक्रिया लगभग समान ही होती है।

1 एक्टन ने कहा था कि इतिहासकार को अतीत पर केवल विजेताओं की दृष्टि से ही नहीं देखना चाहिए।
2. Theories of History, page 259
3 See "Philosophy of History" W.H. Dray, p. 12

कलात्मक इतिहास की प्रक्रिया मे इतिहासकार को अतीत मे मनुष्यो द्वारा उनके परिवेश मे किए गए कार्यों की खोज करनी होती है। यह नितान्त वैज्ञानिक ढग से नही की जा सकती। इसके लिए उसे साहित्यकार के अन्यान्य साधनो तथा सर्जनात्मक कल्पना, उत्पादक प्रतिमा तथा निर्माणात्मक विचार आदि का प्रयोग करना पडता है, जो इतिहास को कला के और भी निकट ले जाएगा।

इतिहासकार की इतिहास खोज की प्रक्रिया दोहरे स्वरूप की होती है, वह केवल अतीत को वर्तमान की दृष्टि से ही नही देखता प्रत्युत वर्तमान को भी अतीत की दृष्टि से देखता है। इतिहास-लेखन के समय इतिहासकार पाठको की प्रतिक्रिया को भी ध्यान मे रखता है। यह वह पाठको के युग की मुख्य बौद्धिक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक धारणाओ को दृष्टि मे रख कर करता है। खोज की इस प्रक्रिया मे इतिहासकार की दृष्टि जितनी अधिक उसके विषय से सम्बन्धित युग के लोगो की धारणाओ तथा विश्वासो पर रहती है, उतनी ही वह पाठको के युगबोध पर भी रहती है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे लेखको ने भारतीय मध्य युगो के सामन्ती जीवन को बहुत दूर तक समझा है तथा उनके विश्वासो एव विचारधाराओ का कलात्मक पुन प्रस्तुतिकरण किया है।

(घ) **लेखन की शर्तें** अभिव्यक्ति—इतिहासकार अपनी खोज और शोध की प्रक्रिया के पश्चात् कतिपय निर्णय लेता है। उन्हे अन्तिम रूप प्रदान करने तथा उनकी अभिव्यक्ति की समस्या इतिहासकार के सामने उभरती है।

बी० वी० जोशी के मतानुसार एक ऐतिहासिक कृति को स्वय के प्रति सच्चा होने के लिए दो शर्तों[1] को पूरा करना होता है। 'इतिहास लेखन का निर्माण किसी विशिष्ट स्थान पर निश्चित होने के तथ्य द्वारा, बाध्य, तथा काल-क्षेत्र मे बद्ध होना चाहिए। काल का मापदण्ड वर्षों तथा दशको द्वारा होना आवश्यक नही है, परन्तु काल परिवर्तन की वास्तविकता में समाविष्ट हो, यह बाह्य परिस्थितियो के लाजिक का परिणाम हो तथा आन्तरिक अनिवार्यता द्वारा बाध्य हो। दूसरे इतिहास लेखन मे उसके निर्णयो, अनुमानो, स्वीकारोक्तियाँ (Assumptions) तथा विवरणो की सत्यता के औचित्य को, इससे असबद्ध साक्ष्य की अपील द्वारा सिद्ध करना होता है। उपन्यास मे साक्ष्य आन्तरिक होता है।'

अपनी खोज के अनुमानो एव निर्णयो की अभिव्यक्ति के लिए इतिहासकार को भाषा का आश्रय लेना पड़ता है। इतिहास-खोज की प्रक्रिया मे आंशिक-रूप से वैज्ञानिक पद्धति अपना कर भी, अभिव्यक्ति का कलात्मक एव स्वत. स्पष्ट होना आवश्यक है।

1 'The Problem of History & Historiography" p 17-18

अतीत के मनुष्यों की भावनाओं एवं भावावेगों, रुचियों एवं अरुचियों, प्रेम तथा घृणा, उनकी महानता तथा क्रूरता आदि के चित्रण के लिए, घटनाओं, स्थितियों एवं विचारों का प्रदर्शन, ऐतिहासिक पात्रों का विश्लेषण, आदि के लिए इतिहासकार में एक सृजनात्मक कुशलता अपेक्षित है। यह इतिहास को कला एवं साहित्य के और भी निकट लाता है।

(7) कलात्मक इतिहास की सीमा

(क) सत्य की सीमा—कलात्मक इतिहास-लेखन में सत्य सीमित रूप में ही हमारे सम्मुख आता है। मानव जीवन के अतीत की गाथा कहते समय कलात्मक इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक उपन्यासकार द्वारा प्रस्तुत घटनाएँ तथा तथ्य, कला तथा भावावेगों द्वारा आच्छादित हो जाते हैं। लेखक का अपना दृष्टिकोण वास्तविक सत्य को सीमित रूप में ही उभरने देता है।

ए० एल० राउस के मतानुसार, 'इतिहास-लेखन में सदैव तथा प्रत्येक बिन्दु पर सत्य की एक सीमा होती है, परन्तु वह जितनी एक सीमा है, उतनी ही एक उपलब्धि भी है।'[1] उनके मतानुसार टालस्टाय ने 'युद्ध और शान्ति' में नैपोलियन का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह अनुचित तथा वायस है। अपनी प्रकट पराजयों के होते हुए भी नैपोलियन, टालस्टाय के चित्रण से कहीं अधिक अद्भुत व्यक्ति था।

सत्य का सीमित रूप से उभर पाना कलात्मक इतिहास की एक सीमा है।

(ख) जीवनी का एक पक्ष—जीवनी कलात्मक इतिहास का एक महत्वपूर्ण घटक है, साथ ही वह एक साहित्यिक विधा है। ए एल राउस के मतानुसार, "जीवनी द्वारा इतिहास का अध्ययन करने में एक स्पष्ट खतरा है, आपको विषय का एक पक्षीय दृष्टिकोण ही प्राप्त होने की सम्भावना है।"[2]

ट्रेविलियन के मतानुसार दो परस्पर विरोधी राजनीतिज्ञों, योद्धाओं अथवा विचारकों की जीवनियों के अध्ययन द्वारा एक युग का बहुमुखी ज्ञान प्राप्त हो सकता है—जो अधिक विश्वसनीय भी हो सकता है।

कालिंगवुड के मतानुसार, जीवनी में चाहे कितना भी इतिहास क्यों न हो परन्तु जिन सिद्धान्तों पर इनका निर्माण किया जाता है वे न केवल अनैतिहासिक ही हैं प्रत्युत प्रतिऐतिहासिक हैं।[3]

जीवनी स्वयं में 'मधुर एवं उपयोगी' होने पर भी एक सीमित ज्ञान का स्रोत है। कलात्मक इतिहास के क्षितिज इससे सीमित हो जाते हैं क्योंकि यह मानवीय

1 "The Use of History," p 49
2 A L Rowse "The Use of History," p 46
3 Collingwood, 'History as Re-enactment of Past-experience' reprinted in 'Theories of History' p 258

अतीत के एक ही पक्ष का उद्‌घाटन कर पाती है, जबकि अन्य पक्ष अन्धकार मे ही रह जाते है ।

(ग) कल्पना—तथ्य मूलक इतिहास अन्यान्य घटनाओ एव तथ्यो का एक ककाल मात्र होता है । वैज्ञानिक पद्धति से इनका अध्ययन करने पर इतिहास लेखक को बहुत-सी समस्याओ का सामना करना पडता है । तथ्यो तथा घटनाओ के समूह को एक सुनिश्चित एव बुद्धिगम्य स्वरूप तथा अर्थवत्ता प्रदान करने के लिए इतिहास लेखक को कल्पना का आश्रय लेना पडता है ।

इतिहास के अज्ञात-कालखण्ड की खाई को पूरा करने के लिए अनुमान ही उचित तकनीक है । इसीलिए कुछ इतिहासकार 'निश्चित परिस्थितियो मे क्या घटित हो सकता है'[1] का मापदण्ड अपनाते हैं । कल्पना की सहायता से प्राप्त इस ज्ञान को वे 'सभाव्यता आधारित ज्ञान' कहते हैं ।

यद्यपि कल्पना अर्थवान एव बुद्धिगम्य इतिहास लेखन मे अत्यत सहायक सिद्ध होती है तथापि कल्पना की अधिकता, या उसका दुरुपयोग इतिहास लेखन के मूल लक्ष्य को नष्ट कर सकते हैं । कलारूप इतिहास मे कल्पना का प्रयोग उसके क्षेत्र तथा वैधता को सीमित कर देता है ।

(घ) अन्तर्दृष्टि—तथ्यरूप इतिहास के क्षेत्र मे हेतुवादी अथवा प्रयोजनवादी इतिहासकार, दस्तावेजो, शिलालेखों व अवशेषो आदि सामग्री का अध्ययन वैज्ञानिक पद्धति से अथवा कम से कम वैज्ञानिक दृष्टिकोण से करने का दावा करते है जबकि कलात्मक इतिहास-लेखक घटनाओ के आन्तरिक तथा बाहरी पक्षो का कलात्मक ढग से अध्ययन करते हैं । उनकी अपनी सामग्री के लिए एक भावना होती है ।

इतिहास लेखन की प्रक्रिया मे अन्तर्दृष्टि अन्यान्य शोध समस्याओ के आकस्मिक समाधान प्रस्तुत करती है । 'अन्तर्दृष्टि एक ऐसी मानसिक क्रिया है, जो एकाएक व्याख्या प्रस्तुत करती है ।' इस मानसिक क्रिया का मनोविज्ञान द्वारा अध्ययन किया तो जा सकता है, परन्तु यहाँ यह नही किया जाना चाहिए । अन्तर्दृष्टि कलात्मक इतिहास का स्वरूप अत्यन्त वैयक्तिक बना देती है । निरपेक्षता एवं निर्वैयक्तिकता के सिद्धान्त के विपरीत होने के कारण यह इतिहास की सीमा तथा क्षेत्र को सीमित करती है ।

कालिंगवुड सारे इतिहास को विचारो का इतिहास मानते थे । इतिहासकार विचार द्वारा घटनाओ को स्वरूप प्रदान करता है, और इस प्रकार इतिहास, इतिहासकार के भीतर विचार द्वारा उपजा हुआ होता है । यह इतिहास-दर्शन स्वय मे सम्पूर्ण है. परन्तु इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित है क्योकि ऐतिहासिक एजेंटो के बहुत कम कार्यों का ही 'विचार पक्ष' होता है, जो उन्होंने सचेतन रूप से निश्चित कार्य-कारण सिद्धान्त के अनुरूप किए होते है । ऐतिहासिक एजेंटो के अनौचित्यपूर्ण तथा असबद्ध कार्यो का इस ढग से अध्ययन करना अत्यन्त कठिन होगा ।

1 "The Problem of History & Historiography," p 58

2 इतिहास का तथ्यात्मकता तथा अतिकल्पना से सम्बन्ध

इतिहास-लेखन इतिहास-अध्ययन से जुडा हुआ है। इसलिए पहले हमे दोनो का निरूपण करना होगा। तदुपरात ही हम ऐतिहासिक उपन्यास के विविध सास्कृतिक पक्षो को तथा ऐतिहासिक रोमास के विविध मनोशोभात्मक पक्षों को गहराई से निथार सकेंगे। अत इस अध्याय मे हमारा यही लक्ष्य होगा कि तथ्यात्मकता एव अति कल्पना से इतिहास के विविध रूपेण सबध सुनिश्चित किए जाएँ।

(अ) इतिहास और तथ्यात्मकता :

इतिहास व्याख्या के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यास

समस्त अतीत का अध्ययन, अथवा मनुष्य मात्र द्वारा अतीत मे किया गया प्रत्येक कार्य इतिहास का विषय नही है। इतिहास मे अतीत के मनुष्यो के केवल उन्ही कार्यो तथा विचारो को अध्ययन का विषय बनाया जाता है जो काल के प्रवाह मे मनुष्यो के लोक जीवन[1] के विविध पक्षो को प्रभावित करें, उनके विकास मे सहायक बनें अथवा उन्हें एक निश्चित दिशा प्रदान करें। इस दृष्टि से मानवीय अतीत के अध्ययन, तथा इतिहास-खोज की प्रक्रिया के कई पक्ष उभर कर सामने आते हैं। राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सास्कृतिक आदि मानवीय अतीत के विभिन्न पक्ष हैं, जो इतिहास-अध्ययन तथा इतिहास-खोज की प्रक्रिया को सुबोध एव बुद्धिगम्य बनाते हैं।

इतिहास व्याख्या की दृष्टि से मानवीय अतीत के यह विभिन्न पक्ष सुविधा-जनक तथा वैज्ञानिक हैं, परन्तु इन सबको नितान्त भिन्न विषयो के रूप मे कभी मान्यता प्रदान नही की जा सकती। ये एक ही लक्ष्य की प्राप्ति के विभिन्न मार्ग हैं, जो इतिहास-अध्ययन मे समग्र रूप से सहायक हैं।

(क) राजनैतिक पक्ष—यद्यपि इतिहास अब केवल अतीत की राजनीति ही नही रह गया फिर भी अभी तक लिखे तथा पढे जाने वाले इतिहासों का अधिकाश

1 देखिए—"Theories of History" p 260 R G Collingwood "इतिहास स्वय को केवल राजनीति, युद्ध, आर्थिक जीवन तथा सामान्यत व्यवहार (Practice) के विश्व के साथ ही सबधित रख सकता है।" • आजकल इस विषय पर विवाद करने की कोई आवश्यकता नहीं रह गई है कि कला, विज्ञान, धर्म, दर्शन, आदि इतिहास-अध्ययन के उचित विषय हैं।

भाग' अतीत की राजनीति[1] को आत्मसात् करता है। मानवीय अतीत का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अश, लोक-प्रशासन, युद्ध, सविधान तथा कूटनीति आदि ही हैं। मानवीय आकांक्षाओ, भावनाओ, भावावेगो, विश्वासो, रुचियो तथा जीवन-पद्धति को राजनैतिक नेतृत्व ही एक निश्चित दिशा प्रदान करता रहा है।

इतिहास खोज की प्रक्रिया तथा उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति मे राजनैतिक पक्ष के अन्तर्गत राष्ट्रीय इतिहास तथा 'राज्य' का विस्तृततम् अर्थ मे इतिहास आ जाते हैं।[2] केन्द्रीय राज्य की कार्यविधियाँ ही नही स्थानीय प्रशासन आदि भी इसी के ही अग है। राज्य एव प्रशासन के त्रिविध स्तर उन के कार्य तथा गतिविधियो का अध्ययन इतिहास के राजनैतिक पक्ष के अन्तर्गत आते हैं।

मानवीय अतीत के आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सास्कृतिक पक्षो का अध्ययन करते समय इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक उपन्यासकार को अपनी खोज की सामग्री के लिए राज्य अथवा प्रशासन द्वारा उपलब्ध अवशेषो, शिलालेखो तथा दस्तावेजो का आश्रय लेना पडता है।[3] जिसके लिए उसे राजनैतिक, सवैधानिक तथा प्रशासनिक इतिहास का अध्ययन करना होता है। जब तक शासन किसी आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक अथवा सास्कृतिक कार्रवाई मे हस्तक्षेप नही करता तब तक मानवीय अतीत के उस विशिष्ट पक्ष के सबध मे जानकारी विश्वसनीय नही होगी। सामाजिक प्राणी के रूप मे मनुष्य के राजनैतिक कार्य सर्वोच्च महत्ता के हैं। अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य स्वभावत एक राजनैतिक पशु है। ऐतिहासिक उपन्यास सामान्यत पात्र तथा घटना पर आश्रित सत्य को लेकर चलने के कारण तथ्य केन्द्रित होते है। इसलिए वे अपनी प्रवृत्ति तथा चरित्र मे राजनीतिक मूल के होते हैं।

प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो का कथ्य तथा (थीम) मूल विचार राजनैतिक इतिहास से सबधित है। अतीत की राजनीतिक गतिविधियो पर आश्रित अधिकाश उपन्यास मानवीय अतीत के इस महत्त्वपूर्ण पक्ष का रहस्योद्घाटन करते हैं। अतीत की राजनीति इन उपन्यासो का मुख्य विषय है। मानवीय अतीत के अन्य पक्ष इसके पूरक रूप मे ही उपन्यासो मे उभरते हैं।

1 'Political History' by S T Bindoff reprinted in "Approaches to History" edited by H P R Finberg London, Page 2

आक्सफोर्ड इतिहास के हाल ही के सस्करणो में एक पैटर्न निश्चित कर दिया गया है, जिसके अनुसार एक तिहाई से कम हिस्सा गैर-राजनैतिक विषयों को दिया गया है। वे इतिहास मुख्यत राजनैतिक हैं।

2 वही, पृष्ठ 7-8

3. देखिए—'Political History' by S T Bindoff P 14-16 "... मनुष्य की एक सामाजिक प्राणी के रूप में सर्वोच्च गतिविधि से सबधित इतिहास, कुछ कालखण्डों मे चर्च के अपवाद के होते हुए भी, मानवीय सगठन का कोई भी स्वरूप राज्य जैसा शक्तिशाली नहीं रहा, न ही कोई गतिविधि, राज्य की राजनीति-सी प्रभावशाली अथवा महत्त्वपूर्ण थी।"

व्रजनन्दन सहाय का 'लालचीन', वलदेव प्रसाद मिश्र का 'पानीपत', किशोरी लाल गोस्वामी के 'तारा व क्षत्रकुल कमलिनी' एव 'सुलताना रजियाबेगम वा रंग महल मे हलाहल, गगा प्रसाद गुप्त का 'हम्मीर', रामजीवन नागर का 'बारहवी सदी का वीर जगदेवपरमार', सिद्धनाथ सिंह का 'प्रणपालन', अखौरीकृष्ण प्रकाश का 'वीर चूडामणि', चन्द्रशेखर पाठक का 'भीमसिंह' आदि उपन्यास मूलतः एव मुख्यत अतीत की राजनीति का ही पुनर्निर्माण करते हैं।

इस प्रकार राजनीति मानवीय अतीत की खोज की प्रक्रिया का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है।

(ख) आर्थिक पक्ष—आर्थिक निश्चयवाद के सिद्धांत के अन्तर्गत किसी भी समाज की आर्थिक व्यवस्था ही उसके राजनैतिक, धार्मिक, तथा कलात्मक जीवन का निश्चयन करती है।[1] मार्क्स तथा एगल्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद तथा द्वन्द्ववाद की प्रक्रिया की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी मानवीय अतीत के अध्ययन मे अतीत के मनुष्यो के निर्माण के विविध सबधो, तथा उनके द्वारा निर्धारित अन्य पक्षो को एक निश्चित एव विशिष्ट दार्शनिक आधार प्रदान करती है।

मार्क्स के मतानुसार, "सामाजिक निर्माण के क्षेत्र मे लोग कुछ निश्चित सबधो मे बधते हैं, यह उनकी इच्छा के अधीन नही होता, निर्माण के यह सबध, उनकी निर्माण की भौतिक शक्तियों की एक निश्चित स्थिति के अनुरूप होते हैं। निर्माण के इन सबधो की समग्रता, समाज की आर्थिक सरचना का निर्माण करती है—जो वास्तविक आधार है, जिस पर वैधानिक तथा राजनैतिक ढाँचे उभरते हैं तथा जिसके अनुसार सामाजिक चेतना का विशिष्ट स्वरूप उभरता है। " आर्थिक आधार बदलने पर सारा ढाँचा तीव्रता से परिवर्तित होता है।"[2]

आर्थिक पक्ष, इस प्रकार, मानवीय अतीत के अध्ययन मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यदि उसे अन्य समस्त मानवीय क्रियाकलापो का एकमात्र प्रेरणा-स्रोत एव नियन्ता न भी माना जाए, तो भी यह स्वीकार करना होगा कि अर्थ मानवीय विचारों, विश्वासो, परम्पराओ तथा रुचियो को प्रभावित करता रहा है।

प्रेमचन्द पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यासों मे आर्थिक दृष्टि से मानवीय अतीत का अध्ययन नही किया गया। फिर भी "पानीपत" मे स्थान-स्थान पर मराठा सेना की आर्थिक स्थिति तथा मुसलमान-सेनापतियो की धन लोलुपता, "रजियाबेगम" तथा "लालचीन" मे तत्युगीन आर्थिक स्थिति का उत्तम चित्रण किया गया है।

1, Alan Donagan, "Explanation in History" reprinted in Theories of History, Page 441

2 Karl Marx . The Materialistic Conception of History. Reprinted in Theories of History, Page 131

(ग) सामाजिक पक्ष—अतीत के समाज[1] का अध्ययन इतिहास खोज का एक मुख्य पक्ष है। इतिहास मे मनुष्य के सामाजिक व्यक्तित्व को ही अध्ययन का विषय बनाया जाता है। स्थान मे स्थिर व काल मे निश्चित समाज का अग होने के कारण मनुष्य राजनीतिक निकाय, शिक्षा सस्थाओ, धार्मिक सगठनो तथा अपने परिवेश के अन्य व्यक्तियो के सम्पर्क मे आता है। अत यह सब मनुष्य के सामाजिक जीवन के अनिवार्य अग है। इस दृष्टि से 'समाज' की परिधि मे लगभग सभी मानवीय क्रियाकलाप तथा गतिविधियाँ व इतिहास अध्ययन के अन्यान्य पक्ष आ जाते हैं।

मनुष्य एक इकाई है, जो अपने सामाजिक जीवन को तीन विभिन्न स्तरो पर जीता है—आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक। इस प्रकार आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक इतिहास का अध्ययन अन्योन्याश्रित है।[2] इन पक्षो के बीच एक सीमा रेखा नही खीची जा सकती। प्रो० शस्टो के मतानुसार 'मनुष्यो की जीवन पद्धति, धर्म तथ सस्कृति, जिसका वे सृजन करते हैं, तथा जिसे वे स्वीकार्य मानते हैं। उनका वैज्ञानिक अन्वेषण, तथा सबसे उनकी सामान्य राजनैतिक मान्यताएँ जो उनके समुदाय को विवेकवान बनाता है, इसी के अश है।[3]

स्पष्ट है कि मानवीय अतीत के आर्थिक अथवा राजनीतिक किसी भी पक्ष का अध्ययन करते समय इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक उपन्यासकार को सामाजिक, धार्मिक एव सांस्कृतिक पक्षो को भी अपनी दृष्टि मे रखना होता है, परन्तु ऐसा करते समय सामाजिक पक्ष का अध्ययन उसका मुख्य विषय अथवा साध्य नही होगा। इस प्रकार, सामाजिक-पक्ष का अध्ययन करते समय हमे इतिहास की प्रक्रिया को "सामाजिक-दृष्टिकोण" से देखना होगा।

1. देखिए "Social History" by J F. Rees reprinted in "Approaches to History" Page 61.
"यह स्थान व काल मे स्थिर समाज से सबधित होना चाहिए उसे अपने समाज को एक सगठित, क्रियाशील, उन्नतिशील, स्व-गत्यात्मक, स्व-प्रतिक्रियाशील, इकाई के रूप मे देखने का प्रयास करना चाहिए जो अपने भौगोलिक तथा ब्रह्माण्ड सबधी परिवेश में स्थिर हो। समाज एक सयत्र से अधिक एक निकाय नहीं है, यह एक सामाजिक अस्तित्व, मनुष्यो का एक समेकित समूह है तथा इसीलिए आवश्यक ढग से यह एक मनुष्य अथवा स्त्री से कुछ अधिक तथा कुछ कम दोनो है।"

2 "Approaches to History" Page 51–52
प्रो० जे० एफ० रीस—"आर्थिक इतिहास मे कृषि, उद्योग, वाणिज्य तथा यातायात शामिल हैं। इनके साथ ही करेंसी, ऋण तथा कर सम्बन्धी जटिल समस्याएँ भी हैं। यह विषय अनिवार्य रूप से सामाजिक परिस्थितियो की छानबीन तथा विवरण को भी शामिल करेगा।"
सर मॉरिस पाविक—"मेरे दृष्टिकोण से राजनैतिक तथा सामाजिक इतिहास एक ही प्रक्रिया के दो पक्ष हैं। सामाजिक जीवन आधी रुचि खो देगा तथा राजनैतिक आन्दोलन अपना अर्थ खो दगे यदि उनका अलग-अलग अध्ययन किया जाएगा।"
सर लुई नेमियार—"जब मानवीय-मामले, इतिहास की विषय-सामग्री हैं, सभी मानवीय व्यवसाय (उद्यम) तथा पद्धतियाँ अपने सामाजिक रूप मे उसमे शामिल हो जाती हैं।"

3 वही, पृष्ठ 53–54

विवेच्य उपन्यासो में भारत के अतीत कालीन समाज के बहुत से सजीव, सार्थक एव महत्त्वपूर्ण चित्र उपस्थित किए गए हैं। मध्ययुगो के भारतीय समाज की अन्यान्य परम्पराएँ, प्रथाएँ एव रूढियां, सामाजिक विश्वास इन उपन्यासो मे यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। मुशी देवी प्रसाद के उपन्यास 'रुठी रानी' मे उमादे का चरित्र पातिव्रात्य के प्राचीन सामाजिक विश्वास तथा सती प्रथा की सामाजिक रूढि का अत्यन्त सशक्त उदाहरण है। किशोरीलाल गोस्वामी के 'रज़ियाबेगम' तथा 'तारा' उपन्यासो मे मुस्लिम युग के समाज की स्थितियाँ, हिन्दुओ की स्थिति तथा मुसलमान शाहज़ादो एव शाहज़ादियो की धन एव विषय-लोलुपता का विशद् वर्णन किया गया है। बलदेव प्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे भारतीय नारी की धारणा को अभिव्यक्ति प्रदान करने के साथ-साथ सनातन धर्म की सामाजिक व्यवस्था एव धार्मिक विश्वासो का उत्तम चित्रण किया गया है। महारानी पद्मिनी के, अलाउद्दीन की विजय के पश्चात् जौहर व्रत धारण करने पर विवेच्य युग मे लगभग आधी दर्जन ऐतिहासिक उपन्यासो का निर्माण किया गया। नारी की पवित्रता की प्राचीन मान्यता को नवशास्त्रीयवाद के अनुसार पुनः जीवित करने मे शेरसिंह के उपन्यास "आदर्श वीरागना दुर्गा" का स्थान महत्त्वपूर्ण है इसमे एक क्षत्रिय कुल सुन्दरी की ऐतिहासिक घटना का वर्णन किया गया है। जिसने बहनोई द्वारा छुए जाने के कारण अपना हाथ काट कर फेंक दिया था।

(घ) धार्मिक पक्ष—धर्म एव सस्कृति यद्यपि मानवीय समाज का ही अभिन्न अग है, तथापि मध्य युगो मे धर्म मनुष्यो के विचारो तथा कार्यों को इतना अधिक प्रभावित करता रहा है कि वह स्वयमेव मानवीय अतीत के अध्ययन का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्ष बन गया है। विभिन्न धार्मिक आन्दोलन तथा समुदाय ऐतिहासिक घटनाओ के प्रवाह को समय-समय पर दिशा प्रदान करते रहे हैं। समस्त मानवीय कार्यों तथा प्रयोजनो को नियोजित करने वाली एक अलौकिक प्रभुसत्ता की परिकल्पना लगभग सभी धार्मिक समुदायो के मूल विश्वासो का निर्माण करती है। अतीत के मनुष्यो के अधिकांश कार्य धार्मिक नियमो एव सिद्धान्तो द्वारा ही निर्देशित होते थे। इसाई एव इस्लाम मत के अनुयायियो की महान विश्व-विजयें, मानवीय अतीत की खोज की प्रक्रिया मे धार्मिक पक्ष की महत्ता का प्रमाण है।

नेमियर के मतानुसार, ईसाई ब्रह्मशास्त्र मे वर्णित दिव्य प्रकाशन के द्वारा ही ऐतिहासिक घटनाओ के अर्थ को विचारवान् बनाने का एक यथेष्ट आधार प्रदान किया जा सकता है।[1] लगभग यही धारणा भारतीय इतिहास-चेतना मे भी उपलब्ध होती है। उसका वर्णन कला रूप इतिहासकारो की परम्परा मे किया जा चुका है।

विवेच्य उपन्यासो मे मध्य युगीन भारत के समाज की धार्मिक स्थिति एव अवस्था का विशद वर्णन करने के साथ-साथ पात्रों के विचारो तथा कार्यों पर धर्म

1 W H Dray— 'Philosophy of History" (Prentice Hall, Inc Englewood Cliffs N.J 1964) p 98

के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव का चित्रण उल्लेखनीय है। 'पानीपत' मे 'पार्वती जी का मन्दिर' अध्याय में मन्दिर का चित्रण सारे समाज तथा सस्कृति के केन्द्र बिन्दु, के रूप मे किया गया है। इस बिन्दु के चारो ओर राजनीति, धर्म तथा दर्शन का चक्र निरन्तर घूमता है। महाराज हरिदास का सगीत तथा दार्शनिक विवाद, भारतीय सनातन धर्म की मान्यताओ को मुखर करते है। (पृष्ठ 25–35) पूजा गृह के वर्णन मे (पृष्ठ 82–84) धार्मिक क्रियाकलापो का शास्त्रीय विवेचन किया गया। उपन्यास के पात्र हिन्दू हो या मुसलमान, सभी धार्मिक निमित्तों तथा प्रयोजनो के प्रति प्रतिबद्ध है, उनके लगभग सभी कार्य धार्मिक चेतना से अनुप्राणित हैं। ऐतिहासिक घटनाओ (जय हो या पराजय) के घटित होने के लिए भगवान अथवा खुदा उत्तरदायी है। (पृष्ठ 286–273) 'लालचीन', 'रजियाबेगम', 'तारा', 'काश्मीर पतन', 'वीरमणि' आदि उपन्यासों मे भी धार्मिक पक्ष का विस्तृत विवेचन किया गया है।

(ङ) **सांस्कृतिक पक्ष**—संस्कृति मनुष्य-जीवन का उदात्त एव उर्ध्वोमुखी पक्ष है। इतिहास-खोज की प्रक्रिया मे मानवीय अतीत के सांस्कृतिक पक्ष का अध्ययन, इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार को, सांस्कृतिक अतीत के चित्रण के साथ-साथ, उनके स्वय के जीवन-दर्शन को उद्घाटित करने का भी आधार प्रदान करता है। इस पक्ष के अन्तर्गत शिक्षा, ललित कलाओ, साहित्य तथा धार्मिक मान्यताओ के अतीत का अध्ययन किया जाता है। अतीत के मनुष्यो की जीवन-पद्धति चर्च, रगमच, वास्तुकला, सगीत कला, वेषभूषा, खानपान तथा सबसे अधिक उनकी जीवन के विविध पक्षो के प्रति धारणाएँ ऐतिहासिक उपन्यासकार के लिए विशेष रुचि का विषय है। इसी सांस्कृतिक आधार पर, उपन्यासकार, इतिहास की व्याख्या के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यास का सृजन करता है।

प्रेमचन्द-पूर्व-ऐतिहासिक उपन्यासो मे मध्य युगीन भारत के जन-जीवन के अनेक सांस्कृतिक चित्र उपलब्ध होते है। किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासो—'तारा' व 'रजिया बेगम' मे हिन्दू तथा मुस्लिम सस्कृतियो के सम्मिलन तथा टकराहट का अत्युत्तम चित्रण किया गया है। 'तारा' मे जहानआरा तथा तारा, वाल्मीकि की रामायण व गीता तथा कुरान शरीफ आदि पर वार्तालाप करती हैं। गोस्वामी जी की हिन्दू-निष्ठ प्रवृत्ति मुसलमानो के मुख से भी हिन्दू धर्म पुस्तको तथा परिपाटियो की प्रशसा करवाती है। इसके विपरीत 'पानीपत' मे हिन्दू तथा मुस्लिम सस्कृतियो की प्रबल टकराहट का सशक्त चित्रण किया गया है। हिन्दू धर्म की दार्शनिक पृष्ठभूमि तथा सनातन धर्म की मान्यताओं द्वारा अनुप्राणित मराठा सेना तथा उसका मुख्य सेनापति सदाशिवराव भाऊ सारे भारत मे मुसलमानो को निकाल कर 'रूम तथा शाम' तक हिन्दू राष्ट्र की स्थापना करना चाहते हैं। इसके विरोध मे अहमदशाह दुर्रानी सारे भारत पर मुसलमानी झण्डा फहराने की महत्त्वाकांक्षा लेकर तूफानी जोर मे युद्धगामी होता है। पार्वती जी के मन्दिर मे महाराज हरिदास जी

के प्रवचन (पृष्ठ 30) तथा साईं साहिब शाह का अहमद शाह को मिट्टी के सिंहासन पर बिठा कर घास का ताज देते समय भाग्य की गरिमा का वर्णन (पृष्ठ 238) दोनों संस्कृतियों के स्वधर्म-परक परस्पर विरोध को स्पष्ट करते हैं। मथुरा के मन्दिरों पर मुसलमानों के क्रूर आक्रमणों तथा देवमूर्तियों पर कुठाराघात करने तथा मराठा सैनिकों की इसके प्रति प्रतिक्रिया (पृष्ठ 212-215) दो विरोधी संस्कृतियों की टकराहट को उजागर करती हैं। लालचीन, वीरमणि, प्रणपालन, वीर चूडामणि, भीमसिंह आदि उपन्यासों में इन्हीं दोनों संस्कृतियों के स्वरूप के अन्यान्य पक्ष उभरे हैं।

(1) इतिहास व्याख्या के रूप

इतिहास-खोज की प्रक्रिया में इतिहासकार अपनी सामग्री की छानबीन करने के पश्चात् उपयुक्त एवं युक्ति संगत तथ्यों का चुनाव करते हैं। इस प्रकार चुने गए तथ्य स्वयं इतिहास नहीं होते प्रत्युत इतिहासकार के इतिहास की सामग्री होते हैं। कार्य-कारण शृंखला में बद्ध करने तथा एक विशिष्ट इतिहास दर्शन द्वारा अनुप्राणित होने के पश्चात् ही यह चुने हुए तथ्य इतिहास-लेखन के कार्य में प्रयुक्त किए जाते हैं। अपनी सामग्री को व्यवस्थित करने की प्रक्रिया में इतिहासकार व्याख्याएँ करते हैं, जो उनकी खोज के परिणामों तथा एक विशिष्ट काल-खण्ड के विवरण को बुद्धिगम्य तथा अर्थवान बनाती हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकारों द्वारा व्याख्या किए जाने की प्रक्रिया यद्यपि मूलतः ऐतिहासिक व्याख्याओं की ही कोटि में आती है, परन्तु वह अपने उद्देश्य तथा चरित्र में भिन्न होती है।[1]

हेंपल (Hempel) के मतानुसार सभी विज्ञान-परक व्याख्याओं की एक सामान्य फार्म होती है, यह तार्किक रूप से व्याख्यायित की जानी चाहिए। विज्ञान-परक व्याख्याएँ दो प्रकार की होती हैं। प्रथम व्यक्तिगत घटनाओं की व्याख्या द्वितीय सामान्य नियमों की व्याख्या जो एम्पायरीकल साक्ष्य द्वारा स्थापित किए गए हैं।[2] यदि यह माना जाए कि एक व्याख्या तार्किक रूप से यह स्पष्ट न करे कि वह क्या व्याख्यायित करती है, और वह कई सम्भावनाओं को लिए हुए ही चले तो कठिनाई यह होगी कि अन्य सम्भावनाएँ सत्य क्यों नहीं हो पाईं। इसी प्रकार

1. देखिए "Problem of History and Historiography" p 18.

"इतिहास के साक्ष्य उसकी अपनी बनावट की सीमा के बाहर के होते हैं जबकि वर्णन के साक्ष्य आन्तरिक होता है, तथा इसके रूप में ज़रा कुछ भी अभिव्यक्त भी, ऐसा क्या उसकी कार्य-कारण शृंखला स्वयं में पूरी होती है जैसा कि इतिहास लेखन में भी है। इति-लेखन में साक्ष्य ढूंढ कर, उसे अपने पूरे कार्य तथा विवरण की सत्यता को सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत करना पड़ता है।"

2. Alan Donagan "Explanation in History" reprinted in "Theories of History" p 428-29

व्यक्तिगत घटनाओ का अध्ययन करते समय इतिहासकार को यह देखना होता है कि अतीत मे मनुष्यो ने एक निश्चित कार्य के अतिरिक्त अन्य सम्भावित कार्य क्यो नही किए।

मानवीय अतीत का अध्ययन करते समय इतिहासवेत्ता अन्यान्य प्रकार की व्याख्याएँ करते हैं। विलियम एच० ड्रे० के इतिहास दर्शन (फिलासफी आफ हिस्ट्री) मे तीन मुख्य ऐतिहासिक व्याख्याओ का विवरण दिया गया है—हीगल की आध्यात्मिक (मेटा-फीजिकल) व्याख्या, आर्नल्ड जोमेफ ट्वायनवी की अनुभव-परक व्याख्या (एम्पायरीकल) तथा रेनहोल्ड नेव्हर की धार्मिक व्याख्या। यहाँ इन का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। हीगल सम्पूर्ण मानवता के विकास के अध्ययन के रूप मे इतिहास के विश्वजनीन स्वरूप के प्रतिपादक थे।

अनेक उद्देश्यो, विश्वासों तथा इरादो को व्याख्यात्मक प्रक्रिया मे प्रयोग मे लाने के लिए हीगल बुद्धि को ही एजेंट के रूप मे स्वीकारते है। हीगल के अनुसार 'बुद्धि' ही एक उच्चतर उद्देश्य के लिए व्यक्तियो के भावावेगो का 'प्रयोग' करती है, 'बुद्धि ही राज्य का स्वरूप 'ग्रहण' करती है, 'बुद्धि ही उन की प्रक्रिया मे 'स्वय से सघर्ष' करती है, 'बुद्धि मे ही स्वतन्त्रता का विकास, उसके 'पूर्ण लक्ष्य के रूप मे होता है।'[1]

इस प्रकार हीगल के मतानुसार इतिहास प्रक्रिया का मुख्य एजेंट 'बुद्धि' है। इतिहास की तार्किकता तथा अन्तिम अर्थ विश्व बुद्धि के विकास की प्रक्रिया मे ही पाया जा सकता है।

ट्वायनवी हमारे युग का एक महान इतिहास-दार्शनिक है, जिसने अनुभव-परक इतिहास-व्याख्या के विचार को जन्म दिया। उसका यह दावा है कि वह अपने अन्तिम निर्णयो को अपनी 'अनुभव परक सर्वे की विश्वासनीय तथा प्रिय पद्धति' द्वारा ही रूपायित करते हैं। 'वह' इतिहास के बहुत से नियम स्थापित करते है तथा सम्भाव्य आलोचना की रूपरेखा भी प्रस्तुत करते हैं।

प्रथम महायुद्ध के पश्चात् के अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक क्षेत्र मे जातीय राष्ट्रीयता के स्थान पर सहयोग के सिद्धान्त पर आधारित महान् देशो की धारणा तथा महाद्वीप वाद[2] की भावना सशक्त हो उठी थी। इसी से प्रभावित होकर ट्वायनवी ने राष्ट्रो के स्थान पर सभ्यताओ को इतिहास-अध्ययन की एक बुद्धिगम्य इकाई के रूप मे

1. W H Dray, P 79-80 P P 25, 17, 55, 37–"Lectures on the Philosophy of History" Sibri Translation Edited by C J. Friedrich (New York: Dover Publications, Inc 1956)
2 बुद्धप्रकाश, 'कोंटीनेंटलिज्म इन वर्ल्ड पोलिटिक्स', मॉडर्न रिव्यू देखिए बुद्धप्रकाश "इतिहास दर्शन". पृष्ठ 305 (1947)

निर्धारित किया और जगत् को पाँच सभ्यताओ मे विभाजित किया—पश्चिमी यूरोप अथवा पश्चिमी ईसाइयत, पूर्वी यूरोप अथवा बाइजेन्टाइन अथवा पूर्वी ईसायत, इस्लाम, भारत (हिन्दू) और सुदूर पूर्वी जगत। इन सभ्यताओं के पीछे क्रमश यूनानी (हेलेनिक),सीरियाई, हिन्दी (इण्डिक)और चीनी (सीनिक) सभ्यताएँ, प्रच्छन्न हैं। ये प्राचीन सभ्यताएँ भी क्रमश मिनोयन वेबीलोनियन हिट्टी सभ्यताओ पर आधारित हैं।[1]

इन सभ्यताओ के और भी भेद-उपभेद कर कुल 29 सभ्यताओ को अध्ययन का विषय बनाया गया है। ट्वायनबी ने सभ्यताओ के उदय तथा उनकी गति के 'चुनौती (चेलेंज) तथा प्रतिक्रिया (रेस्पोंस) की धारणा का प्रतिपादन किया। इसके लिए उसने गेटे के फाउस्ट, युग के मनोविज्ञान तथा अनेक प्राचीन कथानकों का आश्रय लिया है।[2] इस पर भी कई आपत्तियाँ हैं। चुनौती तथा प्रतिक्रिया को धारणा से आदिम जातियो तथा सभ्यताओ के अन्तर को स्पष्ट नही किया जा सकता।

सभ्यताओ के विकास तथा ह्रास के सम्बन्ध मे भी ट्वायनबी की मान्यताओं की आलोचना की गई है। वे सभ्यताओ के ह्रास की प्रक्रिया में सघटन (रैली) तथा विघटन (राउट) की एकान्तर (alternative) प्रक्रिया के प्रतिपादक हैं। इसमें विघटन, सघटन-विघटन, सघटन, विघटन-सघटन-विघटन की साढे तीन बार आवृत्ति होने के पश्चात् भाषा, धर्म, कला तथा साहित्यो का समन्वय होने के पश्चात् एक 'सार्वभौमिक राज्य' की उत्पत्ति की स्थिति उत्पन्न होती है। इस प्रक्रिया मे अन्तर्राष्ट्रीय चर्च अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

ट्वायनबी की इतिहास-खोज तथा मनन की पद्धति को कवि एव दर्शक पद्धति[3] कहा गया है। परन्तु ट्वायनबी को इतिहास-धारणा अथवा 'अनुभव परक इतिहास-दर्शन' स्वय में एक अर्थवत्ता लिए हुए है। यह एक ऐसी पद्धति है जिसमे इतिहास के ज्ञात विवरणों पर विशेष जोर दिया जाता है ताकि वे सम्बद्ध किए जाने वाले प्रयोजन के प्रति बुद्धिगम्य हो, अथवा ऐसी पद्धति जिसमे दार्शनिक, ऐतिहासिक सामग्री (डाटा) का बिना किसी पूर्वनिर्मित कल्पना (हाइपोथिसिस) के अध्ययन करता है, तथा प्रयत्न करता है कि सामग्री स्वय ही उसके प्रश्नो के उत्तर दे।[4] ट्वायनबी की यह अनुभव परक खोज प्रणाली अन्य मननशील इतिहास-दार्शनिकों से उन्हें एकदम अलग करती है।

1. 'इतिहास दर्शन' : डॉ बुद्धप्रकाश, पृष्ठ 305
2. वही, पृष्ठ 308
3. W H Dray : Philosophy of History, Page 90
4. वही, पृष्ठ 66

यह सत्य है कि कई बार ट्वायनबी के नियम अन्यान्य ऐतिहासिक परिस्थितियो पर लागू नही भी होते । इसे वे स्वय भी स्वीकार करते हैं । सभ्यताओ के उद्‌गम तथा विकास की प्रक्रिया को ट्वायनबी ने रहस्यमयी स्वीकार किया है । कोई ऐसा अज्ञात तत्त्व इतिहास मे काम करता है, जो योद्धाओ और अभिनेताओ के ज्ञान के बाहर होता है ।' यह तत्त्व कार्यकर्त्ताओ पर परीक्षा की प्रतिक्रिया है,' यह मनोवैज्ञानिक स्थिति नाप-तोल के योग्य नही होती । अत वैज्ञानिक दृष्टि से पहले नही बताई जा सकती[1] ।'

(2) लेखन की प्रक्रिया

इतिहासकार एव ऐतिहासिक उपन्यासकार के अध्ययन की वस्तु अनुपस्थित होती है । लेखक वर्तमान मे उपलब्ध सामग्री की सहायता से ही मानवीय अतीत का अध्ययन कर उसका पुन प्रस्तुतिकरण करते हैं । उनकी सामग्री मे दस्तावेज, सस्मरण, आर्थिक सगठन के अवशेष, कानून परम्परायें, विश्वास, सस्थाएँ, मिथक तथा साहित्य[2] आदि मुख्य हैं और ऐतिहासिक घटनाओ की शृखला एव प्रकृति जानने के लिए उन्हे इन साक्ष्यो का आश्रय लेना पडता है ।

सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार दस्तावेज तथा आँकड़े एकत्रित करता है । दस्तावेज, जो लिखित अथवा अलिखित रूपो मे होते है, अतीत के मनुष्यो के कार्यो तथा विचारो के प्रत्यक्ष साक्ष्य हैं । लिखित दस्तावेज अभिलेख कर्त्ता की मानसिक समझ तथा बौद्धिक योग्यता पर निर्भर करते हैं । अलिखित साक्ष्यो मे रीति रिवाज, समाज का आर्थिक गठन, सामाजिक व धार्मिक कार्य मुख्य हैं तथा मौसमी परिवर्तन, भूगर्भीय बनावट एव वास्तुकला के अवशेष गौण साक्ष्य हैं, जो लेखक को तथ्यो का चुनाव करने मे अत्यन्त सहायक होते है ।

उपलब्ध सामग्री से उपन्यासकार तथ्यो का संकलन करता है । बहुत से तथ्यो मे से आवश्यकता तथा महत्त्व की दृष्टि से तथ्यो का चुनाव करता है । चुनाव की यह प्रक्रिया तथ्यो को एक अतिरिक्त महत्त्व प्रदान करती है, चुने गए तथ्य ऐतिहासिक महत्त्व के तो अवश्य होते हैं, परन्तु उनकी निर्वैयक्तिकता सदिग्ध होती है क्योकि वे चुनाव करने वाले व्यक्ति की धारणा एव रुचि के परिणाम स्वरूप ही चुने जाते हैं । इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार दोनो का तथ्यो के चुनाव के प्रति दृष्टिकोण भिन्न होगा । इतिहासकार को अपने समस्त निर्णयो, अनुमानो तथा विवरणो को बाह्य साक्ष्यो द्वारा[3] सत्य सिद्ध करना होता है जबकि ऐतिहासिक उपन्यासकार की रचना स्वय मे मुकम्मल होती है और उसका अपना एक विधान होता है । उपन्यासकार कई बार कई ऐतिहासिक घटनाओ को छोड भी सकता है । इनके स्थान पर वह कल्पना-परक घटनाओ का निर्माण भी

1 A study of History, Toynbee, Part 1, pp 300-301
2 "The Problem of History and Historiography" V V Joshi, Page 54
3. "The Problem of History & Historiography", by V V Joshi, Page 18.

करता है। यह बहुधा ऐतिहासिक सत्यों के उद्घाटन के लिए किया जाता है। ऐसा करते हुए यह कई अनैतिहासिक तथ्यों का सृजन भी करता है।

तथ्यों के चुनाव के पश्चात् उन्हें कार्य-कारण-शृंखला में बद्ध किया जाता है, तथा उनका विश्लेषण किया जाता है। अन्यान्य घटनाओं एवं तथ्यों के संकलन को अधिकाधिक बुद्धिगम्य एवं सर्वमान बनाने के लिए उनका विश्लेषण एवं व्याख्या किसी विशिष्ट इतिहास दर्शन अथवा जीवन-दर्शन, जीवन दृष्टि के अनुसार की जाती है।

प्रेमचन्द पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना प्रक्रिया का अध्ययन चौथे अध्याय में किया गया है।

(क) सामान्यीकरण करना—ऐतिहासिक घटनाएँ नितान्त अनन्य तथा विशिष्ट होती हैं। वे अपने चरित्र तथा गुणों में इतनी वैयक्तिक होती हैं कि उनकी इकाई न तो भंग की जा सकती है और न ही उनका अन्य घटनाओं से सामान्यीकरण किया जा सकता है। मानवीय अतीत का अध्ययन करते समय इतिहासकार एवं ऐतिहासिक उपन्यासकार एक ही प्रकार की (एक जैसी नहीं) घटनाओं में सामान्यीकरण स्थापित करते हैं। भाषा का प्रयोग इतिहासकार को सामान्यीकरण के प्रति प्रतिबद्ध[1] कर देता है। परन्तु ऐसा करते हुए भी वह सामान्यीकरण द्वारा ऐतिहासिक घटनाओं की व्याख्या प्रस्तुत नहीं करता।[2]

ई० एच० कार के मतानुसार, इतिहासकार अपने साक्ष्य की परीक्षा करने के लिए निरन्तर सामान्यीकरण का आश्रय लेता है। इतिहास के पाठक तथा लेखक, दोनों ही चिर-सामान्यीकरण करने वाले हैं—वे इतिहासकार के निरीक्षण को अन्य ज्ञात ऐतिहासिक सदर्भों पर या कदाचित अपने युग पर लागू करते हैं। यह कहना बेहूदा होगा कि इतिहास में सामान्यीकरण नहीं हो सकता, इतिहास सामान्यीकरण के आधार पर ही उभरता है।[3]

1 See E H Carr What is History, Page 63
"भाषा के प्रयोग मात्र से ही इतिहासकार वैज्ञानिक के समान साधारणीकरण के प्रति प्रतिबद्ध हो जाते हैं। पेलापानिशियन युद्ध तथा द्वितीय विश्व युद्ध में बहुत अन्तर था, तथा दोनों अनन्य थे। परन्तु इतिहासकार दोनों को युद्ध कहते हैं तथा केवल विद्याडम्बरी ही इसका विरोध करेगा। गिब्बन ने कैस्टेनटाइन द्वारा ईसाई मत के संगठन तथा इस्लाम के उदय को क्रान्तियाँ कहा था। उसने दो अनन्य घटनाओं का सामान्यीकरण किया; आधुनिक इतिहासकार ब्रिटिश फ्रांसीसी, रूसी तथा चीनी क्रान्तियों के बारे में लिखते समय यही करते हैं।"

2 ओकशाट के अनुसार, "सामान्यीकरण द्वारा व्याख्या करना कभी भी इतिहास की पद्धति नहीं है।" ऐतिहासिक समस्त सदैव वृहत्तर तथा अधिक मुकम्मल विवरण द्वारा ही अधिक स्पष्ट होती है। Quoted in "Philosophy of History", W H Dray, Page 9

3 E H Carr . What is History, Page 63-64.
(What distinguishes the historian from the collector of Historical facts is generalization Mr Elton-'Cambridge Modern History,' ii (1958) Page 20

सामान्यीकरण का वास्तविक बिन्दु यह है कि हम इतिहास से कुछ शिक्षा लेते हैं। घटनाओं के एक समूह से प्राप्त की गई शिक्षाओं को घटनाओं के अन्य समूह पर लागू करते समय जब हम सामान्यीकरण करते हैं तो हम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सामान्यीकरण करते है।

इतिहास लेखन मे इतिहास दर्शन के अन्तर्गत के सभी सार्वजनिक आचरणो का सामान्यीकरण किया जाता है तथा कुछ निरपेक्ष या सापेक्ष निष्कर्ष निकाले जाते हैं।[1]

इतिहास लेखन मे ही नही इतिहास के कलारूप मे भी सामान्यीकरण किए जाते है। मानवीय अतीत का पुन सृजन करते समय ऐतिहासिक रोमांसकार मानवीय प्रवृत्तियों, विचारो, रुढियो तथा अन्धविश्वासो का भावावेगात्मक वर्णन करते समय सामान्यीकरण की प्रक्रिया मे गुजरते है। इस प्रकार वे आधुनिक तथा अतीत के मनुष्यो के लगभग सभी मौलिक एव शाश्वत विचारो, कार्यकलापो तथा भावावेगो का सामान्यीकरण करते है। विवेच्य रोमांसकारो ने मानवीय भावनाओं एव कामनाओ का सामान्यीकरण किया है।

(ख) प्रवृत्तियां देखना (युग के मानदण्ड)—इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत खोज की प्रक्रिया के समय अध्ययन किए जाने वाले युग की मुख्य प्रवृत्तियो का निश्चयन करते हैं। यह उस विशिष्ट ऐतिहासिक कालखण्ड, जो स्थान तथा काल की एक निश्चित सीमा मे बद्ध होता है कि जनता के जीवन यापन के मानदण्ड होते हैं, जो उसके सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा नैतिक जीवन का नियोजन करते हैं। "इतिहासकार अक्सर मनुष्यो के कार्यों को उनकी योजनाओ, स्कीमो व इरादो के संदर्भ मे जांचते हैं तथा इनको लागू करने पर क्या उपलब्धि होगी के आधार पर वे अक्सर इनकी व्याख्या करते हैं।[2] मनुष्यो ने अन्य संभावित कार्यों के स्थान पर एक निश्चित कार्य ही क्यो किया। इस मूल सिद्धान्त द्वारा रूपायित प्रवृत्तियो का अध्ययन, ऐतिहासिक उपन्यासकार को अपनी सामग्री के प्रस्तुतिकरण मे वैज्ञानिकता तथा बुद्धिगम्यता लाने मे सहायक होता है।

नियम एव मानदण्ड यद्यपि परिस्थितियो द्वारा प्रतिबंधित होते हैं, तथापि एक विशिष्ट ऐतिहासिक युग का बहुमुखी अध्ययन करने के लिए इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक उपन्यासकार नियमो एव मानदण्डो का निर्माण करते है। यह विवेच्य युग की मुख्य प्रवृत्तियो तथा लेखक के युग की मुख्य धारणाओ की अन्तर्प्रक्रिया तथा अन्तर्सम्बन्धो के सम्मिलन द्वारा निश्चित किए जाते है।

1 डॉ० रमेश कुन्तल मेघ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृष्ठ 339
2 Alan Donagan "Explanation in History" reprinted in 'Theories of History' ed by Patrick Gardiner, Page 436

ऐतिहासिक उपन्यासकार युग की प्रवृत्तियों के गहन अध्ययन के पश्चात्, अपनी कल्पनात्मक प्रतिभा द्वारा ऐतिहासिक सत्यों का उद्घाटन करते हैं। इस सृजनात्मक कल्पना की सहायता से वे ऐतिहासिक युग की विशिष्ट प्रवृत्तियों को ऐतिहासिक, अर्द्ध-ऐतिहासिक अथवा, बहुधा, अनैतिहासिक पात्रों एवं घटनाओं के अन्यान्य क्रिया-कलापों तथा विवरणों द्वारा युग का एक चित्र उपस्थित करते हैं—यही अतीत का पुनः प्रस्तुतिकरण अथवा पुनः सृजन होता है। विवेच्य उपन्यासों में मध्य युगीन भारत की धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, सौन्दर्य शास्त्र संबंधी तथा राजनैतिक प्रवृत्तियों का अध्ययन कतिपय मध्य युगीन एवं लेखक-युगीन मानदण्डों के आधार पर किया गया है। इसी प्रक्रिया द्वारा ऐतिहासिक सत्यों का उद्घाटन एवं ऐतिहासिक वातावरण का निर्माण उनकी उल्लेखनीय उपलब्धि है।

(ग) **नियम पाना**—ऐतिहासिक घटनाओं के घटित होने की प्रक्रिया के पीछे क्या कोई विशेष नियम कार्यशील हैं। इतिहास-विचारक इस विषय पर, इतिहास प्रक्रिया की अर्थवत्ता के संदर्भ में अध्ययन करते हैं। यदि मानवीय अतीत किसी विशिष्ट नियमपरक प्रतिबंधात्मक शक्ति द्वारा नियोजित अध्ययन का एक बुद्धिगम्य विषय है, तो निश्चय ही ऐतिहासिक उपन्यासकार तथा इतिहासकार कुछ नियम पाते हैं। यह नियम मानवीय अतीत तथा इतिहास प्रक्रिया के नियामक तत्त्व होते हैं। ऐतिहासिक परिवर्तनों को नियोजित करने वाले प्रबन्धों में निश्चयवाद अथवा स्वेच्छावाद की दार्शनिक मान्यताएँ मुख्य हैं।

नियम पाने की समस्या, सामान्यीकरण की समस्या से गहन रूप में अन्तर्संबंधित है। ऐतिहासिक घटनाओं की अनन्यता तथा उनके सामान्यीकरण के विषय पर पहले ही विचार किया जा चुका है। जिस प्रकार प्रत्येक ऐतिहासिक घटना का सामान्यीकरण किया जा सकता है, उसी प्रकार इतिहास खोज की सामग्री के अत्यन्त विभिन्न रूपों होने पर भी कतिपय सामान्य नियमों की खोज की जा सकती है जिनके आधार पर इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने विषय का अर्थवान् अध्ययन कर सकते हैं। यह सामान्य नियम इतिहास की सामग्री में से ही प्राप्त किए जा सकते हैं तथा ये ऐतिहासिक रूप से प्रतिबंधात्मक भी हो सकते हैं।

(घ) **निर्णय देना भविष्यवाणी करना**—ऐतिहासिक घटनाओं एवं तथ्यों के एकत्रीकरण, चुनाव, विश्लेषण तथा सामान्यीकरण करने के पश्चात् उनका बहुमुखी अध्ययन किया जाता है, उनकी प्रवृत्तियों का निश्चयन एवं युग के मानदण्डों का सिंहावलोकन किया जाता है। ऐतिहासिक प्रक्रिया के नियोजक प्रबन्धों तथा प्रणालियों को निर्धारित करके इतिहासकार समस्त उपलब्ध सामग्री को जाँचता है। इस प्रकार खोज करने के पश्चात् वह कई निर्णय करता है। स्पष्ट है कि यदि समस्त अध्ययन करके इतिहास-विचारक कोई निर्णय नहीं लेता तो उनका अध्ययन अपूर्ण रह जाता है।

इतिहासकार का ऐतिहासिक समस्याओ के सम्बन्ध मे निर्णय देना, इतिहास दर्शन का अत्यन्त विवादास्पद विषय है। सर इसाया बर्लिन के मतानुसार[1] "हमे यह बताया गया है कि हम प्रकृति, परिवेश या इतिहास के उत्पादन हैं तथा यह हमारे स्वभाव(टॅपरामेंट), हमारे निर्णयो, हमारे सिद्धान्तो को प्रभावित करता (रगता) है। प्रत्येक निर्णय सापेक्ष है। प्रत्येक मूल्यांकन व्यक्तिपरक है" हमारा आशय है कि साक्ष्य के मूल्यांकन की उचित पद्धतियो की बहुत सीमा तक उपेक्षा की जाती है · हमारे यह सोचने के कारण है कि इतिहासकार कुछ निश्चित निर्णय, साक्ष्य द्वारा औचित्यपूर्ण ठहराए गए कारणो के अलावा के कारणो से, उसके अथवा हमारे काल मे निर्मित समझे जाने वाले वैध तर्क-साध्य ढग के अनुसार स्थापित करता है तथा इसने उसे उसके क्षेत्र मे तथ्यो के साक्ष्यांकन तथा निर्णयो को सिद्ध करने के मानदण्ड तथा पद्धतियो के प्रति (अन्धा) उपेक्षापूर्ण बना दिया है। साक्ष्यो की तुलना के नियम भी बदलते रहते हैं क्योकि एक युग की स्वीकृत सामग्री उनके दूरवर्ती अग्रजों को कम अनुभव होती है।"

यह तथ्य इतिहासकारो के निर्णय की अल्पायु के सदर्भ मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योकि आने वाले युग के इतिहास-विचारको के लिए पहले के युग के इतिहास-विचारको के निर्णय कम महत्त्वपूर्ण हो जाएंगे।

इसका यह तात्पर्य नही है कि इतिहासकार को निर्णय देने ही नही चाहिए प्रत्युत उसे ऐतिहासिक पात्रो के व्यक्तिगत जीवन की घटनाओ पर नैतिक निर्णय नहीं देने चाहिए।[3] मैक्सवेबर के मतानुसार इतिहासकार को सस्थाओ पर नैतिक निर्णय देने चाहिए न कि उसका निर्माण करने वाले व्यक्तियो पर।[3] ऐतिहासिक तथ्य व्याख्या के किसी मानदण्ड की पूर्व कल्पना को लेकर चलते है तथा ऐतिहासिक व्याख्याएँ सदैव नैतिक निर्णय लिए होती हैं—अथवा, यदि आप अधिक तटस्थ पद चाहते हैं, तो इन्हे मूल्य निर्णय कह सकते हैं।[4] इतिहास सघर्ष की प्रक्रिया है, जो निर्णयो को जन्म देती है।

1 Sir Issiah Berlin, " The possibility of objective evaluations" reprinted in "Theories of History" ed by Patrick Gardiner, Page 324
2 E H Carr "What is History" Page 76
यहाँ प्रो० कार ने आर्नल्ड जोसेफ ट्वायनबी तथा इसाया बर्लिन का उदाहरण देते हुए लिखा है कि—"ट्वयानबी ने मुसोलिनी के 1935 मे ऐबीसीनिया पर आक्रमण को जानबूझ कर किया गया 'व्यक्तिगत पाप' कहा है।" इसाया बर्लिन—"यह इतिहासकार का कर्त्तव्य है कि वह चार्लमागने या नैपोलियन या चैंगेज खान या हिटलर या स्टालिन को उनके सामूहिक कत्लो के लिए जाँचें।"
3 Max Waber 'Essay in Sociology' (1947), Page 58
4 See-E H Carr What is History Page 79
"The possibility of objective evaluation" Berlin reprinted in "Theories of History" Page 327 "It follows, that we must, if we are to judge fairly adequate evidence before us, possess sufficient imagination, sufficient sense of home institutions develop, how human beings act and think"

निर्णय करने के लिए इसाया बर्लिन उचित साक्ष्य, पर्याप्त कल्पना, ऐतिहासिक ज्ञान रखने तथा पूर्वाग्रही न होने की शर्तें रखते हैं। अपने निर्णय को अधिक विश्वसनीय बनाने के लिए इतिहासकार को प्रत्येक बिन्दु पर साक्ष्य प्रस्तुत करने चाहिए। विशेषत नैतिक-मामलो पर अपना निर्णय देते समय इतिहासकार को अपने युग की ही नही प्रत्युत विवेच्य जनता के युग तथा देश की नैतिक मान्यताओ तथा विश्वासो को भी ध्यान मे रखना चाहिए। इतिहास मे किये गये निर्णयों को "अच्छा" या "बुरा" के स्थान पर "उदार" अथवा "अनुदार" आदि कहा जा सकता है।

कतिपय इतिहास-विचारको का मत है कि मनुष्य इतिहास का अध्ययन करके अपने मानस मे मानवीय विकास की प्रक्रिया का एक प्रतिरूप बना लेते हैं, जिसकी सहायता से वे अतीत के प्रकाश मे वर्तमान की बेहतर समझ प्राप्त करते हैं तथा भविष्य के प्रति अधिक जागरूक हो सकते हैं। कई बार कई इतिहास दार्शनिक भविष्य-वाणी को इतिहासकार का ही कार्य स्वीकार करते हैं। काण्ट इतिहासकार द्वारा भविष्यवाणी किए जाने के पक्ष मे है, जबकि हीगल व शीलर इसके विरुद्ध हैं।[1]

विवेच्य उपन्यासकारो ने लगभग प्रत्येक बिन्दु पर ऐतिहासिक, नैतिक एव राजनैतिक समस्याओ के सबध मे निर्णय दिये हैं। भविष्यवाणियाँ करने मे भी व्रजनन्दन सहाय, बलदेवप्रसाद मिश्र तथा किशोरीलाल गोस्वामी ने पर्याप्त रुचि प्रदर्शित की है। परन्तु इन भविष्यवाणियो का स्वरूप एव उद्देश्य इतना विविध रूपेण है कि उनकी भविष्यवाणी की ऐतिहासिक स्वरूप से समता करना कई स्थानो पर कठिन हो जाता है। उदाहरणत बलदेवप्रसाद मिश्र, स्वप्नो तथा मनोविज्ञान द्वारा भविष्य की सभावनाओ को अभिव्यक्त करते हैं, व्रजनन्दन सहाय अन्त मे बुराई पर भलाई की विजय होने की शक्ति द्वारा भविष्य मे घटित होने वाली घटनाओ की सभावित प्रक्रिया का अनुमानिक विवरण देते हैं। किशोरीलाल गोस्वामी मुख्य पात्रो के सबध मे यह कह कर भविष्यवाणी करते हैं कि अमुक पात्र (रजिया) इस कर्म का फल भोगेगी। वे पात्रो द्वारा भी उसके पतन की भविष्यवाणी करवाते हैं। इसी प्रकार, अन्य उपन्यासकार भी स्वय या पात्रो के माध्यम से भविष्य मे घटित होने वाली घटनाओ के सबध मे भविष्यवाणी करते है।

(इ) लेखक का दृष्टिकोण-अतिशयोक्तिपूर्ण कल्पना बनाम सत्य की तथ्यात्मकता—इतिहास-व्याख्या की प्रक्रिया मे इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक उपन्यासकार का दृष्टिकोण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटक है। अतीत के सबध मे सर्वाधिक आवश्यक बिन्दु यह ही नही है कि अतीत मे वास्तव मे क्या घटित हुआ था बल्कि महत्त्वपूर्ण यह भी

1 देखिए-"इतिहास-दर्शन", डॉ० बुद्धप्रकाश, पृष्ठ 170
"किन्तु इतिहास दर्शन का उद्देश्य भविष्य का अनुमान करना नहीं है। यह वर्तमान के अनुसधान तक सीमित है। इस विषय में हैगल काण्ट के विरुद्ध तथा शीलर के निकट पहुँच जाते हैं।"

है कि लेखक अतीत की ओर किस दृष्टिकोण से दृष्टिपात करता है। इस प्रकार लेखक की जीवन दृष्टि अथवा जीवन दर्शन उसके लेखन को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान करता है। इतिहास लेखन की सम्पूर्ण प्रक्रिया मे लेखक का दृष्टिकोण व्याप्त होता है, उसकी खोज तथा निर्णय इसी से अनुप्राणित होते हैं।

रोमांसपरक इतिहासकार अथवा ऐतिहासिक रोमांसकार अतीत की घटनाओ को अतिशयोक्तिपूर्ण शैली द्वारा चित्रित करते हैं। प्रयोजनवादी (Positivists) तथा शैक्षणिक (Academic) स्कूल के इतिहासकार घटनाओ के यथातथ्य प्रस्तुतिकरण के पक्ष मे है। लेखक के दृष्टिकोण की समस्या उसके द्वारा तथ्यो के सामान्य समूह मे से ऐतिहासिक तथ्यो के चुनाव की समस्या से अन्तर्सबंधित है। अतीत खोज की प्रक्रिया मे लेखक बहुत-सी सामग्री का चयन करने के पश्चात् जब ऐतिहासिक तथ्यो का चुनाव करते है, तो इस प्रक्रिया मे लेखक का दृष्टिकोण चुनाव की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। चुनाव की स्वायत्तता[1] के पक्ष मे वास्तुकलावादी तथा विरोध में प्राचीन इतिहास-लेखक तथा इतिहास को लोकप्रिय बनाने वाले थे। यदि इतिहासकार की चुनाव की स्वतन्त्रता पर रोक लगाई गई तो इतिहास की आत्मा उभर कर प्रकाश में नही आ सकेगी। अतीत की अन्यान्य घटनाओ के समूह कदापि इतिहास का निर्माण नही कर सकते। वे तभी इतिहास का स्वरूप प्राप्त करते हैं, जब इतिहासकार उनमें से आवश्यकता एव महत्त्व के अनुसार तथ्यो का चुनाव करके उन्हे एक तर्क सगत एव बुद्धिगम्य इकाई के रूप में प्रस्तुत करे। इस प्रकार इतिहास-लेखन लेखक के दृष्टिकोण द्वारा रूपायित होगा।

लेखक के दृष्टिकोण द्वारा इतिहास-लेखन के रूपायित होने के साथ ही इतिहास की निरपेक्षता अथवा निर्वैयक्तिकता की समस्या भी जुडी हुई है। जब इतिहासकार अपनी रुचि एव जीवन दर्शन के आधार पर ही घटनाओ का चयन एव सकलन करता है, तो वह नितान्त सापेक्ष तथा वैयक्तिक हो जाता है। इस बिन्दु पर लेखक को चुनाव की प्रक्रिया मे "कूटनीतिक औचित्य" को ध्यान मे रखते हुए "भावनाओ तथा पक्षपात" की उपेक्षा करनी चाहिए तथा इतिहास लेखन के समय अपने व्यक्तिगत प्रेम, सवेग तथा मूल्यो को दबाना चाहिए। इस प्रकार कुछ सीमा तक ऐतिहासिक निर्वैक्तिकता प्राप्त की जा सकेगी।

विवेच्य उपन्यासकार आंशिक रूप मे ही इस प्रकार की निर्वैयक्तिक इतिहास धारणा का प्रणयन कर पाए है। "पानीपत" की भूमिका मे पडित बलदेवप्रसाद मिश्र ने "बेलाग" रहने का दावा अवश्य किया है, परन्तु वे हिन्दू राष्ट्रीयता एव सनातन हिन्दू धर्म की धारणाओ के प्रबल पोषक के रूप मे ही अपनी इतिहास धारणा प्रस्तुत करते हैं।

1 "चुनाव की यह स्वायत्तता वास्तुकलावादियो द्वारा सुनिश्चित की गई थी, प्राचीन इतिहास लेखको तथा इतिहास को लोकप्रिय बनाने वालों ने इसकी आलोचना की थी।"

—बी०बी० जोशी, पृष्ठ 62

(4) खण्ड विश्लेषण

(क) घटनाएँ—ऐतिहासिक घटनाएँ अनियन्त्रित एव परिवर्तनशील हैं। घटनाएँ घटित होते ही अतीत मे सरक जाती हैं, इस प्रकार वे तथ्य तथा निर्णय बन जाती हैं। इनके अतिरिक्त ऐतिहासिक घटनाएँ पुन अघटनीय होने के कारण वैज्ञानिक ढग से परखी भी नही जा सकती। वे देशकालबद्ध होती हैं तथा उनमें एकरूपता नही होती। वह विशिष्ट, स्व-परिस्थितिवश एव स्वत स्पष्ट हैं, तथा निश्चित परिस्थितियो के परिणामस्वरूप घटित होती हैं।

ऐतिहासिक उपन्यासकार ऐतिहासिक घटनाओं को इतिहासकार से भिन्न पद्धति से देखते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास यद्यपि मानवीय अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड का अध्ययन करता है, तथापि वह मूलत एक कलाकृति होती है। ऐतिहासिक घटनाएँ केवल ऐतिहासिक तथ्यो को ही प्रकाश मे ला पाती हैं, परन्तु इनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण घटक ऐतिहासिक सत्य का निरूपण ऐतिहासिक उपन्यासकारो को करना होता है, इसके लिये वे ऐतिहासिक घटनाओ मे गौण परिवर्तन करते हैं कतिपय काल्पनिक घटनाओं का निर्माण करते हैं, अथवा कुछ ऐतिहासिक घटनाएँ छोड जाते हैं। चूँकि ऐतिहासिक उपन्यास का एक स्वायत्त तन्त्र स्वय मे मुकम्मल होता है, इसलिए वे एक सुनिश्चित थीम वाले कथानक का निर्माण करने के लिए घटनाओ का चयन करते समय अपने कौशल, प्रतिभा तथा युग दृष्टि को भी दृष्टिगत रखते हैं।

ऐतिहासिक घटनाओं पर कला-परक दृष्टिकोण अपनाना यदि ऐतिहासिक निश्चितता से कुछ हटना है परन्तु ऐतिहासिक घटना की अतिक मुकम्मल समझ तथा उनकी मौलिक वृत्ति समझने के लिए यह आवश्यक है।

प्रेमचन्द-पूर्व के इन ऐतिहासिक उपन्यासो मे घटनाएँ सामान्यत इतिहास पुस्तको से ली गई हैं, परन्तु कल्पनात्मक उद्भावनाएँ भी की गई हैं। (इनकी प्रामाणिकता का अध्ययन चौथे अध्याय मे किया जाएगा)।

(ख) पात्र—आज के व्यक्ति के समान अतीत के व्यक्ति-पात्र जीवन एव क्रियाशील थे। अपनी ऐतिहासिक परिस्थितियो के अनुरूप उनके भी विचार भावनाएँ, भावावेग, सवेग, विश्वास तथा दृष्टिकोण थे। ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत के पात्रो का अध्ययन करते समय उन्हे "पुनर्जीवित" करते हैं।

पात्रों के प्रति भी इतिहासकार तथा उपन्यासकार के दृष्टिकोण म अन्तर होता है। प्रयोजनवादी, निश्चयवादी तथा वैज्ञानिक इतिहासकार पात्रों को ऐतिहासिक परिस्थितियो का निर्माता समझते हैं।[1] मननशील (Contemplative

1. Karl Marx 'The materialistic concep[illegible] of History' Reprinted in "The[illegible] ries of History Page 126-127. The First premise of all human [illegible] course the existence of living human Individual The first fact to be established, therefore is the physical constitution of these individuals"

and Speculative) इतिहास दार्शनिक ऐतिहासिक पात्रो को ऐतिहासिक एजेंट के रूप मे देखते हैं और इतिहासकार का अपने अध्ययन के लोगो के साथ एक प्रकार का मानसिक अथवा वौद्धिक सवध जोडने के पक्ष मे है।

ऐतिहासिक उपन्यासकार पात्रो के सम्बन्ध मे अत्यन्त सावधानी पूर्वक निर्णय करता है। मानवीय अतीत का पुन सृजन एव पुन प्रस्तुतिकरण करते समय ऐतिहासिक उपन्यासकार के उपकरणो मे उसके पात्र ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा सबल माध्यम होते है।[1] वह पात्रो के माध्यम से मानवीय अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड पर, जो कि एक निश्चित देश पर आधारित होता है, दृष्टिपात करता है। अतीत के पुन सृजन की प्रक्रिया मे वह अपने पात्रो द्वारा ही अन्यान्य ऐतिहासिक सत्यो को स्पष्ट रूप मे प्रस्तुत करता है। ऐसा करते हुए वह कई बार कतिपय काल्पनिक पात्रो का आश्रय लेता है अथवा कुछ ऐतिहासिक पात्रो को छोड भी देता है। उसके पात्र निश्चित देश मे काल के प्रवाह के एक पूर्व-निर्धारित खण्ड मे विचरित करते हुए सवेदनाशील, जीवत एव अपनी काल चेतना के प्रति प्रबुद्ध मनुष्य होते हैं, इसलिए जार्ज ल्यूकाक्स के मतानुसार, 'पात्रो को अपने चरित्रो की वैयक्तिकता अपने युग की ऐतिहासिक विशिष्टता से प्राप्त[2] करनी चाहिए।" सवेदनशील होने के कारण पात्र अपने चरित्र के अन्यान्य गुण अपने युग की परिस्थितियो से प्राप्त करते हैं। ऐसा करते हुए, वे अपनी स्वेच्छा तथा इच्छा शक्ति द्वारा भी ऐतिहासिक परिस्थितियो तथा घटनाओ को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान करते है। ऐतिहासिक उपन्यासकार परिस्थितियो, इतिहास के घटना-प्रवाह तथा तत्युगीन युगदृष्टि मे पात्रो का अध्ययन करने के साथ-साथ पात्रो की मन स्थिति, उनके विश्वास तथा उनकी सामाजिक धारणाओ के माध्यम मे उस विशिष्ट कालखण्ड का अध्ययन करता है।

(ग) विचार—ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास की व्याख्या एक विशिष्ट इतिहास-विचार अथवा इतिहास-बोध के आधार पर करता है। इस विशिष्ट विचार द्वारा अनुप्राणित होने के कारण ही ऐतिहासिक उपन्यास एक निश्चित दार्शनिक एव साहित्यिक (कलात्मक) पृष्ठभूमि प्राप्त करता है। इतिहासकार सामान्यत एक निश्चित इतिहास दर्शन के आधार पर इतिहास लेखन के कार्य मे प्रवृत्त होते है। यह दर्शन उनके पूरे अध्ययन मे एकरूप एव अपरिवर्तनीय रहता है। उपन्यासकार

1 देवराज उपाध्याय, "ऐतिहासिक उपन्यास और मेरा दृष्टिकोण" "ऐतिहासिक उपन्यास" डॉ गोविन्द जी, पृष्ठ 46, "कथाकार को परकाया-प्रवेश-कला में पूर्णरूप से प्रवीण होना चाहिए। उसे पात्रो तथा घटनाओ के शरीर में प्रवेश कर अपनी अभीष्ट सिद्धि की साधना करनी पडती है। परकाया-प्रवेश कठिन कार्य है और खतरे से खाली नही है।"

2 See Historical Novel 'George Lukacs," English Translation by Hamah Stainley Mitchell (Merlin Press, London 1919, page 19) सर वाल्टर स्कॉट के पहले के ऐतिहासिक उपन्यासों की त्रुटि के सम्बन्ध मे इगित करते हुये ल्यूकॉक्स ने लिखा है–"Precisely and specifically historical, that is derivation of the individuality of characters from the historical peculiarity of their age"

का दर्शन बहुधा परिवर्तनीय होता है, वह एकाधिक कृतियो मे अलग-अलग भी हो सकता है। यदि एक ही कृति मे यह दृष्टिकोण परिवर्तित होते रहें तो उन्हें जीवन दृष्टि कहा जायगा। ऐतिहासिक उपन्यासकार को अपने 'विचार' अथवा 'बोध' का 'निश्चयीकरण' करने के लिए अपने युगबोध तथा विवेच्य युग की युगदृष्टि मे तारतम्य स्थापित करना होता है।[1] यह इसलिए आवश्यक है कि इससे वह मानवीय अतीत के निश्चित युग की जनताओ के साथ न्याय करने के साथ-साथ अपने पाठको के सम्मुख एक बुद्धिगम्य साहित्यिक कृति प्रस्तुत कर सकेगा। स्पष्ट है कि उपन्यासकार के विचार अथवा बोध की दोहरी प्रक्रिया है, जो समकालीन तथा अतीत युगीन विचारो के समन्वय मे पूरी होती हैं। विवेच्य उपन्यासो मे पंडित बलदेवप्रसाद मिश्र का 'पानीपत', ब्रजनन्दन सहाय का 'लाल चीन' तथा मिश्रबन्धुओ का 'वीरमणि' उपन्यास विशिष्ट विचारो द्वारा अनुप्राणित हैं। यह जीवन दर्शन अथवा जीवन दृष्टियाँ इतिहास के कोर्स मे घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया तथा उनकी व्याख्या करते समय स्पष्ट रूप से उभर कर आई हैं।

(घ) परिवेश (विवरणात्मक-वातावरण)—इतिहासकार केवल एक पूर्व-निश्चित ऐतिहासिक कालखण्ड का अन्यान्य दृष्टियो से अध्ययन ही करता है, परन्तु ऐतिहासिक उपन्यासकार, ऐतिहासिक घटनाओ, पात्रो, विचारो, समस्याओ तथा परिस्थितियो का चित्रण करने के साथ-साथ उस निश्चित कालखण्ड के परिवेश का जीवत चित्रण करता है। इतिहास की व्याख्या करने की इस कला-परक व्याख्या की प्रक्रिया मे वह पाठक के सम्मुख समस्त अतीत का एक चित्र उपस्थित करता है, जिसमें एक बुद्धिगम्य थीम तथा प्लाट होता है। ऐसा करने के लिए वह नगरों के प्रासादो, पूजागृहो, धार्मिक उत्सवो, बाजारो और सास्कृतिक क्रियाकलापो तथा ग्रामो के खेतो, तालाबो, कुओ तथा प्राकृतिक सौन्दर्य का विवरण प्रस्तुत करता है।

परिवेश को अधिक उभारने (अनुभव करवाने) के लिए ऐतिहासिक उपन्यासकार अन्यान्य ऐतिहासिक, अर्द्ध ऐतिहासिक, अथवा अनैतिहासिक, घटनाओ एव पात्रों का आश्रय लेता हुआ, लोक-कथाओ, लोक-प्रथाओं, लोक-गीतों, लोक-भाषा, लोक-भूमि अथवा जन्म-भूमि प्रेम तथा प्रकृति के विवरण प्रस्तुत करता है। इनसे वह एक विशिष्ट ऐतिहासिक वातावरण का निर्माण करता है। स्थानीय रग अथवा आंचलिकता भी परिवेश निर्माण की प्रक्रिया मे सहायक होती है।

विवेच्य उपन्यासो मे लेखकों ने ऐतिहासिक वातावरण एवं परिवेश का पुन निर्माण करने में साहित्यिक कुशलता का परिचय दिया है।

(ङ) समस्याएँ तथा परिस्थितियाँ—ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहासकार की अपेक्षा ऐतिहासिक परिस्थितियो तथा विवेच्य युग की समस्याओ को एक भिन्न परिप्रेक्ष्य मे देखते है तथा उनका विभिन्न शैलो मे विवरण प्रस्तुत करते है। इतिहास-व्याख्या के रूप मे ऐतिहासिक-उपन्यास का प्रणयन करते समय उपन्यासकार

1. 'Determinism Relativism and Historical Judgement' Isaiah Berlin 'Theories of History', Page 324-325

ऐतिहासिक परिस्थितियो को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान करते है, जिससे वे घटनाएँ परिणाम के रूप मे परिणत हो जाती हैं। इस प्रकार विवेच्य कालखण्ड के लोगो की जीवन पद्धति का एक सजीव एव मुकम्मल चित्र समस्याओं तथा परिस्थितियो द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

वास्तविक ऐतिहासिक सत्यो को उद्घाटित करने तथा उन्हे अधिक भावनापूर्ण बनाने के लिए उपन्यासकार कई बार अर्द्ध-ऐतिहासिक अथवा अनैतिहासिक परिस्थितियो का सृजन कर समस्याओ का अधिक स्पष्ट स्वरूप प्रस्तुत करते है। विशिष्ट परिस्थितियो मे विभिन्न पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ का वर्णन किया जाता है, तथा समस्याओ के प्रति पात्रो की प्रतिक्रिया द्वारा उनके जीवन-दर्शन अथवा जीवन दृष्टि स्पष्ट रूप से उभर कर आती है।

(ब) इतिहास और अति कल्पना इतिहास पुनर्रचना के रूप मे एतिहासिक रोमांस

(क) इतिहास और रोमांस के तत्त्व—ऐतिहासिक रोमास इतिहास तथा रोमांस के अन्यान्य तत्त्वो के मिलने से विकसित हुआ वह साहित्य रूप है, जो रोमासिक इतिहास दर्शन तथा व्यक्तिपरक भावनाओ तथा भावावेगो का प्रतिपादन करता है।

ऐतिहासिक उपन्यास का वह स्वरूप, जहाँ मूलत अतीत के प्रति रोमांसिक दृष्टिकोण अपनाते हुए व्यक्तिपरक जीवन दर्शन का प्रणयन किया जाए तथा शौर्य, वीरता, भय एव प्रेम आदि मानवीय भावो का प्रचुरता से चित्रण किया जाए, उसे ऐतिहासिक रोमांस कहा जाएगा।

देशकाल का निरूपण तथा कार्यकारण शृखला का बन्धन इतिहास को एक निश्चित स्वरूप तथा बुद्धिगम्यता प्रदान करते है। इसके विपरीत रोमांस अतिमानवीय तथा अलौकिक विचारो और कार्यों का अतिकाल्पनिक चित्र प्रस्तुत करते है। रोमांस बौद्धिकता विरोधी, शास्त्रीयता विरोधी तथा समकालीनता विरोधी होते है। परस्पर विरोधी तत्त्वो का ऐतिहासिक रोमांस मे समन्वय होता है। इस तरह रोमांस और रोमांटिसिजम के प्रत्ययो मे पर्याप्त अन्तर है। हम तो केवल 'ऐतिहासिक रोमांस' के क्षेत्र मे ही अपने को केन्द्रित करेंगे। अस्तु।

इन तत्त्वो का समन्वय

(क) मानवीय प्रकृति और मानवीय स्वप्नों का योग—मध्ययुगीन रोमांसो मे मनुष्यो द्वारा असम्भव[1] दुष्कर कार्यो के किए जाने का चित्रण किया जाता था। यही प्रवृत्तियाँ मध्यकालीन निजन्धरो मे जादू टोना, अतिमानवत्व तथा अति-दानवत्व[2] द्वारा उभारी जाती थी। इन प्रवृत्तियो मे स्वप्नो तथा अतिकल्पना का प्रयोग किया जाता था।

1 हिन्दी साहित्य कोश भाग I, धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान) ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी द्वितीय सस्करण, स० 2010 पृष्ठ 154

2 डॉ० रमेश कुन्तल मेघ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृष्ठ 143

मानवीय प्रकृति के मौलिक भावों-भावनाओं, भावावेगों, प्रकृति-प्रेम, सौन्दर्य प्रेम, साहसिकता, शौर्य, प्रेम एव भय का जब उपयुक्त मानवीय इच्छा स्वप्नों से समन्वय होगा तो इतिहास व रोमांस का मिलन होने से 'ऐतिहासिक रोमांस' का प्रादुर्भाव होगा।

ऐतिहासिक रोमांस-लेखक इन प्रवृत्तियों का चित्रण करने के लिए इतिहास के स्वर्ण काल, अज्ञात काल अथवा रहस्य काल से प्रेरणा प्राप्त करते हैं। विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो मे इतिहास तथा रोमांस का समन्वय कलात्मक ढग से किया गया है। भारतीय मध्य युगों के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे रोमांसिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा यह इतिहास कथा पुस्तकें अत्यन्त रोचक एव आकर्षक बन पडी हैं।

इन रोमांसो मे इतिहास के किसी काल खण्ड को पृष्ठभूमि में रख कर रोमांसिक तत्त्वों एव लोकातीत की अभिव्यक्ति की गई है।

(ख) महापुरुष के स्थान पर सामान्य जनो का अतीत या किसी अज्ञात व्यक्ति का रहस्य रोमांच—ऐतिहासिक रोमांसो मे किसी विशेष महापुरुष राजनैतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक नेता अथवा ऐतिहासिक[1] कर्त्ता की जीवनी को अपने कथानक का आधार बनाने के साथ-साथ जब मानवीय अतीत के करोड़ों सामान्य जनों के जीवन अथवा अतीत के किसी अज्ञात व्यक्ति के रहस्य-रोमांच को अपना वर्ण्य विषय बनाते हैं, तो हम जन दृष्टि वाले ऐतिहासिक रोमांसों को उभरते पाते हैं।

ऐतिहासिक रोमांसकार अनेक अज्ञात एव निजवरी सहायक व्यक्तियों को सहायक पात्रों के रूप मे लेकर (ट्रेविनियन) अतिमानवीय एव अलौकिक घटनाओं का निरूपण करता है, जो बौद्धिकता विरोधी एव शास्त्रीयता विरोधी भी हो सकती हैं। इस प्रकार के पात्रों के माध्यम से वह अन्यान्य ऐतिहासिक सत्यों का उद्घाटन करता है, जो केवल तथ्यों के निरूपण से सभव नहीं भी होता। यह काल्पनिक अथवा अर्द्ध-ऐतिहासिक पात्र ऐतिहासिक रोमांसकार को अन्यान्य रोमांसिक तत्त्वों एव प्रवृत्तियों का निरूपण करने के लिए उपयुक्त भूमि तथा अवसर उपलब्ध करते हैं।

कई बार सामान्य जनो के अतीत का चित्रण करने के स्थान पर ऐतिहासिक रोमांसकार निश्चित ऐतिहासिक स्थितियों मे किसी अज्ञात व्यक्ति का रहस्यमय अथवा रोमांसकारी वर्णन करते हैं। इस प्रकार उन्हें ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे हत्या एवं हिंसा आदि से युक्त तिलिस्मी वातावरण का निर्माण करने का अवसर प्राप्त होता है। यह मानवीय अतीत का एक नितान्त नवीन आधार पर पुनर्सृजन होता है। रहस्य तथा रोमांच की यह प्रवृत्तियां गोथिक रोमांसों से ही ऐतिहासिक-रोमांसों मे आई हैं।

1 कालिंगवुड इतिहास-लेखन की प्रक्रिया में ऐतिहासिक एजेंट की मानसिक प्रक्रिया के पुनर्निर्माण को अत्यधिक महत्त्व प्रदान करते हैं। देखिए 'History as reenactment of Past experience'—"Theories of History", Page 254-57.

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो मे मध्य युगीन भारत के जनजीवन के सुन्दर चित्र उपलब्ध होते हैं। गोस्वामी जी के 'हृदयहारिणी', 'लवगलता व मल्लिका देवी', गगाप्रसाद गुप्त के 'कुवरसिंह सेनापति', 'वीर जयमल वा कृष्णकांता', जयरामदास गुप्त के 'मायारानी', 'प्रभात कुमारी', एव 'किशोरी वा वीर बाला,' कार्त्तिक प्रसाद खत्री के 'जया', आदि इसके सुन्दर उदाहरण है। रहस्य, रोमांच एव तिलिस्म की दृष्टि से गोस्वामी जी के 'लखनऊ की कब्र,' 'मल्लिका देवी', व 'गुलबहार' आदि उल्लेखनीय हैं।

(ग) ताल एवं प्लाट रहित इतिहास को कथा के प्लाट एव पात्र का कलेवर—इतिहास मे कोई ताल अथवा प्लाट नही होता जबकि सर्जनात्मक कल्पना द्वारा ऐतिहासिक रोमांसकार इतिहास को कथानक के प्लाट तथा पात्रो का कलेवर प्रदान करता है। यद्यपि समस्त मानवीय अतीत मे एक ताल एव प्लाट नही है, परन्तु उसमे कथाओ का अक्षय भण्डार है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसकारो ने मध्ययुगीन भारतीय इतिहास की पृष्ठभूमि पर उत्तम रोमासो की रचना की है। यद्यपि कई बार युग पूर्णरूपेण ऐतिहासिक भी होता है तथापि पात्र एव उनके क्रियाकलाप कल्पना प्रसूत होते हैं। इस प्रकार ताल एव प्लाट रहित इतिहास को सुन्दर कथानको के रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

उदाहरणत, किशोरीलाल गोस्वामी के 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे मस्तानी अत्यन्त सजीव रूप मे उभरी है। इसी प्रकार 'हृदयहारिणी व आदर्श रमणी' मे कुसुम कुमारी, नरेन्द्र एव चपा का व्यक्तित्व इसके उत्तम उदाहरण हैं। 'लखनऊ की कब्र' तथा 'लालकुवर वा शाही रगमहल' मे गोस्वामी जी ने इतिहास का विरल आश्रय लेते हुए पात्रो एव प्लाट की रचना अत्यन्त रोमांसिक ढग से की है। जयरामलाल रस्तोगी ने 'ताजमहल व फतहपुरी बेगम' मे शाहजहाँ तथा ताजमहल की शादी की घटना को एक उत्तम कथा के रूप मे प्रस्तुत किया है। गगाप्रसाद गुप्त ने 'कुवरसिंह सेनापति', 'नूरजहाँ वा ससार सुन्दरी' तथा 'वीर जयमल वा कृष्णकान्ता' आदि मे ऐतिहासिक घटनाओ को प्लाट एव पात्रो का कलात्मक कलेवर प्रदान किया है। जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअली शाह' मे भी नवाब के विलासमय जीवन के आधार पर एक अत्यन्त रोचक ऐतिहासिक रोमास के कथानक का ताना बाना बुना गया है।

(ख) ऐतिहासिक रोमास मे अतिकल्पना के कार्य

(क) देशकाल के बन्धन ढीले, अतिकल्पना द्वारा ऐतिहासिक वातावरण उत्पन्न करने से देशकाल की कठिनाई दूर होने के साथ-साथ रिक्त स्थान भरे जाते है—इतिहास देश (स्थान) तथा काल के बन्धनो मे आबद्ध होता है। ऐतिहासिक रोमासो मे अतिकल्पना के प्रयोग के कारण यह बन्धन ढीले हो जाते हैं। सामान्यत तथ्यात्मक इतिहास का उपयोग बहुत कम किया जाता है। अति कल्पना तथा

असामान्य रुचि के कारण वे अद्भुत, विचित्र, असाधारण सौन्दर्य प्रेम, भय, आतंक, रहस्य, शौर्य वीरता एव साहसिकता का निरूपण करते हैं। यह सभी प्रवृत्तियाँ आज के दैनिक जीवन के नितान्त विपरीत हैं।[1] इस प्रकार वह पाठको के सम्मुख यह विचित्र विचार एव प्रवृत्तियाँ प्रस्तुत करता है, जिन्हें वे अपने युग मे न तो पा सकते हैं, न ही जो वर्तमान मे विश्वसनीय हो सकती हैं, इसके लिए इतिहास के किसी चिर अतीत के युग मे इनका घटित होना सत्य मान कर वे रोमांचित हो सकते हैं। देश व काल के बन्धनो को अतिकल्पना स्वीकार नही करती।

विज्ञानपरक इतिहास-लेखन मे अज्ञात युगो को सर्जनात्मक कल्पना से भरे जाने का कतिपय हेतुवादी एव प्रयोजनवादी इतिहास-दार्शनिको ने विरोध किया है, परन्तु ऐतिहासिक रोमानो में अतिकल्पना द्वारा इतिहास की खाइयो को पूरा किया जाता है। अतिकल्पना अतीत को और भी आकर्षक, मादक और उत्तेजक रूप मे प्रस्तुत करती है, इसके फलस्वरूप ऐतिहासिक रोमास अत्यन्त लोकप्रिय होते हैं।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमानो मे तिलिस्म तथा जासूसी वातावरण की उत्पत्ति तथा रहस्य रोमांचपूर्ण घटनाओ द्वारा पाठक की भावनाओ को उत्तेजित करने का सफल प्रयास किया गया है। गोस्वामी जी के 'लखनऊ की कब्र', 'लालकुंवर' व 'मल्लिका देवी' तथा जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअली शाह' मे लबी लबी गुफाओ, भयानक कोठरियो, अजीब पुतलो एव सामन्ती अपराधो का लोमहर्षक वर्णन किया गया है। अवध के दो विलासी बादशाहो नसीरुद्दीन हैदर तथा वाजिदअली शाह के विलास, क्रीडा एव मधुचर्या का चित्रण रसिकता पूर्ण पद्धति से किया गया है। ऐतिहासिक आभासो को कल्पना के माध्यम से अत्यन्त चित्ताकर्षक रूप मे चित्रित किया गया है।

(ख) इतिहास मूलत तथ्याश्रित अतिकल्पना पर तथ्य और प्रामाणिकता के बन्धन नहीं हैं—मानवीय अतीत का लेखा जोखा मूलत ज्ञात तथ्यो के आधार पर किया जाता है। इसलिए इतिहास तथ्याश्रित होता है परन्तु रोमानिक काल्पनिकता के सम्बन्ध मे तथ्यो तथा प्रामाणिकता का उल्लघन भी किया जा सकता है। क्लारारीव ने अपनी पुस्तक 'प्राग्रेस ऑव रोमास' मे लिखा है—उपन्यास अपने युग का चित्रण करता है। रोमास उदात्त भाषा मे उसका वर्णन करता है, जो न घटित है न घटमान"।[2] रोमान का यही गुण जब आरोपित होकर ऐतिहासिक

1 David Daiches "Literary Essays" London 1956 Scott's Achievement as a Novelist" Page 90
यहाँ लेखक ने ऐतिहासिक उपन्यास के तीन सर्वाधिक स्वरूपों की चर्चा की है जिनमें से एक 18 वीं सदी के गोथिक रोमांसों की प्रकार का है—
"It can be essentially an attemp to illustrate those aspects of life of a previous age which most sharply distinguish from our own"

2. साहित्य कोश, भाग 1, पृष्ठ 154

रोमासो मे आता है तो वहाँ ऐतिहासिक तथ्यो व प्रामाणिकता के बन्धन समाप्त हो जाते हैं। मनुष्यो द्वारा रोमास-परक असभव एव दुष्कर कार्यों के किए जाने का चित्रण करने वाले लेखक को इस प्रकार के बन्धनो से बाँधना अयुक्तियुक्त होगा।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे जब ऐतिहासिक तथ्यात्मकता के बन्धन ढीले होते हैं तो लेखक अपनी उर्वर कल्पना तथा अतीत ज्ञान के आधार पर लोक-अतीत का पुन निर्माण करते हैं। ऐतिहासिक अतीत के स्थान पर लोकातीत के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे अतिकल्पना का प्रयोग किया गया है।

पडित किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक रोमासो—'लवगलता' 'हृदय हारिणी' 'मल्लिका देवी' आदि मे लोकातीत अधिक उभरा है और ऐतिहासिक अतीत पृष्ठभूमि मे ही रहा है, परन्तु लोकातीत कभी भी ऐतिहासिक अतीत की सीमाओ का उल्लघन नही करता। कल्पना का एकछत्र आधिपत्य होने पर भी पात्र प्रति-ऐतिहासिक कार्य नही करते। उदाहरणत 'लवगलता' मे सिराजुद्दौला लवगलता के कहने पर अपने कई मुसाहबो को मरवा देता है (पृष्ठ 60–61) जब कि वह अपनी बेगम लुत्फुन्निसा द्वारा मीर जाफर के विरुद्ध जानकारी देने पर भी उसके विरुद्ध कोई कार्रवाई नही करता। (पृष्ठ 86)

इसके विपरीत 'लाल कुवर' एव 'लखनऊ की कब्र' मे अतिकल्पना अधिक तथा ऐतिहासिक तथ्य अत्यल्प मात्रा मे प्रस्तुत किए गए हैं।

(ग) मानवीय प्रकृति व तत्कालीन परम्पराओ के अनुकूल होने पर अतिकल्पना द्वारा सत्य का प्रतिपादन—ऐतिहासिक रोमासकार अतिकल्पना की सहायता से मानवीय अतीत के जिस कालखण्ड का पुन सृजन करता है, उस विशिष्ट युग की तत्कालीन परम्पराओ तथा मानवीय प्रकृति को प्रकाश मे लाने के लिए काल्पनिक एव अर्द्ध ऐतिहासिक पात्रो का निर्माण करता है। ये पात्र उस युग के असख्य नर-नारियो का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्होने इतिहास के निर्माण मे अपना सहयोग दिया था। ट्रेविलियन के मतानुसार—"कोई भी ऐतिहासिक घटना, यदि उसे मुकम्मल वैज्ञानिक ढग से लिया जाएगा तो लाखो मनुष्यो व स्त्रियो के जीवन-वृत्त को लेना होगा, जिनमे से लगभग सभी नितान्त अज्ञात हैं, फिर भी उनमे से प्रत्येक एक जीवत व्यक्तित्व था जो गतिशील परिस्थितियो तथा प्रभावो के दबाव के नीचे उभरता तथा बदलता[1] था।"

लेखक पात्रो के अतिरिक्त काल्पनिक घटनाओ के माध्यम से भी ऐतिहासिक सत्यो का उद्घाटन करते हैं। तद्युगीन रूढियो, परम्पराओ, विश्वासो, विचारो तथा सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल होने पर अतीत का अधिक विश्वसनीय एव सत्यपूर्ण (वह तथ्यपूर्ण नही भी हो सकता) चित्र उपस्थित किया जा सकता है।

1 G M Travillyan "Truth in History" (Essays) page 81 "The Problem of History and Historiography," page 60

आचार्य चतुरसेन ने 'वैशाली की नगर वधू' में, वृन्दावनलाल वर्मा ने 'मृगनयनी' में क्रमश वेश्या समस्या तथा विजातीय विवाह की समस्या को उभारा है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो में गोस्वामी जी के 'हृदयहारिणी,' लवंगलता', 'गुलबहार वा आदर्श भ्रातृस्नेह' में मानवीय प्रकृति, गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ', तथा 'वीर जयमल व कृष्णकान्ता' में भावुकता परक प्रेम, जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअली शाह' में नवाब की विलासिता व राजकीय षड्यन्त्रो आदि ऐतिहासिक सत्यो का निरूपण किया गया है।

गोस्वामी जी के 'लालकुवर' तथा 'लखनऊ की कब्र' में वर्णित मुसलमान शासको का खुला यौनाचार एक स्वीकृत ऐतिहासिक सत्य है।

(घ) ऐतिहासिक रोमांस मे स्वेच्छाधर्मी अतिकल्पना—मानवीय विकास का अध्ययन करते समय निश्चयवाद तथा मानवीय स्वेच्छा दो परस्पर विरोधी सिद्धान्त हमारे सम्मुख आते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास में कार्यकारण शृंखला के अत्यन्त सुदृढ होने से वहाँ सामान्यतः निश्चयवाद का भान होता है। इसके विपरीत समस्त रोमांसिक धारा व्यक्तिपरक जीवन दर्शन को लेकर चलती है। वह स्थिरता, स्पष्टता, व व्यवस्था के स्थान पर भावना, स्वप्निलता, विप्लव व विद्रोह को मान्यता प्रदान करती है। एक व्यक्ति को केन्द्र मे रख कर चलने के कारण ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की कारण-परिणाम शृंखला भग हो सकती है।

ऐतिहासिक रोमांसो की व्यक्तिपरक प्रवृत्ति तथा व्यक्ति की स्वेच्छा का स्वरूप लगभग अनिश्चित होने के कारण, इनकी अतिकल्पना स्वेच्छाधर्मी होती है। यह कारण-परिणाम-शृंखला से विमुक्त भी हो सकती है।

विवेच्य इतिहास-कथापुस्तको में व्यक्तिपरक जीवन दृष्टि तथा स्वेच्छाधर्मी अतिकल्पना के उत्तम उदाहरण उपलब्ध होते हैं। गोस्वामी जी के 'लखनऊ की कब्र' 'लालकुवर वा शाही रगमहल' तथा जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान' में क्रमश बादशाह नसीरुद्दीन हैदर, शाहजादे जहाँदार, तथा नवाब वाजिदअली शाह की विलासिता एव अदमनीय यौन-लालसा के वर्णन एव चित्रण में अतिकल्पना का स्वेच्छाधर्मी प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार 'लवगलता' 'हृदयहारिणी' में भी गोस्वामी जी नरेन्द्र व मदनमोहन द्वारा किए गए कार्यों की व्यक्तिपरक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। गगाप्रसाद गुप्त के 'कुवरसिंह सेनापति', व 'नूरजहाँ या ससार सुन्दरी', जयरामदास गुप्त के 'कलावती' 'प्रभात कुमारी व 'रानी पन्ना', कान्तिप्रसाद वर्मा के 'जया' तथा बलदेवप्रसाद मिश्र के 'अनारकली' में अतिकल्पना को स्वेच्छापूर्वक प्रयुक्त किया गया है।

(ग) ऐतिहासिक पुनरंचना के रूप मे ऐतिहासिक रोमांस

(क) इतिहास के पुन सृजन के रूपों मे ऐतिहासिक रोमांस अतिनिकट रूप के निकट है—सैंगलाइम ने दस्तावेजो द्वारा उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर

जनजीवन के सबंध मे जानकारी प्राप्त करने मे आने वाली कठिनाई की ओर इगित किया है तथा आधुनिक उपन्यासो मे वर्णित जीवन के महत्त्व को स्वीकार किया है। 'अलिखित दस्तावेज सम्बन्धी साक्ष्य जो सामाजिक व प्राकृतिक दृश्यमान जगत् द्वारा प्राप्त होते हैं, तथा इसी रूप में, लिखित दस्तावेजो के विचार-हीन साक्ष्य' ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। रीतिरिवाज, समाज का आर्थिक गठन, तथा इसके सामाजिक एव धार्मिक कार्य, लिखित साक्ष्यो अथवा मौसमी परिवर्तनो, भूगर्भीय बनावटो तथा वास्तुकला के अवशेषो से प्राप्त साक्ष्यो से अधिक दुर्ग्राह्य है।[1]

ऐतिहासिक रोमांस इतिहास के इसी अलिखित रूप के अत्यन्त निकट है। सामाजिक, धार्मिक एव राजनीतिक परम्पराओ, रीति-रिवाजो तथा सस्थाओ के माध्यम से तथा प्रकृति एव देश अथवा मौसमी परिवर्तनो, भूगर्भीय बनावट तथा वास्तुकला अवशेषो द्वारा प्राप्त जानकारी पर ही ऐतिहासिक-रोमांस अधिकांशत आश्रित होते हैं। अलिखित होने के कारण इस प्रकार की सामग्री मे कोई कठोरता नही होती। उसमे आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किए जा सकते है तथा उसे इच्छानुसार विभिन्न रूप भी दिए जा सकते हैं। इससे ऐतिहासिक रोमांसकार को अपनी व्यक्तिवादी दृष्टि, उर्वर कल्पना, उत्कट भावना, सौन्दर्य-प्रेम, प्रकृति प्रेम, साहसिकता व शौर्य का प्रस्तुतिकरण करने का उपयुक्त अवसर प्राप्त होता है तथा कतिपय असभव एव दुष्कर कृत्यो का चित्रण करने के लिए भी पर्याप्त स्थान रहता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो मे पडित बलदेवप्रसाद मिश्र का 'अनारकली' अलिखित रोमांस का अत्युत्तम उदाहरण है। यहाँ न केवल लिखित इतिहास को ही चुनौती दी गई है, प्रत्युत लोकाश्रित कथानक मे भी आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया गया है। पडित किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता', 'हृदयहारिणी', 'मल्लिका देवी' तथा 'गुलबहार वा आदर्श भ्रातृस्नेह' मे भी मुख्यत पात्र एव घटनाएँ अलिखित अथवा लोकाश्रित हैं।

(ख) **मिथको निजधरो, लोककथाओ, व लोकप्रथाओ का उपयोग जो देशकाल के कठोर अनुशासन से विमुक्त है**—तथ्यरूप इतिहास व्याख्या के स्थान पर ऐतिहासिक-रोमांसकार अतिकल्पना द्वारा अति-मानवीय तथा अलौकिक तत्त्वो के आधार पर इतिहास का पुन निर्माण करते हैं। इसके लिए वे ऐतिहासिक कथानको के ढाँचे मे मिथको, निजधर कथाओ, व लोक कथाओ का प्रयोग करते है। सामान्यत यह सभी कथारूप देशकाल के कठोर बधन से विमुक्त होते है, ऐसी विलक्षण स्थिति मे लेखक को उर्वर कल्पना का प्रयोग करने तथा अन्यान्य मानवीय सवेगो तथा आवेगो का चित्रण करने का सुअवसर पर प्राप्त होता है।

1 See—"The Problem of History and Historiography", pp 56–57

मिथक तथा लोककथाएँ[1] क्रमश. देवताओ के अलौकिक कृत्यो, सृष्टि की उत्पत्ति, जातियो, वशो, स्वर्ग एव नरक तथा मानवीय समाज की अति कल्पनापरक एव अतिशयोक्तिपूर्ण कथाओ को लिए हुए चलती हैं। ऐतिहासिक रोमांसो मे मिथको का लोकाश्रित के स्थान पर कल्पनाश्रित स्वरूप अधिक बुद्धिगम्य होता है। एक विशिष्ट ऐतिहासिक युग का पुनः निर्माण करते समय लेखक कई मिथको का निर्माण करते हैं तथा लोक कथाओ का प्रयोग करते हैं।

निजधरो[2] की स्थिति भी लगभग मिथकों के समान ही है। परन्तु निजधरों मे कतिपय प्रागैतिहासिक पात्रो, उनके अत्यन्त शौर्यतापूर्ण, साहस एव रोमांस-परक प्रेम का भी चित्रण रहता था। इन्ही से लोक गाथाएँ (बैलेडस) जन्मीं थी। ऐतिहासिक रोमांस मे ये दोनो प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं।

स्पष्ट है कि मिथक, निजधर, लोक कथाएँ, लोक गाथाएँ तथा लोक प्रथाएँ सभी रोमांटिक प्रवृत्तियो-कल्पना, भावना, भय एव प्रेम आदि के लिए अनुकूल भूमि एव परिस्थितियाँ उपलब्ध करती हैं। देशकाल के कठोर अनुशासन से विमुक्त होने के कारण ये लेखक को मानवीय स्वप्नो की एक मनोरम मनोभूमि प्रस्तुत करने के लिए उपकरण उपलब्ध करते हैं, जो इतिहास मे ऐतिहासिक वातावरण मिलाकर एक विशिष्ट ऐतिहासिक रस का[3] परिपाक करने मे सहायक होते हैं।

1 'मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यों में कथानक रूढ़ियाँ' डॉ० ब्रजविलास श्रीवास्तव, वाराणसी, 68, पृष्ठ 31–32 ''अवदानों (मिथक) और लोककथाओं की उत्पत्ति आदिम मानव समाज मे समानान्तर रूप से हुई थी। अवदान-कथाएँ देवताओं के आश्चर्यजनक और अलौकिक कार्यों की कहानियाँ हैं पर उनमें सृष्टि की उत्पत्ति, जातियों और वर्शों, स्वर्ग नरक आदि बातों का भी वर्णन होता है। किन्तु लोककथाएँ मुख्यत मानव-जीवन की घटनाओं, मानवीय आवेगों और सवेगों तथा आचरणगत पाप पुण्य की बातों का वर्णन करती हैं। ये घटनाएँ मूलत यथार्थ पर आधारित होते हुए भी प्राय कल्पना जनित अतिशयोक्ति से भरी होती हैं। उनमें यथार्थ मानवीय अनुभूतियों को ही कल्पना द्वारा अनिरंजित करके इस रूप में उपस्थित किया गया रहता है कि आधुनिक तर्कशील व्यक्ति के लिए वे असम्भव और अमान्य प्रतीत होती हैं।''—जनरल ऍथ्रोपोलॉजी, पृष्ठ 610

2 प्राचीन निजन्धरी आख्यानों और लोक गाथाओ का रूप कुछ तो वास्तविक घटनाओं और ऐतिहासिक चरित्रों के आधार पर हुआ परन्तु अधिकतर पूर्ववर्ती अवदानों (मिथकों) और लोककथाओ के सादृश्य पर अथवा उनकी सामग्री लेकर विकसित हुआ।

3 देखिए वर्मा जी का ऐतिहासिक रोमांस—श्रीचन्द्रदान चारण, साहित्य सन्देश का ऐतिहासिक उपन्यास अक जनवरी-फरवरी पृष्ठ 323, 1959 ई।
विश्वकवि रवीन्द्र के अनुसार तो यदि उपन्यास में ऐतिहासिक रस के लिए ऐतिहासिक सत्य में भी परिवर्तन करना पड़े, तो अनुचित नहीं। उन्होंने लिखा है–"उपन्यास के अन्दर इतिहास के मिल जाने से जो एक विशेष रस सचारित हो जाता है उपन्यासकार एक मात्र उसी ऐतिहासिक रस के लालची होते हैं, उसके सत्य की उन्हें कोई विशेष परवाह नहीं होती। लेखक चाहे इतिहास को अखण्ड रख कर रचना करे या तोड़ फोड़ कर, यदि वे ऐतिहासिक रस की अवतारणा कर सके, तो उन्हें अपने उद्देश्य में कृतकार्य समझना चाहिए।"

विवेच्य उपन्यासो मे मिथको, निजधर कथाओ, लोककथाओ, लोक गाथाओ तथा लोकप्रथाओ का विपुलता से प्रयोग किया गया है। गोस्वामी जी के 'हृदयहारिणी,' 'लवगलता,' 'गुलबहार वा आदर्श भ्रातृ स्नेह', 'कनक कुसुम,' 'मल्लिकादेवी, व 'लालकुँवर' आदि ऐतिहासिक रोमासो मे लोक कथाओ, लोक गाथाओ एव लोक प्रथाओ का प्रयोग किया गया है। गगाप्रसाद गुप्त के 'कुँवरसिंह सेनापति', 'वीर जयमल वा कृष्णकान्ता', जयरामदास गुप्त के 'किशोरी व वीर बाला', 'प्रभात कुमारी', 'रानीपन्ना वा राजललना', तथा मेहता लज्जाराम शर्मा के 'जुझार तेजा' मे लोक तत्त्वो का समावेश कलात्मक ढग से किया गया है।

(ग) **विवरणों की बहुलता**—ऐतिहासिक रोमासो मे अन्यान्य विवरणो की बहुलता होती है। इतिहास का पुन सृजन करने मे यह एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है जिससे ऐतिहासिक रोमासकार अतीत का एक सजीव चित्र पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयत्न करते हैं। विवरणो की चित्रात्मकता तथा कला अतीत का कल्पनात्मक पुन निर्माण करने तथा वातावरण निर्माण मे सहायक होती है।

सामान्यतः विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे एक अज्ञात घुडसवार का तेजी से एक लक्ष्य (मजिल) की ओर जाने का विवरण उपलब्ध होता है। इसके अतिरिक्त प्रकृति तथा नारी के सौन्दर्य के साथ पुरुषो के शौर्य के लम्बे विवरण भी ऐतिहासिक पुन निर्माण मे सहायक हो पडे हैं। प्राचीन महलो, किलो, नगरो, गुफाओ, खण्डहरो के साथ-साथ तिलस्मी तथा ऐयारी के भी विवरण किए गए है।

(घ) **'अति' उपसर्ग की प्रधानता, अति मानवीय, अति प्राकृतिक, अति लौकिक जादू टोना आदि**—मध्ययुगीन निजधरो, मिथको, लोककथाओ एव गाथाओ तथा रोमासो के बहुत से तत्त्वो व प्रवृत्तियो का इतिहास से समन्वय होने पर रोमासो के जादू, टोना, अतिमानवत्व तथा अतिदानवत्व आदि तत्त्व क्रमश अधविश्वास, अति रोमाचक कार्य (प्रेम, वीरता) तथा प्रबल सघर्ष (त्रास, भय) के रूप मे ऐतिहासिक रोमासो मे आए।[1]

रोमास यथार्थ से परे होता है, इसलिए उसमे अतिमानवीय, अतिप्राकृतिक तथा अलौकिक कृत्यो अथवा घटनाओ के लिए स्थान होता है। ऐतिहासिक रोमास मे इनका स्वरूप कुछ सीमा तक बदल जाता है। इनका यह परिवर्तित स्वरूप इतिहास के ढाचे मे ठीक से बैठाया जा सकता है। मध्ययुगो के कथानक, रीति रिवाज तथा विश्वास इन प्रवृत्तियो के लिए एक उपयुक्त भूमि प्रदान करते है। नायक, नायिका को प्राप्त करने के लिए लगभग असम्भव अथवा दुष्कर कार्यो का सपादन करते हैं। नायिका, नायक की विजय कामना के समय कठिन व्रत रखती है एव कष्ट भोगती है। नायक अतिप्राकृतिक ढग से भयानक युद्धो मे विजय प्राप्त करते है, इसके विपरीत नायिकाएँ अत्यन्त कोमल तथा भावनामयी होती है। स्पष्ट है कि ऐतिहासिक

1 डा० रमेशकुन्तल मेघ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृष्ठ 343

रोमांसो मे, अतिमानवीय तत्त्व[1] प्रेम व वीरता के अतिरोमांचक कार्यों द्वारा अभिव्यक्ति प्राप्त करता है। अतिप्राकृतिक[2] एव जादू टोना[3] आदि अन्धविश्वासों के रूप में उभर कर आते हैं। लगभग सभी विवेच्य रोमांसो मे अति प्राकृतिक शक्तियाँ यथा भगवान, अल्लाह, एव भवानी माँ आदि अदृष्ट रूप मे ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने के कारण के रूप मे स्वीकार किए गए हैं। इसके साथ ही यह शक्तियाँ ऐतिहासिक पात्रो के विचारो तथा विश्वासो को प्रभावित करती हैं और उन्हे एक निश्चित दिशा प्रदान करती हैं। लगभग सभी उपन्यासो मे यह दैवी शक्तियाँ प्रेरणा का प्रबल स्रोत हैं।

इस प्रकार ऐतिहासिक रोमांसो मे ऐतिहासिक घटनाओ अथवा ऐतिहासिक पात्रो का अतिशयोक्ति पूर्ण शैली मे वर्णन एव विवरण किया जाता है। भय हो या प्रेम रोमांच हो या विह्वलता, कुटिलता हो या कोमलता, सौन्दर्य हो या शौर्य सभी का अतिरंजित वर्णन ही ऐतिहासिक रोमांसो मे 'अति' उपसर्ग की प्रधानता का बोध दिलाता है।

(इ) असामान्य एव अनपेक्षित प्रसगो तथा सदर्भों द्वारा चमत्कार एव कुतूहल की सृष्टि—ऐतिहासिक रोमांस सामान्यत अलिखित इतिहास, मिथकों निजधरो, लोक कथाओं एव लोक-गाथाओ आदि मे अपनी सामग्री प्राप्त करता है इसलिए उसमे असामान्य तथा अनपेक्षित प्रसग तथा परिस्थितियां प्रस्तुत करना स्वाभाविक है। कथानक को गति तथा प्रवाह के अनुरूप स्थान-स्थान पर अद्भुत

1 'अतिमानवों मे देवता, दैत्य, यक्ष, किन्नर, अप्सरा, पिशाच, विद्याधर, नाग आदि ऐसी ही जातियां थीं जो हिमालय और विंध्याचल के भूभागों में रहती थीं। इनमें से कुछ नृत्य-गान शृ गार आदि कलाओं में पारगत थीं और कुछ मत्र-तत्र और रसायन विद्या में निष्णात थीं। कामदेव प्रजापति दक्ष, कुबेर, शेषनाग आदि उनके कुछ पूर्व रूप देवता थे जो परवर्ती कालों द्वारा अधम या मध्यम कोटि के देवता के रूप मे स्वीकार कर लिये गये।'—

'मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यों मे कथानक रूढ़ियाँ,' पृष्ठ 59

2 वही पृष्ठ 56-57 सर्वचेतनवाद के सिद्धान्त के अनुसार आदिम मानव द्वारा प्राकृतिक वस्तुओं वृक्ष, वन, नदी, पर्वत, समुद्र, पशु, पक्षी, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी, वर्षा, आदि में देवत्व की प्रतिष्ठा की गयी। यह माना गया कि ये देवता मनुष्य से कहीं अधिक शक्तिशाली होते हैं, वे इच्छानुसार अपना रूप परिवर्तित कर सकते हैं, प्रसन्न होकर मनुष्य का हित और क्रुद्ध होकर अहित कर सकते हैं। लोक-साहित्य और शिष्ट साहित्य मे भी सदा देवी-देवताओं से सम्बन्धित ऐसी कथाएँ मिलती हैं, जिनमें वे मानवों के कार्यों में दखल देते, उनका भावी जीवन पथ निर्धारित करते उनके प्रेम मे आसक्त होते, क्रुद्ध होकर उनका अहित करते और प्रसन्न होकर हित करते हैं।"

3 वही, पृष्ठ 71 " ...ऋषि मुनि, योगी, सिद्ध, तांत्रिक, जादूगर डाइन, [illegible] आदि असामान्य व्यक्ति ऐसे कार्यों के कर्ता होते थे जिन्हें समाज [illegible] दृष्टि से देखता था। तपस्या, मत्रसाधना, देव, दानव या प्रेत की साधना, योग साधना, तथा जादू-टोना आदि गुप्त क्रियाओं की प्राप्ति द्वारा मानव का इस प्रकार की [illegible] शक्ति प्राप्त होती है, मध्यकाल तक के लोगों का ऐसा विश्वास था।'

परिस्थितियाँ उत्पन्न करके उनके द्वारा चमत्कार तथा कुतूहल की सृष्टि की जाती है। घटना-प्रवाह मे पाठक की उत्सुकता सदा वनी रहती है, प्रेम व भय जनित घटनाओ के वर्णनो तथा अति-प्राकृतिक एव अतिमानवीय कृत्यो का विवरण उसे रोमाचित भी करता है। इस प्रकार, चमत्कार, कुतूहल, औत्सुक्य तथा रोमाच, ऐतिहासिक रोमास के वे अनिवार्य गुण है, जो ऐतिहासिक पुनर्रचना के रूप मे उसे प्रतिष्ठित करते हैं।

विवेच्य उपन्यासो मे सामान्यत यह सभी रोमासिक प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। विशेषत गोस्वामी जी के 'लखनऊ की कब्र' व 'लालकुँवर' तथा जयरामदास के 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअलीशाह' मे चमत्कार एव कुतूहल की सृष्टि अन्यतम वन पडी है।

(च) ऐतिहासिक रोमास का प्रधान रूप—एक साहित्यिक विधा के रूप मे ऐतिहासिक–रोमास के स्वरूप का अध्ययन एव निर्धारण करने के लिए सर वाल्टर स्काट द्वारा किए गए रोमास, इतिहास और उपन्यास के समन्वय पर दृष्टिपात करना उचित होगा। "स्काट एक ऐसा ही प्रतिभा सम्पन्न कलाकार था जिसने अग्रेजी साहित्य मे प्रथम बार "रोमान्स" और उपन्यास का परिणय किया। इतना ही नही कि उसने रोमान्स और उपन्यास को मिलाया अपितु उसने विभिन्न प्रवृत्तियो का ऐसा अद्भुत मिश्रण तैयार किया जो उपन्यास साहित्य के लिए एक स्वस्थकर रसायन वन गया और आश्चर्य तो यह है कि उसने रोमान्स तथा यथार्थवाद सदृश विरोधियो का समझौता करा दिया जिससे उनकी शक्ति द्विगुणित हो उठी।"[1]

उपन्यास मूलत यथार्थाश्रित साहित्य रूप है, इसलिए ऐतिहासिक रोमास मे नितान्त काल्पनिक अतीत को ही कथानक का आधार नही बनाया जा सकता। इस प्रकार नितान्त कल्पना तथा ऐतिहासिक यथार्थ के मध्य एक सेतु का निर्माण करना, ऐतिहासिक रोमास को अधिक बुद्धिगम्य वनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यद्यपि रोमास के अन्यान्य तत्त्व एव प्रवृत्तियाँ ऐतिहासिक रोमासो मे भी उपलब्ध होती हैं तथापि उनका स्वरूप एव चरित्र पर्याप्त मात्रा मे परिवर्तित हो जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे यह वात और भी स्पष्ट रूप मे उभरी है।

ऐतिहासिक रोमासो के स्वरूप-निर्धारण के लिए हमे कुछ विंदुओ को ध्यान मे रखना होगा। यदि इनके पात्र एव घटनाएँ ऐतिहासिक नही हैं, तो इनका वातावरण ऐतिहासिक हो। वातावरण द्वारा अतीत का पुन सृजन अत्यन्त कलात्मक सिद्ध होता है। उदाहरणत कार्तिक प्रसाद खत्री के "जया", तथा राम नरेश त्रिपाठी के "वीरागना" मे घटनाओ तथा पात्रो के ऐतिहासिक न होने पर भी ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि की गई है।

पात्र ऐतिहासिक न होने की स्थिति मे कुछ घटनाएँ ऐतिहासिक होनी चाहिएँ, जिससे इतिहास का पुनर्सृजन हो सके। इसी प्रकार यदि घटनाएँ ऐतिहासिक न हो तो कुछ प्रमुख पात्र ऐतिहासिक होने चाहिएँ।

---

1. 'हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास,' पृष्ठ 126

3 ऐतिहासिक उपन्यास

बनाम

ऐतिहासिक रोमांस

मानव के अतीत की औपन्यासिक अभिव्यक्ति के दोनो गद्यात्मक रूप—उपन्यास तथा रोमास—जनजीवन तथा उच्च वर्ग के जीवन को उपजीव्य बनाते हैं। किन्तु दोनो मे ही मूल्यचक्र तथा जीवन दृष्टियाँ भिन्न-भिन्न हो जाती हैं। हम आगे इनका विवेचन करेंगे।

(1) ऐतिहासिक उपन्यास और ऐतिहासिक रोमांस · तुलना

मानवीय अतीत की औपन्यासिक अभिव्यक्ति के संबंध मे, अन्यान्य साहित्य रूपो के सबध मे विद्वानो के विभिन्न मत हैं।

कार्ल बेकसन व आर्थर गैंज के मतानुसार[1] ऐतिहासिक उपन्यास एक विवरण (दृष्टात) है, जो काल्पनिक अथवा ऐतिहासिक अथवा दोनो प्रकार के पात्रो का प्रयोग करते हुए, घटनाओ के कल्पनात्मक पुनर्निर्माण के लिए इतिहास का प्रयोग करता है। जब कि ऐतिहासिक उपन्यासकार को काफी छूट होती है, वह सामान्यत कई बार पर्याप्त शोध की सहायता लेता हुआ कुछ यथातथ्यात्मकता के साथ, उन घटनाओ का अलकृत एव नाटकीय ढग से पुन सृजन करता है, जो उसके विषय से सबधित होती हैं।

ऐतिहासिक उपन्यासकार तथ्यो तथा शोध के साथ-साथ कल्पनात्मकता तथा अलकारिक शोभा की सहायता से अतीत का पुन सृजन करते हैं। ऐतिहासिक रोमासकार अतीत का प्रस्तुतिकरण करते समय काल्पनिकता तथा विवरणों की अधिकता का आश्रय लेता है, जिससे वह देश-काल के कठोर बधनो मे आंशिक रूप मे विमुक्त हो जाता है।

1. "A Readers Guide to Literary Terms By Karl Beckson and Arthur Ganz (Thames and Hudson, London 1st edition 1961) page 82 "Historical Novel A narrative which utilizes history to present an imaginative reconstruction of events using either fictional or historical or both while considerable latitude is permitted to historical novelist, he generally attempts, sometimes aided by considerable research, to recreate, with some accuracy, the pagentry and drama of the events he deals with"

साहित्यकोशकार के मतानुसार "ऐतिहासिक उपन्यास के लिए तो इतिहास की रक्षा करने के साथ-साथ उसके स्वरूप को अपनी कल्पना के द्वारा स्पष्ट करना भी आवश्यक है। यह ध्यान रखना चाहिए कि उपन्यास इतिहास का अन्धानुकरण नही हो सकता, सब से पहले यह उपन्यास है—साहित्यिक कथावस्तु। साथ ही वह इतिहास भी है, जिसकी मर्यादा की भी रक्षा करनी पडती है। अत यहाँ कल्पना अनियंत्रित नही हो सकती। अकबर और शिवाजी दोनो को एक साथ नही बिठा सकती। अत इसमें अन्य प्रकार के उपन्यासो से अधिक सतर्क प्रतिभा की आवश्यकता पडती है।"[1]

जब ऐतिहासिक उपन्यास मे रोमास[2] के तत्त्व मिल जाते हैं, तो वह ऐतिहासिक रोमास बन जाता है। ऐतिहासिक रोमास की मुख्य प्रवृत्तियो मे अतीत-प्रेम, साहसिकता, शौर्य, प्रेम की प्रधानता, कल्पना, भावनाएँ-आवेग एव सवेग, सौन्दर्य तथा प्रकृति आदि का चित्रण एव विवरण मुख्य हैं। उनके पात्र सामान्यत "टाइप" (प्रकार) होते हैं, परन्तु उनके नायको का चरित्र लगभग प्रत्येक ऐतिहासिक-रोमास में नवीनता लिए हुए होता है। उनके अन्तर देश (स्थान) तथा काल की दूरी के साथ बढते जाते हैं। उनकी जीवन दृष्टियाँ, प्रेरणा स्रोत, उद्देश्य तथा वस्तुओ के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तमान होते हैं। नायिकाएँ यद्यपि सौन्दर्य की दृष्टि से अद्वितीय ही रहती हैं, परन्तु उनकी मन स्थिति तथा चारित्रिक मौलिकता विभिन्न होती है। पात्रो के साथ-साथ उपन्यास की बनावट तथा ढाँचा भी विभिन्न प्रकार तथा स्वरूप का होता है।

डेविड डेचिस के मतानुसार ऐतिहासिक उपन्यास को तीन श्रेणियो मे विभक्त करने मे ही स्काट के ऐतिहासिक उपन्यासो तथा उनकी स्थिति के सबध मे न्याय

1 हिन्दी साहित्य कोश, भाग 1, पेज 163

2 रोमास शब्द "रोमन" से निकला है, जिसका अर्थ है असाधारण। अर्थात् रोमास (उपन्यास) में जो पात्र होंगे, वे ऐसे तो न होगे जो इस पार्थिव जगत् में पाए ही न जा सकें, पर वे लाखों में एक होंगे और उनका दर्शन विरल होगा। रोमास (उपन्यास) में कथा काव्य के उपकरणों के सहारे अपने स्वरूप को प्रकट करती है। उसमें कथा थोडी-बहुत जटिल हो जाती है। पात्रो की अधिकता रहती है। अनेक कथाएँ आकर जुडने लगती हैं, पर कवित्व-पूर्ण और भावपूर्ण वातावरण भी बना रहता है। वीरो की अलकृत साज-सज्जा की, रणक्षेत्र-प्रमाण की तथा युद्ध की प्रकार की विस्तृत विवृत्ति पाठक की कल्पना को तृप्त करती रहती है। रोमास उपन्यासो की वर्ण्य वस्तु बहुत ही सीमित होती है। पात्र व्यक्ति नही "टाइप" होते हैं। नायक उच्च वशोत्पन्न राजा अथवा धर्मात्मा होता है तथा नायिका सुन्दरता की देवी-देखने वालों के हृदय मे शौर्यभाव को जागरित करने वाली। पात्र किसी महत्त्वपूर्ण वस्तु की खोज में रहते हैं वीरव्रती होते हैं, विपन्नो विशेषत नारियों का उद्धार करना तथा प्रेम की कठिन परीक्षा मे अपने प्रतिद्वन्द्वी को मात देना उनका व्रत होता है। क्रीडा, समारोह, रणप्रयास श्मशान-यात्रा के दृश्य, धार्मिक युद्ध इत्यादि का वर्णन होता है। इन सबके बीच एक सुन्दरी कन्या की प्रतिष्ठा होती है। यही रोमास के उपकरण हैं।"

—हिन्दी साहित्यकोश, भाग 1, पेज 167.

किया जा सकता है। "एक ऐतिहासिक उपन्यास मूलत साहसिक कार्यों की एक गाथा हो सकती है, जिसमें ऐतिहासिक तत्त्व केवल रुचि एवं वर्णित कार्यों के साथ महत्ता की भावना जोड़ने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। अथवा यह अनिवार्य रूप से एक अतीत युग के जीवन के उन पक्षों को चित्रित करने का प्रयत्न है, जो हमारे अपने युग के जीवन से नितान्त विपरीत हैं, अथवा यह, (ऐतिहासिक उपन्यास) एक ऐतिहासिक स्थिति का प्रयोग किसी मनुष्य के भाग्य (फेट) के किसी पक्ष को चित्रित करने का प्रयत्न भी हो सकता है, जो कि ऐतिहासिक स्थिति से अलग महत्त्व तथा अर्थ रखता हो।[1] स्टीवेंसन तथा ड्यूमा के उपन्यास प्रथम श्रेणी में, अठारहवीं शताब्दी का गोथिक रोमांस द्वितीय श्रेणी में तथा स्काट के उपन्यासों का सर्वोत्तम तीसरी श्रेणी के अन्तर्गत आता है। कई बार स्काट तीनों श्रेणियों को मिला भी देते हैं। उन्होंने प्रथम तथा द्वितीय श्रेणियों को मिला कर पिक्चरेस्क उपन्यासों की भी रचना की है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों की स्थिति में यह वर्गीकरण अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है। प्रथम श्रेणी को ऐतिहासिक रोमांस, द्वितीय श्रेणी को तिलस्म एवं रहस्य-रोमांच प्रधान ऐतिहासिक रोमांस तथा तृतीय श्रेणी को ऐतिहासिक उपन्यासों की संज्ञा दी जा सकती है। यह वर्गीकरण उपन्यासों की मौलिक एवं प्रधान प्रवृत्तियों के आधार पर ही किया जा सकता है क्योंकि लगभग सभी उपन्यासों में तीनों श्रेणियों की प्रवृत्तियाँ एवं विशेषताएँ अधिक अथवा कम मात्रा में उपलब्ध होती हैं।

उदाहरणत किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदय हारिणी' 'लवंगलता' 'गुलबहार', 'कनक कुसुम', 'हीराबाई', व 'मल्लिका देवी' प्रथम श्रेणी में, 'लखनऊ की कब्र' तथा 'लालकुँवर' द्वितीय श्रेणी में तथा 'तारा' व 'रज़िया' तीसरी श्रेणी के उपन्यास हैं परन्तु उनमें कई बार कई स्थानों पर अन्य श्रेणियों की प्रवृत्तियाँ भी स्थान पा जाती हैं। पहली तथा दूसरी श्रेणियाँ एक ही मूल प्रवृत्ति की दो भिन्न शाखाएँ हैं, और वह है—रोमांस-परकता। इसका और अध्ययन अगली पंक्तियों में किया गया है।

(क) इतिहास-उपचार के दो कोण—अतीत के साहित्यिक पुनर्निर्माण में इतिहास उपचार को दो भिन्न कोणों से देखा जाता है। ऐतिहासिक उपन्यास यथार्थपरक होता है जबकि ऐतिहासिक रोमांस फैंटेसी[2] पर आधारित होता है। ऐतिहासिक उपन्यास तथ्य केन्द्रित होता है, [illegible]

1 Literary Essays by David Daiches (Oliver and Boyd 1st ed 1956 Edinburgh Tweeddale Court London) Page 91

2. "Fantasy—Mental image-preoccupation with thoughts associated with unobtainable desires"
Chamber's Twentieth Century Dictionary ed by W Geddie M A, B Sc (Allied Publishers 1966)

पर आश्रित रह कर ही उपन्यास-रचना मे प्रवृत्त होना है। इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास पात्र एव घटना आश्रित सत्य का प्रतिपादन करते है। मूलत एव मुख्यत पात्र इतिहास-सम्मत होते हैं तथा घटनाएँ भी इतिहासकारो द्वारा मान्यता प्राप्त होती हैं। कल्पनात्मक पात्रो एव घटनाओ का भी सृजन किया जा सकता है परन्तु वे इतिहास की मूल प्रवृत्ति के विपरीत नही होने चाहिएँ। कई बार कल्पनात्मक पात्र एव घटनाएँ ऐतिहासिक सत्यो को तथ्यो की अपेक्षा अधिक स्पष्ट करते है।

ऐतिहासिक रोमांस प्रवृत्ति केन्द्रित होते हैं। रोमास-परक अन्यान्य साहित्यिक प्रवृत्तियाँ एव उपकरण इतिहास की पृष्ठभूमि[1] मे रखे जाते है। इनमे मुख्यत मध्ययुगप्रेम, मध्ययुगीन विचार सामाजिक, धार्मिक-राजनैतिक विश्वास, रीतिरिवाज परम्पराएँ तथा रूढियाँ लेखक को अतीत के पुन निर्माण के लिए उपयुक्त सामग्री तथा रोमासिक उपकरणो के प्रयोग का अवसर प्रदान करती हैं। मध्ययुगो के वर्णन तथा विवरण से एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण होता है, इस प्रकार ऐतिहासिक रोमास मे वातावरण सत्याश्रित होता है।

(i) **तथ्यात्मक ऐतिहासिकता · भावात्मक ऐतिहासिकता**—ऐतिहासिक उपन्यास मे ऐतिहासिकता का स्वरूप तथ्यात्मक होता है। उपन्यासकार सामान्यत इतिहासपरक कल्पना[2] का आश्रय लेकर ही मानवीय अतीत की औपन्यासिक अभिव्यक्ति करते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र मे कल्पना का उपयोग इतिहास की टूटी हुई या लुप्त हो गई कडियो के जोडने के लिए किया जाता है। इस सबध मे वृन्दावनलाल वर्मा का मत उल्लेखनीय है—"जिन स्थलो पर इतिहास का प्रकाश नही पड सकता, उनका कल्पना द्वारा सृजन करके, उपन्यास-लेखक भूली हुई या खोई हुई सच्चाइयो का निर्माण करता है। उनमे वही चमक-दमक आ जाती है, जो इतिहास के जाने-माने तथ्यो मे अवश्यमेव होती है, पर है यह कि उन तथ्यो या

1 इस सबध में जी० सौमित्र के विचार दर्शनीय हैं "मोटे तौर पर ऐतिहासिक उपन्यासो को दो प्रकारो मे बाँटा गया है—पहले प्रकार के वे उपन्यास जिनमे पात्र एव घटनाएँ पूरी तरह काल्पनिक होते हैं। उनमें इतिहास सिर्फ पृष्ठभूमि का काम करता है। दूसरी प्रकार के उपन्यास वे होते हैं, जिनकी पृष्ठभूमि ही नहीं, अधिकाश पात्र, घटनाएँ एव तथ्य भी ऐतिहासिक होते हैं। वर्माजी के उपन्यास इसी प्रकार के हैं। काल्पनिक पात्र, घटनाएँ या तथ्य भी वे आवश्यकता होने पर लेते हैं, पर कुछ इस ढग से कि उससे इतिहास की सच्चाई को हानि नही पहुँचती।"

2 वृन्दावन लाल वर्मा ने "माधवजी सिंधिया" मे लिखा था कि—"मैंने कल्पना को भी इतिहास-मूलक रखा है।" हमारा मत है कि इस इतिहास-परक कल्पना का सबध कॉलिंगवुड की ऐतिहासिक समझ तथा ऐतिहासिक रूप से सोचने से है। उनके मतानुसार इतिहासकार निश्चित दस्तावेजो तथा अवशेषो के आधार पर उस अतीत के सबध में सोचता है, जिसने उन दस्तावेजो तथा अवशेषो को छोडा। इस प्रकार इतिहास-विचार का गम्भीर स्वरूप इतिहास की पुनर्व्याख्या के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यास में उभरता है। देखिए —History as Re-enactment of Past Experience, Collingwood "Theories of History", P 254–255

परम्पराओं को ताश के पत्तों का महल या खलघर न बना दिया जाए।[1]" स्पष्ट है कि कल्पनात्मक पुनः सृजन के बावजूद ऐतिहासिक उपन्यास ऐतिहासिक तथ्यात्मकता के प्रति अपेक्षाकृत अधिक वफादार होते हैं।

भावात्मक ऐतिहासिकता से ऐतिहासिक रोमांस का जन्म होता है। चूँकि रोमांस में असाधारण, अतिमानवीय, अतिप्राकृतिक तथा अलौकिक पात्रों एवं घटनाओं को मुख्य स्थान प्राप्त रहता है, इसलिए इतिहास की पृष्ठभूमि में इन सभी रोमांस-परक तत्त्वों एवं उपकरणों का भावात्मक चित्रण किया जाता है। ऐतिहासिक रोमांस के लेखक भावावेगमय भाषा-शैली में अतीत के मानवों के आवेगों तथा संवेगों को मूर्तिमान करने का प्रयत्न करते हैं। ट्रे विलियन ने कहा था कि यदि अतीत भावावेग पूर्ण था तो उसका पुनः निर्माण भी भावावेगपूर्ण हो सकता है। रोमांसिक उपकरणों एवं तथ्यों की अभिव्यक्ति करने के लिए यहाँ कल्पना का उपयोग भावों के मादक चित्रण, विवरणों के मोहक प्रस्तुतिकरण, वर्णनों के आकर्षक एवं कलात्मक निरूपण तथा पात्रों और घटनाओं के मनोवांछित निरूपण के लिए किया जाता है। यहाँ लेखक की स्वेच्छाचारिता ऐतिहासिकता पर छा जाती है और कई बार इतिहास न केवल पृष्ठभूमि में ही चला जाता है प्रत्युत इतिहास केवल भ्रम मात्र के रूप में ही रह जाता है।

भावात्मक ऐतिहासिकता में ऐतिहासिक तथ्यों तथा ऐतिहासिक सत्यों की अपेक्षा शाश्वत मानवीय सत्यों को अधिक महत्ता प्रदान की जाती है। कई समस्याएँ आने पर लेखक इतिहास की उपेक्षा करके कल्पना का ही आश्रय लेते हैं। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक तथ्य गौण हो जाते हैं। इस सबंध में किशोरी लाल गोस्वामी का यह कथन उल्लेखनीय है—"हमने अपने बनाए उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना को मुख्य रखा है, और कहीं कहीं तो कल्पना के आगे इतिहास को दूर से प्रणाम भी कर दिया है। इसलिए हमारे उपन्यास के प्रेमी पाठक लोग हमारे अभिप्राय को भलीभाँति समझ लें कि यह उपन्यास है, इतिहास नहीं, यहाँ कल्पना का राज्य है, यथेष्ट लिखित इतिहास का नहीं। इसलिए लोग इसे इतिहास न समझें और इसकी सम्पूर्ण घटना को इतिहासों में खोजने का उद्योग भी न करें। किन्तु हाँ, जो विद्वज्जन कल्पनाप्रिय हैं, वे हमारी कल्पना की छाया में इतिहास की वास्तविक ज्वलन्त मूर्ति यत्र-तत्र अंकित देखेंगे, इसमें सन्देह नहीं।"[2]

गोस्वामी जी के ऐतिहासिक रोमांसों तथा ऐतिहासिक उपन्यासों में कल्पना की छाया में इतिहास की 'ज्वलन्त मूर्ति' का निःसन्देह उपस्थिति होना उन्हें [illegible] अतीत के व्यक्तित्व की महत्ता के प्रति प्रतिबद्ध कर देता है। भावात्मक ऐतिहासिकता की स्थिति में शाश्वत मानवीय वृत्तियों यथा प्रेम, घृणा, सौन्दर्य प्रेम, शौर्य [illegible] नाटकीयता प्रदर्शन आदि को मुख्य स्थान दिया जाता है।

1. ऐतिहासिक उपन्यास और नया दृष्टिकोण—[illegible], 1953
2. किशोरीलाल गोस्वामी, 'तारा' निवेदन पृ० [illegible]।

स्पष्ट है कि भावात्मक ऐतिहासिकता यद्यपि तथ्यात्मक ऐतिहासिकता के नितान्त विपरीत नहीं है तथापि यहाँ ऐतिहासिक तथ्यो के स्थान पर मानवीय भावनाओ तथा भावावेगो को अधिक महत्त्व प्रदान किया जाता है।

(ख) प्रेमचन्द पूर्व युग में दोनों प्रवृत्तियो मे सामान्य विशेषताएँ

(i) **जनजीवन के प्रति उपेक्षा का भाव**—प्रेमचन्द-पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास दोनो मे सामान्य रूप से उपन्यास के युग के जन-जीवन के चित्रण एव निरूपण के प्रति लेखको मे उपेक्षा का भाव था। सामान्यत लेखक राजाओ, बडे जमीदारो, रजवाडे अथवा कबीले के मुखिया को केन्द्र मे रख कर उपन्यास की कथावस्तु का निरूपण करते थे। सामान्य व्यक्तियो की सामाजिक एव आर्थिक स्थिति तथा जीवन-यापन के साधनो की ओर कम ध्यान दिया गया था।[1] इस प्रकार के इतिहास-पुनर्निर्माण का डॉ० रमेशकुन्तल मेघ ने खण्डन किया है।[2] ऐतिहासिक उपन्यास इसके अपवाद हैं परन्तु यह प्रवृत्ति सामान्यत ऐतिहासिक रोमांसो मे अधिक उभरी है। ऐतिहासिक उपन्यासो में स्थान-स्थान पर जन-जीवन की सुन्दर झलकियाँ उपस्थित की गई हैं। उदाहरणत 'पानीपत' मे 'पार्वती जी का मदिर' (पृष्ठ 29-35), 'शयन गृह,' 'छावनी मे कुतूहल' ('पृष्ठ 133-146) तथा 'मोक्षपुरी मथुरा' (पृष्ठ 209-231) आदि अध्यायो मे सामान्य जनो तथा राजपरिवारो के जीवन तथा जीवन-दर्शन का यथोचित वर्णन किया गया है, जो समस्त सामाजिक सस्कृति का स्वरूप पाठक के सम्मुख उपस्थित करता है। इसके अतिरिक्त, इसी उपन्यास मे 'अहमदशाह दुर्रानी' (232-239) अध्याय मे पडोसी देश अफगानिस्तान के निकट अतीत का अध्ययन तथा दुर्रानी के उत्कर्ष की ऐतिहासिक कहानी का वर्णन किया गया है। 'रजिया' तथा 'तारा' मे जनजीवन के अन्यान्य चित्र उपलब्ध होते हैं। 'रजिया' मे हिन्दू देवमदिर, पडित हरिहर शर्मा की रजिया द्वारा सहायता, रजिया की अदालत, न्याय तथा हिन्दुओ के पक्ष मे निर्णय तद्युगीन जनजीवन की अच्छी झलकी प्रस्तुत करता है। इसी प्रकार 'तारा' मे तारा तथा जहाँनारा का हिन्दू धार्मिक ग्रन्थो--रामायण, महाभारत, गीता आदि पर वार्तालाप, तारा के पिता की प्राचीन क्षात्र्यवृत्ति आदि मुगलकालीन हिन्दू समाज तथा सस्कृति का उत्तम चित्रण

1 V V Joshi, "The problem of History and Historiography" page 75, "Indian History of 16th or 17th century was chiefly interested in the activity and the will of the king and his court, the common people did not participate in creative and eventful activity"

2 डॉ० मेघ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृष्ठ 337
"जो इतिहास केवल राजाओ की वशावलियाँ या घटनाएँ पेश करता है, तथा पडोसी राष्ट्रों के इतिहास से अनभिज्ञ होता है, वह जनता को खडित दृष्टि दान करता है तथा केवल किताबी होता है। इतिहास केवल महान् व्यक्तियो की जीवनियाँ ही नही है बल्कि इसमे उन लाखो करोडो गुमनाम लोगो के जीवनखण्ड भी शामिल हैं, जिन्होंने इतिहास की मानवीय चेतना के क्षितिजो का विकास किया था।"

होने के साथ-साथ मुसलमानो की कामुकता व भ्रष्टाचार के विपरीत हिन्दू सस्कृति की श्रेष्ठता को भी सिद्ध करता है।

स्पष्ट है कि ऐतिहासिक रोमांसो मे ही मुख्यत. जनजीवन के उपयुक्त चित्रण का अभाव है। इसका एक कारण यह भी है कि एक विशिष्ट ऐतिहासिक युग अथवा पृष्ठभूमि मे ऐतिहासिक रोमासकार को रोमास के अन्यान्य उपकरणो एव तत्त्वो को अभिव्यक्ति प्रदान करनी होती है, सामान्य जनजीवन का चित्रण इन उपकरणो एव प्रवृत्तियो के अनुकूल नही है।

(ii) भावना या धर्म के मुकाबले यथार्थ का परित्याग—इस शताब्दी के पहले दो दशको मे हिन्दी-उपन्यास मोटे तौर पर भावना-प्रधान अथवा धर्म-परक (धर्माश्रित) था, और इन्ही दोनो प्रवृत्तियो का प्राधान्य होने के कारण यथार्थ का पूरा निर्वाह नही किया जा सकता था। लगभग यही स्थिति ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की भी थी। विशेषत ऐतिहासिक रोमासो मे तथा सामान्यत ऐतिहासिक उपन्यासो मे अतीत युगो का चित्रण करते समय लेखक भावना के प्रवाह मे बह जाते थे। प्रकृति-चित्रण, नारी सौन्दर्य चित्रण, रोमासिक प्रेम-मिलन तथा विछोह आदि का चित्रण करते समय उनकी भावना-प्रवणता उनकी इतिहास-बुद्धि पर आच्छादित हो जाती थी और वे अपने वर्णनो एव विवरणो को सामान्यत यथार्थ से दूर (उसके विपरीत नही) ले जाते थे। उदाहरणत जगलो मे नायक-नायिका का प्रथम मिलन, और प्रथम-दृष्टि जन्य-प्रेम, नायक द्वारा युद्धो एव साहसिक कार्यो मे प्रदर्शित बाहुबल का अतिरजित चित्रण, पात्रो को कठपुतली के समान एक दूसरे से अलग कर देना तथा आवश्यकता पडने पर फिर एकत्रित कर देना आदि कई बार पाठक को यथार्थ से दूर जान पडते हैं।

मध्ययुगीन भारत मे धर्म एक अत्यन्त शक्तिशाली सामाजिक सस्था थी जो समस्त भारत पर अद्वितीय रूप से हावी थी। अधिकाश मनुष्य, वे शासक हो अथवा प्रजा, धर्म से ही कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त करते थे। धर्म का मानो समस्त मध्ययुग पर एकछत्र साम्राज्य हो। भारतीय धार्मिक विश्वासो के अनुसार काल प्रवाह विभिन्न चक्रो द्वारा रूपायित होता था। कर्मचक्र, नियतिचक्र, कालचक्र तथा पुरुषार्थ चक्र ही भारतीय इतिहास धारणा एव कालधारणा के आधारभूत उपकरण हैं। प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासकार तथा ऐतिहासिक रोमासकार भी सामान्यत धर्म एव काल की इस धारणा के प्रति प्रतिबद्ध थे। अधिकाश पात्र ईश्वरीय प्रेरणा से ऐतिहासिक कार्य करने को प्रवृत्त होते हैं, फल की स्थिति मे विजय हो अथवा पराजय, सफलता हाथ लगे या असफलता, सबके लिए एक अलौकिक शक्ति को ही उत्तरदायी ठहराया जाता है। मध्ययुगो के अन्यान्य धार्मिक विश्वासो की अभिव्यक्ति के कारण भी कई बार यथार्थ से दूर होने का आभास प्राप्त होता है।

व्रजनन्दन सहाय का 'लालचीन' भावना व धर्म के मुकाबले यथार्थ का परित्याग करने की प्रवृत्ति का सर्वाधिक सशक्त एव महत्त्वपूर्ण अपवाद है। यह ऐतिहासिक

उपन्यास इतिहासाश्रित ही नही अत्यन्त यथार्थपरक भी है। पडित बलदेव प्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे भावना तथा धर्म को तो अपनाया गया है परन्तु यह दोनो प्रवृत्तियाँ यथार्थ का उल्लघन नही करती। ऐतिहासिक घटनाओ का यथार्थ एव कलापूर्ण चित्रण इस उपन्यास की विशेषता है। यद्यपि पडित किशोरी लाल गोस्वामी के 'रजिया' मे रोमास के अन्यान्य उपकरण एव तत्त्वो को स्थान दिया गया है परन्तु समस्त कथानक मूलत यथार्थ के निकट ही रहता है। इसी प्रकार 'तारा' मे भी तद्युगीन दरबारी षडयन्त्रो, मुसलमान शाहजादियो के यौन-सम्बन्धो, शाहजादो की कामुकता व सत्ता-लोलुपता आदि का यथार्थ परक चित्रण किया गया है।

स्पष्ट है कि भावना व धर्म के लिए यथार्थ का परित्याग मुख्यत ऐतिहासिक रोमासो तथा गौणत ऐतिहासिक उपन्यासो मे किया गया है।

(iii) **अतिप्राकृतिक व अन्धविश्वासो का ग्रहण**—विवेच्य उपन्यासो मे अति प्राकृतिक तत्त्वो एव उपकरणो का प्रयोग भी किया गया है। अन्यान्य प्राकृतिक शक्तियाँ यथा जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य व्रवन आदि के क्रमश वरुण, मरुत, अग्नि, द्यौस, रुद्र और आरण्यानी देवताओ की वैदिककाल मे मान्यता थी।[1] यह देवता मानवीय कार्यों तथा लौकिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया मे रुचि लेते थे तथा उनकी दिशा को प्रभावित करते थे। विशेषत "शिव और पार्वती भारतीय लोककथाओ मे प्राय नायक की सहायता के लिए पहुँच जाते है। देवताओ के वरदान या शापसे भी कथाओ मे गति उत्पन्न होती या उनकी दिशा मुड जाती है।"[2]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे 'भगवान् की इच्छा' अथवा 'खुदा की रजा' अधिकाश ऐतिहासिक, घटनाओ के घटित होने का कारण बनती है। इसी के द्वारा, कथानक के स्वरूप का निश्चयन किया जाता है, पात्रो का विचार प्रवाह इसी के द्वारा नियन्त्रित होता है। कार्य-कारण श्रृखला भी बहुत सीमा तक अति प्राकृतिक शक्तियो द्वारा प्रभावित होती है।

मध्ययुगीन अन्धविश्वासो को भी ऐतिहासिक उपन्यासो एव रोमासो मे ग्रहण किया गया। मध्ययुग का पुन प्रस्तुतिकरण करते समय तद्युगीन अन्धविश्वासो, परम्पराओ एव रूढियो का उपन्यासो मे आ जाना स्वाभाविक भी है। वैसे स्वय लेखक भी उन अन्धविश्वासो मे विश्वास रखते हैं। उदाहरणतः 'पानीपत' तथा 'भीमसिंह' मे विधवा नारी के सती होने पर स्वर्ग की प्राप्ति, युद्ध मे मारे जाने पर स्वर्ग की अप्सराओ द्वारा अभिनन्दन किया जाना आदि, 'रजिया' मे स्वामी ब्रह्मानन्द का योगविद्या की सहायता से रजिया के रगमहल मे पहुँच जाना, विष्णु शर्मा द्वारा पूछे जाने पर ब्रह्मानन्द का योग के सम्बन्ध मे विचार आदि उल्लेखनीय हैं।

1 देखिए—'मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध-काव्यो मे कथानक रूढियाँ'—डॉ० व्रजविलास श्रीवास्तव पृष्ठ 56

2 देखिए—'मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यों में कथानक रूढियाँ', डॉ० व्रजविलास श्रीवास्तव, पृष्ठ 57

(iv) कथा-संयोजन में बर्बरता व कामुकता का समावेश—प्रेमचन्द-पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक रोमांसों के कथा-संयोजन में बर्बरता तथा कामुकता की भावनाओं का समावेश उपलब्ध होता है । इन उपन्यासों में नायकों के शत्रु अथवा प्रतिनायक बर्बर अथवा कामुक होते हैं । इनकी बर्बरता तथा कामुकता का अतिरंजित वर्णन प्रस्तुत किया जाता है । यद्यपि यह 18वीं शताब्दी के रहस्य-पूर्ण गौथिक रोमान्सों की मूल प्रवृत्तियाँ हैं[1] तथापि यह बीसवीं शताब्दी के पहले दो दशकों के ऐतिहासिक उपन्यासों व रोमांसों में समान रूप से उपलब्ध होती हैं ।

किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक-रोमांसों में बर्बरता तथा कामुकता दोनों वृत्तियाँ समान रूप में उपलब्ध होती हैं । 'रज़िया' तथा 'तारा' दोनों उपन्यासों के मुख्य पात्र सामान्यत कामुक वृत्ति के हैं । 'मल्लिका देवी,' 'हृदयहारिणी', 'लवंगलता' 'लखनऊ की कब्र' में प्रतिनायकों की बर्बरता को उभारा गया है । 'लालकुँवर' में कामुकता का अतिरंजित चित्रण किया गया है ।

ब्रजनन्दन सहाय के 'लालचीन' में लालचीन व उसकी पत्नी का गयासुद्दीन के विरुद्ध षडयन्त्र तथा निष्ठुरता-पूर्वक उसकी आँखें निकालना बर्बरता की प्रवृत्ति का उत्तम उदाहरण है ।

सामान्यत अधिकांश विवेच्य उपन्यासों में प्रतिनायक के माध्यम से बर्बरता तथा कामुकता की वृत्तियों का कथानक में संयोजन किया गया है ।

(ग) ऐतिहासिक उपन्यास : गंभीरता और विश्लेषण तथा ऐतिहासिक रोमांस (रहस्य और रोमांच)

ऐतिहासिक सामग्री के विश्लेषण की इस प्रक्रिया में अतीत में मनुष्यों द्वारा किए गए कार्यों, ऐतिहासिक घटनाओं के घटित होने के कारणों, कारण-परिणाम शृंखला, इतिहास-प्रवाह की बुद्धिगम्यता, तथा उपन्यास में वर्णित युग की सामाजिक धार्मिक एवं राजनीतिक मान्यताएँ, विश्वास, परम्पराएँ व रूढ़ियाँ आदि पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाता है । ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत शोध से प्राप्त परिणामों को कलात्मक ढंग से उपन्यासों में चित्रित करते हैं । डा० सतीश कुमार मेघ के मतानुसार 'ऐतिहासिक उपन्यास मानव के सामान्य जीवन की [illegible] और समाज के अनुभवों को चित्रित करता है । जहाँ वर्तमान को दूर कर अतीत में पहुँचा जाता है और पुन: प्रच्छन्न रूप से काल-प्रवाह द्वारा वर्तमान की [illegible] पर लौटा जाता है जहाँ अतीत वर्तमान में [illegible] है । भविष्य का निर्देश है । [illegible] यह दूरी को निकटता में परिणत कर देता है ।'[2]

ऐतिहासिक उपन्यास में अतीत को वर्तमान के [illegible] निकट [illegible] किया जाता है । ऐतिहासिक रोमांस में इसके विपरीत अतीत को [illegible]

1. हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास, पृष्ठ 111
2. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृष्ठ 341

उठाया जाता है।[1] रहस्यमय वातावरण निर्माण तथा रोमाचक घटनाओ के घनीभूत विवरणो से अतीत को वर्तमान के ठीक विपरीत रूप मे उभारा जाता है। जिसके कारण मनुष्य अतीत के रहस्यो मे कुछ समय तक खो जाना चाहते हैं। हीरोइक रोमांस, गोथिक रोमास तथा पिक्चरेस्क आदि से ही यह प्रवृत्तियाँ ऐतिहासिक रोमांसो मे आई हैं। डेविड डेचिस के मतानुसार, अतीत[2] का अनुचित लाभ उठाना अथवा अतीत का वर्तमान के नितान्त विपरीत रूप मे पुन प्रस्तुत करना कम महत्त्वपूर्ण है। यह इतिहास उपचार की सर्वाधिक अगभीर पद्धति है।

किशोरीलाल गोस्वामी का उपन्यास "लखनऊ की कब्र" इसका उत्तम उदाहरण है।

(घ) ऐतिहासिक उपन्यास : शास्त्रीय परम्परा ऐतिहासिक रोमांस शास्त्रीयता विरोध

सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यास आशिक रूप से शास्त्रीय[3] परम्परा का अनुसरण करते हैं तथा ऐतिहासिक रोमास शास्त्रीयता के विरोध मे भावुकता, रहस्य तथा वीरपूजा की भावना द्वारा अनुप्राणित होते हैं। भारतीय आर्य विश्वास, विचारधाराएँ, हिन्दू धर्म के प्रति गहन प्रतिबद्धता, हिन्दू राष्ट्रीयता का धर्माश्रित-स्वरूप, आर्यावर्त (समस्त भारत व रूस और शाम) पर एक छत्र हिन्दू साम्राज्य की स्थापना और इस ध्येय को पूरा करने के लिए एक महान् एव शक्तिशाली सेना का गठन एव प्रयाण आदि विषय सीधे महाकाव्यो से अथवा आशिक रूप मे रासो काव्यो की शास्त्रीय परम्परा से ही ग्रहण किए गए हैं। बलदेव प्रसाद मिश्र के "पानीपत" मे शास्त्रीयता की इस परम्परा का अत्युत्तम अनुकरण उपलब्ध होता है। पडित किशोरीलाल गोस्वामी के 'रजिया बेगम' मे स्वामी ब्रह्मानन्द द्वारा राजस्थान के राजाओ को एकता के सूत्र मे बांध कर भारत मे हिन्दू-राज्य की स्थापना का प्रयास लेखक की इसी शास्त्रीय वृत्ति का उदाहरण है। जयरामदास गुप्त के "कश्मीर पतन" मे महाराजा रणजीतसिंह की सेनाओ द्वारा काश्मीरी ब्राह्मणो को मुसलमान शासक जुब्बार खाँ के अत्याचारो से त्राण दिलाना तथा सिख सेनाओ की विजय भी शास्त्रीयता के इसी क्रम मे आती है। इसके अतिरिक्त गोस्वामी जी के "तारा",

1 स्काट की उपलब्धियों पर टिप्पणी करते हुए डेविस डेचिस ने लिखा था--
"The work by which he must be judged for it is only fair to judge a writer by his most characteristic achievement avoids the picturesque and seeks rather to bring the past nearer than to exploit it Literary Essays, page 90

2 वही, पेज 90

3 "Classical-of the highest class or rank, esp in literature and music Originally and chiefly used of the best Greek and Roman writers (as opposed to romantic) like in style to the authors of Greece and Rome or the old masters in music"—Chambers s Twentieth Century Dictionary, Page 195

गंगाप्रसाद गुप्त के "हम्मीर", हरि चरण सिंह चौहान के "वीर नारायण" रामजीवन नागर के "बारहवी सदी का वीर जगदेव परमार", जयन्ती प्रसाद उपाध्याय के "पृथ्वीराज चौहान", हरिदास माणिक व कालिदास माणिक के "महाराणा प्रतापसिंह की वीरता", "राणा सागा और बाबर", "मेवाड का उद्धारकर्ता", ठाकुर बलभद्र सिंह के "सौन्दर्य कुसुम वा महाराष्ट्र का उदय" और "सौन्दर्य प्रभा वा अद्भुत अगूठी," सिद्धनाथ सिंह के "प्रण पालन", अखौरी कृष्ण प्रकाश के 'वीर चूडामणि" तथा मिश्रबन्धुओ के "वीरमणि" मे महाकाव्यो तथा रासो काव्यो की शास्त्रीय परम्पराओं का आंशिक रूप से निरूपण किया गया है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे शास्त्रीय परम्परा का स्वरूप शास्त्रीयवाद के सामान्य अर्थ से कुछ भिन्न है। यह शास्त्रीयता लेखको की हिन्दू धर्म मे अतीव निष्ठा तथा इसके प्रति गहरी प्रतिबद्धता से उत्पन्न होती है और योरोपीय इतिहासो तथा टॉड के राजस्थान तथा फार्बस के "रासमाला" आदि मे ऐतिहासिक प्रामाणिकता प्राप्त करती है। अधिकांश उपन्यासकारो की मौलिक जीवन दृष्टि के स्वच्छन्दतावादी होने के कारण शास्त्रीय परम्परा का स्वरूप कही-कही अस्पष्ट अथवा विकृत भी हो गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि शास्त्रीय आदर्श को केन्द्र मे रख कर यहाँ भी विवेच्य उपन्यासकार उपन्यास मे मौलिक एव शाश्वत मानवीय भावनाओ का तानाबाना बुनते हैं, अथवा कई बार शास्त्रीय आदर्शों के साथ-साथ रोमांसिक उपकरणों का भी प्रयोग करते है। इस सम्बन्ध मे आचार्य नन्ददुलारे वाजपेई का मत उल्लेखनीय है, शास्त्रीयवाद की "तृतीय श्रेणी वह है जो नवीन जीवन और नवीन प्रेरणाओ को पूरी तरह आत्मसात् करती हुई प्राचीन ग्रीक कला का आदर्श अपने सामने रखती है। इस श्रेणी के विचारकों का कहना था कि आधुनिक कविता काव्य और ग्रीक कला अनुकरण का आधार नहीं, वह नवीन कवियों के लिए एक उपयोगी दिशा इगित या आलोचक स्तम्भ का काम कर सकती है।"[1]

ऐतिहासिक रोमांसों मे शास्त्रीयता-विरोध—ऐतिहासिक रोमांस का रूप गौथिक रोमांस, पिकरेस्क और हीरोइक रोमांस आदि अन्य रोमांस प्रधान कथारूपो मे हुआ है। असाधारण, अतिमानवीय, अतिप्राकृतिक तथा अलौकिक तत्त्वों एव उपकरणों के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे प्रयुक्त किए जाने के फलस्वरूप ऐतिहासिक रोमांसो मे शास्त्रीयवाद की सरलता, महत्ता, गरिमा, स्पष्टता वस्तुनिष्ठता सुनिश्चितता तथा रचना की पूर्णता[2] आदि विशेषताओं का अभाव हो जाता है।

ऐतिहासिक रोमांसों मे शास्त्रीयता विरोध के रूप मे भावुकता तथा स्वच्छन्दतावादी जीवनदृष्टि का निरूपण किया जाता है। "कला की [illegible]

1 आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी आधुनिक साहित्य 2013 वि०, पृष्ठ 442.
2 The Encyclopedia of Americana 1945

भावो एव माध्यम मे सामजस्य की कमी देखने को नही मिलती और न कभी ऐसी अभिव्यक्ति का जो व्यक्त न की जा सके, सकेत या प्रस्ताव मिलता है अर्थात् उसकी अभिव्यक्ति विषय की पूर्ण स्पष्टता तथा रूपात्मकता होती है। परिणामस्वरूप कलाकार के व्यक्तित्व का प्रदर्शन नही होता, वह अपनी रचना मे खो जाता है, जो कि व्यक्ति निरपेक्ष होती है। वह हमे विषय के प्रति अपना दृष्टिकोण अपना भावात्मक सघर्ष तथा जीवन की झाँकी नही देता। दूसरी ओर रोमाटिक कलाकार स्वय को रचना मे सम्मिलित करता है अथात् अपने व्यक्तित्व को शास्त्रीय कलाकार की भाँति रचना मे तिरोहित नही करता। वह केवल सौन्दर्य की निष्पक्ष भावना ही नही, जिसे वह व्यक्त करना चाहता है, अपितु उसका स्वय का व्यक्तित्व, कामनाएँ, आशाएँ तथा आदर्श ऐसी आत्मा को जो असीम की ओर प्रेरित रहने के कारण स्वय को कभी भी सीमित एव वास्तुनिष्ठ माध्यम द्वारा व्यक्त नही कर सकती, व्यक्त करती है।[1]

रहस्य-रोमाच तथा वीरपूजा भी शास्त्रीय परम्परा से भिन्न प्रकृति की रोमासिक प्रवृत्ति है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे रहस्य-रोमाच की प्रवृत्ति का वहुलता से निरूपण किया गया है। तिलिस्म के माध्यम से किशोरी लाल गोस्वामी ने 'लखनऊ की कब्र' मे रहस्य-रोमाच का उत्तम वातावरण प्रस्तुत किया है। उनके अन्य ऐतिहासिक रोमासो 'लालकु वर,' 'मल्लिकादेवी,' 'गुलवहार,' 'कनक कुसुम' आदि मे रहस्यमय एव रोमाचक घटनाओ का अच्छा वर्णन किया गया है। जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान' मे भी लखनऊ के नवाबी महलो के तिलिस्म-परक चित्रण द्वारा इन प्रवृत्तियो को उभारा गया है।

(ड) ऐ० उ० : मूल्यों की बौद्धिक परम्परा ऐ० रो० बौद्धिक मूल्यों के विरोध मे भावावेश

साहित्य के क्षेत्र मे मूल्यो की परिभाषा लागू नही होती। इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र मे मूल्यो की स्थिति एकदम बदल जाती है। इन विधाओ मे मानवीय अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड का पुन निर्माण किया जाता है। अतीत के उस युग विशेष के लोगो के अपने कुछ मूल्य होते है, जो उनकी सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक एव भौगोलिक स्थितियो द्वारा अपना स्वरूप प्राप्त करते हैं। विशेषत मध्ययुगो के मूल्य धर्म, नैतिकता तथा अलौकिक-सत्ता मे दृढ विश्वास पर आधृत थे। इन्ही मूल्यो अथवा प्रतिमानो द्वारा तत्युगीन मानव-समाज की वैचारिक, आध्यात्मिक, साहित्यिक एव शैक्षणिक पद्धतियाँ नियोजित होती थी।

मध्ययुगो की पुन व्याख्या की स्थिति मे आधुनिक तथा मध्ययुगीन मूल्यो की टकराहट की स्थिति उभरती है। यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यासकार अथवा

1 The Encyclopedia of Americana, 1945

इतिहासकार अतीत के मूल्यो की पूर्णत अवहेलना नहीं कर सकते, तथापि सभी ऐतिहासिक तथ्य लेखक के युग के प्रतिमानो द्वारा प्रभावित होकर उनकी व्याख्यात्मक रुचि के फलस्वरूप ही[1] कृति मे स्थान पाते हैं। परन्तु कई बार अध्ययन के युग के मूल्य ही कृति के स्वरूप को अधिक प्रभावित करते हैं,[2] क्योंकि आधुनिक मूल्यों के आधार पर अतीत के मनुष्यो की आलोचना करनी अयुक्तियुक्त होगी।

अच्छा और बुरा की भावना इतिहास की सीमारेखा मे नही आती। गणित और तर्क के फार्मूले भौतिक विज्ञानो में जो कार्य करते हैं, वही यह भाव ऐतिहासिक नैतिकता के अध्ययन में करते हैं। यह विचारों के अनिवार्य स्तर (डिग्रियाँ) हैं, परन्तु जब तक उन्हें निश्चित अर्थ न दिया जाए, उन्हें कहीं लागू नहीं किया जा सकता।[3] ऐतिहासिक उपन्यासो में, हमारे मतानुसार, मूलत अध्ययन के युग के मूल्यो का ही प्रतिपादन किया जाता है। अप्रत्यक्ष रूप से लेखक के युग के मूल्य एक सीमा तक उनमे स्थान तो पा सकते हैं। जार्ज ल्यूकाक्स ने इसकी भर्त्सना की है।[4] ऐतिहासिक उपन्यासो मे, इस प्रकार अतीत युगीन तथा आधुनिक मूल्यों के समाहार द्वारा उत्पन्न एक बौद्धिक परम्परा का पालन किया जाता है।

'लालचीन', 'पानीपत', 'रजिया बेगम' तथा तारा' इसके उत्तम उदाहरण हैं। 'लालचीन' मे मानवीय स्वतन्त्रता के आधुनिक व गुलामी के मध्ययुगीन मूल्य, 'पानीपत' मे भारत की स्वतन्त्रता का लेखक युगीन विचार एव नारियों के सम्बन्ध मे आधुनिक धारणा, तथा स्वामीभक्ति, धर्मनिष्ठा और सतीप्रथा के प्राचीन मूल्य, 'रजिया' मे स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा राजस्थान के राजाओं के एकीकरण से भारत मे हिन्दू राज्य की स्थापना का प्रयास आधुनिक स्वातन्त्र्य आन्दोलनों का अतीत मे प्रतिबिम्ब है, तो गुलशन मोमिन व जोहरा का रजिया के प्रति व्यवहार मध्ययुगीन परम्पराओं का परिणाम है, इसी प्रकार 'तारा' मे जहाँनारा तथा तारा के मुख से प्राचीन भारतीय धर्म-ग्रन्थों की स्तुति लेखक के युग के धार्मिक पुनर्जागरण से

1. E H Carr, "What is History" All historical facts come to us as a result of interpretative choices by historians influenced by the standards of their age.
2. Issiah Berlin " Theories of History" page 327 " We will not condemn the middle ages simply because they fell short of the moral or intellectual standard of the revolte intelligentia of Paris in eighteenth century or denounce these later because in their turn they earned the disapproval of moral bigot in England in the nineteenth, or in America in the twentieth century "
3. See-" What is History" E H Carr Page 84
4. George Lukacs " The historical Novel " P 19 "The so called historical novels of the seventeenth century Scudery, Calprenede etc are historical not only as regards their purely external choice of theme and costume, but not only the psychology of the characters but the manners depicted are entirely those of writers' own day."

प्रभाव-स्वरूप है, तो मुगल शाहजादे शहजादियो की विलास-क्रीडाएँ व षड्यन्त्र तद्युगीन परिस्थितियो के फलस्वरूप उत्पन्न हुए है।

इस प्रकार, ऐतिहासिक उपन्यासो मे लेखक युगीन तथा अतीत युगीन मूल्यो का एक मिश्रित स्वरूप अभिव्यक्ति प्राप्त करता है।

ऐतिहासिक रोमाँसो मे बौद्धिक मूल्यो का विरोध, मूलत रोमासिक प्रवृत्तियो की अभिव्यक्ति के कारण किया जाता है। व्यक्ति-चेतना परक होने के कारण ऐतिहासिक रोमासो मे स्वच्छन्द मानवीय कामनाओ, इच्छाओ, भावनाओ, भावावेगो तथा भावावेश को मुख्य स्थान प्राप्त रहता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे मानवीय आवेगो तथा सवेगो के साथ-साथ तिलिस्म का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। रहस्य-रोमास परक इन प्रवृत्तियो का प्राधान्य होने के कारण मूल्यो का निर्वाह करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

(च) ऐ० उ० सामयिक चेतना का बोध :
ऐ० रो० समसामयिकता के विरोध मे मध्ययुगो मे पलायन

ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने युग की प्रमुख इतिहास-चेतना एव इतिहास-धारणा के अनुसार मानवीय अतीत का गम्भीरता पूर्ण विश्लेषण करते हैं, इसलिए उनकी अतीत की व्याख्या मे उनका समसामयिक बोध ही मूलत एव मुख्यतः अधिक महत्त्वपूर्ण रहता है। इस प्रकार वे वर्तमान की दृष्टि से अतीत पर दृष्टिपात करते है। इसी कारण राऊस ने कहा था कि "सारा इतिहास समसामयिक है।"[1] उनके मतानुसार अतीत को केवल उन्ही प्रमाणो द्वारा जान सकते है, जो वर्तमान मे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत की जानकारी प्राप्त करने के लिए अपने युग की मान्य ऐतिहासिक सामग्री तथा उपलब्ध पुरातात्विक सामग्री का प्रयोग करते हैं, इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास समसामयिक चेतना के बोध को लेकर चलते है, यह अतीत को वर्तमान के निकट लाने की प्रक्रिया है।

ऐतिहासिक रोमासो मे चूँकि एक स्वप्निल-लोक की कल्पना होती है, यह लोक अन्यान्य रोमासिक तत्त्वो एव उपकरणो के योग से बनता है, इस प्रकार का विचित्र वातावरण एव रुचियाँ समसामयिक चेतना पर आधारित नही हो सकती। इस सम्बन्ध मे डा० कमल कुमारी जौहरी का मत उल्लेखनीय है—'इन रोमासो मे इतिहास का प्रयोग केवल भ्रम उत्पन्न करने के लिए किया जाता था क्योकि अपनी उर्वर कल्पना और अपनी विचित्र रुचियो के कारण वर्तमान दैनिक जीवन से भिन्न जिस अद्‌भुत, अलौकिक, असाधारण, सौन्दर्य, भय, आतक, रहस्य तथा वीरता का अकन लेखक करना चाहता था उसकी प्रतीति वह पाठक को वर्तमान युग मे नही करा सकता था किन्तु शताब्दियो पूर्व के जीवन मे यदि वह उनको घटित करना,

1 "Use of History" by A L Rouse, page 44

जो आज की जनता के चर्म चक्षुओ के सामने नही है, तो आज जनता सरलता से, उन पर विश्वास कर, उनके किसी युग मे वास्तविक होने का आनन्द ले सकती थी।'[1]

इस प्रकार ऐतिहासिक रोमांसकार समसामयिकता का सामना न कर पाने के कारण मध्ययुगो मे पलायन करते हैं।

(छ) ऐतिहासिक रोमासो मे मर्यादावादी नैतिकता का विरोध

सामान्यत ऐतिहासिक रोमासो के नायक तथा नायिका का प्रेम प्रथम-दृष्टि-जन्य होता है। मानवीय मन की स्वच्छन्दता-पूर्ण कामनाओ, इच्छाओ तथा आकाक्षाओ को ऐतिहासिक रोमासो मे अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। रोमासिक प्रेम ही इन कथारूपो के स्वरूप को रूपायित करता है। इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासों मे मर्यादावादी नैतिकता का विरोध स्वाभाविक मानवीय प्रेम के स्तर पर किया जाता है।

मर्यादावादी नैतिकता का विरोध ऐतिहासिक उपन्यासो मे एक नितान्त भिन्न धरातल पर नैतिकता के विरोध मे शारीरिक, कामुकता-पूर्ण प्रेम तथा अश्लील यौन सम्बन्धो के वर्णन द्वारा किया जाता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो में से किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदयहारिणी', 'लवगलता', 'मल्लिकादेवी' आदि, गगाप्रसाद गुप्त के 'कुँवरसिंह सेनापति', 'वीरजयमल वा कृष्णकान्ता,' 'नूरजहाँ', जयरामदास गुप्त के 'किशोरी वा वीरबाला', 'प्रभात कुमारी', 'रानीपन्ना', 'कलावती', जयराम लाल रस्तोगी के 'ताजमहल या फतहपुरी बेगम' आदि मे इसी प्रकार के रोमांसिक प्रेम के लिए नैतिकता का विरोध किया गया है।

गोस्वामी जी के 'तारा' व 'रजिया' आदि ऐतिहासिक उपन्यासो मे मर्यादावादी नैतिकता का विरोध कामुकता पूर्ण यौन सम्बन्धो के चित्रण द्वारा किया गया है। 'तारा' मे जहाँनारा, रोशनारा आदि शाहजादियो का शाहजादो तथा गुलामो से गुप्त यौन सम्बन्ध तथा रजिया का याकूब पर और उसकी बाँदी जोहरा का अयूब पर आसक्त होना इसी के उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त गोस्वामी जी के 'लखनऊ की कब्र' तथा 'लालकुँवर' आदि तथा जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअलीशाह' आदि ऐतिहासिक रोमासो मे मर्यादावादी नैतिकता का विरोध नवाबो की अतिविलासिता, वेश्यावृत्ति या कुटनीकर्म के विस्तृत विवेचन के माध्यम से किया गया है।

(ii) ऐ० रो० में अतिप्राकृतिक सशक्तता—ऐतिहासिक रोमासो मे पात्र अतिप्राकृतिक रूप से सशक्त प्रदर्शित किए जाते हैं। मध्ययुगीन 'नाइट्स' के समान वे कई बार नायिका अथवा किसी अन्य स्त्री का उद्धार करने के लिए दर्जनो व्यक्तियो

1 हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास पृष्ठ 119

का अकेले ही सामना करते है अथवा युद्ध मे इसी प्रकार की असाधारण वीरता का प्रदर्शन करते हैं। यह तत्त्व रोमासो तथा बैलेड गीतो के माध्यम से ऐतिहासिक रोमासों मे आया है।

विवेच्य उपन्यासो मे गोस्वामी जी के 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे पेशवा बाजीराव द्वारा केवल पच्चीस सवारो के साथ निजाम के दो हजार सिपाहियो से जूझना इसका उत्तम उदाहरण है।

(iii) ऐ० रो० मे उग्रता और अतिशयता पर जोर—रोमासो मे नायक, सेनापति, मुखिया अथवा सामान्य पात्र परिस्थितियो के प्रति उग्र रवैया अपनाते हैं। मानवीय चरित्र के उदात्त एव उद्धत दो छोरो के दूरतम् बिन्दुओ की दूरी को और अधिक स्पष्ट रूप से उभारा जाता है। अतिमानवीय एव अतिदानवीय प्रवृत्तियो की अतिशयता पर जोर दिया जाता है। इस उपकरण को उभारने के लिए युद्धो की भयावहता का अतिरजित चित्रण किया जाता है। अतिमानवीय तथा अतिदानवीय प्रवृत्तियो के नायक और खलनायक की प्रबल सघर्पमय टकराहट का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करके रोमांच एव त्रास की भावनाएँ उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे से किशोरीलाल गोस्वामी के "हृदय हारिणी" व "लवगलता" मे नवाब सिराजुद्दौला के क्लाइव तथा नरेन्द्र से युद्धो का वर्णन, "कनक कुसुम" मे पेशवा बाजीराव व निजाम के युद्ध की भयावहता, आदि उल्लेखनीय हैं। सामान्यत मुसलमान शासको के व्यभिचार, यौनाचार एव जुल्मो के प्रति हिन्दू राजाओ की प्रतिक्रिया अत्यन्त उग्र एव व्यक्तिपरक जीवनदृष्टि द्वारा रूपायित हुई है।

(ज) ऐ० उ० तथा ऐ० रो० मे कुल व जाति का अभिमान

मध्ययुगीन कथानको मे जिस सामन्ती समाज का चित्रण किया जाता है, वह सामान्यत पौराणिक कथाओ पर आश्रित अन्यान्य धर्मों एव जातियो पर आधारित था। विशेपत ऐतिहासिक रोमासो मे सामन्ती समाज की कुलाभिमान एव जातीय-दर्प की प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से उभर कर आई है। कुलाभिमान अधिकाशत नायको तथा मुख्य पात्रों के कार्यों एव गतिविधियो को प्रभावित करता है। जातीय दर्प कई बार अनिवार्य युद्धो का कारण बनता है। सामान्यत नायकादि पात्र अग्निवश, सूर्यवश, चन्द्रवश, परमार वश, बुन्देले, प्रतिहार और यादव आदि जातियों से सबधित होते हैं, ये जातियाँ पौराणिक कथाओ, मिथको एव निजन्धरो से मध्ययुगीन सामन्ती समाज मे आई थी। यही कारण है कि पात्र जातीय चेतना (Caste consciousness) के प्रति अत्यन्त सजग है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के साथ-साथ ऐतिहासिक उपन्यासो मे कुलाभिमान तथा जातीय दर्प की मध्य युगीन सामन्ती धारणा का सजीव चित्रण किया गया है।

(क) ऐ० उपन्यासो मे लोकतत्त्वो का क्रियात्मक स्वरूप

मध्ययुगीन लोक-कथाएँ, लोक-प्रथाएँ, लोकगीत, लोक-भाषा, लोकभूमि, अर्थात् जन्मभूमि प्रेम आदि लोकतत्त्व ऐतिहासिक उपन्यासो मे अपना स्वरूप कुछ सीमा तक बदल लेते है। अपेक्षाकृत अधिक इतिहास-परक एव तथ्यपरक होने के कारण ऐतिहासिक उपन्यास मे लोकतत्त्व एक परिवर्तित रूप मे ही आते हैं।

मध्ययुगीन अधविश्वास अथवा जादूटोना आदि ऐतिहासिक उपन्यासो में सामान्य जनजीवन तथा राजाओ की राज्यसभाओ की परम्पराओ के रूप मे आते हैं। ऐतिहासिक रोमासो के अतिरोमाचक कार्यों एव तीव्र प्रेम भावना ऐतिहासिक उपन्यासो मे पौराणिक आदर्श, धार्मिक चरित्र, वर्तमान बोध अथवा व्यक्तिगत शील का रूप ले लेते हैं।

इसी प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे वर्णित प्रबल सघर्ष द्वारा उत्पन्न भय और त्रास की भावनाएँ ऐतिहासिक उपन्यासो मे दुर्धर्ष प्रकृति युद्ध, ऐतिहासिक आततायी एव जनसघर्ष के माध्यम से उभारी जाती है।[1]

ऐतिहासिक उपन्यासो मे लोकतत्त्वो का प्रयोग अतीत को वर्तमान मे दूर कर अतिरंजित वर्णन करने के स्थान पर मध्य युगो की सामती व्यवस्था का सामाजिक विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। मु शी देवीप्रसाद का "रूठीरानी" इसका उत्तम उदाहरण है।

(ii) प्रेरणा के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास रूपो के अभ्युदय के लिए अपेक्षित प्रेरणाएँ—मनुष्यो की अतीत के प्रति एक भावावेगात्मक रुचि होती है। अपने परिवार, जाति, प्रान्त, देश अथवा राष्ट्र के अतीत के प्रति एक अदम्य जिज्ञासा की भावना द्वारा प्रेरित होकर मनुष्य अतीत का अध्ययन एव विश्लेषण करने के लिए प्रवृत्त होता है। मानवीय अतीत के विभिन्न अध्ययन-क्षेत्रो मे, ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास अतीत के कलात्मक एव भावावेगात्मक पुनर्निर्माण एव उसकी पुनर्व्याख्या करने वाले साहित्य रूप हैं। अतीत के प्रति भावावेग के साथ-साथ लेखक के युग की अन्यान्य सामाजिक, धार्मिक एव राजनैतिक विचारधाराएँ तथा समस्याएँ भी ऐतिहासिक उपन्यास के माध्यम से अतीत की पुन व्याख्या की प्रबल प्रेरक शक्तिया होती हैं।

कई बार किसी विशिष्ट ऐतिहासिक कालखण्ड, महान् व्यक्ति अथवा घटना से असाधारण रूप से प्रभावित[2] होकर भी मनस्वी उपन्यासकार ऐतिहासिक उपन्यास की रचना करने को प्रवृत्त हो सकता है। इस प्रकार की प्रेरणा एक विशिष्ट ऐतिहासिक स्थिति की "इतिहास-रस" से परिपूर्ण औपन्यासिक अभिव्यक्ति के लिए अत्यन्त उपयुक्त होगी।

1 नागरी प्रचारिणी पत्रिका डॉ० रमेशकुन्तल मेघ, पेज 343
2 ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास, गोपीनाथ तिवारी, पेज 61
ऐतिहासिक उपन्यास : डॉ० गोविन्द जी सपादित।

मानवीय अतीत का लेखा-जोखा रखना इतिहासकारों का कर्त्तव्य है, प्रयत्नशील होने पर भी वे इतिहास को नितान्त निरपेक्ष एवं निर्वैयक्तिक स्वरूप प्रदान नहीं कर पाते। सामान्यतः भारतीय अतीत के मुस्लिम एवं अंग्रेज[1] इतिहासकार इस देश, राष्ट्र, धर्म एवं संस्कृति का इतिहास लिखते समय उसके साथ न्याय नहीं कर पाए। विवेच्य उपन्यासकार मूलतः एवं मुख्यतः मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा किए गए पक्षपात के प्रति सजग थे। उनके अयुक्तियुक्त इतिहास-विचार तथा हिन्दुओं के प्रति किए गए अन्याय का जमकर विरोध किया। पंडित किशोरीलाल गोस्वामी के मतानुसार—

"जिन महमूद गज़नवी, अलाउद्दीन, औरंगजेब, नादिर सरीखे यवनों ने भारतवर्ष के धर्म, धर्मकीर्ति, मान, मर्यादा, सतीत्व, वीरता आदि देवोपम गुणों के नाश करने में कोई बात उठा नहीं रखी, जिन अकबर सरीखे मीठी नीति वालों ने हिन्दुस्तान के जातीय गौरव के नाश कर टालने ही पर कमर बाँधी, तो बतलाइए कि इन्हीं अद्भुत प्रतिभा-सम्पन्न मुसलमानों के आश्रित इतिहास लिखने वाले मियाँ लोगों के लिखे इतिहास की सत्यता पर पूर्ण विश्वास क्यों कर किया जाए? आर्यों के "धीरता, वीरता, गंभीरता, दृढ़ता, साधुता, सत्यता, क्षमा, दया, तितिक्षा, दाक्षिण्य, कीर्ति, धर्म, सतीत्व आदि अलौकिक गुणों को मटियामेट कर डाला तथा अपने दुष्टता, कुटिलता, क्रूरता, धूर्तता, शठता, जालसाजी, चपलता, जुल्म, अत्याचार, पापाचार, अमानुषी लीला, कायरता, ज्यादती, अपमान, बेइज्जती, दुराग्रह, कठोरता आदि दोषों का या तो वर्णन ही नहीं किया या फिर उसे छिपाया।"[2]

मुस्लिम इतिहासकारों द्वारा भारतीय समाज, संस्कृति एवं धर्म के इतिहास-लेखन में किए गए इस पक्षपात ने अधिकांश विवेच्य उपन्यासकारों को उपन्यास की साहित्यिक विधा के माध्यम से इतिहास की पुनर्व्याख्या एवं पुनर्निर्माण के लिए प्रेरित किया।

क्रोचे ने कहा था कि 'इतिहास को निरन्तर पुनः लिखा जाता है' (History is perpetually re-written)—इस उक्ति के अनुसार प्रत्येक युग के मनस्वी इतिहासकार तथा साहित्यकार अपने युग की आवश्यकताओं के अनुसार इतिहास-लेखन तथा अतीत के पुनर्निर्माण के लिए प्रवृत्त होते हैं। विवेच्य उपन्यासकारों का युग हिन्दू धर्म, समाज एवं संस्कृति के पुनरुत्थान का युग था, युग की इस मुख्य

1 वृन्दावनलाल वर्मा ने—"ऐतिहासिक उपन्यास और मेरा दृष्टिकोण" निबंध में अंग्रेज इतिहासकारों द्वारा भारतीय इतिहास-रचना में प्रयुक्त प्रतिभारतीय रवैये की ओर संकेत किया है।
"सन्देह तो पहले ही से था, अब विश्वास हो गया कि भारत का इतिहास लिखने वाले अंग्रेज लेखकों ने शोध के परिश्रम और विद्वत्ता के प्रवाह के साथ इसको न्याय नहीं दिया।" देखिए—"ऐतिहासिक उपन्यास" डॉ. गोविन्द जी द्वारा संपादित, पेज 25

2 "तारा" निवेदन, पेज "ग"।

विचारधारा तथा जीवन-दर्शन के प्रभाव से उन्होंने भारतीय अतीत के हिन्दू-गौरव के कालखण्डों को अपने उपन्यासों के कथानक का आधार बनाया। पुनरुत्थानवादी हिन्दू दृष्टिकोण एक मुख्य एवं मौलिक प्रेरक शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

सनातन-हिन्दू धर्मपरक जातीय गौरव तथा हिन्दू-राष्ट्रीयता की पुन-स्थापना की आकांक्षा प्रबल प्रेरणाओं के रूप में विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना-प्रक्रिया को प्रभावित करती है। पंडित बलदेवप्रसाद मिश्र के 'पानीपत" में मूलतः हिन्दू धर्म एवं हिन्दू राष्ट्रीयता की पुन स्थापना के बालाजी बाजीराव पेशवा के महत्त्वाकांक्षी कार्यों को ही "थीम" के रूप में वर्णित किया गया है। पं० किशोरीलाल गोस्वामी के "तारा व क्षत्रकुल कमलिनी" में जातीय गौरव के लिए अमरसिंह राठौर का बलिदान क्षत्रियों के जातीय गौरव की गौरव-गाथा है। जयरामदास गुप्त के "काश्मीर पतन", गंगाप्रसाद गुप्त के 'हम्मीर', रामजीवन नागर के "जगदेव परमार', जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के "पृथ्वीराज चौहान', माणिक बन्धुओं के "महाराणा प्रतापसिंह की वीरता" एवं "मेवाड़ का उद्धारकर्ता और ठाकुर बलभद्रसिंह के "सौंदर्य कुसुम वा महाराष्ट्र का उदय" तथा "सौन्दर्य प्रभा वा अद्भुत अंगूठी" आदि ऐतिहासिक उपन्यासों के प्रणयन की मुख्य प्रेरणा सनातन हिन्दू धर्म तथा हिन्दू राष्ट्रीयता की पुन स्थापना के इतिहास-विचार से ही प्राप्त की गई है।

भारतीय इतिहास के इन विशिष्ट कालखण्डों को अपने उपन्यासों का आधार बनाने तथा उनमें हिन्दू धर्म, जातीय गौरव तथा हिन्दू-राष्ट्रीयता के सिद्धान्तों के प्रतिपादन की पृष्ठभूमि में आदर्श-हिन्दू-राष्ट्र की भारत में पुन स्थापना की महत्त्वाकांक्षा क्रियाशील थी और यही आकांक्षा उनकी रचना के लिए एक प्रेरणा थी। प्राचीन भारतीय धर्म-ग्रन्थों में वर्णित नैतिक-सिद्धान्तों एवं आदर्शों की पुन व्याख्या तथा पुन-प्रस्तुतीकरण विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है।

स्रोत—इतिहासकार के समान ऐतिहासिक उपन्यासकार को भी मानवीय अतीत का अध्ययन करते समय अन्यान्य इतिहास पुस्तकों, विदेशी यात्रा-पुस्तकों संस्मरणों, पुरातात्त्विक खोजों व सिक्कों आदि का गहन अध्ययन करना पड़ता है। इस कार्य की कठिनता एवं जटिलता की ओर अनेक विद्वानों ने इंगित किया है।[1]

विशिष्ट अतीत के सम्बन्ध में उपलब्ध आधुनिकतम् सामग्री का इतिहासकार को पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए। ऐतिहासिक सामग्री का हलके दिल से अध्ययन करना लाभदायक नहीं है, इससे लेखक "आधा तीतर आधा बटेर पैदा करने में

1. राहुल सांकृत्यायन के मतानुसार, ऐतिहासिक उपन्यास के लिए किसी यूनिवर्सिटी के लिए लिखी जाने वाली अच्छी थीसिस से इस सामग्री-संचयन में कम मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। पकी-पकाई सामग्री आपके लिए तैयार शायद ही मिले।
• ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप', "ऐतिहासिक उपन्यास," पृष्ठ 22

समर्थ होगा जोकि और भी उपहासास्पद बात होगी। ऐतिहासिक कथाकार को हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि हमारी एक-एक पक्ति पर एक बडा निष्ठुर मर्मज्ञ समूह पैनी दृष्टि से देख रहा है। हमारी जरा भी गलती वह बरदाश्त नही करेगा, वह हमारी भारी भद्द कराएगा।"[1]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार, "उपन्यास का लेखक वास्तविकता की उपेक्षा नही कर सकता। वह अतीत का चित्रण करते समय भी पुरातत्त्व, मानव तत्त्व और मनोविज्ञान आदि की आधुनिकतम् प्रगति से अनभिज्ञ रह कर थोथी कल्पना का आश्रय ले उपहासास्पद बन जाता है। . . ऐतिहासिक लेखक का वक्तव्य, इतिहास की उत्तम जानकारी तथा उस युग की प्रामाणिक पुस्तको, मुद्राओ और शिलालेखो के आधार पर जाँची हुई होनी चाहिए।"[2]

यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यास, साहित्य की एक विधा है, परन्तु इतिहास के विविध उपकरण उपन्यास के कथा-तन्तुओ को बहुत दूर तक प्रभावित करते है। विभिन्न स्रोत, जिनके माध्यम से उपन्यासकार को मानवीय अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड के सम्बन्ध मे आवश्यक जानकारी प्राप्त होती है, के सम्बन्ध मे विवेच्य उपन्यासकारो ने उपन्यास के आरम्भ मे सकेत दिए है।

(1) **विदेशी इतिहासकारो की कृतियाँ**—मध्ययुगीन राजस्थान अथवा राजपूताना के क्षत्रीय राणा तथा दिल्ली के मुसलमान शासको के प्रति उनके वीरतापूर्ण व्यवहार तथा जातीय गौरव एव नारी–उद्धार के लिए जीवन-बलिदान करने की ऐतिहासिक घटनाएँ विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो द्वारा अभीष्ट कथन के लिए उपयुक्त प्रेरणा प्रदान करती हैं। पुनरुत्थान के उस युग मे कर्नल टॉड, जो कि विदेशी शासको का प्रतिनिधि था, ने हिन्दुओ, विशेषत राजपूतो के जातीय गौरव का वर्णन अपनी पुस्तक ऐनल्स एड एटीक्विटीज ऑफ राजस्थान (1829) मे किया। इस इतिहास पुस्तक ने अधिकाश विवेच्य उपन्यासकारो को ऐतिहासिक उपन्यास-लेखन के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ विपुल सामग्री तथा ऐतिहासिक सत्य-निष्ठा एव विश्वास भी प्रदान किया। इस सदर्भ मे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एव उल्लेखनीय बिन्दु यह है कि टॉड जब मेवाड के सम्बन्ध मे लिखता है तो वह एक भावप्रवण कवि जैसा बन जाता है। टॉड स्वय को स्पष्ट रूप से राजपूत जाति का वकील तथा प्रशसक समझता था।[3] टाड की यह सब उपलब्धियां विवेच्य उपन्यास-कारो के लिए एक महान् प्रेरणा थी।

1 वही पृष्ठ 21, राहुल साकृत्यायन।

2 "ऐतिहासिक उपन्यास क्या है" हजारीप्रसाद द्विवेदी—'ऐतिहासिक उपन्यास' डॉ० गोविंद जी पृष्ठ 17–19

3 "Tod candidly avowed himself to be an advocate and apologist of the Rajput race though he was not blind to the miseries of the Rajput society of his days he loved to celebrate its past virtues even at their worst, the Rajputs of his day were not worthless"—Dr G S Grewal, 'British Historical writing on Muslim India' page 329 (Ph D thesis from London University)

चित्तौड के राणा लक्ष्मणसिह, उनके चाचा भीमसिह व चाची पद्मिनी की सौन्दर्य लालसा मे अलाउद्दीन का चित्तौड पर दो बार आक्रमण, छल-कपट, और अन्त मे चित्तौड का विनाश तथा स्त्रियो द्वारा जौहर व्रत किया जाना टॉड के इतिहास मे वर्णित ऐतिहासिक तथ्य है। इन्हीं से प्रेरणा प्राप्त कर चन्द्रशेखर पाठक ने "भीमसिह", बसन्तलाल शर्मा ने "महारानी पद्मिनी", रामनरेश त्रिपाठी ने "वीरागना" तथा गिरिजानन्दन तिवारी ने "पद्मिनी" उपन्यासो की रचना की।

चन्द्रशेखर पाठक के मतानुसार, "टॉड साहब लिखित राजस्थान का इतिहास, बाबू क्षीरोदप्रसाद बी० ए० तथा बाबू सुरेन्द्रनाथ राय लिखित 'पद्मिनी' नामक ग्रन्थो से इसमे विशेष सहायता ली गयी है।"[1] पद्मिनी को राणा लक्ष्मणसिह के चाचा भीमसिह की पत्नी स्वीकारने के बारे मे गिरिजानन्दन तिवारी ने लिखा था— "टॉड साहब भी इसे भीमसिह की स्त्री बताते हैं। हमने भी टॉड साहब की बात को सच मान कर यह उपन्यास लिखा है।"[2]

मुगल सम्राट शाहजहाँ के राज्यकाल के अन्तिम वर्षों तथा औरगजेब के राज्यकाल के आरभिक वर्षो मे मेवाड के राजकुमार व बाद मे राणा राजसिंह का औरगजेब के साथ प्रबल सघर्ष का टॉड ने उत्तम शब्दो मे विवरण दिया है।[3] इस विवरण मे टॉड ने राजपूतो की वीरता एव शौर्य की प्रशसा करते हुए उनके पक्ष को नैतिक एव उचित ठहराया है।[4] इस अश से प्रेरणा प्राप्त कर किशोरीलाल गोस्वामी ने "तारा", बाबूलालजी सिह ने "वीर बाला" तथा बाबू युगलकिशोर नारायणसिह ने "राजपूत-रमणी" नामक ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना की।

बाबू युगलकिशोर नारायणसिह ने टॉड द्वारा राजपूत दृष्टिकोण, जीवन-पद्धति के उनके नैतिक, धार्मिक एव सामाजिक सिद्धातो के प्रति न्याय करने के लिए आभारी अनुभव करते हैं। उनके अनुसार "वीरप्रसू क्षत्रिय जाति को जागृति, शक्ति और उसके उच्च आदर्श के इतिहास के लिए क्षत्रिय जाति टॉड साहब की चिरकाल तक ऋणी रहेगी। लेखक ने भी राजस्थान की एक ऐतिहासिक घटना के आधार पर कल्पना का सहारा लेकर प्रस्तुत पुस्तक की रचना की है, जिसे वह कृतज्ञ हृदय से स्वीकार करता है।"[5]

1 भीमसिह, चन्द्रशेखर पाठक, ललित प्रेस कलकत्ता 1915 अपना वक्तव्य' मे उद्धृत।
2 'पद्मिनी', गिरिजानन्दन तिवारी 1905 भारत जीवन प्रेस काशी, सूचना' से उद्धृत।
3 देखिए-टॉड कृत 'राजस्थान का इतिहास,' अनुवादक केशवकुमार ठाकुर साहित्य पुस्तकालय, इलाहाबाद, 1962, पृष्ठ 222 से 227
4 वही, पृष्ठ 232-233
5 "राजपूत रमणी" युगलकिशोर नारायणसिह भारतभूषण प्रेस लखनऊ, सन् 1916 ई० (सम्वत् 1973) आवरण से उद्धृत।

सवत् 1952 (सन् 1895) मे हरिचरणसिंह चौहान ने टॉड के इतिहास[1] से प्रेरणा प्राप्त कर "वीर नारायण" नामक ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की। उनके अनुसार, "यह एक छोटा-सा ऐतिहासिक उपन्यास बूदी के राव नारायण का जो कि सम्वत् 1548 मे बून्दी के राज्यसिंहासन पर सुशोभित हुए थे। टॉड साहब के प्रसिद्ध ग्रन्थ "टॉड्स राजस्थान" नामक इतिहास के आशय से लेकर बडी कठिनाई से बनाया है।"[2]

टॉड कृत "राजस्थान का इतिहास" विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो के अभ्युदय के लिए एक महान् प्रेरणा स्रोत था।

रामजीवन नागर के मतानुसार, "राजपूताने के इतिहासो मे टॉड साहब का "राजस्थान" जैसे मुख्य माना जाता है, गुजरात के इतिहासो मे फार्बस साहब की "रासमाला" भी वैसा ही मान पाती है। उसी के आधार पर मैंने यह पुस्तक लिखी है।"[3]

फार्बस के अतिरिक्त फिच, सर टामस रो, बर्नियर, म्यानिसी तथा ग्राटडफ आदि अग्रेज इतिहासकारो की ऐतिहासिक कृतियो से भी किशोरीलाल गोस्वामी तथा प० बलदेवप्रसाद मिश्र ने "तारा" तथा "पानीपत" के निर्माण के लिए प्रेरणा तथा सहायता प्राप्त की है। अग्रेज इतिहासकारो की सत्यनिष्ठा तथा ऐतिहासिक निर्वैयक्तिकता के सबध मे लिखते हुए गोस्वामी जी कहते हैं—"उन महात्माओ मे फिच, सर टामस रो, बर्नियर, म्यानिसी आदि लेखक प्रधान हैं और हमने ऐतिहासिक घटना मे विशेषकर इन्ही महात्माओ के लेख से सहायता भी ली है।"[4] प० बलदेव प्रसाद मिश्र के मतानुसार, "पानीपत के निर्माण मे ग्राटडफ साहब की अग्रेजी किताब तथा फारसी के कई पुराने इतिहासो से भी सहायता ली गई है।"[5]

मुसलमान इतिहासकारो के विरुद्ध अग्रेज इतिहासकारो की ऐतिहासिक कृतियो से विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो तथा ऐतिहासिक रोमासकारो ने प्रेरणा प्राप्त की तथा भारतीय अतीत के पुन निर्माण एव उसकी पुन व्याख्या की प्रक्रिया मे इन कृतियो से सहायता भी ली।

"इडियन शिवलरी" नामक अग्रेजी पुस्तक के आधार पर जयरामदास गुप्त ने तीन ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना की है। उनके मतानुसार इस पुस्तक मे वास्तविक बातो को छिपाने का प्रयत्न किया गया है। इन्ही शौर्यपूर्ण कहानियो को

1 टॉड कृत "राजस्थान का इतिहास" पेज 742-745
2 'वीरनारायण' हरिचरणसिंह चौहान, मथुरा भूषण प्रेस, मथुरा, सन् 1895 ई० निवेदन से उद्धृत।
3 "बारहवी सदी का वीर-जगदेव परमार" रामजीवन नागर, खेमराज श्रीकृष्ण दास बम्बई, सवत् 1969 (सन् 1912 ई०) भूमिका से उद्धृत।
4 "तारा" निवेदन, पेज 'घ'।"
5 "पानीपत" प्रस्तावना से उद्धृत।

अन्यान्य इतिहास-ग्रन्थो की सहायता से "शुद्ध' कर उपन्यास-लेखन का कार्य किया। उनके मतानुसार, "अंग्रेजी भाषा मे 'इंडियन शिवलरी' नामक एक पुस्तक है। इसमे वीरवर राजपूतो से संबध रखने वाली कई एक छोटी-छोटी कहानियाँ हैं। उन कहानियो को पढने से जहाँ तक मालूम हो सका, यही जान पडा कि असली बातो को भी छिपाने की चेष्टा की गई है। ... . अतएव, हमने भी उन कहानियो को उपयोगी और ऐतिहासिक देख इतिहासो से शुद्ध करके उन्ही के आधार पर उपन्यासो की रचना आरंभ कर दी है। उनमे की दो कहानियों के सहारे 'कलावती' और 'वीरवीरांगना' नामक पुस्तक आगे हम प्रकाशित कर चुके हैं।"[1]

इसी प्रकार एक अनाम ब्रिटिश लेखक द्वारा प्रणीत पुस्तक "द लाइफ ऑफ एन ईस्टर्न किंग" मे लखनऊ के नवाब नसीरुद्दीन हैदर के जीवन की राजनैतिक एव व्यक्तिगत घटनाओ का आँखो देखा चित्रण किया गया है। इसी पुस्तक का ठाकुरप्रसाद खत्री ने हिन्दी में अनुवाद किया था। इसी के आधार पर गोस्वामी जी ने "लखनऊ की कब्र" नामक ऐतिहासिक रोमांस की रचना की।

(ii) प्राचीन भारतीय इतिहास ग्रन्थ व रासो काव्य ग्रन्थ—पुनरुत्थानवादी हिन्दू जीवन दृष्टि तथा सामाजिक धार्मिक एव सांस्कृतिक जीवन दर्शन से प्रेरित हो उसकी पुन स्थापना के लिए विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो एव ऐतिहासिक रोमांसकारो ने प्राचीन भारतीय इतिहास-ग्रन्थो यथा कल्हण की राजतरंगिणी तथा पृथ्वीराज रासो को आधार बना कर भी उपन्यासो की रचना की।

भारतीय नारी के सतीत्व की महत्ता का प्रतिपादन करने के लिए बाबू व्रजविहारीसिंह ने ऐतिहासिक घटनावलम्बी उपन्यास "कोटारानी" का निर्माण किया। इसके लिए उन्होंने कल्हण की राजतरंगिणी के एक अंश को कथानक का आधार बनाया। उनके मतानुसार, "इसका मूल आख्यान राजतरंगिणी के (जो काश्मीर देश का एक बृहत् इतिहास है जिसे कल्हण कवि ने शके 1070 मे बनाया था) मध्य भाग से लिया गया है। इस इतिहास के विषय मे विशेष जानने के लिए बाबू हरिश्चन्द्र कृत राजतरंगिणी की समालोचना अथवा भारतमित्र प्रेस से प्रकाशित इसका भाषानुवाद देखना चाहिए।"[2]

जयन्तीप्रसाद उपाध्याय कृत 'पृथ्वीराज चौहान' में 'पृथ्वीराज रासो' से प्रेरणा एव सामग्री ली गई है। लगभग सारे उपन्यास का कथानक 'रासो' पर ही आधारित है।

हरिचरणसिंह चौहान कृत "पृथ्वीराज परमाल अर्थात् पृथ्वीराज महोबा संग्राम" भी पृथ्वीराज रासो के ही आधार पर रचा गया था। लेखक के अनुसार

1 रानीपन्ना वा राजललना", जयरामदास गुप्त, उपन्यास बहार आफिस, काशी, 1910, भूमिका।

2 "कोटारानी" व्रजविहारीसिंह, खेमराज श्रीकृष्ण दास, बम्बई, संवत् 1959 (सन् 1902 ई०) भूमिका से उद्धृत।

उपन्यास मे वर्णित "विषय प्राचीन और प्रामाणिक ग्रन्थ चदबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रायसा' से सरल सुगम भाषा मे तैयार किया है, आशा है कि, यह ऐतिहासिक विषय सर्व हिन्दी रसिको को रुचिकर होगा ।"[1]

(iii) समकालीन भारतीय भाषाओ के इतिहास-ग्रन्थ—20वी शताब्दी के आरभ मे बगाली, मराठी तथा गुजराती भाषाओ मे इतिहास तथा ऐतिहासिक-उपन्यासो का प्रणयन आरभ हो चुका था। भूदेव मुखर्जी, बकिमचन्द्र चटर्जी, रखालदास बद्योपध्याय, रमेशचन्द्र दत्त, चण्डीशरण सेन, ननीलाल बद्योपाध्याय, हरिसाधन मुखोपाध्याय आदि ऐतिहासिको ने भारतीय अतीत को आधार बना कर उपन्यासो की रचना की। इनमे से अधिकाश की कृतियाँ तब तक हिन्दी मे अनूदित हो चुकी थी।[2] यह इतिहासाश्रित कथा पुस्तकें विवेच्य उपन्यासकारो के लिए एक प्रभावी प्रेरणा स्रोत के रूप मे उभर कर आई ।

बाबू युगलकिशोर नारायणसिंह कृत "राजपूत रमणी" की भूमिका मे कान्यायनी दत्त ने लिखा था,—"राजस्थान" के आधार पर कल्पना के सहारे इस की रचना हुई है, राना राजसिंह और रूप नगर की कन्या के पाणिग्रहण और महाराना की औरगजेब से शत्रुता का विषय नवीन नही, बगभाषा के औपन्यासिक श्रेष्ठ श्रीयुत् बाबू बकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय सी० आई० ई० ने कल्पना के सहारे इसी विषय को लेकर "राजसिंह अथवा चचलकुमारी" नामक उपन्यास की रचना की है ।[3]

प० बलदेवप्रसाद मिश्र ने "पानीपत" की रचना के लिए गुजराती तथा मराठी पुस्तको को आधार बनाया। उनके मतानुसार, "यह पुस्तक देशाई बीरजमल निर्भयराम वकील की गुजराती पुस्तक पानीपत का युद्ध तथा मराठी भाषा की कई एक पुस्तको के आधार पर लिखी गई है ।"[4]

चन्द्रशेखर पाठक ने "भीमसिंह" उपन्यास की रचना के लिए टॉड के राजस्थान के अतिरिक्त "बाबू क्षीरोप्रसाद बी ए तथा बाबू सुरेन्द्रनाथ राय लिखित "पद्मिनी" नामक ग्रन्थो से विशेष सहायता प्राप्त की है ।[5]

हिन्दी भाषा मे सन् 1905 ई० से पूर्व कई इतिहास-पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थी। प० किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने उपन्यास 'रजिया बेगम वा रगमहल मे हलाहल' की रचना करने के लिए कई समकालीन इतिहास-पुस्तको से सहायता

1 "पृथ्वीराज परमाल अर्थात् पृथ्वीराज महोबा सग्राम" हरिचरणसिंह चौहान, खेमराज श्रीकृष्णदास, बबई, सवत् 1966, (सन् 1909 ई०) भूमिका से उद्धृत ।

2 बकिमचन्द्र, रमेशचन्द्र चण्डीशरण, ननीलाल, हरिसाधन तथा अन्य लेखकों के अनूदित ऐतिहासिक उपन्यासो के विवरण के लिए देखिए—हिन्दी उपन्यास कोश, डॉ० गोपालराय, ग्रन्थ निकेतन, पटना-6, 1968, पेज 306 से 330

3 'राजपूत रमणी", भूमिका से उद्धृत ।

4. "पानीपत," प्रस्तावना स उद्धृत ।

5. "भीमसिंह," अपना वक्तव्य से उद्धृत ।

प्राप्त की थी। 'रजिया बेगम' के कृतज्ञता स्वीकार मे उन्होंने लिखा,—'हमने इस उपन्यास मे राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द के 'इतिहास तिमिरनाशक' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के 'बादशाह दर्पण', तथा बगाली लेखक बाबू नरेन्द्रनाथ मित्र प्रणीत "रजिया बेगम" नामक एक छोटे से प्रबध से भी कुछ सहायता ली है, अतएव इन महाशयो के भी हम कृतज्ञ हैं।"[1]

(iv) विदेशी यात्रियो के यात्रा वृत्तान्त—समय-समय पर आने वाले विदेशी यात्रियो ने भारत की तद्युगीन सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एव सांस्कृतिक स्थितियो के साथ-साथ कई भौगोलिक स्थलो का भी अपने यात्रा-वृत्तान्तो मे विवरण दिया है। इस प्रकार के यात्रा-वृत्तान्त ऐतिहासिक युग के अध्ययन के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एव उपयोगी होते हैं। विदेशी होने के कारण यात्री सामान्यत निरपेक्ष एव निर्वैयक्तिक ढग से घटनाओ एव व्यक्तियो का वर्णन करता है। सामान्यत राजा अथवा राजकुमारो के अत्यन्त निकट रहने अथवा शासको के व्यक्तिगत सपर्क मे रहने के कारण इस प्रकार के यात्री भारतीय अतीत के अन्यान्य युगो का अधिक प्रामाणिक तथा विश्वसनीय वृत्तान्त प्रस्तुत कर पाए हैं। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों एव ऐतिहासिक रोमासकारो ने इस प्रकार के यात्रा-वृत्तान्तो का उपन्यासों की रचना मे उपयोग किया है।

बाबू बलभद्रसिंह ने 'वीरबाला वा जयश्री' उपन्यास के आरम्भ मे दी गई 'ऐतिहासिक विवेचनाएँ' मे इब्न बतूता की भारत-यात्रा के वृत्तान्त को प्रमाण के रूप मे स्वीकार किया है। उनके मतानुसार, "सन् 1341 ई० मे एक अफ्रिका के पर्यटक ने दिल्ली मे आगमन किया। इसका नाम इब्न बतूता था। उसका दरबार मे बड़ा आदर सम्मान हुआ और बादशाह ने उसे 'जज' बनाया। परन्तु मुहम्मद तुगलक का क्रुद्ध, सन्देहयुक्त तथा निर्दय स्वभाव देख कर उसने वह पद परित्याग कर दिया। बादशाह ने इसका बुरा न मान कर उसे चीन मे अपना एलची बना कर भेज दिया और इस सुहावनी चाल से उसे दिल्ली से टाल दिया। उसके Travel अर्थात् 'भ्रमण निबन्ध माला' मे जिनका अनुवाद अंग्रेजी तथा फ्रेंच मे है भारतवर्ष का बहुत-सा बहुमूल्य वृत्तान्त है।'[2]

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने वेनिस के डाक्टर म्यानिसी जो लगभग पचास वर्ष तक मुगल दरबार मे रहा, के इतिहास-वृत्तान्त से अपने उपन्यास 'तारा वा क्षत्रकुल कमलिनी' के निर्माण मे सहायता प्राप्त की। इस वृत्तान्त ने सम्भवत गोस्वामी जी को शाहजहाँ व दारा के जहाँआरा से गुप्त-सम्बन्धो तथा शाही महल के आन्तरिक मामलो के सम्बन्ध मे बहुत सीमा तक सामग्री उपलब्ध की। गोस्वामी जी ने तारा के आरम्भ मे म्यानिसी के बारे मे लिखा है,—'म्यानिसी वेनिस नगर का एक डाक्टर

1 "रजिया बेगम", दूसरा भाग कृतज्ञता स्वीकार से उद्धृत।
2 'जयश्री वा वीरबाला' बाबू बलभद्रसिंह उपन्यास बहार ऑफिस, काशी, द्वितीय संस्करण सन् 1923 ई०।

था, और इसने लगभग आधी शताब्दी शाहजहाँ के दरबार मे बिता दी थी। दारा का यह बहुत ही प्यारा मुसाहब था और इसकी गति शाही महल तक भी थी। यह उस समय का इतिहास अपनी भाषा मे बहुत ही सुन्दर रीति से लिखा गया है। यह बर्नियर का समकालीन होने पर भी बर्नियर की अपेक्षा इसे उस समय के इतिहास लिखने का बहुत ही सुभीता मिला था क्योंकि दारा का प्यारा मुसाहब होने के कारण दारा के साथ बराबर छाया की भाँति रहता था। क्या लडाई के मैदान मे, क्या विलास-कानन मे, सभी समय यह दारा के साथ ही साथ रहता था। दारा के साथ आधी शताब्दी तक शाही दरबार मे रहने के कारण इसने शाही घराने की बहुत सी गुप्त और रहस्यमय घटनाओ का उल्लेख किया है।'[1] इन रहस्यमय घटनाओ आदि का गोस्वामी जी ने खुल कर प्रयोग अपने उपन्यास 'तारा' मे किया है।

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त ने अपने ऐतिहासिक उपन्यास 'काश्मीर पतन' मे एक फ्रासीसी यात्री द्वारा काश्मीर की डल झील के वर्णन का उल्लेख किया है। परन्तु उसका नाम नही दिया गया है। झील के मध्य एक स्थल-अश था जिसे 'रूप लका' कहा जाता था। लेखक के युग मे झील के मध्य यह भूभाग दृष्टिगोचर नही होता था, हाँ कुछ पेडो के अतिरिक्त अब वहाँ और कुछ नही है। एक फ्रासीसी यात्री का सदर्भ देते हुए पाद-टिप्पणी मे उन्होने लिखा है—"सन् 1835 ई०मे एक फ्रासीसी यात्री ने काश्मीर का भ्रमण करते हुए जब इस स्थान को देखा था तो वहाँ पर एक छोटे से मन्दिर के देखने का बयान करता है यद्यपि इस समय उसका कोई निशान नही है पर किनारे पर कही पत्थर के चूने लगे हुए मिलने वाले टुकडे किसी मकान का चिन्ह प्रगट करते हुए उसके बयान को पुष्ट करते है।"[2]

(४) पुरातात्त्विक खोजें—बीसवी शताब्दी के पहले दो दशको मे कई पुरातात्त्विक खोजे की जा चुकी थीं। स्मिथ ने इस सम्बन्ध मे अपने इतिहास मे लॉर्ड कर्जन द्वारा पुरातात्त्विक खोजो को एक सुनिश्चित स्वरूप प्रदान करने के लिए सराहा है।[3] स्पष्ट है कि इस शताब्दी के आरम्भिक दशको मे तथा उनसे पहले भी पुरातत्त्व की ओर विद्वानो तथा शासको का ध्यान आकर्पित हो चुका था। इसी प्रकार कई स्वदेशीय एव विदेशी विद्वानो द्वारा प्राचीन भारतीय ग्रन्थो तथा उनके माध्यम से सभ्यता एव सस्कृति के अन्यान्य आयामो की खोज की जा चुकी थी।

1 "तारा' निवेदन पृष्ठ 'छ' से उद्धृत।

2 'काश्मीर पतन" जयरामदास गुप्त, राजघाट, काशी 1907 ई०, पृष्ठ 74-75।

3 "India is full of memorials of olden times Lord Curzon not only passed an Act for the preservation of Ancient monuments but worked out a well conceived scheme for both the conservation of buildings which had escaped destruction and the exploitation of the treasures of antiquity buries in sites where everything above ground had perished"—Oxford History of India by V A Smith, Page 356-357

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों एवं रोमांसकारों ने सामान्यतः पुरातात्त्विक एवं पुराने ग्रन्थों की खोज से बहुत सीमा तक प्रेरणा प्राप्त की। टॉड कृत राजस्थान तथा कनिंघम के सिख इतिहास आदि के माध्यम ने पुरातत्त्व का अंश इन ऐतिहासिक कथाकृतियों में आया है। मुख्यतः किलों एवं नगरों के चित्रण में तथा गौरवमय महलों एवं दरबारों की आन्तरिक सजावट के सम्बन्ध में पुरातात्त्विक खोजों से सहायता प्राप्त की गई है।

पुरातात्त्विक खोजों एवं प्राचीन ग्रन्थों से प्राप्त सामग्री के प्रयोग का अध्ययन भूचित्रों तथा भौगोलिक वर्णनों के शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है। इस प्रकार हम यही पाते हैं कि ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमांस दोनों ही एक प्रकार से सांस्कृतिक इतिहास तथा सांस्कृतिक पैटर्न का प्रतिविधान करते हैं। इस दृष्टिकोण से इतिहास के उपर्युक्त दोनों रूपाकार ऐतिहासिक बोध की भी कसौटी बन जाते हैं।

4 हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यास तथा ऐतिहासिक रोमांस: परिस्थितियाँ तथा प्रवृत्तियाँ

कई दृष्टियो से हिन्दी मे ऐतिहासिक उपन्यासो तथा रोमासो की परिस्थितियाँ एव प्रवृत्तियाँ विशिष्ट हैं, तथापि वे सामान्य प्रवृत्तियो की भी एक अग हैं। अत हम इनमे सप्रमाण इतिहास दर्शन और सास्कृतिक मूल्यो को भी स्थापित कर सकते है।

प्रेमचन्द पूर्व के युग मे पुष्पित हुई इस प्रवृत्ति मे कई सस्कृतियाँ, कई सामाजिक व्यवस्थाएँ तथा कई प्रवृत्तियाँ टकरा रही हैं और समन्वित भी हो रही है। इस वजह से नए-नए कलारूप और नई-नई सास्कृतिक आवश्यकताएँ मिलकर नए जीवनबोध विकसित करती है। नए जीवनबोध तथा नए समाज की परिकल्पना पडित किशोरीलाल गोस्वामी से लेकर महता लज्जाराम शर्मा तक मे मिलती हैं। अस्तु।

(अ) सामाजिक स्थिति

(1) साप्रदायिक मतभेद

सास्कृतिक पुनर्जागरण की इस प्रक्रिया मे साप्रदायिक मतभेद वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व था जिसने विवेच्य उपन्यासकारो की जीवन दृष्टि तथा इतिहास धारणा को गहराई तक प्रभावित किया। यद्यपि इस शताब्दी के आरम्भिक दशको मे साप्रदायिक एकता तथा भारत के एक राष्ट्र के सिद्धान्त की धारणा जोर पकडती जा रही थी तथापि अधिकाश जनता गहरे साप्रदायिक मतभेदो तथा धार्मिक असहिष्णुता की पुरानी लकीर पर ही विश्वास करती थी। लगभग सभी विवेच्य लेखक मुसलमान-विरोधी धारणा को आधार बना कर उपन्यास रचना के कार्य मे प्रवृत्त हुए थे।

साप्रदायिकता का स्वरूप—साप्रदायिकता की समस्या तथा उसके मौलिक स्वरूप तथा विवेच्य कथारूपो मे वर्णित साप्रदायिकता मे सूक्ष्म अन्तर आ गए। हिन्दू, मुसलमान तथा ईसाई तीन धर्मो एव सप्रदायो मे आपसी टकराहट की स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी।

राष्ट्रीय धारणा के विचारक वे हिन्दू हो अथवा मुसलमान, अंग्रेज विरोधी एव ईसाई विरोधी साम्प्रदायिक मतवाद के पक्षपाती थे क्योकि दोनो ही धर्मों पर ईसाई धर्म के प्रसारवाद का भयानक प्रभाव पड़ा था।[1] इन विचारको ने अतीत के महान् धार्मिक विचारो एव विश्वासो को पुन प्रस्तुत करने का प्रयास किया।

आध्यात्मिक जागृति तथा शुद्धिकरण के प्रयत्न के लिए मनुष्य का मानस स्वभावत आदिम युग की ओर मुड़ता है, जबकि उनके विश्वास अपने स्रोतो से उभरे थे, तथा जो देदीप्यमान तथा सुस्थिर थे। परन्तु जिस प्रकार अतीत का पुन स्थापन एक असभाव्य है, तथा जिस प्रकार अतीत निश्चित रूप से उस मानस की निर्मिति है, जो इसके बारे मे सोचते हैं, सुधारको ने अपनी व्यक्तिगत अभिरुचि के अनुसार मूल विश्वास के विभिन्न चित्र प्रस्तुत किए तथा उन्हें पुन जीवित करने के लिए विभिन्न ढग सम्मुख रखे।[2]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे जिस साम्प्रदायिक मतभेद का चित्रण किया गया है, वह अग्रेज विरोधी होने के स्थान पर मुसलमान विरोधी था। सामान्यत कोई भी उपन्यासकार अग्रेज विरोधी एव ईसाई विरोधी साम्प्रदायिक विचारो का प्रतिपादन नही करता। प० किशोरीलाल गोस्वामी ने एकाध स्थान पर अग्रेजो के व्यवहार पर आक्षेप किया है। इस पर भी वे ऐतिहासिक रूप से अग्रेजो को मुसलमानो से बेहतर समझते थे।

आक्रमणकारी मुसलमानो के लिए तुर्क, यवन[3] तथा मलेच्छ[4] शब्दो का ही

1 महर्षि दयानन्द द्वारा बुद्ध-पूर्व के प्राचीन हिन्दू विश्वासों के पुन स्थापन के प्रयत्नों पर टिप्पणी करते हुए रोमारोला ने इस ओर इगित किया था—"यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि जिस समय दयानन्द के मन का निर्माण हो रहा था उस समय भारत की उच्चतम, धार्मिक चेतना इतनी दुबल हो चुकी थी कि योरोप की धार्मिक चेतना इसका स्थान ग्रहण करने में असमर्थ होने हुए भी उसकी क्षीण दीपशिखा को बुझाने के लिए प्रयत्नशील थी।" "रामकृष्ण परमहंस" रोमारोला, पेज 154

2 History of Freedom Movement V II p 391-392

3 "Communalism and Ancient Indian History" Page 8—
"Thus the Turks are described as Turushkas, and the Arabs as Yavans The word Yavan was used traditionally for all persons coming from West Asia and the Mediterranean irrespective of whether they were Greek, Roman or Arab The word itself, Yavans in Sanskrit is a back formation of the Prakrit Yona and derives ultimately from Ionia, the IoniansGreeks who had the earliest and closest contacts with Western Asia"

4 'Ibid' Page 8—"Another term used for Turks Persians and Arabs was Mlechha This word again has an ancient Ancestry first occuring in the Rig Veda The term was primarily for those people who spoke a non-Arvan language and therefore were unfamiliar with Aryans' culture Later and by extention the term was used by foreigners Here, again 'malechha' was not a religious term but more often a term with a cultural connotation"

अधिकाशत प्रयोग किया गया है। सामान्यत हम 'मुसलमान' पद मे अरबी, तुर्की तथा फारसी लोगो, सभी को शामिल कर लेते हैं। रोमिला थापर के मतानुसार, तेरहवी शताब्दी से पहले तक के प्राप्त स्रोतो मे जो इन लोगो का वर्णन करते हैं, मुस्लिम शब्द का प्रयोग बहुत कम किया गया है। इस युग के स्रोत धार्मिक शब्दावली का प्रयोग नही करते प्रत्युत उन्हे नितान्त राजनैतिक ढग से प्रस्तुत करते है।[1]

यद्यपि आक्रमणकारियो का उद्देश्य मूलत राजनैतिक एव आर्थिक भी हो सकता है तथापि धर्म भी उनकी विजयो की एक सशक्त एव क्रियाशील नियोजक शक्ति थी। मूल भारतीय निवासियो की राजनैतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ उनकी धार्मिक स्वतन्त्रता पर भी कठोर अकुश लगाया गया था। इसी कारण लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे मुसलमान शासको को जो सामान्यत आक्रमणकारी होते थे, दुष्ट, कपटी एव अनैतिक रूप मे ही चित्रित किया गया है।[2]

(2) आधुनिक सभ्यता एव सस्कृति के सघात

भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना का भारतीय सभ्यता एव सस्कृति पर दोहरा प्रभाव पडा। एक ओर तो अग्रेजो के सपर्क मे आने के कारण भारतीय समाज मे तार्किकता, औचित्य एव कारण की मौलिक आवश्यकता को स्वीकार किया गया। दूसरी ओर ईसाई मिशनरियो ने भारतीय धर्म, समाज एव सस्कृति पर कुठाराघात किया तथा ईसाई धर्म का प्रबल प्रचार किया गया। इसी प्रकार प्रतिक्रियावादी हिन्दू व मुसलमान नेताओ ने अपने-अपने धर्मों की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए दूसरे धर्म एव सस्कृति को हेय बताया। राष्ट्रीय दृष्टिकोण के नेता इसका अपवाद हैं। इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम तथा हिन्दू-ईसाई मत-भेदो, तथा उनकी आपसी टकराहट मे ही इस आधुनिक सभ्यता एव सस्कृति के सघात का अध्ययन करेंगे जिससे विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक-रोमान प्रभावित हुए।

(आ) ऐतिहासिक स्थिति—बीसवी शताब्दी के पूर्व वर्षों मे तथा इसके आरम्भिक दशको मे सामाजिक एव सास्कृतिक पुनर्जागरण के साथ-साथ राजनैतिक चेतना का भी प्रसार होने लगा था। एक ओर अग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध क्रान्तिकारी तथा दूसरी ओर अहिंसावादी राजनेता अपनी वाणी एव शक्ति को सुदृढ करने लगे थे। इनके साथ-साथ बहुत से विद्वान एव साहित्यकार या तो राजनैतिक एव ऐतिहासिक स्थिति के प्रति उदासीन थे या फिर वे ब्रिटिश साम्राज्य के पक्षपाती थे। बाबू बलभद्रसिंह ने 'वीरबाला वा जयश्री' मे अग्रेजी साम्राज्य की खुल कर

1 Ibid p 8

2 साम्प्रदायिक मतभेदो का अध्ययन ऐतिहासिक उपन्यासो के सदर्भ मे राजपूतो के जातीय अभिमान एव इतिहास की धारणा एव पुनर्व्याख्या तथा ऐतिहासिक रोमासो के सदर्भ में 'कामुकता' एव 'अश्लीलता' शीर्षको के अन्तर्गत किया जाएगा।

प्रशसा की है तथा यवन शासन की तुलना मे उसे अत्युत्तम बताया है।[1] इसी प्रकार किशोरीलाल गोस्वामी ने भी अग्रेजों को मुसलमान शासको से बेहतर बताया है।

इस काल खण्ड मे पुरातात्विक खोजो की ओर ध्यान दिया जाना आरम्भ हो चुका था। बहुत से भारतीय एव विदेशी इतिहासकारो एव ऐतिहासिक द्रष्टाओं ने भारतीय अतीत की खोजें की तथा उसके उज्ज्वल पक्षो का उद्घाटन किया। इस ऐतिहासिक स्थिति का विवेच्य लेखको पर उल्लेखनीय प्रभाव पडा। अपने सिद्धान्तों धारणाओ एव मान्यताओं के अनुरूप उपयुक्त सामग्री एव ऐतिहासिक स्थिति के प्रभाव-स्वरूप इन ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की रचना की गई।

(1) पुरातात्विक खोजें—उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम तथा बीसवी शताब्दी के आरम्भिक दशको मे प्राचीन भारत के कलात्मक एव सांस्कृतिक अवशेषो की खोज तथा उनके सरक्षण के कार्यो की ओर ध्यान दिया जाने लगा था। इस सम्बन्ध में विदेशी शासको ने भी कई स्तुत्य कदम उठाए। विंसेट ए० स्मिथ ने इस के लिए लार्ड कर्जन की प्रशसा की है।[2] पहले तो केवल योरोपीय विद्वान् ही इस क्षेत्र में रुचि लेते थे, परन्तु इस शताब्दी के आरम्भ से भारतीय विद्यार्थियो ने भी इस कार्य मे अपना योगदान देना आरम्भ कर दिया था।

वास्तुकला के अवशेषो के साथ-साथ प्राचीन भारतीय ग्रन्थो एव सस्कृत साहित्य पर भी मैक्समूलर, एम० विंटरनिट्ज, एलवर्ट वेवर तथा ए-बी-कीथ प्रभृति विद्वानो ने स्तुत्य खोजें की। इस प्रकार सस्कृत साहित्य के महान् पक्षो का योरोपीय विद्वानो द्वारा उद्घाटन किया गया।

1 "ब्रिटिश राज्य के प्रभामय शासन में डाकू, चोर तथा ठग इत्यादि का लेशमात्र भी भय नहीं है। क्या यवन और ब्रिटिश शासन में काँच और कचन का अतर नहीं है?" वीरबाला व जयश्री' उपन्यास बहार ऑफिस, काशी दूसरा सस्करण, सन् 1923 ई० पेज 45-46

2 "Lord Curzon not only passed an Act for the preservation of Ancient Monuments, but worked out a well conceived scheme Both duties conservation and exploration were entrusted to a skilled Director General of Archaeology, aided by a staff of expert assistants in the provinces, and supplied liberally with funds The Department thus organised in manner for superior to the crude arrangements previously in operation The field for research is practically unlimited The scientific study of the antiquities of India was for many years confined almost exclusively to European scholars, but since about the beginning of the current century numerous Indian born students have recognised that the investigation of the history of their native land should not be abandoned to foreigners and have been doing their duties in making additions to the world's store of historical knowledge" —Vincent Adam Smith, "Oxford History of India", Page 357

यद्यपि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो एव ऐतिहासिक रोमासकारो ने इन पुरातात्विक एव ग्रन्थ-खोजो से प्रत्यक्ष रूप मे कोई मबध व्यक्त नही किया है तथापि अतीत की खोज तथा भारतीय अतीत के स्वर्णिम युगो के अनावरण की इस विशिष्ट ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का उन पर अनिवार्य प्रभाव पडा जो उनकी कृतियो मे परिलक्षित होता है।

(ii) भारतीय इतिहासकार—यद्यपि विवेच्य काल-खण्ड मे अधिकाश इतिहास-पुस्तकें योरोपीय विद्वानो द्वारा ही लिखी गई तथापि बहुत से भारतीय विद्वानो ने भी इतिहास-लेखन के कार्य मे अपना योगदान किया।

आर० सी० मजूमदार ने—'राष्ट्रीय इतिहासकार'[1] नामक निबन्ध मे भारतीय अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे अग्रेज इतिहासकारो द्वारा किए गए अन्याय का अध्ययन किया है तथा उसके प्रतिक्रियास्वरूप भारतीय विद्वानों एव इतिहासकारो द्वारा प्रणीत इतिहासो की प्रवृत्तियो का वर्णन किया है। इसी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप दयानन्द सरस्वती, राजनारायण बोस, भूदेव मुखर्जी, चन्द्रनाथ वसु, बकिमचन्द्र चटर्जी आदि द्वारा भारतीय अतीत के स्वर्णिम पक्षो का उद्घटान किया गया। रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर की पुस्तक "Civilization in Ancient India" तथा आर० के० मुखर्जी की "A History of Indian Shipping and Maritime Activity" आदि मे राष्ट्रीय विचारो का प्रतिपादन किया गया था।

भारतीय राजनैतिक एव सामाजिक निकाय की नियोजक-शक्ति के रूप मे हिन्दू-धर्म तथा उसके सर्व-भारतव्यापी स्वरूप को आर०के० मुखर्जी के "The Fundamental Unity of India"[2] मे प्रतिपादित किया गया, जबकि, ब्रिटिश लोग भारत को विपरीत जातियो व छोटे-छोटे रजवाडो का जमघट बता रहे थे।

यद्यपि विवेच्य लेखक ब्रिटिश-विरोधी रवैया नही अपनाते फिर भी भारतीय अतीत के स्वर्णिम पक्षो तथा हिन्दू धर्म के उदात्त स्वरूप की इन धारणाओ का उन पर प्रभाव उल्लेखनीय है। प्राचीन भारत की हिन्दू सभ्यता एव सस्कृति के मौलिक स्वरूप को आदर्श स्वीकारने, मुसलमानी आक्रमणकारियो को सभी बुराइयो के मूल मे देखने तथा हिन्दू-धर्म के मौलिक एव सनातन रूप के पुनर्स्थापन की धारणाएँ इस विशिष्ट ऐतिहासिक स्थिति के परिणाम स्वरूप ही अस्तित्व मे आयी।

अग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी मे भी कई विद्वानो ने भारतीय इतिहास की कई पुस्तको का निर्माण किया जिनसे विवेच्य उपन्यासकारो ने प्रेरणा तथा सहयोग प्राप्त किया। राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद का 'इतिहास तिमिर नाशक' तथा भारतेन्दु

1 "Nationlist Historians" by R C Majumdar reprinted in "Historians of India, Pakistan and Ceylon" edited by C H Phillips, pp 416-427

2 वही, पृष्ठ 422

हरिश्चन्द्र का 'बादशाह दर्पण' उल्लेखनीय है। ये दोनो इतिहास-पुस्तकें ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण थीं।

(iii) योरोपीय इतिहासकार—आधुनिक एव विज्ञान-परक् पद्धति से भारतीय अतीत के अध्ययन का श्रेय यूरोपीय इतिहासकारो को है।

भारत के प्रथम ज्ञात इतिहासकार नार्वे-निवासी एनरिस्टन लैस्सन (1800-76) थे। उन्होंने अपना अधिकाश समय बान विश्वविद्यालय मे भारतीय भाषाओ एव साहित्य के प्रोफेसर के रूप मे व्यतीत किया। उनकी भारतीय इतिहास की पुस्तक 'Indische Alterthumskunde' सन् 1847 से 1861 के बीच पहली बार तथा 1867 से 1873 के बीच दूसरी बार, चार जिल्दो मे जो एक-एक हजार से अधिक पृष्ठो की थी, प्रकाशित हुई।[1] ब्रिटेनिका विश्वकोष में इन कृति को अथक परिश्रम तथा आलोचनात्मक विद्वता की विश्व की महानतम् रचना कहा गया है।

विंसैंट एडम स्मिथ का भारत का इतिहास सामान्य ऐतिहासिक ज्ञान की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। इसके अतिरिक्त जेम्स मिल का 'ब्रिटिश भारत का इतिहास' (1818) तथा एल्फिन्स्टोन का 'भारत का इतिहास' (1818),(1841) भी ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण थे। इन इतिहासकारो ने भारतीय अतीत की खोज के लिए अन्य भारतीय एव यूरोपीय विद्वानो का मार्ग प्रशस्त किया।

टॉड कृत 'राजस्थान का इतिहास' तथा बार्गस कृत गुजरात का इतिहास ऐसी पुस्तकें थी जिन्होंने विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो तथा ऐतिहासिक रोमासकारो को अत्यधिक प्रभावित किया। इन्ही पुस्तको से सामग्री एव प्रेरणा प्राप्त कर अधिकाश विवेच्य लेखक उपन्यास-लेखन के कार्य मे प्रवृत्त हुए।

फिच, सर टामस रो, बर्नियर, म्यानिसी तथा ग्राट डफ आदि यूरोपीय इतिहासकारो की कृतियो से भी पडित किशोरीलाल गोस्वामी तथा प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने प्रेरणा एव सामग्री प्राप्त की।

यूरोपीय इतिहासकारों की भारतीय इतिहास की खोज तथा उनकी कृतियो का प्रकाशन वह अनिवार्य ऐतिहासिक स्थिति थी जिसके अन्तर्गत विवेच्य ऐतिहासिक कथा-पुस्तको का प्रणयन किया गया।

(iv) बंगला एव मराठी के इतिहास द्रष्टा—यूरोपीय एव भारतीय (हिन्दी) इतिहासकारो के साथ-साथ बगला एव मराठी के इतिहास-द्रष्टाओ की धारणाओं तथा कृतियो का विवेच्य कृतियो के निर्माण मे योग ऐतिहासिक महत्व का था। सर्वप्रथम बगाल के शिक्षित भारतीयो ने भारतीय अतीत की ओर दृष्टिपात किया तथा उसके कई गौरवपूर्ण एव स्वर्णिम पक्षो का उद्घाटन किया। यह ऐतिहासिक उपन्यास हों अथवा ऐतिहासिक रोमास जब ये अनूदित होकर हिंदी मे आए तो इनका

1 "Modern Historians of Ancient India" by A L Bashan reprinted in Historians of India, Pakistan and Ceylon", Page 261-262.

विवेच्य लेखको के उपन्यासो एव रोमासो पर प्रभाव पडा। बहुत से लेखको ने इस बात को स्वीकार भी किया है।[1] मराठी के इतिहास-द्रष्टाओ मे राजवाडे, खहेपारलीस, आर० जी० भडारकर तथा लोकमान्य तिलक उल्लेखनीय हैं।

बगला के इतिहास-वेत्ताओ मे बकिम चद्र चटर्जी तथा राखलदास बद्योपाध्याय की ऐतिहासिक कृतियाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। विवेच्य लेखको पर इनका प्रभाव भी महत्त्वपूर्ण सीमा तक पडा है। दुर्गेशनदिनी (1865), कपाल कुण्डला (1866), मृणालिनी (बारहवी शताब्दी का बगाल), चन्द्रशेखर (1875 से पूर्व), राजसिंह, आनन्दमठ, तथा देवी चौधरानी (1875 से 1882 के मध्य)[2] उनकी उल्लेखनीय ऐतिहासिक कृतियाँ हैं। इनमे से अधिकाश विवेच्य युग मे हिन्दी मे अनूदित भी हो चुकी थी[3]। डॉ० सत्येन्द्र के मतानुसार, "उन्होने उपन्यास लिखा और लिखते ही क्लसिक बना दिया। बगाल पर छा गये बकिम बाबू।[4]" वे केवल बगाल पर ही नही समस्त भारत पर हावी हो गए थे।

राखलदास बद्योपाध्याय की ऐतिहासिक कृतियाँ और भी अधिक महत्वपूर्ण थी क्योकि वे पुरातत्व के साथ-साथ अतीत के कलात्मक पुनर्निर्माण की कला मे भी दक्ष थे। 'ये वस्तुत पुरातत्ववविद् थे। इतिहास के पूर्ण पडित और नवीन से नवीन गवेषणा से इतिहास की कडियो को जोडने वाले। इनके ऐतिहासिक उपन्यासो मे केवल वृत्तमात्र ही इतिहास का नही था। इन्होने वस्तुत ऐतिहासिक युग को सजीव कर दिया। स्थूल घटनाओ और इतिहास के पात्र-नामो को प्राणवान् कर दिया। इतिहास जीवन्त होकर सामने उपस्थित हो गया[5]।" उनके 'शशाक', 'करुणा' तथा 'ध्रुवा' उपन्यास गुप्त साम्राज्य के उदय एव ध्वस से सबधित थे। 'धर्मपाल' मे उन्होने पालवश के राजा धर्मपाल के स्वर्ण युग को अपनी कृति का थीम बनाया। उनके 'मयूख' तथा 'असीम' क्रमश शाहजहाँ तथा फर्रुखसियर के युग को लेकर लिखे गए है।

मराठी लेखक आर० जी० भण्डारकर (1837-1925) द्वारा प्राचीन भारतीय सभ्यता के आदर्श रूप का चित्रण तथा धार्मिक विश्वासो के मौलिक, प्राचीन एव सनातन स्वरूप के मानवीकरण का विवेच्य लेखको पर गहरा प्रभाव पडा। यद्यपि विवेच्य लेखको ने मध्य युगो के अन्यान्य काल-खण्डो को ही अपने उपन्यासो के कथानको के रूप मे लिखा है तथापि मध्ययुगीन सामन्ती हिन्दू शासको के माध्यम से प्राचीन एव सनातन धार्मिक आदर्शों का मध्ययुगो मे प्रक्षेपण किया है।

1 'प्रेरणा-स्रोत' शीर्षक के अन्तर्गत इसका अध्ययन किया जा चुका है।
2 'बगला साहित्य का सक्षिप्त इतिहास' डॉ० सत्येन्द्र, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उत्तर-प्रदेश, 1961, पृष्ठ 228
3 'हिन्दी उपन्यास कोश', डा० गोपाल राय, पृष्ठ 306
4 'बगला साहित्य का सक्षिप्त इतिहास,' पृष्ठ 227.
5 वही, पृष्ठ 233.

विवेच्य उपन्यासकारो पर भण्डारकर का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रभाव यह था कि वे मातृभूमि के प्रति उत्कट प्रेम रखते हुए भी ब्रिटिश-विरोधी नही थे ।[1] उनका इतिहास के प्रति रवैया उन्नीसवी शताब्दी जैसा था । वे कदाचित् रैंके के इस मत से सहमत थे कि अतीत का वैसा ही पुन प्रस्तुतिकरण किया जाना चाहिए जैसा कि वह वास्तव मे था ।[2]

इसके अतिरिक्त विवेच्य युग में भूदेव मुखर्जी, रमेशचन्द्र दत्त, चण्डीशरण सेन, ननीलाल बद्योपाध्याय तथा हरिसाधन मुखोपाध्याय आदि के ऐतिहासिक उपन्यासो अथवा ऐतिहासिक रोमासो का हिन्दी मे अनुवाद हो चुका था ।

यद्यपि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों एव रोमासकारो ने इन इतिहास-द्रष्टाओ की इतिहास-धारणाओं को ठीक उसी रूप मे नही लिया है तथापि इनकी ऐतिहासिक कृतियो द्वारा ऐसी ऐतिहासिक स्थिति का निर्माण हो चुका था जिसके प्रभावान्तर्गत विवेच्य ऐतिहासिक कथा-पुस्तको का प्रणयन किया गया ।

(II) हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों तथा ऐतिहासिक रोमांसो की प्रवृत्तियां (सामान्य परिचय)

हिन्दी साहित्य के आरम्भिक ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की मौलिक प्रवृत्तियो को पुनरुत्थानवादी पर्यावरण के साथ मध्ययुगीन हिन्दू विश्वासो, परपराओ तथा रूढियों ने प्रभावित किया । इन उपन्यासो की प्रवृत्तियों के स्वरूप का निर्धारण एव निश्चयन करने में तद्युगीन अन्यान्य औपन्यासिक-उपकरणो का भी महत्त्वपूर्ण योग था । उस युग के औपन्यासिक-उपकरणो में रहस्य-रोमाच, सेक्स के माध्यम से मनोरजन, तिलिस्म तथा किस्सा कहना मुख्य थे। अल्पाधिक मात्रा मे ये विवेच्य उपन्यासो में भी उपलब्ध होते हैं । रीतिकालीन शृ गार वर्णन तथा रासोकालीन वीरता एव शौर्य वर्णन इन उपन्यासो की विशिष्ट प्रवृत्ति है ।

(क) जनता से कटकर अन्त पुर एव राजसभाओं की ओर—सामान्यत विवेच्य उपन्यासकार करोडो सामान्य जनो की अतीत युगीन स्थिति एव जीवन का चित्रण करने के स्थान पर शासको,राजाओ एव सम्राटो के अन्त पुरो एव राजसभाओ को अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं । कही-कही सामान्य-जनो के जीवन की ओर भी दृष्टिपात किया गया है, परन्तु वह गौण रूप मे है तथा वीरता एव शौर्य-पूर्ण नायको के व्यक्तित्व को निखारने के उपकरणो के रूप मे । उन्नीसवी शताब्दी तथा बीसवी शताब्दी के आरम्भिक दो दशको मे भारतीय इतिहास-लेखन की सम्पूर्ण धारा ही सामान्य जनता से कट कर शासको, उनके प्रेम एव युद्धो के चित्रण को ही अधिक

1 "Bhandarkar evidently loved his native land, but his more popular writings show no trace of anti-British feeling'
"Modern Historians of Ancient India" reprinted in 'Historians of India, Pakistan and Ceylon' Page 281

2 वही, पृष्ठ 281.

महत्व प्रदान करती थी। इसका विभिन्न उपन्यासकारों की इतिहास-धारणा पर प्रभाव परिलक्षित था।

राजमहलों के दो पक्ष ऐतिहासिक उपन्यासों में अधिक उभर कर आते है। राज-पुरुषों एवं राजकुमारियों के प्रेम-कथा तथा राजनैतिक उथल-पुथल एवं षड्यत्रों से सबधित राजसभायें। जनता से हट कर इन दोनों पक्षों का विशद् चित्रण करने की प्रवृत्ति पर मध्ययुगीन भारतीय परपराओं रूढ़ियों एवं विश्वासों का प्रत्यक्ष प्रभाव है। राजा को देव-तुल्य माना जाता था और राजभक्ति भारतीयों की प्रकृतिगत विशेषता थी।[1]

अन्त पुरों का वर्णन करने में विभिन्न उपन्यासकारों की विशेष रुचि थी। पडित किशोरीलाल गोस्वामी, बलदेवप्रसाद मिश्र, जयरामदास गुप्त, गगाप्रसाद गुप्त, जगन्नीप्रसाद उपाध्याय, मथुरा कृष्ण प्रधान, बाबू युगल किशोर नारायणसिंह आदि उपन्यासकारों के उपन्यासों में अन्त पुरों के विविध पक्षों का विवरण दिया गया है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' उपन्यासों में मुसलमान शाहजादियों तथा महारानी के अन्त पुरों का विशद् वर्णन किया गया है। यह वर्णन गोस्वामी जी की लेखन के माध्यम से मनोरजन करने की प्रवृत्ति से सम्बद्ध है। 'रजिया बेगम' में याकूब जब रजिया को रात के समय एकात में मिलने के लिए जाता है, उस समय रजिया की ख्वाबगाह का वर्णन उल्लेखनीय है,—'हिन्दुस्तान की सुलताना, रजिया बेगम की ख्वाबगाह का वर्णन हम, झोंपड़े के रहने वाले क्योंकर, कर सकते है। ' सुलताना की ख्वाबगाह एक चालीस हाथ लम्बी-चौड़ी बारहदरी थी, जो देखने में बिल्कुल सगमर्मर से बनी हुई मालूम पड़ती थी। वह चिकनी-चिकनी सगमर्मर की पटिया से पटी हुई थी और तरह-तरह के नक्शे बने हुए थे, जिनकी लागत का अन्दाजा करना मानो अपनी अकल से हाथ धोना था। बिल्लौरी भाड़ और हाँड़ियाँ छत की सुनहली कड़ियों में सोने की जजीर के सहारे लटक रही थी और दीवारों में सोने की जड़ाऊ शाखों में बिल्लौरी फानूस चढ़े हुए थे, जड़ाऊ आरिट में जड़ाऊ गुलदस्ते सजे हुए थे। दीवारों में चारों ओर सुनहले जड़ाऊ चौखटे में जड़ी हुई बहुत बड़ी और खूबसूरत तस्वीरें लटकाई हुई थी। कमरे में उतना ही लम्बा चौड़ा मिसर का बना हुआ बेशकीमत और दलदार रेशमी गद्दा बिछा हुआ था, जिसमें शिकारगाह बड़ी ही खूबी के साथ बनाई गई थी। उस गद्दे पर पैर रखने से एक-एक बालिश्त पैर उसमें धँस जाता [2]। याकूब व रजिया का इस ख्वाबगाह् मे-मिलना, रजिया द्वारा याकूब के अमीर उल-उमरा व हकीकी बिरादर

1 'ऐतिहासिक उपन्यास दिशा एव उपलब्धि" पदमलाल पुन्नालाल बख्शी "ऐतिहासिक उपन्यास" पृष्ठ 78

2 "रजिया बेगम" पहला भाग, पृष्ठ 106-107

बनाना तथा फिर अप्रत्यक्ष रूप से यौन सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अनुग्रह करना[1] अन्त पुरो के वर्णन की प्रवृत्ति के ही अंग हैं ।

इसी प्रकार 'तारा' मे भी गोस्वामी जी जहानआरा, रौशनआरा, मोती बेगम तथा सौमन रण्डी के अन्त पुरो का महत्त्वपूर्ण ढग से विवरण प्रस्तुत करते हैं। लगभग समस्त उपन्यास अन्त पुर के आन्तरिक षड्यन्त्रो तथा शाहजादियो की यौन-लीला के विस्तृत विवरणो से आच्छादित है। जहानआरा का दारा[2] शाहजहाँ[3] और इनायतुल्ला[4] के साथ अप्रत्यक्ष सम्बन्ध, जहानआरा की औरगजेब के साथ साँठ-गाँठ, मोतीबेगम के सलावत खाँ के साथ अवैध यौन सम्बन्ध, मुगल बादशाहो के अन्त पुरो की लगभग वास्तविक स्थिति का पुन प्रस्तुतिकरण करते हैं।

इसी प्रकार 'लालचीन' मे व्रजनन्दन सहाय ने अन्त पुरो को उनके वास्तविक रूप मे चित्रित किया है। सम्राट गयासुद्दीन लालचीन की पुत्री के साथ रात्रि बिताने के लिए उसके आमन्त्रण पर उसके दीवानखाने मे जाता है,—"दीवानखाने मे बादशाह के लिए रत्नजटित सिंहासन एक अति सुन्दर स्वर्णतार खचित चन्दवे के नीचे बिछा हुआ था।—गान-वाद्य की भी कमी न थी। सुगंधित पुष्प पुष्पदान मे सजे थे। विविध रग के सुमनो के गुच्छे दीवार मे दरवाजे मे छत मे लटक रहे थे। सुगध द्रव्य से भरे कृत्रिम फौआरे मृदुमद शब्द के साथ उद्गमित होकर चारो ओर सुगध फैला रहे थे। सुषमामयी नर्तकियो के कलकण्ठ-नि सृत सगीत के काकलीमय उच्छ्वास से कक्ष गूँज रहा था।'[5]

मुसलमानी शासको एव शाहजादियो की ख्वाबगाहो के साथ राजपूतो एव मराठो के अन्त पुरो को भी विवेच्य उपन्यासो मे महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। अन्त पुरो अथवा ख्वाबगाहो से उपन्यासकारों का आशय केवल शासको के निवास-स्थान अथवा शयनगृह का चित्रण करने अथवा उनका विवरण प्रस्तुत करने मे ही नहीं है, उनका मूल उद्देश्य मध्ययुगीन सामन्ती जीवन का वह लगभग यथार्थपरक चित्रण करना है, जबकि केवल शासक अथवा उसके दरबारी एव अमीर-उमरा ही सामाजिक, सांस्कृतिक एव राजनैतिक विकास को गति प्रदान करते थे। शासक मुसलमान हो अथवा राजपूत या मराठे मध्ययुगो मे समस्त राजनैतिक एव सामाजिक चेतना की आधार-शिला थे।

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' मे 'शयनगृह'[6] मे सदाशिवराव भाऊ के शयनगृह का चित्रण गोस्वामीजी द्वारा किए गए ख्वाबगाहो के चित्रण से नितान्त

1 वही, पृष्ठ 110-112
2 'तारा' पहला भाग पृष्ठ 2-5
3 वही, पृष्ठ 6 जहानआरा दारा से कहती है,—'बादशाह को हर सहन मैं किसके वास्ते मुट्ठी में लिए रहती हूँ।'
4 'तारा' दूसरा भाग पृष्ठ 5-10
5 'लालचीन', व्रजनन्दन सहाय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, सवत् 1978, पृष्ठ 71
6 'पानीपत' बलदेव प्रसाद मिश्र, पृष्ठ 36-40

विपरीत भूमि पर किया है। भाऊ भारत का मानचित्र सामने रख कर समस्त भारत मे एकछत्र हिन्दू धर्म के मराठा आधिपत्य की परिकल्पना करता है। अपनी पत्नी के साथ भी इसी आशय की बातचीत करता है।

रामजीवन नागर ने भी 'जगदेव परमार' मे अन्त पुरो की आन्तरिक स्थितियो का चित्रण करते हुए मध्ययुगीन सामन्ती अवस्था तथा बहु-विवाह की शोचनीय स्थितियो को कलात्मक शैली मे उभारा है। 'बाघेली का क्रोध'[1] व 'बाघेली का कोप और राजा का शोक'[2] आदि प्रकरणो मे अन्त पुरो की वास्तविक झाँकियाँ उभारी गई हैं।

मध्ययुगीन भारतीय सामन्ती जीवन के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे अन्त पुरो का यह वर्णन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एव आवश्यकीय है, क्योकि यह बहुत सीमा तक लोकहित की राजनैतिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को प्रभावित करता था।

राजसभाएँ—अन्त पुरो के समान राज-दरबारो एव राज-सभाओ के प्रति विवेच्य उपन्यासकारो की उत्कट रुचि उनकी सामान्य-जनता एव जन-जीवन के प्रति विरक्ति की परिचायक है। मध्ययुगो मे भारतीय राजनैतिक शक्ति का मौलिक स्रोत राजा एव बादशाह होता था। राजनैतिक गतिविधियो एव राजनैतिक सत्ता का उत्थान एव पतन तथा विकास एव ह्रास के केन्द्र के रूप मे राजदरबार एव राजसभाओ का वर्णन किया गया है। दरबारी सस्कृति ने मध्ययुगीन भारत के हिन्दू रजवाडो व मुगल बादशाहो को प्रभावित किया था, वही दरबारी सस्कृति राज-सभाओ के विवरणो मे सजीव होकर उभरी है। मध्ययुगीन शासको की स्वच्छन्द, निरकुश एव निष्ठुर सामतवादिता के साथ-साथ उनकी न्यायप्रियता, प्रजा—वत्सलता, दयालुता तथा नीति-चातुर्य भी राजसभाओ के माध्यम मे प्रस्तुत की गई है। तद्युगीन राजनैतिक स्थिति के चित्रण के साथ-साथ वातावरण-निर्माण मे भी यह विवरण सहायक सिद्ध हुए है जबकि सुलतानो एव बादशाहो के दरबारो के शानदार पक्षो को उद्घाटित किया गया है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने रजिया बेगम मे सुलताना के दरबार का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। उपन्यास के पहले भाग के सातवें परिच्छेद, 'दर्बार-ई-सुलताना' मे दिल्ली के राधा वल्लभ मन्दिर के व्यवस्थापक हरि शकर शर्मा के मामले के माध्यम से तद्युगीन राजनैतिक, न्यायिक, सामाजिक एव धार्मिक स्थितियो का चित्रण किया गया है। दरबार का विशद् वर्णन करते हुए गोस्वामी जी लिखते है—'प्रतिदिन आठ बजे से बारह बजे दिन तक सुल्ताना रजिया बेगम दरबार करती थी। जब वह दरबार मे आती, मरदानी पोशाक पहर कर, अर्थात् कबा और ताज पहिर कर तख्त पर बैठती थी।—दरबार मे पहुँचने के लिए तीनो ओर पच्चीस-पच्चीस

1 "जगदेव परमार", रामजीवन नागर, पृष्ठ 7-9
2 वही, पृष्ठ 48-58

डण्डे की सीढ़ियाँ बनी थीं और चौथी ओर से वह महलसरा से मिला हुआ था। महल की दीवार से सटा हुआ बीचोंबीच चार हाथ ऊँचा संगमर्मर का एक चौखटा चबूतरा बना हुआ था, जिस पर सोने का जड़ाऊ सिंहासन रक्खा रहता था—तख्त के सामने नीचे, चबूतरे पर दाहिनी ओर वजीर के बैठने के लिए चाँदी की कुर्सी लगी रहती थी और बाईं ओर पेशकार के बैठने के वास्ते सन्दली कुर्सी। फिर नीचे, अर्थात् दरबार हाल में जमीन में, अमले, अमीर, उमरा, वहददार, जिमींदार इत्यादि अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार बैठते थे। तख्त के सामने वाली जगह खाली रहती थी, वहाँ मुद्दई, मुद्दालह आ-आ कर खड़े होते और नालिश फर्याद करते थे। वहाँ नंगी तलवारें लिए लाल वर्दी वाले सिपाही बराबर कतार बाँधे खड़े रहते और दरबार-हाल के नीचे सजधज कर पाँच सौ सवार खड़े होते थे।[1]. ... ।

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत'[2] के पांचवें अध्याय 'दरबार' में पेशवा बालाजी बाजीराव के दरबार का आलीशान एवं विस्तृत चित्रण किया है। इस दरबार में पेशवा का संस्कृत के श्लोकों सहित शौर्यपूर्ण भाषण, सदाशिवराव भाऊ की मुख्य सेनापति के रूप में नियुक्ति तथा अन्य सरदारों तथा सेना को उनके प्रति वफादार रहने की ताकीद तथा सेना के साथ जाने वाले सरदारों की सूचियाँ आदि मुख्य रूप से दरबारी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनके अतिरिक्त दुर्रानी का दरबार,[3] तथा दिल्ली की विजय के पश्चात् सदाशिवराव भाऊ के दरबार[4] के वर्णन में लेखक ने इतिहास के साथ पूर्ण न्याय करने के साथ-साथ अत्यन्त कलात्मक शैली में मुसलमानों की कूटनीति तथा मराठों के अपार वैभव के साथ-साथ आपसी फूट के विकृत रूप का वर्णन किया है।

रामजीवन नागर ने 'जगदेव परमार' में उदयादित्य के दरबार[5] का सजीव चित्रण किया है। राजसी दरबार के वर्णन के साथ-साथ 'रंडियों, गवैयों, कलावतों, पीरों और भाण्डों का भी वर्णन दिया गया है। यह मध्ययुगीन सामन्ती संस्कृति के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सदस्य थे जबकि ये सभी दरबारी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अभिलेख के अभिरक्षक हुआ करते थे।

बाबू लालजी सिंह ने 'वीरबाला' में तथा बाबू युगलकिशोर नारायणसिंह ने "राजपूत रमणी" में मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के दरबार का उत्तम चित्रण किया है। वीरबाला में 'सम्मति'[6] तथा 'मंत्रणा'[7] नामक परिच्छेदों में और "राजपूतरमणी"

1 रजिया बेगम, पहला भाग, पेज 51-52
2 'पानीपत' पेज 45-65
3 'पानीपत' पेज 255-64
4 वहीं, पेज 293-300
5 'जगदेव परमार' पेज 58-59
6 'वीरबाला' बाबूलाल जी सिंह, श्रीवेंकटेश्वर प्रेस बम्बई, संवत् 1963 (सन् 1906 ई॰) पेज 20-29.
7. वही., पेज 29-36

के छठे परिच्छेद[1] मे राजसिंह की राज्यसभा मे रूपनगर की राजकुमारी रूपवती द्वारा राजसिंह को वरने की कामना तथा औरगजेब से बचाने के उद्देश्य से भेजे गए पत्र पर विचार-विमर्श का वर्णन किया गया है। इस विमर्श में मन्त्री चदावत जी तथा राजपूत सरदारो के अतिरिक्त कविराजा भी महाराणा को औरगजेब से क्षत्रिय कन्या के उद्धार की सलाह देते हैं। सीसौदिया कुल के प्राचीन गौरव तथा आतिथ्य रक्षा के सदर्भ मे राजपूती वीरता तथा रण-प्रियता की मध्ययुगीन सामन्ती प्रवृत्तियाँ उभरी है।

समस्त राजनैतिक निकाय के नियोजक के रूप मे राज्यसभाओं का वर्णन मध्ययुगीन सामन्ती एव दरबारी सस्कृति के पुन प्रस्तुतिकरण के लिए लगभग अनिवार्य है और विवेच्य उपन्यासकारो ने इसका कलात्मक प्रस्तुतिकरण किया है।

ऐतिहासिक उपन्यासो के समान ऐतिहासिक रोमासो मे भी सामान्य जनता से कट-कर अन्त.पुरो एव राजसभाओ का अतिशय चित्रण किया गया है।

ऐतिहासिक उपन्यासो मे अन्त पुरो तथा राजसभाओ के चित्रण की प्रक्रिया के माध्यम से ऐतिहासिक अतीत का पुन प्रस्तुतिकरण किया गया, जबकि ऐतिहासिक रोमासो मे अन्त पुर, ख्वाबगाह, तथा राजदरबार एव राजसभाओ के माध्यम से शासको एव सामान्तो की सामान्य जीवन-क्रिया तथा यौनाचार के साथ-साथ लोकातीत का चित्रण किया गया है। यहाँ अन्त पुर तथा राज-सभायें लोकहित की राजनैतिक घटनाओं के प्रवाह को प्रभावित करने वाले निकाय के स्थान पर विलास एव मधुचर्या के वातावरण को पुन निर्मित करती हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के "लवगलता" "हृदयहारिणी" तथा "मल्लिकादेवी" आदि ऐतिहासिक रोमासो मे अन्त पुरो का चित्रण हास-विलास तथा मधुचर्या के लम्बे विवरणो से भरा पडा है। ऐतिहासिक राजनीति यहाँ पृष्ठभूमि मे चली जाती है। लवगलता के "हार"[2] तथा "जैसे को तैसा"[3] मे क्रमश अन्त पुर से सम्बद्ध उद्यान मे नायक-नायिका का रोमासिक मिलन तथा नवाब सिराजुद्दौला के हरम मे उसे मूर्ख बनाए जाने का चित्रण किया गया है। हृदयहारिणी के "हास-विलास"[4] तथा "सुप्रभात"[5] मे नायक-नायिका के अन्यान्य हाव-भावो का चित्रण किया गया है। "लाल कुवर व शाही रगमहल" तथा "लखनऊ की कब्र" मे अन्त पुरो तथा राजसभाओ का चित्रण नितान्त कामुक-अश्लील एव यौनाचारपूर्ण वर्णनो से भरा पडा है। "लालकुवर" के

1 "राजपूत रमणी" बाबू युगलकिशोर नारायण सिंह, (औरगाबाद, भारतभूषण प्रेस लखनऊ में मुद्रित) 1916 ई, पेज 39-47.
2. 'लवग लता', पेज 30-36
3 वही, पेज 65-70
4 'हृदयहारिणी', पेज 78-83
5 वही, पेज 103-105

"ईद की मजलिस,"[1] "ईद का शरावी"[2] "ईद मे महर्रम"[3] "ईद की तुवायफ"[4] "ईद की शब"[5] तथा "ईद का मजा"[6] नामक परिच्छेदो मे मुलतान के शहजादे जहादार के अन्त पुर तथा राजसभा का नितात वैयक्तिक एव अश्लील ढग से चित्रण किया गया है।

"ताजमहल या फतहपुरी वेगम" मे फतहपुर के दरबार,[7] दिल्ली का दरबार[8] आदि मे मुख्य रूप से शाहजादा खुर्रम तथा फतहपुरी वेगम की शादी के सम्बन्ध मे ही विचार-विमर्श किया जाता है। नायिका उद्यान मे कबूतर के माध्यम मे सदेश प्राप्त करती है[9] तथा अन्त पुर के एकान्त मे पत्र पढती है। इसी प्रकार पाँचवे तथा आठवें परिच्छेद[10] मे नायक के महल मे उसकी विरह का चित्रण किया गया है।

"जया" के छठवें परिच्छेद मे[11] दिल्ली के राजभवन मे अलाउद्दीन केवल जया को ही प्राप्त करने की बात करता है। आठवें परिच्छेद[12] मे जैसलमेर के अन्त पुर के चित्रण मे घरेलू-मामलो को मुख्य स्थान प्रदान किया गया है, जबकि महारानी अपने भाई बीकानेर के राजकुमार सुचेतसिंह के साथ जया की शादी करवाने का प्रयत्न करती है।

जयरामदास गुप्त के "वीर वीरागना" मे "झील की बहार"[13]नामक परिच्छेद मे सिंध के नवाब अहमदशाह की विलास-लीला तथा अतिकामुकतापूर्ण व्यवहार तथा विवाह का उद्योग[14] नामक परिच्छेद मे कनकलता को पाने के लिए विचार-विमर्श ही राजसभा की समस्त प्रक्रिया पर हावी रहता है। इसके विपरीत "राजपूती दरबार"[15] नामक परिच्छेद मे राजपूतो की, अहमदशाह द्वारा कनकलता की माँग किए जाने के प्रति प्रवल प्रतिक्रिया का सजीव चित्रण किया गया है। "प्रतिज्ञा बन्धन"[16] नामक परिच्छेद मे राजपूतो के अन्त पुर उनका, साहस, धैर्य, स्नेह, वीरता, आत्मत्याग तथा

1 लाल कुवर, पेज 1-16
2 वही, पेज 30-34
3 वही, पेज 35-45
4 वही, पेज 46-54
5 वही पेज 72-75
6 वही, पेज 80-85
7 "ताजमहल या फतहपुरी बेगम", पेज 2-3
8 वही, पेज 11-13
9 वही, पेज 6
10 वही, पेज 14-15, 25-29
11 "जया", पेज 38-44
12 वही, पेज 48-52
13 "वीर वीरागना या आदर्श ललना", पेज 8-11
14 वही, पेज 12-15
15 वीरवीरांगना, पेज 16-21
16 वीरवीरागना, पेज 22-27.

अपनी निर्बलता व फूट के प्रति सजगता को चेतना को उभारा गया है। यहाँ भी राजसभा तथा अन्त पुर ऐतिहासिक अतीत एव राजनैतिक घटनाओ के प्रवाह को प्रभावित करने वाले निकाय के स्थान पर जाति के अतीत के गौरव तथा हिन्दू नैतिकता की भावनाओ को ही उभारते हैं।

"नूरजहा" मे 'बेचैनी'[1] "गुलबदन कुटनी"[2] नामक परिच्छेदो मे क्रमश जहाँगीर की विरह-अवस्था तथा मूर्च्छित होना और गुलबदन नामक कुटनी द्वारा नूरजहाँ के विवाह के पश्चात् भी उसे जहाँगीर की ओर मिलाने का प्रयत्न करना (पृष्ठ 56-63) अन्त पुरो के चित्रण का रोमासिक स्वरूप उपस्थित करते हैं। इसी प्रकार "अकबर बादशाह"[3] नामक परिच्छेद मे अकबर तथा अबुलफजल के बीच राजसभा मे केवल जहाँगीर और नूरजहाँ के मामले पर विचार-विमर्श किया जाता है न कि किसी महत्त्वपूर्ण राजनैतिक अथवा ऐतिहासिक विषय पर।

जयरामदास गुप्त के "नवाबी परिस्तान व वाजिदअलीशाह" मे अवध के विलासी नवाब वाजिदअली शाह के हरम का मुख्यत एव राजसभा का गौणरूप मे चित्रण किया गया है। "शाही आरामगाह"[4] नामक झलक मे नवाब के शाही महल तथा उसमे लगे अश्लील भित्ति-चित्रो तथा नवाब के सुबह जागने के समय का वर्णन किया गया है। "नवाब और रोशन आरा"[5] नामक झलक मे नवाब रोशनारा को कई लालच देकर अपने हरम मे दाखिल होने के लिए राजी करने का प्रयत्न करता है। छली छलैय्या'[6], "मतवाला नवाब"[7]तथा "इन्द्र और परिया"[8] नामक झलको मे क्रमश, नवाब द्वारा मद्यपान के पश्चात् बहुत सी बेगमो के साथ अरब मनुव्वल का खेल खेलने, मधुचर्या, तथा क्रीडा का रीतिकालीन ढग से चित्रण किया गया है। "नवाब के दिनो रात का प्रोग्राम"[9] नामक झलक मे आसमानी नामक बेगम नवाब को बेकरार करके एक कत्ल करवाने की आज्ञा प्राप्त कर लेती है। इसी प्रकार "लोम-हर्षक दण्ड'[10] नामक झलक मे बेगमो द्वारा निरीह पुरुषो से दिली आरजू पूरी करने के पश्चात् मार डालने का आतकपूर्ण ढग से वर्णन किया गया है।

इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे अन्त पुर तथा राजसभाये शासको एव

1 "नूरजहा" गगाप्रसाद गुप्त, पेज 8-13
2 वही, पेज 44-45
3 वही, पेज 18-24
4 "नवाबी परिस्तान" दूसरा भाग, पेज 57
5 वही, पेज 10-13
6 नवाबी परिस्तान, दूसरा भाग, पेज 24-25
7 वही, पेज 35-40
8 वही, पेज 41-44
9 वही, पेज 70-75
10 वही, पेज 78-82

राजाओ के हास-विलास, क्रीडा, लीला एव मधुचर्या के स्थलो के रूप में उभर कर आई है।

(ख) इतिहास से रोमांस की ओर—विवेच्य उपन्यासो मे इतिहास के गम्भीर पुन प्रस्तुतिकरण करते समय ऐतिहासिक भावभूमि से एक दम रोमान की ओर कूद जाने की प्रवृत्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यास मे तिलिस्म, तथा रहस्य एव रोमाच की प्रवृत्तियाँ महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावशाली थीं। इन्ही के प्रभाव स्वरूप ऐतिहासिक उपन्यासों मे भी ये प्रवृत्तियाँ स्थान-स्थान पर दृष्टिगोचर होती हैं। सामान्यत यह कहा जाता है कि मनुष्य अपने अतीत के प्रति रोमासिक भावभूमि पर ही विचार करता है। अतीत के यथातथ्य पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास की पुन व्याख्या करते हैं, तथा की अन्य मुख्य औपन्यासिक प्रवृत्तियो के प्रभावान्तर्गत वे रोमासिक स्थितियो एव भावों को भी अपने उपन्यासो मे स्थान देते हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'रजियाबेगम" तथा "तारा" उपन्यासो में रोमास की ओर जाने की प्रवृत्ति मुख्य रूप में उभरी है। उदाहरणत "रजिया बेगम मे गोस्वामी जी आरम्भिक परिच्छेदो मे तद्युगीन स्थितियो का चित्रण करने के पश्चात् "इश्क का आगाज"[1] "दिल का देना और लेना"[2] "आखें लडी"[3] तथा "इश्क इश्क"[4] आदि परिच्छेदो मे रोमासिक प्रवृत्तियो यथा प्रथम दृष्टि-जन्य प्रेम, प्रेम के अन्यान्य क्रिया-कलाप यथा गले लगना तथा चुबन आदि का विवरण दिया गया है।

इसी प्रकार "तारा" मे भी शाहजादी जहानआरा का दारा, शाहजहाँ व इनायतुल्ला के साथ, सलावत खाँ का गुलशन नामक दूती के साथ, नूरुन्नहर नामक मुसाहब का जौहरा नामक दासी तथा रोशनआरा शाहजादी के साथ अनुचित सम्बन्ध रोमासिक तत्त्वो को उभारते हैं। उदाहरणतः "दारा और नूरुन्नहर"[5] 'नूरुन्नहर और जोहरा"[6] "रभा और गुलशन,"[7] "गुलशन और उसकी लाला"[8] 'तारा और दारा"[9] "सलावत और रभा,[10] "तावीज व मुर्गा की तस्वीर,"[11] "रभा और गोशन",[12] रभा

1 "रजिया बेगम," पहला भाग, पेज 31-40
2. वही, पेज 60-66.
3 वही, पेज 67-74
4 वही, पेज 99
5 'तारा' पहला भाग, पेज 24-31.
6 वही, पेज 39-44
7 वही, पेज 68-73
8 वही, पेज 104-105
9. वही, दूसरा भाग, पेज 16-25
10 वही, पेज 22-31
11. वही, पेज 71-75
12. वही., पेज 47-52

श्रौर चद्रावत जी"[1] तथा "तारा श्रौर राजसिंह"[2] श्रादि परिच्छेदो मे रोमासिक स्थितियो एव भावो का चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त "तिलिस्मी सुरगो"[3] व रोमाचमय स्थितियो को भी उभारा गया है।

'लालचीन' तथा 'जगदेव परमार' मे रोमास के तत्त्व अत्यल्प मात्रा मे उभर पाए है जबकि 'पानीपत' मे वे सर्वथा लुप्त हो गए हैं। यह परिवर्तन ध्यातव्य है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो के समान ऐतिहासिक रोमासो मे रोमास के अन्यान्य तत्त्व उपलब्ध होते हैं, यथा शास्त्रीयता विरोध, समकालीनता-विरोध यथार्थ का विरोध आदि का समावेश हुआ है।[4]

इसी प्रकार इन ऐतिहासिक रोमासो मे रोमाटिक तत्त्व प्रचुर मात्रा मे उभर कर श्राए है।[5]

(ग) **काल की धार्मिक धारणा**—प्राचीन भारतीय इतिहास-चेतना तथा पौराणिक काल-चेतना पर आधारित काल की सनातन-हिन्दू धर्म-परक धारणा विवेच्य उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो—की मुख्य प्रवृत्ति है, जो न केवल पात्रो के मनोभावो एव कार्यो को ही प्रभावित करती है प्रत्युत ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को भी नियोजित करती है। भारतीय इतिहास-धारणाओ के अनुसार समस्त मानवीय क्रिया-कलाप कर्मचक्र, नियतिचक्र, कालचक्र तथा पुरुषार्थ-चक्र द्वारा रूपायित होते है। विवेच्य उपन्यासकारो ने इस प्रकार की धार्मिक कालधारणा का अपने उपन्यासो मे उपयोग किया है।

काल की धार्मिक धारणा के अनुसार मनुष्य जगत की सभी घटनाएँ एक अलौकिक शक्ति द्वारा नियोजित की जाती है। मनुष्य अथवा ऐतिहासिक एजेंट केवल निमित्त मात्र ही होता है। इस प्रकार की इतिहास-धारणा विवेच्य उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो की मुख्य प्रवृत्ति है।

पडित बलदेव प्रसाद मिश्र का 'पानीपत' तथा मिश्र बन्धुओ का 'वीरमणि' आद्योपान्त हिन्दू राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत हैं।

(घ) **हिन्दू पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण तथा हिन्दू राष्ट्रीयता**—हिन्दूवादी दृष्टिकोण, विवेच्य उपन्यासकारो के युग के सामाजिक, सास्कृतिक एव धार्मिक पुन जागरण तथा पुनरुत्थान आदोलनो की देन है। सनातन हिन्दू धर्म के आदर्श, उनकी

1 वही, पेज 83-84
2 वही, पेज 85-87
3 'तारा,' दूसरा भाग, पेज 8
4 'ऐतिहासिक रोमासो में रोमास के तत्त्व' शीर्षक के अन्तर्गत छठे परिच्छेद में इस विषय का अध्ययन किया गया है।
5 इसी परिच्छेद मे 'ऐतिहासिक रोमासो मे रोमाटिकता' शीर्षक के अन्तर्गत इन तत्त्वो का अध्ययन किया गया है।

पुनः विवेचना, पुनः स्थापना तथा अतीत की भावभूमि के आधार पर उनका पुनः प्रस्तुतिकरण उपन्यासकारों के लिए एक पुनीत कर्तव्य के रूप में दृष्टिगोचर होता है। धर्म-परक हिन्दू-राष्ट्रीयता भी इन उपन्यासों की एक मुख्य प्रवृत्ति है।

हिन्दूवादी दृष्टिकोण, जो बहुत सीमा तक मुसलमानी विरोध पर आधारित था विवेच्य उपन्यासों को लगभग आद्योपान्त आच्छादित किए हुए है। सनातन-धर्म-परक धार्मिक एवं सामाजिक विश्वासों एवं परंपराओं के प्रति गहरी रुचि एवं आस्था अभिव्यक्त की गई है। प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'रज़िया बेगम' में राधा-वल्लभ मंदिर के प० हरिहर शर्मा का प्रसंग इसी प्रवृत्ति का परिणाम है, जबकि रज़िया हिन्दू धर्म की प्रशंसा करती है।[1] इसी प्रकार 'तारा' में भी जहाँआरा द्वारा हिन्दू धर्म एवं रामायण की प्रशंसा करवाई गई है।[2]

हिन्दू पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण तथा हिन्दू-राष्ट्रीयता का मूल एवं केन्द्रीय साहित्यिक एवं ऐतिहासिक विचार जो ऐतिहासिक उपन्यासों में अतीत के पुनः प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया को नियोजित करता है वही इतिहास-दर्शन ऐतिहासिक रोमांसों में भी अजस्र रूप से प्रवहमान एवं क्रियाशील है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी, जयरामदास गुप्त, गंगाप्रसाद गुप्त तथा सच्चिदानन्द तिवारी आदि ऐतिहासिक रोमांसकारों ने अतीत के पुनर्निर्माण के समय इसी इतिहास-धारणा को मूल कला-विचार (मोटिफ) के रूप में ग्रहण किया है। जब नितान्त रोमांटिक घटनाओं एवं पात्रों के चित्रण तथा रोमांटिक वातावरण के निर्माण में भरपूर होने पर भी यह दृष्टिकोण पात्रों एवं घटनाओं के प्रवाह को प्रभावित करता है, तो यह इन ऐतिहासिक रोमांसों की एक मुख्य प्रवृत्ति के रूप में उभरता है।

1. 'रज़िया बेगम', पहला भाग पृष्ठ 46—जब रज़िया एक बूढ़े फकीर के रूप में मंदिर के प्रबन्धक हरिहर से बातचीत करती है तो कहती है—बेशक आपकी बातों पर मैं यकीन करूँगा क्योंकि यह बात मैं बखूबी जानता हूँ कि हिन्दू कौम से बढ़ कर दुनियाँ में सच बोलने वाली दूसरी जात नहीं है, इस कौम जैसी हमदर्दी दियानतदारी गरीब परवरी, फर्माबर्दारी और पाकरूई दुनियाँ के पर्दे पर किसी दूसरी जात में हुई नहीं।

2. 'तारा' प० किशोरीलाल गोस्वामी पहला भाग, पृष्ठ 14-15, जहाँनारा व तारा संस्कृत व फ़ारसी भाषा के सम्बन्ध में बातचीत करती हैं। तारा—बेगम साहबजादी! अगर तुम संस्कृत पढ़ कर इस का रस चखने काबिल हो जाओगी तो फ़ारसी की फसाहत को एकदम भूल जाओगी और तब तुम खुद इस बात को मानने लगोगी कि सारी दुनियाँ में संस्कृत से बढ़ कर मीठी ज़बान दूसरी हुई नहीं, और इसके बाद ब्रजभाषा या फ़ारसी का नम्बर है।'

जहाँनारा—'शायद ऐसा ही हो और अक्सर उन लोगों से भी मैंने ऐसा ही सुना है जो फारसी और संस्कृत दोनों में अच्छी लियाकत रखते हैं। बाल्मीकि की रामायण के फ़ारसी तर्जुमा के सम्बन्ध में यह कहती है—'सुबहान अल्लाह! क्या ही दिलचस्प और मनोहर कलाम किस्सा है'।

(ङ) **सेक्स के माध्यम से मनोरजन**—डॉ० गोपालराय ने पाठको की रुचि का कथा-साहित्य के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करते समय प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो के पाठको की रुचि के सम्बन्ध मे लिखा था,—"शृ गार चित्रण और काम व्यापार वर्णन मे सामान्यत सभी शैक्षिक स्तरो के किशोर और वयस्क पाठको की, विशेषकर पूर्ववर्ती प्रौढावस्था के लोगो की अत्यधिक रुचि होती है। पाठको की रुचि तथा लेखक की मनोवृत्ति दोनो ही सेक्स के माध्यम से मनोरजन की प्रवृत्ति के अनुरूप हैं।"

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' एव 'रजिया बेगम' उपन्यासो मे इस प्रकार के चित्रण पर्याप्त सख्या मे उपलब्ध होते हैं। 'तारा' मे नूरुलहक और जौहरा के अवैध सम्बन्ध सेक्स परक है, 'नूरुलहक ने बडे चाव से उसका हाथ पकड कर उसे कमरे के अन्दर करके दरवाजा बद कर लिया और उसे पलग पर अपने पास बैठा कर प्यार से कहा—"दिलरुबा,जौहरा बीबी' अफसोस, बीबी तुम्हारी मुहब्बत का यही नतीजा है कि तडपते-तडपते चाहे दम निकल जाय, मगर तो भी मुद्दत तक तुम इस गमजदे की खबर तक न लो।"[1]

इसी प्रकार सलावत खाँ और दूती गुलशन की अवैध क्रियाएँ भी सेक्स के माध्यम से मनोरजन की प्रवृत्ति का पोषण करती हैं।

"सलावत—(गुलशन को अपनी ओर खैंचकर प्यार से) 'अस्तगफिरुल्लाह। लाहौलवला कूवत। प्यारी। तुम्हे क्या मेरी बातो पर यकीन नही होता। अगर तुम्हारे फजल से तारा मुझे दस्तयाब हुई, तो सच जानो, मैं कभी तुम सरीखी खुश एखलाक और हसीन नाजनी को अपने दिल से जुदा कर सकता हूँ? बकौल शख्से,—

खुदा जुदा न करे तुझ परी के सीने से।
कभी हुआ है जुदा नक्श नगीने से?

फिर तो गुलशन ने कब तक वहाँ मुँह काला किया, यह हमे नही मालूम, पर इतना हम जानते हैं कि बडे तडके वह सलावत के कमरे से निकल अपनी बहली पर सवार हो घर गई थी।"[2]

शाहजादी जहाँनारा को रात के दो बजे हकीम इनायतुल्ला, यमुना किनारे वाली बारहदरी मे मिलने के लिए आता है और दोनो प्रेमालाप करते है।[3]

सलावत रात को तारा को मिलने के लिए अमरसिंह के बाग मे पहुँचता है, तो वहाँ उसे रभा मिलती है। वह उसी से कहता है—"खैर, तो तुम्ही सही, तुम क्या कुछ कम हसीन और तरहदार हो? • यहाँ पर तुम भूलती हो, सुनो, राजपूती कौम का यह दस्तूर मुझे मालूम है कि जिस शख्स के साथ राजकुमारियो की शादी

1 'तारा' पहला भाग, पृष्ठ 39
2 वही, पृष्ठ 56-57
3 वही दूसरा भाग, पृष्ठ 4-6

होती है, वह शख्स राजकुमारियो की सहेलियो और बाँदियो के साथ बेखटके मौज कर सकता है, लिहाजा ताराबाई के दस्तयाव करने के बाद तुम पर क्या मेरा हक जायज न होगा।"[1]

जहाँ मुसलमान पात्रो की सेक्स-भावनाएँ अवैध एव विकृत रूप मे प्रस्तुत की गई हैं, वही राजपूत युगलो की यौन प्रक्रियाएँ अत्यन्त वैध, विवाहोपरान्त एव मर्यादापूर्ण रूप मे वर्णित की गई हैं। 'तारा' के तीसरे भाग के दो अतिम परिच्छेदो मे चन्द्रावत जी और रभा तथा राजसिंह और तारा के प्रेमालाप इसी प्रवृत्ति के परिचायक हैं।

उदाहरणत, 'चद्रावत जी ने रभा के गालों को प्यार से चूम कर कहा, "प्यारी सच कहो। तुम्हे हमारी कसम। तुम हमे कितना प्यार करती हो?' रभा ने उस चुंबन का भरपूर बदला लेकर मुस्कराते हुए कहा,—'जितना उस मोहन बच्चे को। जिसकी निस्बत उस दिन मेरी बहिन या जौहरा ने आपने इशारा किया था।"[2]

इसी प्रकार राजसिंह और तारा की यौन क्रियाएँ उल्लेखनीय हैं—'तारा तस्वीर को उलटी कर उठ कर राजसिंह के गले मे लिपट गई और उनके ओठों का हूजारा लेकर हँसती हुई बोली—'आपको उस तस्वीर से क्या मतलब है। वह चाहे किसी की हो।'[3]

'रजिया बेगम' मे भी इसी प्रकार की सेक्स-परक प्रवृत्ति उभरी है। रजिया शराब के साथ-साथ गानेवालियो के सगीत का मजा उठाती है।[4] जाड़े की अँधेरी रात मे रजिया की दासी जौहरा याकूब को बुलाने जाती है। 'यद्यपि रात अँधेरी और जाड़े की थी, पर कामीजनो तक के लिए ऐसा समय बड़े काम का होता है।[5] याकूब रजिया की ख्वाबगाह मे पहुँचता है तो जौहरा वहाँ से टल गई और रजिया ने याकूब की ओर प्यासे नैनो से भरपूर घूर कर कहा,—'मिया याकूब खाँ। आओ भई। मेरे नजदीक आओ बतलाओ तुम किस उलझन मे मुबतिला हो। खुदा के वास्ते अपने दिल की धड़कन दूर करो और आओ, नजदीक आओ।[6] वह याकूब को अपना 'हकीकी बिरादर' बना कर दस हजार की मनसबदारी देकर दबार का अमीर-उल-उमरा बना कर गुप्त रूप से 'दोस्ताना बर्ताव की'[7] बात करती है।

1 'तारा' दूसरा भाग, पृष्ठ 25
2 वही., तीसरा भाग, पृष्ठ 83
3 वही, पृष्ठ 85
4 'रजियाबेगम' पहला भाग, पृष्ठ 36-37
5. 'रजिया बेगम', पहला भाग, पृष्ठ 99
6. वही, पृष्ठ 108
7 वही, पृष्ठ 113

दिल्ली का तख्त खोने के पश्चात् रजिया अल्तूनिया को सैक्स के माध्यम मे ही अपनी मुट्ठी मे करती है। अल्तूनिया रजिया के साथ एक दम शादी करने को तत्पर था। पर रजिया ने इसे एक अन्य कार्य-पूर्ति के लिए प्रयुक्त किया। वह अल्तूनिया की सहायता से पुन दिल्ली पर अधिकार जमाना चाहती है। उदाहरणत "रजिया ने अपनी मर्दानी पोशाक दूर करदी और अल्तूनिया के गले से लपट कर बोली, प्यारे। तेरी आशिक रजिया, तेरे रूबरू है। अब तो तेरे जी मे आवे सो कर।' • अल्तूनिया ने उसे भरजोर सीने मे लगा कर उसके गुलाबी गालो को चूम लिया।"[1]

रजिया के अतिरिक्त याकूब और सौसन[2] तथा अयूब तथा गुलशन[3] की प्रेमक्रीडाएँ भी सैक्स की प्रवृत्ति के अनुकूल हैं।

"जगदेव परमार" मे प० रामजीवन नागर ने वीरमती का जमोती रण्डी के कपटजाल मे फसने तथा कोतवाल के लडके लालजी का वीरमती मे व्यवहार सैक्स-परक है। वह वीरमती से कहता है, 'मैं भी जो चाहता हूँ कर डालता हूँ। जब से मैंने जवानी के जीने पर कदम रक्खा है तब ही से मैं बडा ऐश और आराम करता हूँ मगर तुम जैसी नाजनी मुझे अब तक मुअस्सिर न हुई। इस शहर भर की रंडियो मे जामोती लासानी है उसी का यह मकान है। बस अब देर मत करो। हमारे साथ मौज उडाओ और चैन करो।'

सैक्स के माध्यम से मनोरजन की प्रवृत्ति जहाँ एक ओर विवेच्य युग के सपूर्ण कथा-साहित्य की मुख्य प्रवृत्ति थी वही वह अतीत युगो की सामती विलासिता एव यौनाचार के पुन प्रस्तुतिकरण मे भी सहायक सिद्ध हुई।

ऐतिहासिक रोमासो मे सैक्स के माध्यम से मनोरजन की प्रवृत्ति दो पक्षो मे उभर कर आई है—कामुकता और अश्लीलता।[4] इन ऐतिहासिक कथा-रूपो मे अतीत की कथा भूमि पर अन्यान्य ऐतिहासिक, अर्द्ध-ऐतिहासिक एव अनैतिहासिक पात्रो के क्रिया कलापो के माध्यम से कामुकता तथा अश्लीलता का चित्रण इतनी तन्मयता से किया गया है कि वे एक मुख्य प्रवृत्ति बन गये हैं।

(च) उपदेश (पुराणो आदि से)—प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे सैक्स के माध्यम से मनोरजन के साथ-साथ प्राचीन धार्मिक ग्रन्थो एव पुराणो आदि के माध्यम से उपदेश देने की प्रवृत्ति महत्त्वपूर्ण है। इतिहास, अथवा ऐतिहासिक व्यक्तित्व एव परिस्थितियाँ मनुष्यो को कुछ शिक्षा दे सकती हैं अथवा नही यह एक विवादास्पद विषय है परन्तु विवेच्य उपन्यासकारो ने अपनी कृतियो मे स्थान-स्थान पर उपदेश देने के उपयुक्त अथवा अनुपयुक्त अवसरो का प्रयोग किया है।

1 'रजिया बेगम' दूसरा भाग पृष्ठ 105
2 वही पहला भाग, पृष्ठ 60-66
3 वही, पृष्ठ 67-74।
4 ऐतिहासिक रोमासो मे कामुकता तथा "ऐतिहासिक रोमासो में अश्लीलता" शीर्षको के अन्तर्गत छठे परिच्छेद में इस विषय का विवेचन किया गया है।

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' मे नाना फडनवीस द्वारा कुसगति मे फँस जाने की स्थिति का वर्णन करते-करते पराई स्त्री के सग के सबध मे लम्बा उपदेश दिया है .. . 'थोडे लोन के पडने मे भी दूध फट जाता है, पर स्त्री-गामियो को अपने अविचार पर ध्यान देना चाहिए। जबसे यह व्याधि लगी तब से नाना का चित्त स्थिर नही रहता था। सोचो तो सही कि तुम को किस प्रकार से चोर की भाँति कार्य करना पडता है कितनी रात तुमको तडपते हुए व्यतीत होती है। लाज के मारे कितनी बार नीचे को शर झुकाना पडता है ? कितनी बार माता-पिता बन्धु, मित्र और स्त्री की फटकार सहनी पडती है भगवान् के आगे उत्तर देने मे तुम को अवश्य ही इस घोर पाप के लिये पश्चाताप करना पडेगा।[1] 'इसके पश्चात् लेखक ने मनुस्मृति के एक श्लोक को उद्धृत कर अयोग्य कर्म करने, जीव को मारने तथा पराई स्त्री के सग को 'शरीर के तीन अधर्म' बताया है।[2]

आगे चल कर लेखक ने आत्मा की शुद्धि के पक्ष मे लिखा है,—"केवल शास्त्रपाठ द्वारा ज्ञान-सपादन करने से पाप कार्य करने की वृत्ति दूर नही होती इस कारण मन और शरीर को ऐसी उत्तमता मे वश मे करना चाहिए कि इन्द्रियो को पाप कार्य करने का अवकाश न मिले। आसुरि वृत्ति के अधीन हो कर जीवन धारण करना उचित नही है। पाप कर्म से दूर रहना आत्मा की शुद्धि करना ही उत्तम धर्म है। " आत्म-शुद्धि से अलौकिकता प्राप्त होती है और तदुपरान्त चित्त की प्रसन्नता होने से जो अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है उससे सर्व समय शान्ति रहती है धर्म के प्रकाश से पाप-वासना का नाश होता है।"[3]

इसी प्रकार प० किशोरीलाल गोस्वामी भी कई स्थानो पर उपदेश देते है। रजिया द्वारा याकूब को अत्युच्च स्थान देने तथा दरबारियो के विरोध एव पराजय के पश्चात् रजिया जब अपने ही भाई बहराम खाँ द्वारा मारी गई तो लेखक कह उठा "पाठक। देखा आपने। रजिया के इश्क का नतीजा देखा आपने अफसोस उस बेचारी ने अपनी जवानी मुफ्त खो दी और न उसने सल्तनत का मजा उठाया और न जवानी का।"[4]

ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत पौराणिक आदर्शों के आधार पर उपदेश देने की प्रवृत्ति मुख्य रूप से उभरी है।

(छ) स्वामिभक्ति एव राजभक्ति—आदिम युग से मध्ययुग मे आते [illegible] प्रक्रिया मे कबीले के स्थान पर राजा अथवा शासक सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्रबिन्दु बन गया था जो राजनैतिक सत्ता को नियोजित एव प्रशमित [illegible]

1 'पानीपत', प बलदेव प्रसाद मिश्र पेज 98
2 वही, पेज 100
3 वही पेज 101-102
4 'रजिया बेगम' दूसरा भाग, पेज 113

थी। 'वह राजभक्ति का युग था। मनुष्य राजा मे ही देश की भक्ति की पराकाष्ठा देखता था। राजा ही देश की शक्ति का प्रतिनिधि होता था।'[1] वही एक मात्र व्यक्ति था जो राजनैतिक निकाय को गति प्रदान करता था।[2]

राजा के प्रति भक्ति एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मध्ययुगीन प्रवृत्ति थी जो विवेच्य-उपन्यासो मे भी मुख्य रूप से उभर कर आई है। मध्ययुगीन पात्रो द्वारा अपने शासक एव स्वामि के प्रति भक्ति के प्रदर्शन के साथ-साथ विवेच्य उपन्यासकारो ने समकालीन ब्रिटिश राज्यसत्ता के प्रति भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दिया है।

बाबू बलभद्र सिह ने 'जयश्री' मे मुसलमान विरोधी दृष्टिकोण का प्रतिपादन करते समय ब्रिटिश साम्राज्य के एक अग के रूप मे भारत को शान्तिपूर्ण एव समृद्धशाली रूप मे प्रस्तुत किया है। 'आप अनुमान करते होगे कि जैसा हम लोग सुख और चैन के साथ शान्तिपूर्वक, ब्रिटिश साम्राज्य मे बसते है, वैसा ही तब भी रहा होगा। नही, ऐसा नही है। •• ब्रिटिश साम्राज्य के प्रभामय शासन मे पक्षपात और प्रजा का भी उतना विधान सम्पूर्णत नही है और डाकू, चोर तथा ठग इत्यादि का लेशमात्र भी भय नही है। क्या यवन और ब्रिटिश शासन मे कच और कचन का अन्तर नही है।"[3]

शासक एव स्वामी के प्रति भक्ति की एक प्रबल भावना (जज्बा) "पानीपत" के अधिकाश पात्रो के कार्यों को नियोजित करती है तथा ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने के लिए एक प्रेरणा-स्रोत के रूप मे क्रियाशील होती है। उदाहरण स्वरूप दत्ता जी सेंधिया की स्वामिभक्ति उल्लेखनीय है। अपने अपार शौर्य एव स्वामिभक्ति के कारण उन्होने दुर्रानी के साथ उस समय युद्ध की ठानी जबकि नजीबखाँ और अहमदशाह दुर्रानी मिल कर शक्तिशाली हो गए थे और दत्ता जी सेंधिया को मल्हारराव हुल्कर की सहायता भी प्राप्त न हो सकी थी। दत्ताजी की भार्या भागीरथी को नौ मास का गर्भ था, इस बिंदु पर नारोशकर तथा जानराव बावले ने दत्ताजी को युद्ध न करने की सलाह दी थी। स्वामिभक्त दत्ताजी ने इसे अस्वीकार कर दिया और बोले, 'बेटा बहुत दिन से श्रीमान् सरकार का नमक खाया है। क्या युद्ध को छोड कर स्त्रियो की रक्षा करना तुमको उचित नही जान पडता।'[4]

इसी प्रकार दत्ता जी सेंधिया के मूर्छित हो जाने के पश्चात् राजाराम तथा

1 पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, 'ऐतिहासिक उपन्यास दिशा एव उपलब्धि', "ऐतिहासिक उपन्यास," पेज 77
2 Ancient Historians of India- G S Pathak
3 'जयश्री' बाबू बलभद्रसिह, पेज 45-46
4 'पानीपत' पेज 175.

राघोबाकी उनके जीवन तथा बाद मे उनके शव को प्राप्त करने के लिए किए गए प्रयत्न उनकी स्वामिभक्ति के अमर प्रमाण हैं।[1]

प० रामजीवन नागर ने जगदेव परमार 'मे जगदेव की स्वामिभक्ति का वर्णन कर स्वामिभक्ति की धारणा को उदात्त एव अलौकिक स्वरूप प्रदान किया है। जगदेव राजा के प्राण बचाने के लिए सहर्ष अपना सिर कटवाने को तत्पर हो जाता है—'अहा। इससे बढ कर और मुझे क्या चाहिए। जो तुम राजा का प्राण बचाओ तो मैं अपना सिर काट कर तुम्हारे अर्पण करने को तैयार हूँ।"[2] जब वह अपनी पत्नी से आज्ञा लेने के लिए जाता है तो वीरमती उसे कहती है "इतने दिन से जिनका नमक खाते हैं, आज परमेश्वर ने उसका बदला देने का अवसर दिया है, तो अब देर न करना चाहिए परन्तु पति बिना स्त्री किस काम की ? आप जाते हैं तब मैं रह कर क्या करूँगी ? आपके साथ मैं भी अपना प्राण दूँगी[3]।" इसी प्रकार वे अपने दोनों पुत्रो को भी बलिदान करने को तैयार कर लेते हैं। स्वामिभक्ति का इससे अधिक उत्कृट उदाहरण और क्या हो सकता है।

बाबू लाल जी सिंह के 'वीर बाला' तथा बाबू युगल किशोर नारायण सिंह के 'राजपूत रमणी' उपन्यासो मे राजपूतो की उदात्त एव अनन्य स्वामिभक्ति का उत्तम चित्रण किया गया है। मेवाड के राणा राजसिंह ने रूपनगर की राजकुमारी रूपमती के साथ विवाह करने तथा औरगजेब से उसका उद्धार करने का निश्चय किया। सलूम्बरा के सरदार चद्रावत जी ने औरगजेब को आगरा के पास रोकने का प्रण किया ताकि राणा इस बीच रूपमती को व्याह लावें। चन्द्रावत जी की नव-विवाहिता हाडी रानी जब स्वय को पति की स्वामिभक्ति एव कर्त्तव्यपालन के लिए बाधा समझती है, तो विचारती हैं, " · · स्वामी का चित्त मेरी ओर खिचा हुआ है। मेरे बार बार विश्वास दिलाने और समझाने पर भी उनकी चिन्ता दूर नहीं होती है। जब इनका दिल मेरे में लगा है, तो सग्राम मे इनसे कुछ पराक्रम न हो सकेगा, और इस दशा, मे अपने राणा जी के कार्य सिद्ध करने मे असमर्थ होंगे। एक पत्र लिख सेवक के हाथ मे दिया और एक तीक्ष्ण खग उठा कर अपनी गर्दन पर मारी फिर क्या देर थी सिर धड से अलग गिर पडा, रानी की सुन्दर प्रतिमा पृथ्वी पर छटपटाने लगी।[4]" पत्र मे रानी ने स्वामिभक्ति की बात इस प्रकार लिखी थी, "आप जिस प्रतापी सीसोदिया वश मे उत्पन्न हुए हैं, उनकी प्रतिष्ठा और गौरव को भली भाँति जानते हैं, जिस प्रकार आपके प्रतापी पूर्वजगण अपने धर्म को पालन करते हुए इस नश्वर मानव जगत मे अपनी यशपताका स्थिर कर गये हैं और जिस तरह वह लोग अपनी गौरव-रक्षा, देश-रक्षा, स्वामी के कार्य के लिए सदा ही सु

1 वही पेज 180-88
2 'जगदेव परमार' पेज 117
3 'जगदेव परमार', पेज 118
4 वीरबाला', बाबू लालजीसिंह, पेज 49

धन, दारा, पुत्र, कलत्र और राज्य वैभव को तुच्छ कर वीरतापूर्वक लडकर अपने प्राण गँवाये हैं, इसको आप जानते है परन्तु फिर भी आप अपनी कुलमर्यादाओ के विरुद्ध मेरे कारण इस प्रकार शोकान्वित हो रहे हैं।"[1]

यही कथावस्तु, 'राजपूत रमणी' मे भी वर्णित की गई है। हाडी रानी ने अपनी सखी'मालसी से अपने पति का खड्ग मँगाय खड्ग को हाथ मे लेकर उस दूत को जो उत्तर के लिए पाषाणवत् खडा था सम्बोधन करके कहा कि मैं अपना सिर तुम्हे देती हूँ। इसे अपने स्वामी को मेरी ओर से भेंटस्वरूप देना और कहना कि हाडी जी पहले ही सती हो गई।"[2]

स्वामि-भक्ति एव त्याग की यह प्रवृत्ति भारतीय मध्ययुगो के सामती एव दरबारी जीवन-दर्शन का मेरुदण्ड थी। अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे यह प्रवृत्ति अत्यन्त महत्वपूर्ण स्तर पर उभरी है।

ऐतिहासिक उपन्यासो के समान ऐतिहासिक रोमासो मे भी स्वामि-भक्ति एव राज-भक्ति की प्रवृत्ति अतीत के पुन निर्माण की एक नियोजक शक्ति के रूप मे उभरी है। पडित किशोरीलाल गोस्वामी के 'कनक-कुसुम' मे पेशवा बाजीराव के साथ केवल बीस-पच्चीस सवार ही अपने स्वामी के इशारे पर निजाम के दो हजार सिपाहियो मे जूझ पडते है।[3]

"लवगलता' तथा 'हृदयहारिणी' 'मे नरेन्द्र ईस्ट इण्डिया कम्पनी एव क्लाईव के प्रति वफादार रहता है। इसी प्रकार 'मल्लिकादेवी' मे नायक नरेन्द्र केन्द्रीयशासक गयासुद्दीन बलबन के प्रति वफादार रहता है। 'लाल कु वर व शाही रगमहल' मे सलीमा बेगम की शीरी नामक दासी व रुस्तम नामक खोजा अत्यन्त वफादारी से सहायता करते है।[4]

'ताजमहल या फतहपुरी बेगम' मे इमदाद खाँ, शाहजादा खुर्रम के प्रति वफादार रहता है। 'जया' मे अलाउद्दीन के सिपाहसालार सरफराज खाँ के घेरे मे आने के पश्चात् राजपूत अत्यन्त वीरता से उसका सामना करते हैं, जो स्वामिभक्ति एव राज-भक्ति का अनन्य उदाहरण है।[5]

गगाप्रसाद गुप्त के नूरजहाँ मे बुन्देलखण्ड के राजा नरसिंह देव जहाँगीर के प्रति अपनी स्वामिभक्ति प्रदर्शित करने के लिए अबुलफजल का कत्ल कर देता है।[6]

1 'वीरबाला', पेज 50
2 "राजपूत रमणी", बाबू युगलकिशोर नारायणसिंह, पेज 56-57
3 'कनक कुसुम वा मस्तानी' पेज 7-8
4 'लालकु वर व शाही रगमहल', पेज 40-41
5 'जया', पेज 27
6 'नूरजहाँ, पेज 67-76

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरांगना' में मधुर तथा मञ्जुला नामक काल्पनिक पात्र अपनी जान पर खेल कर क्रमश राजा पर्वतसिंह तथा[1] कनकलता की सहायता करते हैं ।[2]

भारतीय मध्य युगों के पुन प्रस्तुतिकरण, पुनर्व्याख्या तथा पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे स्वामिभक्ति एव राजभक्ति की प्रवृत्तियाँ, इतिहास-धारा, घटनाप्रवाह तथा पात्रो के कार्यो की नियोजक शक्ति के रूप मे ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे अभिव्यक्त की गई हैं ।

(ज) रीतिकालीन शृंगार एव प्रकृति वर्णन—विवेच्य उपन्यासकारो ने अपने युग के एक साहित्यिक-रुचि-सम्पन्न काव्य-रसिक पाठक वर्ग को दृष्टिगत रखते हुए तथा उत्तराधिकार मे प्राप्त साहित्यिक परिपाटियो के अवशेषो के प्रभावस्वरूप अपने उपन्यासो मे रीतिकालीन शैली मे शृगार एव प्रकृति-वर्णन प्रस्तुत किए ।

पण्डित किशोरी लाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासों मे इस प्रकार के शृंगार एव प्रकृति वर्णन बहुलता से प्राप्त होते हैं । 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' मे मुस्लिम शहजादियो के सैक्सपरक सौन्दर्य तथा राजपूत रमणियो के नख-शिख वर्णन के माध्यम से शृंगार का चित्रण किया गया है । 'तारा' के आरम्भ में ही दारा शिकोह तथा जहाँनारा का यौन-सम्बन्ध उद्दाम भोग की रीतिकालीन प्रवृत्ति के अनुरूप है । जब जहाँनारा दारा को शहजादियो के इश्क से दूर रहने के बारे मे कहती है, तो—"दारा ने मन ही मन कहा 'जी हाँ । नहीं है ? बीवी की एक शब भी बगैर किसी को बगलगीर बनाए चैन न आता होगा और तिस पर तुर्रा यह कि हजरत इश्क की लज्जत ही नहीं जानती, फिर बेगम से कहा—'प्यारी हमशीरा तुम सच कहती हो, जबकि शहजादियो की किस्मत मे खुदा ने अक्सर निकाह का होना ही नही लिखा है, तो फिर तुम सरीखी बेचारी नाजनी इश्क के मामलात मे क्योंकर आगाही रख सकती हो ।"[3] इसी प्रकार 'तारा के तीसरे भाग के अन्त मे 'रम्भा और चन्द्रावत जी' (पृष्ठ 83-84) तथा 'तारा और राजसिंह' (पृष्ठ 85-87) नामक परिच्छेदो मे विवाहित दपत्ति के हास-विलास तथा प्रेम का सैक्स-परक वर्णन रीतिकालीन ढग से किया गया है ।

'रजिया बेगम' के पहले भाग के 'दिल का लेना और देना (पृष्ठ 60-66) तथा 'आँखें लडी' (पृष्ठ 66-74) नामक परिच्छेदो मे याकूब व सौसन तथा अयूब व गुलशन के प्रेम की झाँकियाँ तथा हाव-भाव वर्णन रीतिकालीन ढग का है—'याकूब ने सिर उठा कर सौसन की ओर देखा और चार आखें होते ही सौसन ने शरमाकर सिर झुका लिया और याकूब ने आजिजी से कहा,—"खुदारा, ऐसा न फर्माइए आप में और मुझ में जमीन और आसमान को तफावत है ।'[4]

1. 'वीरवीरांगना', पेज 74
2. वही, पेज 94
3. 'तारा' पहला भाग पेज 3
4. 'रजिया बेगम' पहला भाग, पेज 61.

इसी प्रकार जब अयूब और गुलशन पहली बार शाही बाग मे मिलते है, तो "अयूब ने अपने सामने एक परिजमाल को खड़े देखा, जिसे देखते ही वह उठ खड़ा हुआ, पर घबराहट, खुशी, डर और कलेजे की धड़कन से उसकी जबान तालू से ऐसी चिपक गई थी कि उससे कुछ भी बोला न गया। यही हाल उस परी का भी था। एकाएक उस सुन्दरी ने ज्यो ही आखें उठाई कि उसकी आखें अयूब की आखो से बेतरह लड़ पड़ी, किन्तु लाचारी से उस सुन्दरी को ही अपनी आखें नीची कर लेनी पड़ी। यो ही जब दो-चार बार आपस मे नैनो के वार चल चुके, तब कुछ साहस पाकर अयूब ने उस सुन्दरी का हाथ अपने दोनो हाथो मे ले लिया।"[1]

इसी प्रकार प्रेमी युगल के स्पर्शों का शास्त्रीय पद्धति से वर्णन भी रीतिकालीन शृगार वर्णन की प्रवृत्ति का द्योतक है—'अब क्या फकत मैं ही बढूंगा' यो कह कर उसने सौसन का हाथ पकड कर उठाया और उसे चौकी पर बिठा कर उसके बगल मे आप भी बैठ गया उस स्पर्श-सुख से सौसन के रोम-रोम मे सात्विक भाव की तरगे निकलने लग गई थी, और कम्प, रोमज्वर, प्रस्वेद, स्वरभग, वैवर्ण्य आदि सात्विक लक्षण उसके चेहरे और सारे शरीर से प्रकट होने लगे थे। याकूब के मुख और शरीर मे भी यह लक्षण दिखलाई पडने लगे थे।"

सौन्दर्य के साथ प्रकृति का सैक्स-परक-वर्णन भी रीतिकालीन पद्धति पर किया गया है।—'यद्यपि रात अन्धेरी और जाड़े की थी, पर कामीजनो तक के लिए ऐसा समय बड़े काम का होता है। सो जौहरा दो-तीन घडी रात बीतने पर चुपचाप महल से बाहर हुई और बाग मे होती हुई बाग के बाहरी हिस्से के उस ओर पहुँची, जिधर याकूब का डेरा[2] था।' वह वास्तव मे याकूब को रजिया के रगमहल मे ले जाने के लिए गई थी।

ऐतिहासिक उपन्यासो की अपेक्षा ऐतिहासिक रोमासो मे रीतिकालीन सौन्दर्य एव प्रकृति-चित्रण के लिए अपेक्षाकृत अधिक अवसर प्राप्त हुए हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' 'हृदयहारिणी' तथा 'मल्लिका देवी' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे रीतिकालीन शृंगार एव प्रकृति-वर्णन बहुलता मे उपलब्ध होते हैं। "लवगलता" मे सिराजुद्दौला नायिका लवगलता का चित्र देख कर उस पर आसक्त होता है। 'चित्र' (पृष्ठ 25-29) नामक परिच्छेद मे नवाब अपने मुसाहब नजीर को लवगलता के उपलब्ध करने की बात करता है। 'हार' (पृष्ठ 30-36) नामक परिच्छेद मे परम्परावादी ढग से नायक-नायिका का प्रथम मिलन तथा नायक द्वारा नायिका के हार की प्रशसा करना रीतियुगीन एव शास्त्रीय पद्धति के अनुरूप है।[3] 'तस्वीर वाली' (पृष्ठ 38-45) नामक परिच्छेद मे सिराजुद्दौला की कुटनी

1 'रजिया' पहला भाग, पेज 70
2 वही, पेज 99
3 'लवगलता पेज 31

लवगलता को नवाब की तस्वीर प्रस्तुत करने का वर्णन भी रीतिकालीन परम्परा के अनुरूप है। इसी प्रकार 'रूप' (पृष्ठ 80-84) मे नायिका का नख-शिख वर्णन भी इसी प्रवृत्ति का परिचायक है। 'हृदयहारिणी' नामक ऐतिहासिक रोमास मे नायक-नायिका का प्रथम-दृष्टि-जन्य प्रेम रीतिकालीन प्रवृत्ति के अनुरूप चित्रित किया गया है।[1] नायिका के सौन्दर्य का रीतिकालीन शैली मे वर्णन किया गया है।[2] 'नख-शिख' (पृष्ठ 72-76) नामक परिच्छेद मे नायिका के नख-शिख का रीतिकालीन पद्धति से चित्रण किया गया है, जिसमे कालिदास का भी सन्दर्भ दिया गया है।

'लालकुवर व शाही रगमहल' मे 'ईद की मजलिस' (पृष्ठ 1-16) नामक परिच्छेद मे शाहजादे जहाँदार के दरबार मे रडियों के नाच-गाने का सेक्स-परक चित्रण रीतिकालीन पद्धति पर किया गया है।

रामजीवन नागर के 'जगदेव परमार' मे विरह का काम-परक चित्रण रीति-कालीन ढग से किया गया है। 'वीरमती से मिलाप' नामक प्रकरण मे राजकुमारी के विरह का वर्णन तथा प्रकृति के उद्दीपन रूप का वर्णन इसी प्रवृत्ति के अनुरूप किया गया है—'जिस मनुष्य के हृदय मे कामदेव की प्रचण्ड अग्नि जल रही है, उसके ऊपर यदि चन्दन का लेप किया जाए, तो उसका वैसा ही फल होगा जैसा कि कुम्हार के पकते हुए आवा पर कीचड का लेप करने से वह शात नही होता है वरन् और अधिक दहकता है बस यही दशा वीरमती की थी ज्यो-ज्यो शीतल हवा उसके अग पर लगती थी और पक्षियो का मधुर स्वर उसके कानो मे जाता था त्यो-त्यो ही उसका भीतरी दाह अधिकाअधिक होताजाता था। वह बैठी हुई अपने मन ही मन मे कह रही थी—'अरे! अब क्या करूँ? आज शरद् की पूर्णिमा है, सब सखियाँ अपने अपने पति के साथ ऊपरी अटारी पर चढ कर शीतल भोजन करेंगी, सुन्दर वस्त्र पहनेंगी, कपूर मिला कर माथे पर चन्दन लगावेगी और सुखपूर्वक अच्छी तरह शयन करेंगी परन्तु मैं अभागी रो-रो कर मरूँगी। हाय! आज पति का मुख देखे पाँच वर्ष हो गए। यौवन ने अपना राज्य आ जमाया। सारा देह काम की इच्छा से कापता है। हृदय भीतर से जला जाता है परन्तु हमारे पति ने तो हमको बिलकुल चित्त ही से उतार दिया है।"[3]

बाबु युगलकिशोर नारायण सिंह के "राजपूत रमणी" मे अन्तःपुर तथा सौन्दर्य का रीतिकालीन पद्धति से चित्रण किया है। "नवयुवती की उम्र 15-16 वर्ष से अधिक न होगी, उसकी सुन्दरता क्या है? मानो सृष्टिकर्ता की कारीगरी का नमूना है। कभी-कभी यह भी शक हो आता है कि लैम्प ने इतना उजाला हो रहा है कि सुन्दरी की सुन्दरता ने? उसका अग-प्रत्यग सुडौल, उस पर भी मारिणक ने

1 'हृदयहारिणी', पेज 1
2 वही पेज 19
3 'जगदेव परमार', पेज 68-69

जडे हुए आभूषण सोने मे सुगंध वाली कहावत चरितार्थ करते है। उसकी सुन्दरता का वर्णन करना मानो सूर्य को दीपक दिखाना है। सच पूछो तो ब्रह्म ने इस नवयुवती को स्वर्गलोक से उठा कर मृत्यु लोक मे सिर्फ इस गरज से भेजा है, उनकी कारीगरी मनुष्य मात्र पर प्रकट हो जाय।[1] इसी प्रकार रूपवती का सौन्दर्य वर्णन भी इसी प्रवृत्ति के अनुरूप किया गया है—"सुन्दरी की अवस्था 17 वर्ष से अधिक न होगी। कद औसत, बदन पतला, चेहरा खूबसूरत, आँखे मृगो की नाई बडी-बडी बाकी भौहे, ओष्ठ बिम्बाफल सरीखे, दांत मोती की तरह चमकीले, और खुले हुए सिर के बाल कमर तक गिर कर पृथ्वी छू रहे थे।"[2] जब वह औरगजेब के आने का समाचार सुनती है, तो बेहोश हो जाती है।[3] यह भी एक रीतिकालीन प्रवृत्ति है।

बाबू लाल जी सिंह के "वीरबाला" मे रूपमती का विरह-वर्णन रीतिकालीन पद्धति एव शैली मे किया गया है—"ऐसे प्राकृतिक आनन्ददायक समय मे राजस्थान के रूपनगरीय राजभवन मे एक परम लावण्यमयी षोडष वर्षीय बालिका विषण्ण-वदन करतल-आश्रित कपोलो को अजस्र अश्रुधारा से भिगोती पृथ्वी सिंचन कर रही है। कभी सिर उठा कर द्वार की ओर ताकती है, मानो किसी की बाट जोह रही है फिर निराश होकर आह भर कर लम्बी साँस लेती है, आज किसी भाँति कल नही है इसकी दशा से मालूम होता है कि इस पर भारी विपत्ति पडी है ... इसी प्रकार रोती विलखती यह अज्ञात-यौवना बालिका थक कर मूर्च्छित हो धराशायी हुई।"[4]

अगौरी कृष्ण प्रकाशसिंह के वीर चूडामणि मे रीतिकालीन पद्धति मे प्रकृति का चित्रण किया गया है—"प्रात काल हो गया। बाल दिवाकर की सुन्दर किरणे मन को लुभाने लगी। सरोवर विचित्र था। लोग उसकी शोभा देखने मे मुग्ध हो गए। उस सरोवर मे सीढियाँ स्वच्छ स्फटिक की बनी हुई थी। भँवरगण सरोजिनी के मधुर सौरभ से मोहित गान कर रहे थे। समीपवर्ती कदब वृक्ष की नई-नई पत्तियाँ सूर्य की छाया रोक कर जल पर रग-बिरगी की शोभा प्रदर्शित कर रही थी।"[5]

रीतिकालीन सौन्दर्य एव प्रकृति-चित्रण विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की मुख्य प्रवृत्ति है।

(झ) रासो कालीन शौर्य एव युद्धो का वर्णन—विवेच्य उपन्यासकारो ने प्राचीन रासो काव्यो की पद्धति का अनुसरण करते हुए अपने उपन्यासो मे शौर्य, वीरता एव युद्धो का वर्णन किया है। राजपूतो का अनन्य जात्याभिमान, गौरवपूर्ण जातीय इतिहास, अपने धर्म के लिए एक प्रबल भावना तथा स्त्रियो की रक्षा करने के लिए भयानक सग्राम विवेच्य उपन्यासो मे अभिव्यक्त किया गया है। "पानीपत" मे

1 'राजपूत रमणी,' पेज 5
2 वही, पेज 27
3 वही, पेज 28
4 'वीरबाला,' पेज 1-5
5. 'वीर चूडामणि' पेज 92.

मराठों के अपार शौर्य तथा वीरता को भी रासो काव्यों में वर्णित वर्णनों की शैली में ही प्रस्तुत किया गया है। "पृथ्वीराज चौहान" में युद्धों का वर्णन बहुत सीमा तक पृथ्वीराज रासो के ढंग का है।

"पानीपत" में सेना-प्रयाण के तथा मराठों के वीरतापूर्ण युद्धों का वर्णन लगभग रासो काव्यों में वर्णित ढंग से ही किया गया है। उदाहरणार्थ, जनकोजी सेंधिया का केवल सात सहस्र सेना के साथ मुख्य सेनापति सदाशिव राव की आज्ञा के विरुद्ध युद्ध में जाने का वर्णन—"महाराज सेंधिया शत्रु-संहार को यूँ चले जैसे इन्द्र वृत्तासुर का नाश करने चले थे। रण के बाजे बजने लगे। जनकोजी की सम्पूर्ण सैन्य तैयार हो गयी और बिजली के समान चमकती हुई तलवारों को लेकर आगे बढ़ी। समुद्र की तरंगों की नाईं एक दूसरे के साथ मिलते हुए अजित वीरगण मूँछ मरोड़ते नयन तरेरते, सिंहवत् गर्जगर्ज कर यवनों को डराने लगे।"[1]

"पानीपत" में ही पूना से प्रस्थान करती हुई मराठा सेना का वर्णन रासो काव्यों के सेना-प्रस्थानों के वर्णन से मिलता-जुलता है। "अजित सेना"[2] नामक अध्याय में मराठों के शौर्य, कीर्ति तथा यवनों को भारत से निकालने की प्रबल भावना इसी प्रवृत्ति की परिचायक है।

बाबू युगलकिशोर नारायण सिंह के "राजपूत रमणी" में मेवाड़ के सेनापति वीर चूडावत की सेना के प्रयाण का चित्रण रासोयुगीन युद्ध-वर्णनों के अनुरूप किया गया है—"इधर वीर चूडावत पचास हजार मेवाड़ी सिपाहियों के साथ पृथ्वी कँपाते हुए आगरे की ओर कूच कर चुके थे। मंजिल दर मंजिल शीघ्रतापूर्वक तय करते हुए आगरे के निकट पहुँच कर उन्होंने अपना डेरा जमाया। औरंगजेब ने अपने एक सेनापति को अपना प्रतिनिधि स्वरूप भेज कर चंदावत जी से मार्ग देने के हेतु निवेदन किया। चंदावत जी को मार्ग देने पर राजी नहीं जान कर भय भी दिखलाया परन्तु कहीं स्यार से सिंह डर सकता है।"[3]

बाबू सिद्धनाथ सिंह के "प्रण-पालन" में भी युद्ध का वर्णन इसी प्रवृत्ति का परिचायक है—"राठौर अपना शस्त्र लेकर चूडाजी पर प्रहार करने लगे, तब चूडाजी ने भी अपनी तलवार खींच ली और सिंह जैसे शृगाल पर टूटता है, उसी प्रकार राठौड़ों पर प्रहार करने लगे और उन्हें काट-काट कर भूशायी बनाने लगे।"[4]

बाबू लाल जी सिंह के "वीर बाला" में वीर चंदावत के सेना-प्रयाण तथा उसके औरंगजेब के साथ भयानक युद्ध का वर्णन रासो काव्यों की पद्धति से किया गया है—"प्रातःकालिक शीतलवायु के संसर्ग से मेवाड़ियों की सुन्दर पताकाएँ फहरा

1 'पानीपत' पेज 343
2 वही, पेज 104-106
3 'राजपूत रमणी', पेज 62
4 'प्रण-पालन', पेज 52

रही है । प्रबल वैरियो का हृदय कँपाने वाला रण का डका घर, खेत, मैदान,कोट,गढ और पर्वत की चोटियो पर सब जगह सुनाई दे रहा है। ससार को चकित करने वाले इस वीर समारोह ने मानो आज उदयपुर को मानव समुद्र बना दिया है। रणवाद्य के साथ-साथ मगलवाद्य और मगल गीतो के साथ-साथ वीर रस के गीत टकरा-टकरा कर समुद्रवत् लहर मार रहे हैं।"[1] .क्रमश दोपहर हो गया भास्कर देव ने अपनी प्रखर किरणो से ससार को उत्तप्त कर दिया उसके साथ-साथ वीरो का उत्साह भी गरम होता जाता है, दोनो ओर के योद्धा रणमद से मत्त अपने कार्य मे लीन है । हजारो शूरवीर गिरकर वसु धरादेवी की गोद मे लोट-लोट कर छटपटा रहे हैं। उनकी पुकार अश्वो की हिनहिनाहट, आहत हाथियो का चीत्कार, चारण और नकीबो की गम्भीर उत्तेजक विरुदावली का गगनभेदी स्वर और वीरो की ललकार के साथ बर्छो-खगो की झनकार और चमचमाहट का भयकर दृश्य उस मध्याह्न काल के सूर्यताप मे प्रलय का बोध कराता है ।[2]

इस प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास स्वर्णिम हिन्दू अतीत के आदर्शो को भारतीय मध्ययुगो मे प्रक्षेपित करने की मूल प्रवृत्ति तथा मध्ययुगीन सामन्ती सभ्यता एव सस्कृति के पुनर्निर्माण एव पुनर्व्याख्या के साहित्य-विचार द्वारा ही नियोजित होते है । अन्त पुर एव राज्य सभाएँ, उनका ऐतिहासिक एव रोमासिक पद्धति से वर्णन, हिन्दू धर्म के सनातन स्वरूप का मध्य युगो मे प्रक्षेपण एव पुन स्थापन सैक्स, अपराध तथा उपदेश के विरोधाभास विवेच्य ऐतिहासिक-कथापुस्तको की प्रवृत्तियाँ है । मध्ययुगो के चित्रण की प्रक्रिया मे स्वामिभक्ति, राजभक्ति, रीतियुगीन शृगार एव प्रकृति-चित्रण तथा रासोयुगीन वीरता एव शौर्य का वर्णन मुख्य रूप मे उभरे है ।

अत' उपर्युक्त नौ सामान्य प्रवृत्तियाँ ही हिन्दी मे दोनो प्रकार के कलारूपो का स्वरूप निर्धारण करती हैं । इन प्रवृत्तियो के फलस्वरूप ही उपन्यास-शिल्प, भाषा और शैली, चरित्र-चित्रण आदि के तकनीक आदि भी नियमित हुए हैं।

आगे के अध्यायो में हम इन्हे ही लेंगे ।

---

1 'वीर बाला', पेज 55
2 'वीर बाला', पेज 81

5 ऐतिहासिक उपन्यासकारों की इतिहास-धारणायें तथा उपन्यासों के शिल्प तथा चक्र

पिछले अध्याय के अनुक्रम में अब आगे प्रेमचन्दपूर्व उपन्यासकारों की इतिहास-विषयक धारणाओं का अनुशीलन कर सकते हैं। उन्होंने अपने-अपने ढंग से पुनर्व्याख्याएँ की हैं, किन्तु उनकी प्रतिक्रियाएँ एक व्यापक सांस्कृतिक पैटर्न के अन्तर्गत समाविष्ट हो सकती हैं।

इसी तरह उनके उपन्यास-शिल्प के प्रयोग इतने विपुल और विविध हैं कि अनेक परवर्ती दिशाएँ उन्हें विकास देती हैं।

अब हम दोनों पक्षों का निरूपण करेंगे।

(I) ऐतिहासिक उपन्यासकारों में इतिहास की धारणाएँ तथा पुनर्व्याख्याएँ

इतिहासकार के समान ऐतिहासिक उपन्यासकार (ऐतिहासिक रोमानकार भी) भी मानवीय अतीत के देश एवं काल की सुनिश्चित सीमाओं में बद्ध [illegible] कालखण्ड को अपने अध्ययन का क्षेत्र बनाता है। अध्ययन की प्रक्रिया में दोनों—इतिहासकार तथा ऐतिहासिक उपन्यासकार—नितान्त विपरीत दिशाओं में [illegible] हैं। इतिहासकार अपेक्षाकृत अधिक वैज्ञानिक खोज-पद्धति का आश्रय लेकर [illegible] अतीत के रहस्यों का उद्घाटन करता है जबकि ऐतिहासिक उपन्यासकार [illegible] अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड को अपने उपन्यास के रूपान्तर [illegible] और उस विशिष्ट काल तथा देश की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक [illegible] स्थितियों का पुनः प्रस्तुतिकरण एवं उनकी पुनर्व्याख्या करता है। [illegible] कलाकृति होती है। अतीत के पुनः प्रस्तुतिकरण एवं पुनर्व्याख्या की [illegible] लेखक की इतिहास-धारणा उभर कर आती है। मानवीय अतीत के प्रति [illegible] दृष्टिकोण, युग विशेष के प्रति एक भावावेग, अन्तहीन (अनन्त) [illegible] प्रवाह की चेतना तथा एक विशिष्ट इतिहास-दर्शन लेखक की [illegible] प्रभावित करता है। यह विशिष्ट इतिहासचेतना, जिससे ऐतिहासिक [illegible] ऐतिहासिक उपन्यास अनुप्राणित होते हैं, [illegible] होती है।

सामान्यतः कुछ ऐतिहासिक तथ्य सभी इतिहासकारों तथा [illegible] उपन्यासकारों के लिए समान ही होते हैं। यह कुछ तथ्य [illegible]

उपन्यास के कथानक की रीढ की हड्डी होते है। इन्ही मूल तथ्यों को आधार बना कर जब उपन्यासकार अतीत का पुन प्रस्तुतिकरण करने की प्रक्रिया से गुज़र रहे होते हैं, तो अतीत के स्वरूप एव तथ्यो मे एक सूक्ष्म परिवर्तन आ जाता है इस परिवर्तन का मूल कारण उपन्यासकार की इतिहास-धारणा ही होती है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो की इतिहास-धारणा ने इतिहास के तथ्यो एव उनके स्वरूप को काफी प्रभावित किया है। उनकी इतिहास-धारणा मध्ययुगीन विश्वासो एव परम्पराओ पर आश्रित है।

इन्ही मध्ययुगीन तथा समकालीन विश्वासो के आधार पर विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने इतिहास की पुनर्व्याख्याएँ भी प्रस्तुत की। जो धार्मिक पूर्वाग्रहो, सामाजिक सघातो, सास्कृतिक पुनर्जागरण तथा समकालीन निराशावादी प्रवृत्ति द्वारा प्रभावित थी।

(क) इतिहास की धारणाएँ—प्रेमचन्द्र-पूर्व ऐतिहासिक-उपन्यास लेखक सामान्यत भारतीय इतिहास-चेतना द्वारा अनुप्राणित थे। यद्यपि बीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक दशको मे विश्व इतिहासवाद तथा इतिहास-खोज की वैज्ञानिक एव आधुनिक पद्धतियो की ओर अग्रसर हो रहा था, तथापि विवेच्य उपन्यासकार मूलत एव मुख्यत भारतीय इतिहास-दर्शन से प्रेरणा ग्रहण करते थे। वे अग्रेज इतिहासकारो की कृतियो को सम्मान की दृष्टि से देखते थे तथा मुसलमान इतिहासकारो के प्रति पूर्वाग्रही थे।[1] मूलत हिन्दू दृष्टिकोण से परिचालित ये उपन्यासकार मुस्लिम-विरोध के आधारभूत मतवाद द्वारा ही ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की धर्म-शास्त्रीय ढग से व्याख्या करते थे। कही-कही तद्युगीन हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा धार्मिक सहिष्णुता की चर्चा ऐतिहासिक समस्याओ एव घटनाओ के सदर्भ मे की गई है।

(i) स्वच्छन्द इच्छा एव महान् व्यक्ति (नायक पूजा) की धारणा—विवेच्य उपन्यासकार सामान्यत 'स्वतन्त्र मानवीय इच्छाओ' द्वारा ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया के सिद्धान्त के समर्थक थे, परन्तु उनकी यह धारणा भी इतिहासवाद से सम्बद्ध थी। उनके उपन्यासो के पात्र सामान्यत अपनी इच्छा के अनुकूल कार्य करके ऐतिहासिक घटनाओ के प्रवाह का निर्माण करते है।

1 देखिए—(क) "तारा" किशोरीलाल गोस्वामी निवेदन 1902 (प्रथम सस्करण) पेज ख घ (नोट, तारा के दूसरे व तीसरे भाग के दूसरे सस्करण से ही उद्धरण दिए गए हैं, दूसरे सस्करण मे उपन्यास का नाम "तारा व क्षत्रकुल कमलिनी" रख दिया गया। हिन्दी उपन्यासकोश डॉ० गोपालराय 1968, पेज 127)

(ख) जयश्री—बाबू बलभद्रसिंह, दूसरा सस्करण 1923 ई०, काशी, पृष्ठ 48-49 (नोट—इस उपन्यास का पहला सस्करण सन् 1911 ई० में उपन्यास बहार आफिस द्वारा ही प्रकाशित किया गया था।—'उपन्यास कोश', पृष्ठ 143)।

इन उपन्यासकारों की, स्वच्छन्द-मानवीय इच्छा की इतिहास-धारणा के पीछे नायक-पूजा[1] की मध्ययुगीन प्रवृत्ति एक प्रबल केन्द्रीय अभिप्राय (मोटिफ) के रूप में क्रियाशील है। यद्यपि मनुष्य, वह महान् पुरुष भी क्यों न हो अपने पर्यावरण एव युग की उपज होता है तथापि विवेच्य उपन्यासों के नायक अथवा नायिका अपने परम प्रभावशाली एव केन्द्रोन्मुख व्यक्तित्व के कारण उपन्यास के समस्त कथानक एव घटनाओ के नियन्ता एव परिचालक के रूप में उभरे हैं। उनकी मनोकामनाएँ इच्छाएँ, आकाक्षाएँ एव मतिपद-विचार कथा-प्रवाह को प्रभावित करते हैं तथा इतिहास को एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते हैं।

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' मे मुख्य सेनापति की स्वच्छन्द इच्छा तथा मनोविज्ञान का विशद चित्रण करते हुए उसे ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की नियोजक-शक्ति के रूप मे प्रस्तुत किया है। उदाहरणत युद्धोन्मत्त मराठा सेना के सेनापति सदाशिवराव भाऊ की महत्त्वाकाक्षाएँ तथा समस्त भारत पर हिन्दू राज्य की स्थापना का स्वप्न[2] पेशवा बाला जी बाजीराव की सनातन-धर्म की पुन प्रतिष्ठा की अचल प्रतिज्ञा[3] तथा नाना फडनवीस की अद्वितीय प्रतिभा एव धर्म-प्रेरक राष्ट्र भक्ति[4] उपन्यास के अधिकाश कार्य-व्यापार के नियोजक तत्त्व है। सेनापति की स्वच्छन्द इच्छा जो मल्हार राव हुल्कर, सूरजमल तथा जनकोजी सेंधिया सरीखे वीर एव कुशाग्रबुद्धि सहयोगियो की उचित सलाह को (अवमाननापूर्ण ढग से) निरस्त करती है[5] ऐतिहासिक घटनाओ को प्रभावित करने के साथ साथ उन्हें एक निश्चित दिशा भी प्रदान करती है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'रजिया बेगम' तथा 'तारा' उपन्यासों मे पात्रो की स्वेच्छा ही ऐतिहासिक घटना-प्रवाह की मुख्य प्रेरणादायिनी शक्ति है। 'रजिया बेगम' मे रजिया एक चतुर एव शिक्षित साम्राज्ञी के रूप मे तो अवश्य उभर कर आई है परन्तु वह राजनैतिक एव व्यक्तिगत दोनो ही स्तरों पर नितान्त स्वेच्छाचारी स्त्री के रूप मे उभर कर आई है। वह याकूब के साथ प्रत्यक्ष मे 'हकीकी' [illegible] का सम्बन्ध रख कर भी उसके साथ अवैध यौन सम्बन्ध स्थापित करके 'मस्ता [illegible] शाद' करने का उपकरण बनाना चाहती है। इसीलिए वह उसे सनसवदारी [illegible]

1 विवेच्य उपन्यासकार, पुनरुत्थान एव पुनर्जागरण के युग से सम्बन्धित थे। [illegible] हिन्दू नायक इनके लिए आदर्श-स्वरूप थे। भारतीय साहित्य मे ऐतिहासिक उपन्यास का प्रारम्भ देश के पुनर्जागरण के युग मे होता है। बकिमचन्द्र व रमेशचन्द्र आदि के [illegible] के साथ जातीय भावना निहित है।' [illegible] 'ऐतिहासिक उपन्यास [illegible] निबन्ध "ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप" डॉ० गोविन्दजी द्वारा सम्पादित [illegible] 1970 इलाहाबाद, पृष्ठ 70

2 'पानीपत' प० बलदेव प्रसाद मिश्र, भारत मित्र प्रेस, कलकत्ता 1902 पृष्ठ 36-44

3. वही, पृष्ठ 56-58

4 वही पृष्ठ 102-103

5 वही, पृष्ठ 124-130 तथा 292-295

अमीर-उल-उमरा बनाती है ।[1] सेना व अमीरों द्वारा अपदस्थ कर दी जाने के पश्चात् वह एक अत्यन्त महत्त्वाकाक्षी नारी के रूप मे पाठको के सम्मुख आती है । अलतूनिया के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित कर, उसका अपनी आकाक्षाओ की पूर्ति के लिए प्रयोग करती है ।[2] स्वेच्छापूर्ति के लिए वह अच्छे अथवा बुरे किसी भी कार्य को कर सकती है और यही प्रवृत्ति ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को नियोजित करती है ।

महान् व्यक्तियो की इच्छाशक्ति तथा उनकी प्रेरकशक्तियो का ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने पर प्रभाव 'तारा' मे वर्णित घटना-प्रवाह मे स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । जहानआरा हो अथवा रोशनआरा, दारा हो अथवा औरगजेब, अमरसिंह हो अथवा सलावतखा सभी स्वेच्छापूर्वक कार्य करते है, और इस प्रकार इतिहास के घटना-क्रम का निर्माण करते है । लगभग सभी पात्र स्वतन्त्र इच्छा के सिद्धान्त द्वारा परिचालित होने पर भी 'तारा' मे एक महान् व्यक्ति एव नायक के रूप मे उदयपुर के कुमार राजसिंह आदर्श नायक के रूप मे उभर पाए है । शाहजहाँ अथवा अन्य दरबारियो के साथ खुला सघर्ष न कर के भी वे अपनी मनोकामना अर्थात् तारा का उद्धार करने मे सफल होते है ।

रामजीवन नागर कृत 'बारहवी सदी का वीर जगदेव परमार' नायक पूजा की प्रवृत्ति तथा इतिहास-प्रवाह के नियन्ता के रूप मे एक महान् पुरुष की धारणा का सर्वोत्तम उदाहरण है । सामन्ती धारणाओ, अभिमानो एव आकाक्षाओ से पूर्ण जगदेव परमार नितान्त विपरीत परिस्थितियो मे भी जीवन के उच्चतम उद्देश्य प्राप्त करता है । चौबीसवे प्रकरण मे लेखक काल के प्रवाह द्वारा जगदेव की दीन एव समृद्ध स्थितियो का चित्रण करता है ।[3]

व्रजनन्दन सहाय कृत 'लालचीन' मे गुलाम लालचीन अपनी महत्त्वाकाक्षाओ के वशीभूत होकर सम्राट गयासुद्दीन की आखे फोड कर उन्हे कैद कर लेता है,[4] और स्वय सम्राट बन बैठता है । यद्यपि लालचीन का यह कार्य स्वतन्त्रेच्छा के सिद्धान्त की पुष्टि करता है तथापि वह महान व्यक्ति अथवा नायक के रूप मे उभर कर नही आता ।

गगाप्रसाद गुप्त के उपन्यास 'हम्मीर' मे, उपन्यास का नायक [illegible] निर्माता हो एव नितान्त विपरीत परिस्थितियो मे जीवन के उच्चतम लक्ष्य एव उद्देश्यो को स्वेच्छापूर्वक अपने वीरतापूर्ण कार्यो द्वारा प्राप्त करता है । [illegible]

1 'रजिया बेगम या रगमहल मे हलाहल' किशोरीलाल गोस्वामी, 1904 पेज 111-113
2 वही 101-108
3 [illegible]
4 'लालचीन' व्रजनन्दन सहाय [illegible]

उत्कट प्रेम तथा चित्तौड के प्रति एक रागात्मक भावावेग के वशीभूत होकर हम्मीर अपने पूर्वजो के खोए हुए राज्य को पुन प्राप्त करता है।[1] स्वतन्त्र मानवीय इच्छा तथा एक महान् व्यक्ति की धारणा का यह एक उत्तम प्रमाण है। जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के उपन्यास 'पृथ्वीराज चौहान' मे तथा गंगाप्रसाद गुप्त के 'वीर पत्नी' मे अंतिम महान् हिन्दू राजा पृथ्वीराज चौहान का चित्रण भी व्यक्ति की स्वतन्त्र इच्छा तथा एक महान् व्यक्ति एव नायक की धारणा के अनुरूप किया गया है जबकि नायक अपनी प्रेमिका सयोगिता को प्राप्त करने के लिए भयानक युद्ध एव नरसंहार का आश्रय लेता है।[2]

बाबू लालजीसिंह के 'वीर बाला' तथा युगलकिशोर नारायणसिंह के 'राजपूत रमणी' मे मेवाड के राणा राजसिंह के कार्य गम्भीर मन्त्रणा तथा कूटनीतिक बुद्धिमत्ता द्वारा परिचालित होने पर भी स्वतन्त्र मानवीय इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हैं। केन्द्रीय शासक एवं शोषणकर्त्ता औरंगजेब के विरुद्ध कई सफल नैतिक अभियानो के कारण वह एक आदर्श राजपूत नायक के रूप मे उभरे हैं।

अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह के 'वीर चूडामणि' तथा सिद्धनाथ सिंह के 'प्रण पालन' मे मेवाड के राणा लाखा के बेटे चूडा जी की शौर्यपूर्ण विजय तथा स्वेच्छा-पूर्वक अपने कनिष्ठ भ्राता के लिए राजसिंहासन का उत्तराधिकार त्याग देना स्वतन्त्र मानवीय इच्छा तथा नायकत्व की धारणा का पोषण करते हैं।

मुंशीदेवी प्रसाद के 'रुठी रानी' के नायक मालदेव द्वारा बहुत से नगरो एव राज्यो की विजय उन्हें नायक की श्रेणी मे ला खडा करती है।

विवेच्य उपन्यासो मे यद्यपि भारतीय मध्ययुगो की राजनैतिक सामाजिक धार्मिक एव सांस्कृतिक परिस्थितियो का लगभग इतिहास-परक चित्रण किया गया है तथापि घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया मे एक महान् व्यक्ति एव स्वतन्त्र मानवीय इच्छा नियोजक शक्ति के रूप मे उभर कर आए हैं।

(ii) कालचक्र—मूलत भारतीय इतिहास-चेतना से प्रभावित होने के कारण विवेच्य उपन्यासकारो ने इतिहास को सामान्यत कार्य-कारण शृंखला नहीं प्रत्युत आवागमन के सिद्धान्त के रूप में व्याख्यायित किया। कालचक्र की इतिहास-धारणा के अनुसार प्रत्येक कल्प मे एक ही प्रकार की घटनायें घटित होती हैं, इसलिए ससार मे साम्राज्यो का उत्थान-पतन, राजवशो का आवागमन तथा मानुषिक अस्तित्व की निरर्थकता का विवेच्य उपन्यासो मे वर्णन किया गया है।

'पानीपत' मे पडित बलदेव प्रसाद मिश्र ने दिल्ली पर मराठो के अधिकार का वर्णन करते समय कालचक्राश्रित इतिहास-धारणा की ओर सकेत किया है—"चक्रवर्ती भूपालगण। आप लोग गर्व न कीजिये। घडी मे घडियाल हो जाता है। बडी-बडी

1 "हम्मीर" गंगाप्रसाद गुप्त, पेज 35
2. "वीर पत्नी", गगाप्रसाद गुप्त, उपन्यास दर्पण कार्यालय काशी, सन् 1903, पेज 21-22

अजित सेना छोटे-छोटे सग्राम मे मारी गई है। बडे-बडे राजा-महाराजाओ को छोटे-छोटे सरदार और छोटे-छोटे राजाओ ने नाक चने चबवा कर हराया है। बडे-बडे चक्रवर्ती और शस्त्रधारियो के राज्य कालचक्र के फेर मे आकर छिन्न-भिन्न हो गये हैं। केवल बादशाहत से ही इस विषय का सम्बन्ध नही है, वरन्, ससार के समस्त क्षणभगुर प्राणियो से इसका सबध है। जन्मा है, सो मरेगा, खिलेगा सो मुरझायेगा, फूलेगा सो झरेगा इस सिद्धान्त के सूत्रो का खण्डन आज तक किसी ने नही किया और न किसी मे इसका खण्डन करने की बुद्धि है।[1]"

रामजीवन नागर ने "जगदेव परमार" मे भी नायक की दीन स्थिति से अत्यन्त समृद्ध स्थिति तक पहुँचने का वर्णन करते समय इसी प्रकार की इतिहास-धारणा व्यक्त की है, "एक दिन तो वह था कि जगदेव वस्त्ररहित नगे पैरो बिना सवारी राजमहल से अपने स्थान पर आया था, पेट भरके अच्छी तरह खाना तक नही मिलता था और तिस पर भी सदा रानी बाघेली का ताना सुनना पडता था और एक यह भी दिन है कि आज वही जगदेव सुख से दिन व्यतीत करता है, ' आज दास-दासियो की कमी नही है, हुकम मे सिपाही, घोडे, रथ, पालकी और हाथी तक सदा तैयार रहते हैं, प्रतिष्ठा भी ऐसी है कि पाटन नगर का राजा सिद्धराज उसको उठ कर अपने पास बिठलाता है राजा सिद्धराज तो केवल गाद्दी पर बैठने का राजा है परन्तु राज्य का सारा प्रबन्ध करने वाला जगदेव ही है, राज्य कार्य की लगाम उसही के हाथ मे है और पाटन का वास्तविक राजा जगदेव ही बना हुआ है।"[2]

प० किशोरीलाल गोस्वामी, गगाप्रसाद गुप्त, जयराम गुप्त, जयती प्रसाद उपाध्याय तथा लालजी सिंह ने स्पष्टत कालचक्र को ही ऐतिहासिक घटनाओ की नियोजक शक्ति के रूप मे प्रस्तुत किया है।

(iii) **नियतिचक्र**—विवेच्य उपन्यासकार ऐतिहासिक परिणामो के स्थान पर नियतिचक्र के सिद्धान्त पर आस्था रखते थे। उनके विचारानुसार नियति ही इतिहास के घटना-प्रवाह की नियोजक शक्ति है, इस प्रकार पात्रो की नियति ही ऐतिहासिक प्रारब्ध बन जाती थी।

भारतीय इतिहास धारणा के अनुसार नियति द्वारा ही समस्त घटना-क्रम निर्धारित होता है और यह बुद्धि से अगम्य है। भाग्यवाद की धारणा भी इसी सिद्धान्त पर आधारित है, जो विवेच्य उपन्यासो की घटनाओ को प्रभावित करती है।

'पानीपत' मे मिश्र जी ने लिखा है, "जो होनी है, वह अवश्य होकर रहती है।"[3] इसी प्रकार, 'जगदेव परमार' मे रामजीवन नागर जगदेव के भाग्य के सबध

1. 'पानीपत', पेज 291
2. "बारहवी सदी का वीर जगदेव परमार" रामजीवननागर, श्री वैंकटेश्वर प्रेस बबई, स० 1969, पेज 139-40
3. 'पानीपत', पेज 291

में लिखते हैं· · ·· · 'स्त्री के चरित्र और पुरुष के भाग्य को देवता भी नहीं जान सकते फिर मनुष्य की कौन कहे। जब भाग्य उदय होता है, तो रंक को राजा बना देता है, दीन को धनी कर देता है और भिखारी को अमीर बना देता है।"[1]

पंडित किशोरीलाल गोस्वामी के विचारानुसार घटित होने वाली प्रत्येक घटना के पार्श्व में ईश्वर एक नियोजक शक्ति है। भुवनेश्वर मिश्र को मारते समय एक डाकू का शेर द्वारा मारा जाना तथा ठीक उसी समय राजसिंह की गोली द्वारा शेर का मारा जाना इसका प्रमाण हैं। राजसिंह कहते हैं · "यह भी जगदीश्वर की पूर्ण महिमा है। · आज सवेरे से इस घाटी में आकर शिकार की ताक में हम लोग लगे थे कि जगदीश्वर की दया से आपके प्राण बच सके[2]।"

'रजिया बेगम' के 'उपोद्घात' में गोस्वामी जी ने लिखा है,"ईश्वर की महिमा का कोई पार नहीं पा सकता कि जिन कुतुबुद्दीन ने लड़कपन में नैशापुर के सौदागरों की गुलामी की थी, वह बुढ़ापे में हिन्दुस्तान के तख्त पर भरा और इस देश में मुसलमानों के राज की जड़ जमाने वाला हुआ।"[3]

बाबूलाल जी सिंह ने 'वीर बाला' में मृत्यु के नियति द्वारा नियोजित होने की धारणा व्यक्त की है, "मृत्यु काल उपस्थित होने पर मनुष्य किसी प्रकार नहीं बच सकता, आयु बीत जाने पर खड़े-खड़े, चलते-चलते, बैठे-बैठे अथवा बोलते-चालते ही प्राणी काल के अधीन हो जाता है उस समय तो संसार का सब सुख छोड़ना ही पड़ता है और जिस की मौत नहीं है, वह भयानक से भयानक प्राणनाशक स्थान से बच जाता है और समर-भूमि से भी सकुशल लौट जाता है, किन्तु भरपूर समय आजाने पर मनुष्य अपने परम स्नेही बन्धु बान्धवो के मध्य में भी त्राण नहीं पा सकता क्योंकि घर में जब काल आकार ग्रसता है, तो क्यों नहीं कोई बचा लेता[4] ?

भाग्य, नियति एवं ईश्वर द्वारा ऐतिहासिक घटनाओं का नियोजित होना विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों की इतिहास-धारणा का एक मुख्य तत्त्व है।

(vi) कर्मचक्र—प्रेमचन्दपूर्व लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्णित इतिहास-धारणा के अनुसार ऐतिहासिक घटनाओं को भौतिकवाद के स्थान पर कर्मसिद्धांत अथवा कर्मचक्र द्वारा सचालित स्वीकार किया जाता था। कर्मचक्र के अनुसार पूर्व-जन्मो के कर्म किसी भी समय फलोन्मुख होकर घटनाओं के प्रवाह को कोई प्रत्यक्ष कारण न रहने पर भी, प्रभावित करते हैं।

"जगदेव परमार" में रामजीवन नागर ने इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। राजकुमार जगदेव की वाघेली रानी के कोप के कारण जो दुर्दशा होती है उसे

1 'जगदेव परमार', पेज 140
2 'तारा', तीसरा भाग, पेज 9
3. 'रजिया बेगम', पहला भाग, उपोद्घात।
4 'वीर बाला' पेज 43

वह राजा उदयादित्य की निर्बलता के स्थान पर पूर्व-जन्म के कर्मो का फल बताता है, "पिताजी। मेरी पूर्व-जन्म की तपस्या मे इतनी ही कसर रह गई है नही तो मालवदेश के आप जैसे प्रतापी और धर्मशील राजा के घर मे जन्म लेकर मुझ को पेट भर ज्वार मिलना भी क्यो कठिन होता।[1]" गौड देश का दीवान जब गलती से राजकन्या की सगाई जगदेव परमार के स्थान पर रणधवल से कर अत्यन्त दुखित होता है, परन्तु अत मे 'कर्म-लेख न मिटै करै कोई लाखो चतुराई'[2] इस वाक्य को सत्य मान कर चित्त शात कर लेता है।

कर्मचक्र की इतिहास-धारणा ने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप मे पडित बलदेव प्रसाद मिश्र, पडित किशोरीलाल गोस्वामी तथा मिश्रबन्धु आदि लेखको को बहुत सीमा तक प्रभावित किया है।

(४) हिन्दू दृष्टिकोण—बीसवी शताब्दी के आरभिक दो दशको मे भारतीय राजनीति के क्षितिज पर इडियन नेशनल काग्रेस एक तेजमय पुज के रूप मे उभर चुकी थी। सामाजिक, सास्कृतिक एव धार्मिक क्षेत्र मे पुनरुत्थान एव पुनर्जागरण का शख फूंका जा रहा था।[3] धर्म, जो कि भारतीय समाज एव सस्कृति को प्राचीन एव मध्ययुगो मे अस्तित्ववान् एव अक्षुण्ण रखने वाली प्रेरक शक्ति थी, एक बार फिर पुनरुत्थानवादी आदोलनो का मेरुदण्ड बन गयी। ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, थियोसोफिकल सोसायटी आदि ने विभिन्न स्तरो एव दृष्टिकोणो से हिन्दू धर्म की पुन व्याख्या की, तथा धार्मिक जागरण का शख फूंका।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी, समस्त तद्युगीन साहित्य के समान हिन्दू दृष्टिकोण एक केन्द्रीय प्रेरक कलाविचार के रूप मे उभरा। प० किशोरीलाल गोस्वामी, बलदेव प्रसाद मिश्र, रामजीवन नागर, ठाकुर बलभद्रसिंह, अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह तथा बाबूलालजी सिंह आदि उपन्यासकार सनातन-हिन्दू धर्म के प्रबल समर्थक थे। उनके अपने युग के विचार तथा उपन्यास मे वर्णित युग के मूल-विचार के रूप मे सनातन-हिन्दू-धर्म के विश्वास एव परम्पराएँ[4] अभिव्यक्त की गई है।

उपन्यासकारो की सनातन हिन्दू-धर्म के प्रति इस गहरी प्रतिबद्धता ने उनकी इतिहास-धारणाओ एव काल-मान्यताओ को महत्त्वपूर्ण सीमा तक प्रभावित किया है।

अतीत की भूमि पर विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक उद्धार अथवा सामाजिक पुनरुत्थान की जो भी धारणाये प्रकट की है, वे

1 'जगदेव परमार', पेज 5
2 वही, पेज 25
3 इस विषय पर तीसरे अध्याय के आरम्भ मे 'सास्कृतिक पुनर्जागरण' शीर्षक के अन्तर्गत विस्तृत अध्ययन किया जा चुका है।
4 सनातन हिन्दू धर्म के विश्वासो एव परपराओ का विस्तृत अध्ययन इसी अध्याय के 'उपन्यासकारों की जीवन-दृष्टिया' शीर्षक के अन्तर्गत किया जायेगा।

हिन्दू दृष्टिकोण से सचालित थी। हिन्दू धर्म के प्रति इस निष्ठा एव आस्था ने विवेच्य युग के ऐतिहासिक उपन्यासकारो द्वारा उपन्यासो के लिए भारतीय अतीत के विशिष्ट युगो का चयन करने के लिए प्रेरक-शक्ति का कार्य किया। इसी के परिणाम-स्वरूप उन्होंने अतीत के उन कालखण्डो को अपने उपन्यासो का कथ्य बनाया जबकि या तो हिन्दू-विचार प्रबल वेग से समस्त भारत पर छा जाने के लिए प्रगतिशील था अथवा वे विदेशी एव मुस्लिम प्रहार एव अत्याचार के घोर तिमिर मे बिजली के समान कौंध कर अपने अस्तित्व का प्रमाण उपलब्ध करता था। बलदेव प्रसाद मिश्र का 'पानीपत' जयरामदास गुप्त का 'काश्मीर पतन' हिन्दू एव सिख धर्म के स्वर्णयुगो को चित्रित करते हैं जबकि किशोरीलाल गोस्वामी का 'तारा', मिश्र-बन्धुओं का 'वीरमणि', गगाप्रसाद गुप्त का 'हम्मीर,' हरिचरण सिंह चौहान का 'वीर नारायण', रामजीवन नागर का 'जगदेव परमार', बाबू लालजीसिंह का 'वीरबाला' अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह का 'वीर चूडामणि', हरिदास माणिक एव कालिदास माणिक के 'महाराणा प्रताप सिंह की वीरता' तथा 'मेवाड का उद्धारकर्ता,'चन्द्रशेखर पाठक का 'भीम सिंह',बसन्त लाल शर्मा का'महारानी पद्मिनी', गिरिजानन्दन तिवारी का 'पद्मिनी', रामनरेश त्रिपाठी का 'वीरागना' आदि उपन्यासो के कथ्य में भारतीय इतिहास के मुस्लिम युगो का निरूपण किया गया है, जबकि हिन्दू धर्म अपने अस्तित्व के लिए सघर्षरत् था।

मध्ययुगो के इन विशिष्ट कालखण्डो का चुनाव करना उपन्यासकारों की हिन्दू पुनरुत्थानवादी जीवन-दृष्टि का प्रमाण है।

विवेच्य उपन्यासों की पुनरुत्थानवादी धारणाये हिन्दू दृष्टिकोण द्वारा सचालित एवं नियोजित की गई थी।

(vi) धार्मिक एवं नैतिक ग्रन्थ चरित्र के नियामक—विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो के पात्र एव उनका चरित्र-चित्रण कथानक के कालखण्डो की विशिष्ट एवं सुनिश्चित्त ऐतिहासिक एव भौगोलिक परिस्थितियो के द्वारा नियोजित होने के स्थान पर धार्मिक एव नैतिक ग्रन्थो के कथनसूत्रो द्वारा सचालित एवं प्रमाणित होते थे। सामान्यत लेखको की सनातनधर्म परक हिन्दू जीवन दृष्टि इस प्रकार की इतिहास-धारणा के लिए उत्तरदायी है।

इसके साथ ही अन्यान्य स्थलो पर कथानक के कालखण्ड की सामाजिक, धार्मिक एव ऐतिहासिक परिस्थितियाँ पात्रो, उनके चरित्र एव आचार-व्यवहार को सचालित करती हैं। मार्क्स ने कहा था कि जितना परिस्थितियाँ मनुष्य का निर्माण करती हैं, उतना ही मनुष्य भी परिस्थियो का निर्माण करता है।[1] विवेच्य उपन्यासों मे ऐतिहासिकता का यह स्वरूप कई बार उभर कर आया है।

1 Marx, "Materialistic conception of History" Quoted from 'Theories of History" P 126

प० राम जीवन नागर के 'जगदेव परमार' में जब गौड़ देश के दीवान राजकन्या की सगाई जगदेव के स्थान पर रणधवल के साथ कर देते हैं और बाद में अपनी गलती अनुभव करते हैं, तो कहते हैं कि . . . 'एक बार सगाई करके फिर उसे हटाना शास्त्र-विहित नहीं है। और ऐसा करने से हमारे महाराज गम्भीरसिंह के प्रतिष्ठित कुल को दाग लगने का भय है नहीं तो अवश्य राजपुत्री का सम्बन्ध रणधवल से छुड़ाकर जगदेव से कर देता।[1]"

सामान्यतः शास्त्रीय उक्तियों का स्थान-स्थान पर प्रमाण के रूप में दिया जाना भी इसी इतिहास-विचार का एक अंग है। प० बलदेव प्रसाद मिश्र तथा किशोरीलाल गोस्वामी ने भी इस प्रकार की शास्त्रीय उक्तियों का बहुलता से प्रयोग किया है।

(vii) स्वयंवर एवं दिग्विजय—मध्ययुगों में, पौराणिक ग्रन्थों की अनुकृति के रूप में स्वयंवर एवं दिग्विजयों का आयोजन किया जाता था। इतिहास-चेतना तथा ऐतिहासिक स्थिति के अध्ययन की दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह इतिहास-विचार राजसी नीति तथा राजधर्मों के राजसी आदर्शों के साथ सबद्ध है। यद्यपि मध्ययुग में हिन्दू सम्राटों में पौराणिक महानता की स्थिति नितान्त भिन्न थी, तथापि उनके मानसिक एवं बौद्धिक जीवन में यह पौराणिक आदर्श अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते थे। जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के पृथ्वीराज चौहान में स्वयंवर एवं दिग्विजय की झाँकियाँ उस विशिष्ट इतिहास-धारणा का प्रमाण हैं।

बाबू गंगा प्रसाद गुप्त के "वीर पत्नी" तथा जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान' उपन्यास में संयोगिता के स्वयंवर का उत्तम चित्रण किया गया है। 'वीर पत्नी' में गुप्त जी ने स्वयंवर का वर्णन इस प्रकार किया है, "स्वयंवर यज्ञ की सब रीति भली-भाँति पूरी हो चुकने के उपरान्त राजकुमारी उठी, और अपना हार लिए हुए हर एक राजा के सामने से होती हुई द्वार के समीप पहुँची, कोमल हृदय धड़कने लगा, प्यारे-प्यारे हाथ काँपने लगे और उसने इसी दशा में अपनी वरमाल पृथ्वीराज की मूर्ति के गले में डाल दिया।"[2]

इसी प्रकार 'वीर पत्नी' के पाँचवें अध्याय में दिग्विजय का वर्णन किया गया है।[3]

(viii) हिन्दू इतिहास के स्वर्ण-युग को आदर्श-काल के एवं पौराणिक युगों के प्रतिबिंब के रूप में—विवेच्य उपन्यास हिन्दू इतिहास के स्वर्ण-काल को आदर्श-काल के रूप में मानते थे तथा उसे पौराणिक युगों के प्रतिबिंब के रूप में स्वीकार करते थे। पौराणिक आदर्शों पर आधारित यह इतिहास चेतना, भारतीय इतिहास

1 'जगदेव परमार,' पेज 27
2 "वीर पत्नी", गंगाप्रसाद गुप्त, उपन्यास दर्पण कार्यालय, 1903 ई०, पृष्ठ 18
3 वही, पृष्ठ 15-17

धारणा के निरन्तर विकास के रूप मे विवेच्य उपन्यासकारों द्वारा ग्रहण की गई। स्वर्णिम-हिन्दू-युग के विक्रमादित्य को आदर्श राजा के रूप में स्वीकार करने तथा उससे उच्च एव उदात्त राज्य प्रबन्ध की प्रेरणा प्राप्त करने की परम्परा का विवेच्य उपन्यासों मे भी प्रयोग किया गया है।

बलदेवप्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे सनातन धर्म-परक हिन्दू राष्ट्रीयता एव आदर्श-हिन्दू राज्य की समस्त भारतवर्ष पर स्थापना का इतिहास-विचार इसी इतिहास-धारणा का परिणाम था। पडित किशोरीलाल गोस्वामी, गगाप्रसाद गुप्त, रामजीवन नागर, लालजी सिंह, युगलकिशोर नारायणसिंह, सिद्धनाथ सिंह तथा व्रजविहारी सिंह आदि ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने अपनी कृतियो में भारतीय अतीत के स्वर्ण युग को भारतीय मध्य-युगो मे प्रतिबिम्बित किया है। मध्ययुगीन हिन्दू राजाओ की स्थिति का प्राचीन हिन्दू सम्राटो के अनुरूप न होने के कारण कई स्थानों पर यह आदर्श अवास्तविक अथवा आरोपित अनुभव होते है। परन्तु एक प्रबल प्रेरणा-स्रोत के रूप में वे निश्चय ही भारतीय मध्य-युगो मे घटित होने वाली घटनाओ को प्रभावित करते हैं।

(अ) सामान्य इतिहास-धारणाएँ—सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे मध्य युगीन एव समकालीन सामाजिक कुरीतियों के मूल में ऐतिहासिक काल एव परिस्थितियो को न मानकर या तो मुसलमान शासकों को मानते थे[1] अथवा कलयुग के पापो को। विदेशी आक्रमणकारियो को ऐतिहासिक दुर्भाग्य के रूप मे लिया गया तथा वर्णाश्रम-व्यवस्था के टूटने को सामाजिक विघटन का मूल प्रेरक-स्रोत स्वीकार किया गया।

ब्रजनन्दन सहाय के अपवाद के अतिरिक्त लगभग सभी अन्य उपन्यासकार इसी प्रकार की इतिहास-धारणाओ द्वारा प्रभावित हुए हैं।

(ख) इतिहास की पुनर्व्याख्याएँ—सामाजिक, सास्कृतिक एव राजनैतिक परिस्थितियों के अनुसार विवेच्य युग के मूल इतिहास-दर्शन के अनुसार इतिहास को नितान्त भिन्न दृष्टि से देखा गया। सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार अंग्रेजी राजभक्ति तथा सनातन-धर्म के विचारो एव विश्वासो के प्रति प्रतिबद्ध थे। इसी दृष्टिकोण से उपन्यासो में इतिहास की पुन व्याख्या की गई है।

(i) मुसलमानो को प्रत्येक बुराई के मूल मे देखना—साम्प्रदायिक मतभेदों की समकालीन पृष्ठभूमि मे विवेच्य उपन्यासकारो ने मुस्लिम इतिहासकारो के प्रति

1 प्राचीन भारतीय इतिहास तथा साम्प्रदायिक दृष्टिकोण का अध्ययन करते हुए रोमिला थापर ने लिखा था,—
"An examination of the ideology of modern communalism shows quite clearly that it seeks its intellectual justification from the historical past Thus, Hindu communalists try and project an ideal Hindu society in the ancient period and attribute the ills of India to the coming of 'the Muslims"—"Communalism and the writing of Ancient Indian History" by Romila Thapar, Page-1

अविश्वास तथा मध्य-युगो के मुसलमान शासको के प्रति घृणा स्पष्ट रूप मे व्यक्त की। उनके विचारानुसार राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक एव सास्कृतिक, प्रत्येक क्षेत्र मे हिन्दुओ की अवनति एव दुर्भाग्य के लिए मुसलमान शासक ही उत्तरदायी है।

ऐतिहासिक उपन्यासो मे मुसलमान शासको को सामान्यत ऐतिहासिक आततायियो के रूप मे चित्रित किया गया है।[1] तथा ऐतिहासिक रोमासो मे उन्हे दानवत्व की प्रतिमूर्ति के रूप मे चित्रित किया गया है।

उदाहरणत किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यास 'तारा' मे वख्शी सलावत खाँ को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है। सलावत खाँ अमरसिंह की पुत्री तारा को हस्तगत करने के लिए अत्यन्त घृणित एव ओछे षड्यत्रो का आश्रय लेता है। 'वह अपने किसी बड़े भारी मतलब के निकालने की फ़िक्र मे अन्धा हो रहा था। वह प्रकट मे तो शाही दरबार मे बराबर अमरसिंह की भलाई करता, पर गुप्त रीति से उसने ऐसा षड्यन्त्र रचा था कि जिसमे फँस कर बिचारे अमरसिंह को बहुत जल्द इस ससार से कूच करना पड़ा।'[2]

अमरसिंह द्वारा तारा की शादी उदयपुर के कुमार राजसिंह के साथ तय कर दिए जाने के कारण जब वह सलावत खाँ को मना कर देता है[3] तो सलावत शाहजहाँ से झूठमूठ शिकायत कर अमरसिंह को कैद करने की आज्ञा प्राप्त कर लेता है। अमरसिंह द्वारा अपने घर से निकाल दिए जाने के बाद सलावत ने एक ख़त अमरसिंह को भेजा उस ख़त का मतलब इतना ही था कि, "बदबख़्त। काफ़िर। होशियार। आज रात को तेरा घर-द्वार लूट कर तेरी दुख्तर को मेहतर से खराब कराऊँगा।"[4]

इस प्रकार यद्यपि तारा निष्कटक रूप से राजसिंह के साथ उदयपुर चली जाती है तथापि अमरसिंह सलावत के कुचक्रो का शिकार बन कर बहुत से दरबारियो को मारने के पश्चात् वीर गति को प्राप्त होता है।[5]

प० किशोरीलाल गोस्वामी की ऐतिहासिक कथा "हीरा बाई वा बेहयाई का बोरका" मे अलाउद्दीन को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है।

"दिल्ली का बड़ा जालिम बादशाह अलाउद्दीन खिलजी, जोकि अपने बूढे और नेक चचा जलालुद्दीन खिलजी को धोखा दे और उसे अपनी आँखो के सामने मरवा कर (सन् 1295 ई०) आप दिल्ली का बादशाह बन बैठा था, बहुत ही सगदिल, खुदगर्ज, ऐय्याश, नफ़स परस्त और जालिम था। उसने तख्त पर बैठते ही जलालुद्दीन

1 देखिए—इतिहासवाद और ऐतिहासिक उपन्यास की सामाजिक उपयोगिता—डॉ० मेघ, पृष्ठ 343

2 'तारा' पहला भाग पृष्ठ 46

3 'तारा' पडित किशोरीलाल गोस्वामी, पहला भाग, पृष्ठ 91-92

4 'तारा' पडित किशोरीलाल गोस्वामी, पहला भाग पेज 68-69

5 वही, तीसरा भाग, पेज 77-78

के दो नौजवान लडकों को कतल कर डाला। जब फौज ने लूट का माल उसने माँगा तो फौज ने बलवा किया, जिससे जल कर मनकुल मौत अलाउद्दीन ने सभी को मय उनके लडके और औरतों को कटवा डाला।[1] (सन् 1297 ई०)

इसी प्रकार चन्द्रशेखर पाठक ने 'भीमसिंह' में अलाउद्दीन को ऐतिहासिक आततायी के रूप में प्रस्तुत किया है। जलालुद्दीन की हत्या और दिल्ली में भयानक रक्तपात[2] के पश्चात् जलालुद्दीन के प्रधान सामान्य कासिम अली की पुत्री नसीबन जो अत्यन्त रूपवती थी, को अपने प्रेम-चक्र में फँसाने का कारण यह बताता है कि "तुम्हारे प्रेम में मुग्ध होकर, मैं ने तुमसे विवाह नहीं किया था। यह विवाह केवल तुम्हारे पिता का गर्व खर्व करने के लिए किया था।"[3]

अलाउद्दीन द्वारा मेवाड के राणा भीमसिंह की पत्नी पद्मिनी के लिए उसका चित्तौड पर कई बार आक्रमण करना और सहस्रों वीरों का बलिदान, चित्तौड की नारी स्त्रियों द्वारा जौहर व्रत का पालन आदि सब विषयों का चित्रण अलाउद्दीन को आततायी के रूप में चित्रित करने की इतिहास-धारणा का ही परिणाम है। "भीम सिंह" के अतिरिक्त रामनरेश त्रिपाठी के "वीरांगना", गिरिजा नन्दन तिवारी के "पद्मिनी", रूप नारायण के "सोने की राख" मे यही इतिहास-धारणा उपलब्ध होती है।

ब्रजनन्दन सहाय के "लाल चीन" मे दक्षिण भारत के सम्राट गयासुद्दीन का गुलाम लाल चीन अपने स्वामी की आँखे फोड कर[4] तथा राजधानी के मुख्य दरबारियों को मार कर स्वयं राज्य-सत्ता अपने हाथ मे ले लेता है। लाल चीन का अपने सम्राट, अन्य दरबारियों तथा सामान्य प्रजा के साथ अत्यन्त कठोर व्यवहार उसे एक ऐतिहासिक आततायी के रूप मे उभारता है।

बाबूलालजी सिंह के "वीर बाला" तथा युगलकिशोर नारायण सिंह के "राजपूत रमणी" उपन्यासों मे औरंगजेब को हिन्दू जनता के धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विश्वासों, परम्पराओं एवं रूढियों को दबाने के लिए किए गए अमानवीय कार्यों के लिए एक ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है।

"राजपूत रमणी" के दूसरे परिच्छेद मे दस वर्षीय बालक हकीकत राय को धार्मिक कारणों से मृत्यु-दण्ड दिए जाने का हृदयस्पर्शी चित्रण किया गया है। "मन्दिरों में घडियाल बजना बन्द हो गया। ब्राह्मण अपना त्यौहार खुल्लम-खुल्ला न मनाने पर मजबूर किए गए। सैकडों नहीं वरन् लाखों देव-मंदिर तहस-नहस कर दिए गए और उनकी जगह मे मसजिदें बन कर तैयार हो गई। शंख-भेरी शब्दों की

1. 'हीराबाई या बेहयाई का बोरका' प० किशोरीलाल गोस्वामी पेज 1.
2. 'भीमसिंह', पेज 3-4
3. वही०, पेज 32
4. 'लालचीन,' ब्रजनन्दन सहाय, पेज 91

जगह अजान की आवाज भारत में गूँज उठी। जबरदस्ती लाखो हिन्दू मुसलमान बनाए गए। तलवार के जोर से करोडो हिन्दुओ को दीने इस्लाम मजूर करना पडा। सैकडो आर्य ललनाएँ अपने पतियो से छिन कर मुसलमानो के हरम मे दाखिल की गई। जिन्होने अपने धर्म को धर्म मान कर छोडने से आनाकानी की वे खुले मैदान कत्ल कर दिए गए।[1]

इसी प्रकार इसी कथा-भूमि पर रूपनगर की राजकुमारी सोचती है—"अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, अब अपनी विपत्ति किसे सुनाऊँ, पन्द्रह दिन मे जब बादशाह यहाँ आ खडा होगा तब मैं क्या कर सकूँगी। उस समय मैं अपनी दीनता प्रकाश कर ऐसा करने से निषेध भी करूँगी तो क्या हो सकेगा, वह पापी चण्डाल राक्षस औरगजेब कब सुनने वाला है। किसी तरह न मानेगा बलात् मुझे ले जावेगा, तब मैं क्या करूँगी, कैसे प्राण को रख सकूँगी ?"[2]

जयरामदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' मे जुब्बार खाँ व अजीब खाँ को ऐतिहासिक आततायियों के रूप मे उभारा गया है। वे पण्डितो के शोषण एव दमन के लिए सेनापति चगेज खाँ को कहते है तो वह उत्तर देता है,"—बेशक, बेशक, हुजूर वाला। मैं आपकी फरमाबरदारी के लिए दिलो जान से कोशिश करूँगा और शैतान सिक्खपण्डितो को जरूर बा जरूर नेस्तनाबूद करने की फिक्र मे रहूँगा' हमारे देखने मे अब खूब सख्ती से काम लेना चाहिए जिसमे रिआया के दिल मे दहशत पैदा हो तब वह डरेगी और इतजाम भी ठीक हो जाएगा।"[3]

जहाँ मुसलमानो को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे वर्णित किया गया है, वही, उन्हे अन्यान्य सामाजिक कुरीतियो के मूल कारण के रूप में देखा गया है। बाल-विवाह एव पर्दा-प्रथा के लिए मुसलमान-शासको एव हाकिमो की यौन-लोलुपता ही उत्तरदायी ठहराई गई है।

'तारा' मे प० किशोरीलाल गोस्वामी ने पर्दा-प्रथा के लिए मुसलमानो को ही दोषी ठहराया है। उनके अनुसार,—'हाँ भारतवर्ष मे जो पर्दे की चाल इतनी बढी, इसका मुख्य कारण मुसलमानो का सुन्दर स्त्रियो पर जुल्म करना ही हुआ।'[4]

स्पष्ट है कि विवेच्य उपन्यासकार भारतीय अतीत की पुनर्व्याख्या करते समय अपने मौलिक साप्रदायिक विचारो को ही मुख्य स्थान प्रदान करते है। इतिहास के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे मुसलमान विरोधी इतिहास-धारणा सामान्यत सारे कार्य-व्यापार के स्वरूप का निर्धारण करती है।

1 "राजपूत रमणी", पेज 13-14
2 "धीरबाला", बाबूलालजी सिह, पेज 2
3 "काश्मीर पतन", जयरामदास गुप्त, पेज 71-72
4 "तारा", पहला भाग, पेज 47

(ii) सामाजिक पतन कलयुग, दुर्भाग्य अथवा वर्णाश्रम का भग होना—सनातन-हिन्दू विचारधारा द्वारा प्रेरणा-प्राप्त करने के कारण विवेच्य उपन्यासकार कलयुग एव दुर्भाग्य को सामाजिक पतन का कारण मानते थे। वर्णाश्रम व्यवस्था के भग होने को भी उन्होंने सामाजिक गठन पर एक कुठाराघात के रूप मे अनुभव किया।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के मतानुसार, 'जब तक इस देश मे सरस्वती और लक्ष्मी का पूरा-पूरा आदर रहा, ब्राह्मणों के हाथ मे विधि थी, क्षत्रियों के हाथ मे खड्ग था, वैश्यो के हाथ मे वाणिज्य था और शूद्रो के हाथ मे सेवा-धर्म था, किन्तु जब से यह क्रम बिगडने लगा ऐक्य के स्थान मे फूट ने अपना पैर जमाया और सभी अपने-अपने कर्त्तव्य से च्युत होने लगे, देश की स्वतन्त्रता भी टोली पहने लगी और बाहर वालों को ऐसे अवसर मे अपना मतलब गढ लेना सहज हो गया।'[1]

कलयुग एव दुर्भाग्य के इतिहास परिणामो पर प्रभाव का अध्ययन कालचक्र एव नियति चक्र शीर्षको के अध्ययन के अन्तर्गत किया जा चुका है। सामाजिक पतन के प्रेरक कारणो मे ये दोनो ही महत्त्वपूर्ण रूप मे ऐतिहासिक उपन्यासो मे अभिव्यक्त किए गए हैं।

(II) ऐतिहासिक उपन्यासो मे चरित्र तथा इतिहास चेतना

उपन्यासकार के समकालीन पात्रो का उपन्यास मे चित्रण करना अपेक्षाकृत सरल एव सुगम होता है, क्योकि वह नित्य प्रति उस प्रकार के व्यक्तियो को देखता है तथा उनके सम्पर्क मे आता है। मानवीय अतीत के प्राचीन एव मध्ययुगो के मनुष्यो का चित्रण अतीत के पुन निर्माण, पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्व्याख्या के एक अनिवार्य अग के रूप मे किया जाता है। बहुत से आलोचको तथा ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अतीत के पात्रो के पुन प्रस्तुतिकरण की इस प्रक्रिया को अत्यन्त जटिल बताया है।[2] अतीत युगो के पात्रो के चरित्र, आचार-व्यवहार, आकाक्षाएँ, इच्छाएँ मनोकामनाएँ, उनकी घृणा एव प्रेम, द्वेष एव उदात्तता, शौर्य एव वीरता आदि का अध्ययन उनके युग की विशिष्ट राजनैतिक, सामाजिक धार्मिक एव सास्कृतिक परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे किया जाना चाहिए।[3] पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ का अध्ययन एव चित्रण अध्ययन वाले युग की विशिष्ट इतिहास-चेतना द्वारा अनुप्राणित होना चाहिए।

1 "रजिया बेगम वा रगमहल में हलाहल," किशोरीलाल गोस्वामी उपोद्घात् पेज क ॥

2 देखिए—डॉ० गोविन्द जी द्वारा सपादित 'ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप।'

3 सामान्यत प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासों में चरित्र चित्रण के सर्वथा अभाव की बात कही जाती रही है परन्तु इसे एक दम ठीक मानना उचित नहीं होगा। व्रज-नन्दन सहाय के 'लालचीन' की भूमिका में अवध बिहारी शरण ने हिन्दी साहित्य में उपन्यासो के दो उद्देश्यों (मनोरजन करना और दूसरे का उच्च भाव अथवा आदर्श प्रदर्शित करना) की ओर सकेत करते हुए चरित्र चित्रण की महत्ता का उल्लेख किया है—'जिस प्रकार उच्च आदर्श निदर्शन करके व्यक्ति तथा समाज के भाव एव आदर्श को उच्च बनाना उपयोगी है, उसी प्रकार इस ससार-सग्राम में सफलता प्राप्त करने के लिए सासारिक मनुष्यो के चरित्र

जार्ज ल्यूकॉक्स के मतानुसार सर वाल्टर स्कॉट से पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यासो की यही मूल त्रुटियाँ थी। "सत्रहवी शताब्दी के तथाकथित ऐतिहासिक उपन्यास (Scudery, Calprannede) आदि केवल थीम एव वाह्यावरण (Costume) मे ही ऐतिहासिक हैं। न केवल पात्रो का मनोविज्ञान प्रत्युत उनका आचार-व्यवहार भी पूर्ण रूपेण लेखक के युग का ही है तथा इसी प्रकार अठारहवी शताब्दी के सर्वाधिक प्रसिद्ध "ऐतिहासिक उपन्यास", वाल्पोल के 'कैसल ऑव आटरैंटो' मे इतिहास को महज एक परम्परा के रूप मे निवाहा गया है केवल 'मिलियू' (Milue) की जिज्ञासाओ तथा विरूपताओ (Oddities) को ही महत्त्व दिया गया न कि एक सुगठित ऐतिहासिक कालखण्ड के सम्पूर्ण प्रतिबिंब (इमेज) को। स्काट-पूर्व के ऐतिहासिक उपन्यास मे जो कमी रह गई थी, वह सक्षेप मे व निश्चित रूप से ऐतिहासिक है अर्थात् पात्रो की वैयक्तिकता की उनके युग की ऐतिहासिक विशिष्टता मे से उत्पत्ति न होना।"[1]

अतीत युग की इतिहास चेतना के परिप्रेक्ष्य मे औपन्यासिक पात्रो के चरित्र का चित्रण न करने के लिए अधिकाश आलोचको ने विवेच्य उपन्यासकारो को दोषी ठहराया है। यह दोषारोपण केवल आंशिक रूप मे ही सत्य है।

एक विशिष्ट ऐतिहासिक कालखण्ड के व्यक्ति एव पात्र जहाँ एक ओर काल-खण्ड की ऐतिहासिक परिस्थितियो मे अपने चरित्र की विशेषताएँ प्राप्त करते हैं दूसरी ओर वे युग की ऐतिहासिक चेतना का प्रतिनिधित्व करते हैं। पात्रो का चरित्र चित्रण करते समय सामान्यत उपन्यासकार इतिहास-चेतना तथा अपनी इतिहास-धारणा की मान्यताओ को पात्रो के माध्यम से उपन्यास मे अभिव्यक्त करता है।

ऐतिहासिक उपन्यास के शिल्प एव रचना-प्रक्रिया मे पात्रो का उनके अतीत एव भविष्य से सम्बन्ध प्रदर्शित कर, उपन्यासकार काल के निरतर प्रवाह मे इतिहास की तद्युगीन चेतना के अनुरूप उनके चरित्र के विविध पक्षो का उद्घाटन करता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार की अथवा उसके युग की समस्याओ को भी कई बार अतीत के पात्रो के माध्यम से उभारा गया है।

(1) **हिन्दू राष्ट्रीयता एव नैतिकता की धारणा द्वारा परिचालित**—विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे इस प्रकार की इतिहास चेतना एव चरित्र चित्रण हिन्दू धर्म

का ज्ञान होना भी नितान्त आवश्यक है। और जैसे मनोरजन तथा उच्च भाव का प्रदर्शन उपन्यास लेखक का कर्त्तव्य है उसी प्रकार ससार के व्यक्तियो का चरित्र चित्रण तथा देश-काल के अनुसार उसमे हेरफेर दिखलाना भी उसका परम धर्म है। किस अवस्था में पडकर कौन मनुष्य कैसा होगा किस व्यक्ति से कितनी आशा करनी चाहिए इसका ज्ञान केवल अनुभवी लेखक अपने पाठको को दिला सकते हैं। इस प्रकार के उपन्यासो मे कल्पना कम और वास्तविकता अधिक होती है। अस्तु इस उपन्यास में चरित्र का चित्रण ही प्रधान रखा गया है; 'लालचीन' 'ब्रजनन्दन सहाय'
—भूमिका पृष्ठ 1-2

1 "*The Historical Novel*" George Lukacs, Merlin Press London, p 19

के पुन जागरण एव पुन उत्थान के महत् आन्दोलन के प्रभावाधीन किया गया है। इसीलिए यह बहुत सीमा तक साम्प्रदायिक हो गया है और मध्ययुगीन मुसलमान शासकों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिक्रिया के रूप मे उभरा है। हिन्दू राष्ट्रीयता की इतिहास धारणा द्वारा परिचालित होने के कारण पात्रो, विशेषत राजपूत एव मराठा नायको मे, गहन जातीय दर्प तथा अपार शौर्य की भावना, भावावेगात्मकता के स्तर तक पहुँच जाती है।

मध्य युगो के पात्रो एव चरित्रो का चित्रण सामती नैतिकता की कसौटी के आधार पर किया गया है। 'रजिया बेगम' तथा 'लालचीन' के अपवाद को छोड़ कर पात्रो मे विद्रोह तथा क्रान्ति की चेतना का अभाव है।

मध्ययुगो मे कुलशील तथा जातीय चेतना चरित्र चित्रण की सामाजिक कसौटी थी। इस धारणा के दोनों ध्रुवो, कुल भूषण तथा कुल कलक का विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे चरित्र-चित्रण के लिए उपयोग किया गया है।

रामजीवन नागर के "जगदेव परमार" मे जगदेव को बार-बार कुलभूषण तथा "कुलदीपक"[1] कहा गया है।

ठाकुर बलभद्रसिंह के 'वीरबाला व जयश्री' मे हरिहरसिंह को कुल कलक के रूप मे चित्रित किया गया है जबकि वह यवनो से मिल कर महाराज शिवसिंह से दगा करता है।[2]

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' के तीसरे भाग मे उदयपुर के युवराज राजसिंह को सिसोदिया कुलदीपक कहा गया है।[3] उदयपुर के महाराज बनने के पश्चात् युगलकिशोर नारायणसिंह के राजपूत रमणी मे राजसिंह को हिन्दूपति सूर्य कुल भूषण कहा गया है।[4]

राजसिंह को बाबूलाल जी सिंह के 'वीरबाला' मे इसी रूप मे चित्रित किया गया है।

बाबू सिद्धनाथ सिंह के "प्रण-पालन" नामक उपन्यास में वीरचूडामणि को क्षत्रिय कुल कमल-दिवाकर[5] कहा गया है। "वीर चूडामणि" मे चूडा जी को दृढ-प्रतिज्ञ तथा कीर्तिमान नायक के रूप मे उभारा गया है।

यद्यपि स्पष्ट रूप से इन शब्दो का प्रयोग नही किया गया तथापि गगाप्रसाद गुप्त के 'हमीर' मे हमीर, जयरामदास गुप्त के "काश्मीर पतन" मे महाराजा रजीतसिंह 'वीर पत्नी' तथा "पृथ्वीराज चौहान" मे पृथ्वीराज चौहान को कुल भूषण के रूप मे उभारा गया है।

1 "जगदेव परमार", पेज 61-62
2 "वीरबाला व जयश्री", पेज 25-32
3 "तारा" तीसरा भाग, पेज 5-6
4 "राजपूत रमणी", पेज 34
5 "वीर चूडामणि", पेज 9

धर्म एव जाति का मध्य युगो मे अत्यधिक महत्त्व होने के कारण इस प्रकार का चरित्र-चित्रण इतिहास चेतना के अनुरूप एव कलात्मक बन पडा है ।

(आ) जातीय-दर्प की सामन्ती धारणा—पुराणो मे वर्णित सूर्यवश, चद्रवश, अग्निवश आदि की धारणा के प्रति विवेच्य उपन्यासकार श्रद्धा एव सम्मानपूर्ण दृष्टिकोण के प्रतिपादक थे । पुराणो मे वर्णित इन वशो एव जातियो पर आधारित जातीय-दर्प पात्रो के चरित्रचित्रण का आधार है । जातीय-दर्प न केवल पात्रो की क्रियाओ एव ऐतिहासिक घटनाओ को गहराई से प्रभावित करता है । प्रत्युत उन्हे नियोजित भी करता है ।

'पानीपत' मे प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने जातीय-मतभेदो एव जातीय-दर्प तथा उसके दुष्परिणामो का हृदयस्पर्शी एव वीर रस पूर्ण वर्णन किया है । उदाहरणत उत्तर भारत में जब दत्ता जी के पास केवल तीस हजार सेना थी जो अब्दाली की एक लाख चालीस हजार सेना का सामना करने के योग्य नही थी परन्तु, इस बार दत्ता जी सेंधिया ने भयकर युद्ध करके क्षत्रियो की शूरता का नाम पृथ्वी पर अमर करना चाहा । देहली के वजीर ग्यासुद्दीन ने आकर पूछा—'मुझ को इस वक्त कहाँ रहना मुनासिब है ?' दत्ता जी सेंधिया ने उत्तर दिया—'नामर्द दुर्रानी मराठो की रणकौशल के आगे क्या कर सकता है, आप वेखटके किले के भीतर जमे रहे मैं मराठी युद्धरीति के द्वारा भले प्रकार उसको छकाऊगा । इसी अवसर मे मलहार राव हुल्कर जी की सहायता आ पहुँचेगी । महाराज हुल्कर जी के आने से पहले प्राणपण से सग्राम कर, इस खड्ग का स्वाद अहमदशाह अब्दाली को चखा कर प्राण लू गा या विसर्जन करू गा ।"[1]

मुख्य सेनापति सदाशिव राव भाऊ तख्त खण्डन तथा ग्यासुद्दीन को वजीर बनाने के प्रश्न पर भरतपुर के जाट महाराजा सूरजमल से शत्रुता करता है तथा उन्हे लूटने की योजना बनाता है । जब वे सेंधिया व हुलकर की सम्मति से रात मे ही प्रस्थान करते हैं, तो भाऊ गर्व से कहते हैं—'दुर्रानी का समाचार लेकर यदि जाट का सहार न कर डालू गा तो मेरा नाम भाऊ नही ।'[2]

इसी प्रकार जब अहमदशाह अब्दाली व मराठो की सेनाएँ पानीपत के मैदान मे एक दूसरे के सम्मुख पडी हुई थी तो ब्राह्मण बलवन्तराव मेंदले तथा क्षत्रिय मल्हार राव हुल्कर एव जनकोजी सेंधिया मे जातीय मतभेद पर झडपें हुई । मेंडले के कटुवचनो पर उत्तेजित हो, हुल्कर ने स्थिर दृष्टि रख कर कहा,—'कारण का

1 "पानीपत", पेज 173
2 "पानीपत ' पेज 312

संशोधन करना और पराक्रम को बैठे रह कर देखना यह काम ब्राह्मणों का है, क्षत्रियों का वीरत्व समय पर ही प्रगट होता है।'[1] मेढले द्वारा उत्तेजित किए जाने पर जनको जी भाऊ की इच्छा के विरुद्ध अगले ही दिन विजय अथवा मृत्यु की कठिन प्रतिज्ञा करते हैं।

इस प्रकार जातीय दर्प क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा जाटो के चरित्र के प्रमुख नियोजक के रूप मे उभर कर आता है।

राजपूताना के इतिहास से सम्बन्धित ऐतिहासिक उपन्यासो मे जातीय दर्प का स्वरूप कुछ परिवर्तित हो जाता है। यहाँ यह दो प्रकार से उभरता है—मुसलमानों के विरुद्ध तथा आपसी मतभेद। जातीय गौरव की धारणा के पीछे एक महान् जातीय अतीत की पृष्ठभूमि प्रेरणास्रोत के रूप मे क्रियाशील होती है। कई बार राजपूतो के आपसी जातीय मतभेद विनाश का कारण बनते हैं।

मेवाड के सीसोदिया कुल के प्रति अद्वितीय श्रद्धा एव सम्मान की भावना मध्ययुगीन हिन्दुओ के चरित्र का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अग है। उदाहरणत किशोरी लाल के 'तारा' मे तारा की माँ चन्द्रावती का भाई अर्जुन जब तारा की राजसिंह से सगाई तोड़ कर शाहजादा दारा शिकोह से शादी करने की बात कहता है, तो वह उसे बुरा भला कह कर कहती है—'मैं समझती हूँ कि जब तारा भूमण्डल के उन परम पूजनीय और पवित्र सिसोदिया कुल की महारानी होगी कि जिसने कभी यवनों के आगे न तो सिर ही झुकाया है और न (बेटी देना तो दूर रहा) अपनी लौंडिया ही बादशाह को दी, तो फिर तुम खुद सोच सकते हो कि उस समय बादशाही बेगम के रुतबे से तारा का मर्तबा कितना बेहतर होगा।'[2]

तारा जब अपने उद्धार के लिए एक लम्बी पत्री भेजती है तो राजसिंह चन्द्रावत जी से इस विषय पर विमर्श करते हैं। इस पर चन्द्रावत जी बोले,—'क्या अब सारे ससार से क्षत्रियो का सच्चा धर्म और इस नाम (क्षत्रिय) का सच्चा भय ही मिट जाएगा? सोचिए तो सही कि जो राजपूत बाला आपको बर चुकी है उसने बरजोरी तुर्क निकाह कर लेगा और हिन्दू पति की प्रतिष्ठा बलपूर्वक छीन लेगा? सदा से जिस मेवाड का व्रत शरणागत की रक्षा करना ही है, जिसने अपनी मान-मर्यादा, प्रतिष्ठा आदि बनाए रखने के लिए लाखों वीर क्षत्रियो की बलि युद्धभूमि मे चढा दी है ·· क्या उसी मेवाड के अधीश्वर के उत्तराधिकारी युवराज राजसिंह अपनी शरण मे आई हुई एक क्षत्रिय कुमारी राजबाला को, जो कि उसी युवराज की भावी धर्मपत्नी भी है, म्लेच्छ के हाथ में पड़ कर आत्महत्या कर डालने देंगे।[3]

युवराज राजसिंह जब मेवाड के महाराणा बने तो इसी प्रकार की एक घटना

1 वही०, पेज 40-41
2 "तारा" दूसरा भाग पेज 33
3. 'तारा", तीसरा भाग, पेज 23-24

समस्या उनके सामने आई। रूप नगर की राजकुमारी रूपमती को औरगजेब वलपूर्वक अपनी बेगम बनाने का प्रयत्न करता है, परन्तु इससे पूर्व ही वह मन-वचन से राजसिह को अपना स्वामी मान लेती है। इस ऐतिहासिक थीम को लेकर बाबूलाल जी सिह ने 'वीरबाला' तथा बाबू युगलकिशोर नारायणसिह ने 'राजपूत रमणी' नामक उपन्यासो की रचना की। महाराणा राजसिह औरगजेब मे शत्रुता मोल लेकर क्षत्रिय बाला का उद्धार करते है।

गौरवमय जातीय अतीत का स्मरण करवाते हुए चन्दावत जी ने राजसिह को कहा—'जिस सीसोदिया कुल भूपण ने हिन्दू धर्म पर प्राण वारा था, जिस सनातन धर्म की महिमा को स्थिर रखने के लिए हिन्दू-पति महाराणा प्रताप ने कठिन से कठिन दुख सहन किया था। क्या उसी कुल के महाराणा आज एक अनाथ बालिका को शरण मे लेने से हिचकिचाते है?' इस पर राजसिह बोले, 'नही-नही और कदापि नही प्राण भले ही चला जाए, परन्तु पूर्वजो की धवल कीर्ति पर राजसिह द्वारा कालिमा नही लग सकती।'[1]

इसी प्रकार "वीरबाला' मे रूपमती राजसिह को पत्र मे—'निर्मल सिसोदिया वश के नायक मेवाड की पवित्र और निष्कलक गद्दी के स्वामी भारत गौरवादर्श अशरण-शरण श्रीमान् हिन्दूपति महाराणा जी साहब,'[2] कह कर सबोधित करती है। और राजसिह स्वय स्वर्णिम जातीय अतीत को ध्यान मे रखते हुए कहते हैं, "जो अवला शरण-शरण चिल्लाती है अथवा अपने अन्त करण से वर चुकी है, यदि उसकी पुकार पर ध्यान न दूँ या उसकी रक्षा के लिए उद्यत न होऊ तो मेरे पूर्वजो की महती प्रतिष्ठा मे बडा भारी धक्का लगेगा।"[3]

गगाप्रसाद गुप्त ने 'हम्मीर' मे हम्मीर द्वारा पुन चित्तौड को हस्तगत करने का तथा सिद्धनार्थसिह के 'प्रणपालन' मे और अखौरी कृष्ण प्रकाश के 'वीर चूडामणि' मे मेवाड के सिसोदिया वश की महानता एव जातीय गौरव का पात्रो के चरित्र पर गहरा पभाव पडा है।

'प्रणपालन' मे सिसोदिया तथा राठौड जातियो की प्रबल टकराहट का मजीव चित्रण किया गया है। जातीय-दर्प एव कुल मर्यादा वीर चूडा जी के चरित्र की महानता के द्योतक है, जबकि यही जातीय दर्प राठौड राजा जोधा जी के लिए कलक के समान है। अपने भाजे मोकल जी के अभिभावक के रूप मे उन्होने मेवाड के सिसोदियो के स्थान पर राठौडो को ऊँचे-ऊँचे पदो पर नियुक्त किया। "जिस जाति का जब अधिकार और प्रभुत्व जिस जाति पर होता है, वह उस जाति के लोगो को

1 "राजपूत रमणी", युगलकिशोर नारायणसिंह

2 "वीरबाला', बाबूलालजी सिंह, पेज 17.

3 वही०, पेज 32

अपने अत्याचार से कष्ट पहुँचाती ही है ।"[1] अन्तत चूडा जी फिर से राठोडो को मेवाड से निकाल बाहर करते हैं ।

रामजीवन नागर के "जगदेव परमार" में भी जातीय दर्प जगदेव को जीवन मे आगे बढने के लिए प्रेरित करता है, 'मैं क्षत्री हूँ, क्षत्री का पुत्र हूँ, कही पर अपना गुण प्रकाशित करूँगा और सुख से रहूँगा ।'[2]

अमीरी कृष्ण प्रकाश सिंह के 'वीर चूडामणि' में जातीय दर्प, कीर्ति एव दिग्विजय की धारणाओ के साथ सम्मिलित रूप मे उभरा है ।[3] दरबारी सस्कृति तथा क्षात्र वीरता के सन्दर्भ मे अस्सी सहस्र सेना का युद्धक्षेत्र को पयान करना जातीय दर्प के कारण ही है ।[4]

(इ) **दरबारी सस्कृति शौर्य, प्रतिद्वन्द्विता, भोग**—मध्ययुगीन सामन्ती सभ्यता एव दरबारी सस्कृति के प्रभाव-स्वरूप राजाओ एव सामती-सरदारो में अद्वितीय युद्ध-कौशल, अनुपम शौर्य (Chivalry) भयावह प्रतिद्वन्द्विता (Rivalry) उद्दाम भोग (Revelry) (मद्यपान-उत्सव) आदि चारित्रिक विशेषताएँ विशेष रूप से उभर कर आई हैं । इन चारित्रिक विशेषताओ का मध्ययुगीन इतिहास चेतना के साथ गहन सम्बन्ध है । नायक पूजा की पौराणिक धारणाओ मे सम्बद्ध ये तीनो विशेषताएँ लगभग एक साथ राजाओ एव शासको मे उपलब्ध होती हैं ।

उदाहरणत मुँशीदेवी प्रसाद के 'रूठी रानी' नामक उपन्यास के नायक मालदेव, जो मारवाड के राव थे, मे ये तीनो विशेषताएँ एक साथ प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होती हैं । हुमायूँ के पराभव एव शेरशाह सूरी के उत्थान के सक्राति युग मे मालदेव ने अद्वितीय शौर्य के कारण बहुत से देश जीत लिए थे ।[5] इसलिए उन की पराजित राजाओ तथा जागीरदारो से भयानक प्रतिद्वन्द्विता हो गई थी । जैसलमेर के रावल लूनकरण की बेटी उमादे के सौन्दर्य की ख्याति सुन मालदेव ने उससे शादी का प्रस्ताव किया । लूनकरण ने भयानक प्रतिद्वन्द्विता के कारण 'चौरी' (विवाह होने की जगह) पर ही मालदेव के वध का विचार किया । सोचा, 'बेटी तो विधवा होगी पर तेरी तरफ काटा जन्म भर के लिए दिल मे निकल जाएगा ।'[6]

मालदेव को इस षड्यन्त्र का पता लग जाने से विवाह तो निर्विघ्न समाप्त हो जाता है परन्तु राव मालदेव उद्दाम काम-भोग एव मदिरा से मस्त होकर वधू के महल की ओर जाते समय रास्ते मे एक स्थान पर हो रहे नृत्य पर "लट्टू होकर वही बैठ गए, दो खवासे दाएँ बाएँ मोरछल लेकर खडी हो गई, दो चवर हिलाने

1 "प्रणपालन", बाबू सिद्धनाथ सिंह, कलकत्ता सन् 1915, पृष्ठ 27
2 "जगदेव परमार", रामजीवन नागर, पृष्ठ 64
3 "वीर चूडामणि", पृष्ठ 10-12
4 "वीर चूडामणि", पृष्ठ 58
5 देखिए—टॉड का राजस्थान का इतिहास, अनुवादक केशव कुमार पृष्ठ 364
6 "रूठी रानी", मुँशी देवी प्रसाद, भारत मित्र प्रेस, कलकत्ता, सन् 1906 ई० पृष्ठ 3.

और पखा झलने लगी। ' ' राव जी उस परिस्तान मे इन्द्र बन कर बैठ गए। चन्द्रज्योति ने पन्ने के हरे प्याले मे शराब भरकर हँसते हुए हाथ बढा कर राव जी की भेंट की। उन्होने बडे प्रेम से लेकर पी ली और प्याला अशरफियो से भर कर लौटा दिया।'[1] उमादे रावजी को बुलाने को अपनी सखी भारेली को भेजती है। 'भारेली छलवल करती हुई इस ढग से रावजी के पास पहुँची कि रावजी जवानी और शराब की मस्ती मे उसे ही रानी समझ कर उसके साथ चल दिए। वह भी उन्हे अपने मकान की ओर ले गई।'[2]

प० बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' मे मराठो के अपार शौर्य एव प्रतिद्वन्द्विता का चित्रण किया है। मुख्य सेनापति सदाशिवराव, भाऊ मल्हारराव हुल्कर, दत्ता जी सेंधिया, जनकोजी सेंधिया, बलवन्तराव मेढले, आदि सेनापतियो तथा भरतपुर के राजा सूरजमल के चरित्र-चित्रण मे शौर्य एव प्रतिद्वन्द्विता अथवा आपसी मतभेदो का कलात्मक एव सुरुचिपूर्ण सम्मिश्रण किया है। उद्दाम भोग व विलासिता की चरित्रगत प्रवृत्तियो को उपन्यास मे कोई स्थान नही दिया गया।

'जगदेव परमार' मे जगदेव तथा उसकी पत्नी आदर्श क्षत्रिय दम्पति के रूप मे चित्रित किए गए हैं। जगदेव को शौर्य की प्रतिमूर्ति के रूप मे उभारा गया है। यह दम्पत्ति मार्ग मे एक भयावह सिंह एव सिंहनी का वध कर[3] अपने शौर्य एव वीरता का परिचय देते हैं। इसी प्रकार जगदेव काल भैरव को पराजित कर के अपनी स्वामिभक्ति एव वीरता का प्रमाण प्रस्तुत करता है। जगदेव के सौतेले भाई रणधवल से उसकी प्रतिद्वन्द्विता का स्वरूप अन्त पुर की राजनीति से अधिक नही कहा जा सकता, जबकि रणधवल की माँ बाघेली रानी, गौड देश की राजकुमारी के साथ रणधवल की सगाई करवाने मे सफल होती है जबकि गौड राजा उसकी जगदेव से सगाई करवाने के लिए अपने दीवान को भेजता है। इस प्रतिद्वन्द्विता को अन्त पुर की रानियो के द्वेष की भी सज्ञा दी जा सकती है।

बाबूलाल जी सिंह कृत 'वीर बाला' तथा बाबू युगल किशोर नारायण सिंह कृत 'राजपूत रमणी' उपन्यासो मे मेवाड के राणा राजसिंह तथा उनके मत्री चन्दावत जी के शौर्य तथा उनकी औरगजेब के साथ प्रतिद्वन्द्विता को विशिष्ट सामन्ती चारित्रिक विशेषताओ के रूप में उभारा गया है।

(ई) एकान्तिक एवं व्यक्तिगत प्रेम—एकान्तिक एव वैयक्तिक प्रेम भी ऐतिहासिक पात्रो के चरित्र का एक महत्त्वपूर्ण अग है। इसके अन्तर्गत अन्त पुरो (रणवास) तथा स्वयवर आदि का अतीत युगीन वर्णन किया गया है। ऐतिहासिक पात्रो का व्यक्तिगत मनोविज्ञान इसी धारणा के अन्तर्गत समाहित होता है। इस विषय पर 'राज सभाएँ एव अन्त पुर' शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन किया गया है।

1. वही, पृष्ठ 9-10
2 "रूठी रानी", पृष्ठ 13, भारेली के साथ और भी विलास, पृष्ठ 28
3 "जगदेव परमार', रामजीवन नागर, पृष्ठ 80

पदमलाल पुन्नालाल बख्शी के मतानुसार—'इतिहास के पृष्ठों में जो राजा, सेनापति, नेता और शासक अपने-अपने विशेष प्रभुताशाली पदों के कारण अपने कृत्यों से राष्ट्र के उत्थान और पतन मे विशेष प्रभाव डालने के कारण प्रख्यात हो गए हैं, उनके मानवीय भावों का उत्थान-पतन हम उपन्यासों मे पाते हैं। उपन्यासों मे उनके अपने प्रेम, विद्वेष, कष्ट, वेदना, आकांक्षा और सुख का वर्णन रहता है। वे एक मात्र राष्ट्र के कर्णधार नहीं होते, वे मनुष्य होकर पिता, पुत्र, पति और प्रेमी रूप में भी प्रदर्शित होते हैं। तब हम इनके जीवन की गरिमा या हीनता का अनुभव करते हैं।'[1]

गोस्वामी जी के 'रज़िया बेगम' मे याकूब के साथ सौसन एवं रज़िया तथा अयूब के साथ गुलशन एवं जोहरा का प्रेम इसी कोटि का है। 'तारा' में शाहज़ादियों के गुप्त प्रेम तथा यौन सम्बन्ध का चित्रण इसी धारणा के अनुरूप है। सामान्यतः इस धारणा का अधिक स्पष्ट रूप ऐतिहासिक रोमांसों में उभरा है।

(III) ऐतिहासिक उपन्यासों में घटनाओं की प्रामाणिकता

मानवीय अतीत के देश एवं काल की सीमाओं मे बद्ध एक विशिष्ट कालखण्ड को उपन्यास का आधार बना कर जब ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत का पुनःप्रस्तुतिकरण करता है, तो वह उस विशिष्ट काल खण्ड के इतिहास सम्मत पात्रों एवं घटनाओं का कलात्मक चित्रण करता है। ऐतिहासिक उपन्यास के निर्माण में इतिहास[2] तथा उपन्यास दो भिन्न प्रकार के घटकों का सम्मिलन होता है। उपन्यास के ढंग एवं शैली पर प्रस्तुत की गई मानवीय अतीत की एक गाथा मे ऐतिहासिक एवं इतिहास-सम्मत घटनाओं को किस प्रकार एवं किस सीमा तक प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इस विषय पर विद्वानों मे मतभेद हैं।

(क) उपन्यासों की ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में विद्वानों के मत—रवीन्द्रनाथ टैगोर सर फ्रांसिस पालग्रेव के संदर्भ से—कहते हैं कि "ऐतिहासिक उपन्यास एक ओर इतिहास का शत्रु है, तो दूसरी ओर कहानी का भी बड़ा दुश्मन है अर्थात् उपन्यास-लेखक कहानी की खातिर इतिहास पर आघात करते हैं और वह आहत इतिहास, कहानी का नाश कर देता है। इस प्रकार बेचारी कहानी के श्वसुर कुल तथा पितृ कुल दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।"[3]

1 "ऐतिहासिक उपन्यास, दिशा और उपलब्धि", ऐतिहासिक उपन्यास संपादक डॉ० गोविन्दजी पृष्ठ 73

2 नोट —सामान्यतः विद्वान् इतिहास को एक दिए गए तथ्य के रूप में स्वीकार करते हैं जबकि इतिहास एक दिया गया तथ्य नहीं हो सकता क्योंकि वह पहले ही [illegible] चुनाव एवं निरीक्षण की प्रक्रिया से गुजरने के कारण विश्लेषणात्मक स्वरूप का हो जाता है। (यहाँ विद्वानों के मत से हमारा मत मिलना आवश्यक नहीं है)

3 'ऐतिहासिक उपन्यास और ऐतिहासिक रस' टैगोर, गोविन्द जी [illegible] ऐतिहासिक उपन्यास, पृष्ठ 12

हिन्दी साहित्य-कोषकार के मतानुसार ऐतिहासिक उपन्यास को इतिहास तथा उपन्यास दो परस्पर भिन्न प्रकृति वाले स्वामियो के प्रति भक्ति निभानी पडती है ।

काव्य के माधुर्य एव इतिहास की तथ्यात्मकता एव विज्ञानपरकता मे एक व्यापक विपरीतता होती है । काव्य एव इतिहास मे तथ्य एव सत्य की मात्राओ के सम्बन्ध मे विश्व कवि रवीन्द्र का मत यह है—"काव्य कहता है—भाई इतिहास, तुम्हारे अन्दर भी बहुत कुछ मिथ्या है और मेरे अन्दर भी बहुत-सी सचाइयां हैं, अतएव हम दोनो पहले के समान मेल-मिलाप कर ले । इतिहास कहता है कि ना भाई, अपने-अपने हिस्से का बंटवारा कर लेना ही अच्छा है । ज्ञान नामक आमीन ने सर्वत्र इस बंटवारे के कार्य का प्रारभ कर दिया है । सत्य के राज्य और कल्पना के राज्य मे स्पष्ट भेदक रेखा खीचने के लिए उसने कमर बाध ली है ।'[1]

ऐतिहासिक उपन्यासो मे घटनाओ की ऐतिहासिक प्रामाणिकता की जांच करने से पूर्व हमे उपन्यास-कला तथा इतिहास के विलयन की प्रक्रिया का अध्ययन कर लेना चाहिए । गोपीनाथ तिवारी के मतानुसार, "इतिहास का घोर विरोधी है उपन्यास । जहां इतिहास का आधार है ठोस सत्य, वहां उपन्यास की नींव है कल्पना ।"[2]

देवराज उपाध्याय 'उपन्यास, इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास' नामक निबन्ध मे इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास के बीच एक सीमा-रेखा इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, 'इतिहास मे कल्पना का पुट आ जाना सहज है, पर घटनाओ पर काल्पनिक रंग चढाना इतिहास का काम नहीं । ऐतिहासिक उपन्यास मे यात्रा के लिए निकलती तो है कल्पना ही, पर इतिहास को भी साथ ले लेती है । यदि पूर्ण रूपेण हार्दिक सम्मिलन नहीं हो सकता तो उसे बराबर हृदय मे लगाए न रख कर कभी-कभी उसको छोड कर भी साथ ले सकती है । • इतिहास उसके गृह पर अतिथि के रूप मे निमन्त्रित होकर आ गया तो वह हर तरह के आदर-सत्कार का अधिकारी होगा, पर वह वहां दखल जमा कर 'मालिक मकां' नहीं बन सकता ।'[3] स्पष्ट है कि ऐतिहासिक उपन्यास मे इतिहास का ही आधिपत्य नहीं होना चाहिए । 'कला-वस्तु' मे भी सत्य (इतिहास) या कल्पना मे से कौन प्रधान हो तो उपाध्याय जी के मतानुसार, 'निर्मिति मे कल्पना का देय कुछ अधिक है ।'[4]

यदि इतिहासकार अपनी खोजो और निर्णयो को अत्यन्त कलात्मक ढग से प्रस्तुत करे तो "उसे शब्दो के चुनाव मे कौशल से काम लेना ही पडेगा । यदि कोई

1 "ऐतिहासिक उपन्यास और ऐतिहासिक रस' टैगोर, गोविन्द जी सपादित "ऐतिहासिक उपन्यास" पृष्ठ 11
2 'ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास", गोपीनाथ, गोविन्द जी सपादित "ऐतिहासिक उपन्यास" पृष्ठ 58
3 वही, पृष्ठ 43
4 वही पृष्ठ 54

ऐसा इतिहास लेखक है, तो हम उसकी कारीगरी की, कुशलता की दाद दे सकते है उस पर भी वह एक कुशल इतिहासकार ही है, कलाकार नही। उसकी रचना इतिहास का ग्रन्थ है, साहित्य का नही।[1]"

ऐतिहासिक उपन्यास में ऐतिहासिक घटनाओ की प्रामाणिकता का अध्ययन करते समय यह देखना होगा कि इतिहास का अनुगमन करते समय ऐतिहासिक उपन्यास स्वय इतिहास न बन जाए। उपन्यासकार की कार्य-प्रणाली तथा सम्प्रेषणीयता की प्रक्रिया इतिहासकार से भिन्न प्रकार की होती है। देवराज उपाध्याय के मतानुसार उपन्यासकार के हृदय मे विषय तथा उसे प्रतिपादित करने की शैली, 'ये दोनो चीजें साहित्य मे साथ-साथ अवतरित होती हैं। कोई भी साहित्यिक सवेग अपनी रूपाभिव्यक्ति को साथ ही लिए आता है।'[2] ऐतिहासिक उपन्यास के इतिहास बन जाने की सभावना के सबध मे गोपीनाथ तिवारी का मत यह है—"लेखक उपन्यास के माध्यम से सच्चा इतिहास देता है। इस श्रेणी के लेखक यदि उपन्यासकार न हुए तो जीवन-चरित्र मात्र देते हैं, ऐतिहासिक उपन्यास नही। मिश्र द्वय के ऐतिहासिक उपन्यास, उपन्यास कम हैं।"[3]

ऐतिहासिक उपन्यास मे जिस विशिष्ट एव सुनिश्चित देश एव काल का पुन प्रस्तुतिकरण किया जाता है उस कालखण्ड की ऐतिहासिक घटनाएँ, उपन्यासकार की निर्माणकारी प्रतिभा, उर्वर कल्पना तथा साहित्यिक उपकरणो के साथ मिल कर एक रूप हो जाती हैं। इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास अन्यान्य कलाओ के पुनीत सगम के रूप मे उभरता है। डॉ० गोविन्द जी के मतानुसार, "ऐतिहासिक उपन्यास ऐसी कला-कृतियो मे से एक है, जो विभिन्न कलाओ के पारस्परिक सयोग से उत्पन्न होती हैं। जिस प्रकार सगीत, कविता तथा नाट्य-कला के पारस्परिक सम्मिलन से एक नई कला 'गीतिनाट्य' की उत्पत्ति होती है, जो रूपाभिव्यक्ति मे अपने तीनो पूर्ववर्ती कलारूपो से भिन्न होती है, उसी प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास भी उपन्यास-कला तथा इतिहास का विलयन है। ऐतिहासिक तथ्य एव घटनाएँ जब मन कल्पना के पखो पर चढ कर उपन्यास कला के क्षेत्र मे प्रविष्ट होती हैं, तो ऐतिहासिक उपन्यास का जन्म होता है"।[4] इसलिए, "कोई भी ऐतिहासिक उपन्यास चाहे वह उच्च कोटि का ही क्यो न हो, इतिहास का विशिष्ट कार्य नहीं कर सकता और न उसमें हम ऐतिहासिक तथ्यो एव घटनाओ का अनुसधान ही कर सकते हैं।'[5]

ऐतिहासिक उपन्यासो के सबध मे डॉ० गोविन्द जी के उपर्युक्त मत के विपरीत ऐतिहासिक उपन्यासो मे घटनाओ की ऐतिहासिक प्रामाणिकता का अध्ययन

1 वही पेज 40
2 वही, पेज 41
3 डॉ० गोविन्द जी सपादित—ऐतिहासिक उपन्यास पेज 62
4 डॉ० गोविन्दजी सपादित ऐतिहासिक उपन्यास, पेज 127
5 वही, पेज 128

अत्यन्त आवश्यक है। इस सबंध मे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत है कि—"उपन्यास का लेखक वास्तविकता की उपेक्षा नही कर सकता। वह अतीत का चित्रण करते समय भी पुरातत्व, मानवतत्व और मनोविज्ञान आदि की आधुनिकतम् प्रगति से अनभिज्ञ रह कर थोथी कल्पना का आश्रय ले उपहासास्पद बन जाता है।"[1] ऐतिहासिक कथाकार द्वारा ऐतिहासिक सामग्री के गम्भीर अध्ययन एव उसके सतर्क प्रयोग के सबध मे राहुल सांकृत्यायन का मत उल्लेखनीय है—"ऐतिहासिक मामग्री का हल्के दिल से अध्ययन करना लाभदायक नही है, इससे लेखक आधा तीतर आधा बटेर पैदा करने मे समर्थ होगा जो कि और भी उपहासास्पद बात होगी। ऐतिहानिक कथाकार को हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि हमारी एक-एक पक्ति पर एक बडा निष्ठुर मर्मज्ञ समूह पैनी दृष्टि से देख रहा है। हमारी जरा भी गलती वह बरदाश्त नही करेगा।"[2]

डॉ० गोपालराय ने प्रेमचन्द पूर्व लगभग समस्त इतिहासाश्रित कथासाहित्य को ऐतिहासिक रोमास की सज्ञा से अभिहित किया है। विशेषत श्री किशोरी लाल गोस्वामी के सबध मे उनका मत है कि वे ऐतिहासिक उपन्यास की कसौटी पर खरे नही उतरे। —"इन कथाओ मे जो जीवन चित्रित हुआ है, वह, अविश्वसनीय है। गोस्वामी जी के सभी उपन्याम मुख्यत प्रेम कथाएँ है। पात्रो के नाम ऐतिहासिक है, पर मूल कथाओ का इतिहास से सबध नही के बराबर है।"[3]

'यद्यपि किसी युग की स्पिरिट का बोध कराने के लिए यह आवश्यक नही है कि वह अतीत की वास्तविक घटनाओ अथवा इतिहास-समर्थित घटनाओ का आधार ले। ऐतिहासिक उपन्यास की प्रत्येक घटना काल्पनिक भी हो सकती है और वह घटित हुई किसी विशिष्ट घटना के बिना भी 'इतिहास की भाववृत्ति' को उपस्थित कर सकती है।"[4] तथापि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे उपलब्ध ऐतिहासिक-सामग्री का उत्तम प्रयोग किया गया है। इस शताब्दी के प्रथम दो दशको तक जो इतिहास-सामग्री उपलब्ध थी उसके स्वरूप का अध्ययन तीसरे अध्याय के पहले अश मे किया गया है।

प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अपने उपन्यासो मे वर्णित अतीत युग के सम्बन्ध मे उपयुक्त ऐतिहासिक जानकारी प्रदान करने के लिए लम्बे-लम्बे 'उपोद्घात' एव भूमिकाएँ आदि लिखी हैं। कई बार उपन्यासकार स्वय ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त करने के स्रोतो का विवरण भूमिका अथवा प्राक्कथन मे देते है।[5] मुख्यत.

1 'ऐतिहासिक उपन्यास क्या है ?' 'डॉ० गोविन्द सपादित ऐतिहासिक उपन्यास, पेज 17
2 वही, पेज 21—'ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप,' राहुल सात्यान।
3 "हिन्दी कथा साहित्य और उसके विकास पर पाठको की रुचि का प्रभाव"—डॉ गोपालराम, पेज 307
4 डॉ० गोविन्द जी—'ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप' पेज 138
5 विवेच्य उपन्यासकारो द्वारा उपन्यासो की रचना मे इतिहास पुस्तको एव यात्रा विवरणो आदि से सहायता ली गई है। इसका विवरण दूसरे अध्याय के दूसरे अश में किया गया है।

टॉड कृत 'राजस्थान का इतिहास', फार्बस कृत 'रासमाला' (गुजरात का इतिहास), 'इडियन-शिवेलरी' कल्हण की 'राजतरगिणी', बर्नियर एव म्यानिसी के 'यात्रा-वृत्तात' आदि से उपन्यासकारो ने इतिहास सबधी ज्ञान प्राप्त किया है।

टॉड का 'राजस्थान का इतिहास' दशाधिक विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित घटनाओ की प्रामाणिकता का प्रमाण है। टॉड राजपूतो के प्रति अत्यन्त सहृदयतापूर्ण एव सहानुभूतिपूर्ण रवैया अपनाता है। उसने राजपूतो को अत्यन्त निकट से देखा, उनके शौर्य एव वीरता की प्रशसात्मक आलोचना की। वह 'स्वय को स्पष्ट रूप से राजपूत जाति का अभिवक्ता एव प्रशसक मानता था।"[1] राजस्थान के अधविश्वासो, मिथको, तथा धर्म के सबध मे टॉड का रवैया उदार था। राजपूतों की नैतिकताओ के लिए उसकी धारणा समर्थन-पूर्ण थी।[2] टॉड ने स्वय राजपूतों के पौराणिक सूर्य सबधी (Solar) तथा चन्द्र सबधी (Lunar) जातियो का अध्ययन किया तथा उसे अपने इतिहास मे स्थान भी दिया। इसी प्रकार के कतिपय कारणों ने यह कहा गया कि 'टॉड, निश्चय ही इतिहास को उसके उचित उपयोग के लिए प्रयुक्त करने के लिए व्यग्र था।'[3]

टॉड के इतिहास की ऐतिहासिकता एव प्रामाणिकता का अध्ययन एक अलग विषय है। आवश्यक यह है कि इतिहास-लेखक अपने विषय के साथ तब तक न्याय नही कर सकता जब तक कि वह ऐतिहासिक-युग के लोगो, उनके विश्वासो, विचारों, एव परपराओ से एक प्रकार का आत्मीय सबध स्थापित न कर ले और टॉड ने यह इसी भाँति किया।

डॉ० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार टॉड का इतिहास चाहे "आधुनिक दृष्टि से वैज्ञानिक रूपेण लिखित इतिहास का ग्रन्थ न हो, परन्तु इसमे जरा भी सन्देह नही कि यह ऐतिहासिक सामग्री का अपूर्व भडार है। जिस समय कर्नल टॉड ने अपना ग्रथ लिखा था इतनी सामग्री उपलब्ध नही थी। राजपूत जातियो का टॉड का परिचय अब अपूर्ण समझा जाता है। · · राज्यो के इतिहासों मे भी बहुत सी त्रुटियाँ थीं, जिनका अब सशोधन किया गया है।" इस पर भी "राजपूत समाज के बारे मे जितनी सामग्री टॉड के ग्रन्थ मे है, वह अन्यत्र नही उपलब्ध होती। न कहीं राजपूत सामन्तशाही का ऐसा विस्तृत वर्णन मिलता है जैसा कि टॉड लिखित राजस्थान के इतिहास मे है।" टॉड की सामग्री के सबध मे उनका मत है कि "राज्यो से उन्हें सहायता मिलती थी। चारणों से उन्हे बहुत-सी सामग्री उपलब्ध हुई। जनश्रुति का भी, इतिहास का एक अमूल्य साधन है, उन्होने उपयोग किया।"[4]

1 "British Historical Writing on Muslim India" by Dr J S Grewal (Ph D) Thesis from London University Page 329

2 वही, पेज 322

3 वही, पेज 331

4 टॉड लिखित—'राजस्थान का इतिहास' केशव कुमार द्वारा किए गए अनुवाद की भूमिका से उद्धृत, पेज 6-7

स्वय टॉड ने ऐतिहासिक सामग्री के सबध मे लिखा था,—'भारतवर्ष मे युद्ध सबधी जो काव्य ग्रन्थ हैं, वे इस देश के इतिहास की सामग्री देने मे सहायता करते है। कवि मनुष्य जाति के प्राचीन इतिहासकार माने जाते है। ऐतिहासिक सामग्री के लिए इस देश मे दूसरे भी साधन हैं। भौगोलिक वृत्तान्त, काव्यमय राजाओ के चरित्र, घटनाओ को लेकर लिखे गए लेख, विभिन्न प्रकार की धार्मिक पुस्तकें भी इस कार्य मे सहायता करती हैं। ऐतिहासिक काव्य ग्र थ-स्मृति, पुराण, टिप्पणियां, जनश्रुतियां, शिलालेख, सिक्के और ताम्रपत्र-जिनमे बहुत-सी ऐतिहासिक बातो के उल्लेख मिलते है—इस कार्य मे सहायक सावित होते हैं।"[1]

टॉड ने यद्यपि काव्य-ग्रन्थो की ऐतिहासिक सामग्री का उपयोग इतिहास-लेखन के कार्य मे किया था, परन्तु वे उनकी त्रुटियो के प्रति सजग थे। उन्ही के मतानुसार, 'प्राचीन काल मे कवियो ने इतिहासकारो के स्थान की पूर्ति की थी परन्तु उनमे कुछ त्रुटियाँ थी। वे त्रुटियाँ अतिशयोक्ति तक ही सीमित न थी। उनमे खुशामद की मनोवृत्ति भी थी और कवि की प्रसन्नता एव अप्रसन्नता दोनो ही इतिहास के लिए जरूरी नही हैं। इतिहासकार मित्र और शत्रु-दोनो के लिए एक-सा रहता है और अपने इस कार्य मे वह जितना ही ईमानदार रहता है, उतना ही वह श्रेष्ठ इतिहासकार होता है।"[2]

स्पष्ट है कि टॉड इतिहास मे इतिहासकार की निर्वैयक्तिकता की धारणा का पोषक था। उसने लगभग समस्त उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री का उपयोग किया तथा राजपूतो के अतीत युगो को पुन प्रस्तुत करने के साथ-साथ उन्हे अमरत्व भी प्रदान किया।

कर्नल जेम्स टॉड जब मेवाड के सबध मे लिखता है तो वह एक उत्साही (Inspired) कवि जैसा बन जाता है।[3] डॉ० ईश्वरी प्रसाद के मतानुसार, 'ग्यारहवें परिच्छेद मे मेवाड का इतिहास आरम्भ होता है। घटनाओ का वर्णन मार्मिक तथा ओजस्वी भाषा मे किया गया है।"[4]

(ख) उपन्यासो की ऐतिहासिक प्रामाणिकता—टॉड के मेवाड के इतिहास मे अधिकाश विवेच्य उपन्यासकार प्रभावित हुए तथा उसमे वर्णित घटनाओ के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना की।

"राजस्थान का इतिहास" के पन्द्रहवे परिच्छेद का विवेच्य-युग के ऐतिहासिक उपन्यासकारो पर सर्वाधिक प्रभाव पडा और इसमे वर्णित घटनाओ को लगभग उसी रूप मे अथवा कुछ परिवर्तित रूप मे पाँच विवेच्य उपन्यासो मे वर्णन किया गया है।

1 वही प्रस्तावना पेज 14-15
2 टॉड लिखित राजस्थान का इतिहास, केशव कुमार द्वारा किए गए अनुवाद की भूमिका से उद्धृत पेज 14-15, प्रस्तावना से।
3 डॉ० जे एस गरेवाल, पज 329
4 राजस्थान इतिहास भूमिका पेज 8

चन्द्रशेखर पाठक कृत "भीमसिंह", मिश्रबन्धु कृत—"वीर मणि", रामनरेश त्रिपाठी कृत "वीरागना", गिरिजानन्दन तिवारी कृत "पद्मिनी', वसन्तलाल शर्मा कृत "महारानी पद्मिनी" तथा रूप नारायण कृत "सोने की राख या पद्मिनी"[1] में सामान्य रूप से चित्तौड के महाराणा लक्ष्मण सिंह की अल्पवयस्कता के कारण उनके चाचा भीमसिंह द्वारा शासन का कार्य किया जाना, भीमसिंह की पत्नी पद्मिनी का अनुपम सौन्दर्य और अलाउद्दीन द्वारा उस पर अनुरक्त हो कर चित्तौड़ पर आक्रमण किया जाना, अलाउद्दीन द्वारा पद्मिनी की माँग तथा अन्यान्य राजनैतिक चालें चली जाना, दर्पण मे पद्मिनी को देख कर लौटने का वचन, और फिर षड्यन्त्र द्वारा राणा भीमसिंह को गिरफतार करना, शत्रु के शिविर मे, पद्मिनी द्वारा अलाउद्दीन को मूर्ख बनाने की योजना और उसी के अनुरूप बहुत-सी पालकियों मे गोरा व बादल के सेनापतित्व मे मेवाडी सेनाओं को शत्रुशिविर में भेज कर भीमसिह का छुड़ाया जाना, शिविर मे भयानक युद्ध, गोरा की बहादुरी, बादशाह द्वारा दोबारा आक्रमण किया जाना और भयानक सग्राम किया जाना, चित्तौड में युद्ध की अन्तिम तैयारी का वातावरण तथा महलो मे जौहर व्रत की योजना का बनाया जाना, चित्तौड की पराजय तथा राजपूत बालाओ द्वारा अपने जीवन की होली खेले जाना आदि सभी ऐतिहासिक घटनाएँ इन उपन्यासो में वर्णित की गई हैं जिन्हें टॉड के इतिहास[2] में मान्यता प्रदान की गई है।

इनके अतिरिक्त राणा भीमसिह के बडे पुत्र अरिसिंह (अथवा अरुणसिंह) का एक भील कन्या से आकस्मिक प्रेम, उस युवती की निर्भीकता एव वीरता, तथा बाद मे अरिसिंह से विवाह करना इस घटना को चन्द्रशेखर पाठक ने अपने उपन्यास "भीमसिंह" मे अत्यन्त कलात्मक रूप मे प्रस्तुत किया है।

मुख्यत इसी घटना-क्रम पर निर्भर रहते हुए भी विवेच्य उपन्यासकारो ने कई काल्पनिक उद्भावनाएँ की हैं।

मेवाड के राणा लाखा (लाक्ष) के बडे पुत्र राजकुमार चन्द्र (चूडामणि) की वीरता, शौर्य तथा प्रण का पालन करने के लिए उनके द्वारा सिंहासन तथा चित्तौड का परित्याग किया जाना, मझौरी कृष्ण प्रकाश सिंह के उपन्यास "वीर चूडामणि" तथा सिद्धनाथ सिंह के उपन्यास "प्रणपालन' मे वर्णित किया गया है।

"वीर चूडामणि" मे राणा लाखा की कई ऐतिहासिक विजयों का वर्णन रोमासिक प्रसगो से जोडते हुए किया गया है।

1. "सोने की राख या पद्मिनी", नामक उपन्यास का विज्ञापन "फरवरी 1917 की मर्यादा में प्रकाशित "पुस्तक परिचय" में दिया गया था। यह उपन्यास बहार ऑफिस, काशी से प्रकाशित हुआ था। हिन्दी उपन्यास कोशकार डॉ. गोपालराय इस उपन्यास को प्राप्त करने में असमर्थ रहे थे। (हिन्दी उपन्यास कोश पेज 149) प्रस्तुत पक्तियों के लेखक को यह पुस्तक पुरानी पुस्तकों का शोध करते समय प्राप्त हुई।
2. देखिए-राजस्थान का इतिहास, टॉड, अनुवाद केशवकुमार, पेज 149-160

केशवकुमार के अनुवाद का सोलहवाँ परिच्छेद,[1] सिद्धनाथसिंह कृत "प्रणपालन" की समस्त कथाभूमि एव मुख्य घटनाओ की प्रामाणिकता सिद्ध करता है ।

महाराणा लाखा द्वारा राजकुमार चूडामणि के लिए मारवाड के राजा रणमल्ल द्वारा भेजे गए नारियल (विवाह सदेश) के सम्बन्ध मे परिहास करना तथा राजकुमार द्वारा इसे गभीरता से लेना, राणा लाखा एव दरबारियो द्वारा समझाए जाने पर भी जब चूडामणि न माने तो मारवाड के राजा रणमल्ल को अपमान से बचाने के लिए स्वय वह नारियल स्वीकार किया । चूडामणि ने यह प्रतिज्ञा की कि वह इस रानी से उत्पन्न होने वाले पुत्र के कारण सिहासन का अधिकार त्याग देगा । मुकुल (मोकल) का जन्म हुआ तो उसे सिंहासन का उत्तराधिकारी बनाया गया । राणा लाखा गया मे यवनो का हनन करने को गए तो चूडामणि ने स्वय राज्य का कार्यभार अपने हाथ मे लिया । मारवाड के राजा रणमल्ल आदि के बहकावे मे आकर राजमाता ने चूडा जी पर सदेह व्यक्त किया तो वे राज्य त्याग कर मान्दू (माडू) चले गए । धीरे-धीरे मारवाड के राठौडो का चित्तौड मे आधिपत्य होने लगा । राजवश की एक धाय द्वारा चेताने पर राजमाता को अपनी त्रुटियो का भास हुआ तो उसने चूडा जी से सहायता की माँग की । चूडा जी ने अपने लगभग दो सौ सवारो तथा चित्तौड की जनता की सहायता से राठौरो को वहाँ से निकाल चित्तौड का उद्धार किया ।

यह समस्त घटना-क्रम टॉड के इतिहास द्वारा ऐतिहासिक रूप से मान्य है ।

बाबू गगाप्रसाद गुप्त लिखित "हम्मीर" मे वर्णित मुख्य घटनाएँ टॉड के इतिहास[2] द्वारा प्रमाणित की गई हैं । यह "गद्य कथा" आरभ करने से पूर्व वे टॉड की यह उक्ति पुन प्रस्तुत करते है —

"There is not a petty state in Rajasthan that has its tharmopylea & scarcely a city that has not produced its leonids" TOD

पद्मिनी द्वारा जौहर-व्रत का पालन करने के पश्चात् चित्तौड का पतन हो गया था । परन्तु राणा लक्ष्मणसिंह के पुत्र अरिसिंह जो अलाउद्दीन के आक्रमण के समय कारणवश चित्तौड छोड गए थे,के पुत्र हम्मीर का उसके चचा अजयसिंह ने पता लगाया और मु जा (बलैचा जो कि भीलो का सरदार था) के विरुद्ध भेजा (पृष्ठ 7)। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार हम्मीर ने बलैचा का कटा हुआ सर अजयसिंह के चरणो मे प्रस्तुत किया । उसी के रक्त से हम्मीर का 'टीकाडोर' नामक वीरप्रथा के अनुसार राजतिलक किया गया (पृष्ठ 9) । सर्वप्रथम भीलदुर्ग विजय किया । मालदेव ने कपट से अपनी विधवा-पुत्री का हम्मीर से विवाह

1 देखिए, टाड कृत राजस्थान का इतिहास, पेज 160-164

2 देखिए, टाड कृत राजस्थान का इतिहास, पेज 154-159

किया जिसकी सहायता से हम्मीर ने मालदेव की अनुपस्थिति में चित्तौड़ को हस्तगत कर लिया (पृष्ठ 33)। दिल्ली के बादशाह मुहम्मद खिलजी की सहायता से मालदेव ने पुनः चित्तौड़ पर आक्रमण किया तो हम्मीर ने उन्हें पराजित कर बादशाह को कैद कर लिया पर बाद में उसे छोड़ दिया।

राणा प्रतापसिंह के पश्चात् मेवाड़ राज्य की वीरता एवं कीर्ति को राणा राजसिंह ने पुनः जीवित किया। रूपनगर की राजकुमारी प्रभावती (उपन्यास में नाम रूपवती) पर औरंगजेब की कुदृष्टि पड़ती है, तो वह उसे निकाह का संदेश भेजता है। रूपवती राठौर क्षत्रिय कन्या होने के कारण इसे अस्वीकार करके मेवाड़ के राणा राजसिंह को मन वचन से अपना पति स्वीकार कर यवन सम्राट से उद्धार की प्रार्थना करती है। राजसिंह अपने दरबारियों एवं सरदार चूड़ावत (चन्द्रावत) के साथ विमर्श करने के पश्चात् यह निर्णय करते हैं कि चन्द्रावत विशाल सेना के साथ आगरा के पास औरंगजेब को रोकेंगे, इसी बीच राजसिंह रूपमती को ब्याह लाएँगे। चूड़ावत ने औरंगजेब को भयानक युद्ध करके तीन दिन तक के लिए रोके रखा। इसी बीच राजसिंह ने रूपमती का पाणिग्रहण किया।

इस प्रकार ये समस्त घटनाएँ टॉड के इतिहास द्वारा अपनी प्रामाणिकता प्राप्त करती हैं।[1] बाबूलालजीसिंह का "वीरबाला" तथा युगलकिशोर नारायणसिंह का 'राजपूत रमणी' इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में प्रामाणिकता प्राप्त करते हैं।

जयरामदास गुप्त का ऐतिहासिक उपन्यास 'काश्मीर पतन' आधारित कनिंघम तथा खुशवंतसिंह के सिक्ख इतिहासों से अपनी प्रामाणिकता प्राप्त करता है। काश्मीर का शासक अजीमखाँ तथा उसका छोटा भाई जब्बारखाँ सामान्य जनता तथा पंडितों पर भयानक अत्याचार करते हैं। इस से दुखित होकर जब्बारखाँ का राजस्व मन्त्री पंडित बीरबल धर सिक्ख दरबार में शिकायत करने को हाजिर होता है तथा महाराजा रणजीतसिंह को काश्मीर पर अधिकार करने की सलाह देता है (पृष्ठ 83-92)।[2] इसके फलस्वरूप सिक्ख सेना ने काश्मीर को हस्तगत कर लिया (पृष्ठ 143-152)।[3]

इस प्रकार अन्यान्य काल्पनिक एवं अनैतिहासिक उद्भावनाओं के होते हुए भी उपन्यास की मुख्य घटनाएँ ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक हैं।

रामजीवन नागर ने अपने उपन्यास "जगदेव परमार" की भूमिका में स्पष्ट कर दिया है कि "फार्बस साहब की रासमाला के आधार पर इसकी रचना

1 टाड का राजस्थान पेज 224-228

2 "Jabbar Khan's revenue minister, Pandit Birbal Dhar ... to complain of the plight of his countrymen and advised the D... this was the opportune moment to take Kashmir." 'A History of the Sikhs' by Khushwant Singh Vol I London Oxford ... 1963 p 254

3 वही, पेज 254-255

रचना की गई है। उपन्यास आरम्भ करने से पूर्व "इतिहास से सम्बन्ध" शीर्षक के अन्तर्गत उपन्यास की मूलकथा का इतिहास से सम्बन्ध स्पष्ट कर दिया है तथा संक्षेप में कथानक का ऐतिहासिक बीज दे दिया है। जगदेव की मां सोलंकिनी रानी अनमानीति थी इसलिए चाह कर भी मालव-देश की धारा नगरी के राजा उदयादित्य बाघेली रानी के कोप के कारण जगदेव तथा उसकी मां को उनके उचित अधिकार नहीं दे पाता। गौड़ देश के राजा सकतीर ने अपनी कन्या की सगाई जगदेव से करने के लिए राजपुरोहित और दीवान को भेजा, परन्तु बाघेली के प्रपंच के कारण में आकर वे लोग जगदेव के बदले रणधवल से सगाई कर गए। रणधवल की बारात के आने समय मार्ग में टोक टोडा के राजा राजसिंह ने अपनी कन्या वीरमती को जगदेव से ब्याह दिया। अपमानित होने के पश्चात् जगदेव वीरमती को साथ लेकर पाटन नगर के राजा की नौकरी कर लेता है। वह पाटन के राजा सिद्धराज के प्रति अपनी स्वामिभक्ति दर्शाने के लिए सारे परिवार के प्राण देने को तैयार हो जाता है, इस पर सिद्धराज उस पर बहुत प्रसन्न हो जाता है। भुज के राजा जामलाखा बड़ी कन्या की शादी सिद्धराज से तथा छोटी बहन का विवाह जगदेव से करवा देता है। चामुण्डा देवी द्वारा हस्तक्षेप करने के कारण सिद्धराज जगदेव के विरुद्ध हो जाता है और वह धारा नगर पर चढ़ाई करने के लिए तैयार हो गया। इस पर जगदेव नौकरी छोड़कर धारानगर वापस चला गया। उदयादित्य ने उसे अपना उत्तराधिकारी बनाया। उदयादित्य की मृत्यु पर उसके साथ उसकी दोनों रानियां सती हो जाती हैं। जगदेव का, 52 वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् 85 वर्ष की आयु में बड़े पुत्र जगधवल को राज्य देकर, स्वर्गवास हुआ। उसके साथ उसकी तीनों रानियां भी सती हो गईं।

कतिपय अति लौकिक तत्त्वों के अतिरिक्त शेष समस्त कथानक इतिहास-सम्मत है और इसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता फार्बस साहब की रासमाला द्वारा प्रमाणित होती है।

मु० देवीप्रसाद के 'रूठी रानी' में यद्यपि लोक तत्त्वों का आधिक्य है तथापि राव मालदेव से सम्बन्धित समस्त राजनैतिक एवं ऐतिहासिक घटनाएँ टॉड के राजस्थान में प्रामाणिकता प्राप्त करती हैं। राव मालदेव का समय हुमायूँ के पतन और शेरशाह सूरी के उत्थान का संक्रांति काल था। इसलिए वह दोनों में से किसी भी एक की सहायता करने का राजनैतिक निर्णय नहीं ले पाया। 'मालदेव के शासनकाल में मारवाड़ के राज्य का बहुत विस्तार हो गया था। यह विशाल नगर मालदेव के प्रताप और ऐश्वर्य का प्रमाण देते हैं।'[1] शेरशाह हुमायूँ को परास्त करने के पश्चात् एक अत्यन्त कुटिलतापूर्ण षड्यन्त्र रच कर मालदेव के मन में अपने शूरवीर सरदारों के प्रति सन्देह उत्पन्न कर उसके राज्य के अधिकांश भाग उससे छीन लेता है।[2]

1 राजस्थान का इतिहास, टॉड, पृष्ठ 364
2 वही, पृष्ठ 367-368

अन्तःपुरों में रानियों के षड्यन्त्र तथा रूठी रानी उमादे से सम्बन्धित कथानक में लेखक ने एक समस्त अतीत युग का पुन: प्रस्तुतिकरण करने की प्रक्रिया में लोक तत्त्वों का सराहनीय प्रयोग किया है। घटनाओं की ऐतिहासिक प्रामाणिकता सोने पर सुहागे का काम करती है।

पं० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' नामक उपन्यास में ऐतिहासिक प्रसंगों का प्रसंगवश प्रामाणिक चित्रण किया गया है। जोधपुर के महाराजा [illegible] के ज्येष्ठ पुत्र का नाम अमरसिंह था। पहली रानी की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने दूसरा विवाह किया। इसमें यशोवन्त सिंह और अचलसिंह दो पुत्र उत्पन्न हुए। [illegible] गजसिंह ने रुष्ट होकर अमरसिंह को उत्तराधिकार से वंचित कर राज्य से बाहर निकाल दिया। वह अपनी पत्नी चन्द्रावती, जो बून्दी की राजकुमारी थी, को साथ लेकर राज्य के बाहर हो गया। उत्तराधिकार की लड़ाई में अमरसिंह ने शाहजादा खुर्रम की बहुत सहायता की। खुर्रम शाहजहाँ के नाम से जब सिंहासन पर बैठा तब उसने अमरसिंह को 3000 की मनसबदारी, जागीर तथा यमुना के किनारे [illegible] महल बनवा कर दिया। इस प्रकार अमरसिंह, शाहजहाँ के विश्वस्त [illegible] महत्त्वपूर्ण दरबारी के रूप में आगरे में ही रहने लगा। इस बीच अमरसिंह की लड़की तारा युवती हो गई, सलावत खाँ मन ही मन अमरसिंह से [illegible] था तथा तारा को हस्तगत करने का विचार रखता था, जबकि तारा का [illegible] उदयपुर के युवराज राजसिंह के साथ निश्चित हो गया था। शाहजादा दारा भी तारा को बुरी दृष्टि से देखता था। फिर भी तारा [illegible] की सहायता से [illegible] के साथ सकुशल उदयपुर पहुँच जाती है। सलावत इसमें बाधा डालने का प्रयत्न करता है परन्तु पराजित हो जाता है। अगले दिन अमरसिंह शाहजहाँ के भरे दरबार में सलावत खाँ को कटार मार कर हत्या करते हैं और दूसरी कटार से शाहजहाँ पर आक्रमण करते हैं, परन्तु शाहजहाँ सम्भल जाता है। वहाँ से भागते समय अमरसिंह की मृत्यु हो जाती है। अब शाहजहाँ को वास्तविकता का पता लगता है [illegible] पश्चात्ताप करने के लिए अमरसिंह का नाम अमर करने के हेतु उस फाटक का नाम अमरसिंह का फाटक रख देता है जहाँ से अमरसिंह ने भागने का प्रयत्न किया था।[1]

उपन्यास के पहले भाग के 'शाहजहाँ और जहाँनारा'[2] नामक [illegible] दोनों तद्युगीन राजनैतिक स्थिति एवं ऐतिहासिक घटनाओं पर [illegible] संगत बातचीत करते हैं। उदयपुर के युवराज राजसिंह का प्रसंग [illegible] मारवाड़ तथा उदयपुर के राजपूत राजाओं द्वारा उत्तराधिकार की लड़ाई में [illegible] दिए जाने के लिए उनके प्रति आभार का अनुभव करता है। उदयपुर के [illegible] जगतसिंह ने सब से पहले शाहजादा खुर्रम को शाहजहाँ [illegible] था। यह समस्त प्रसंग टॉड के राजस्थान से लिया गया है।[2]

1 "तारा" पहला भाग, पृष्ठ 96-103

2 राजस्थान का इतिहास, पृष्ठ 222-223.

'रजिया बेगम या रंगमहल में हलाहल' नामक उपन्यास में गोस्वामी जी ने इतिहास की प्रामाणिकता को औपन्यासिक अभिव्यक्ति के साथ जोड़ कर उसका कलात्मक प्रस्तुतिकरण किया है। हब्शी गुलाम जलालुद्दीन याकूब जो केवल अस्तबल का दारोगा था, उसके शारीरिक आकर्षण तथा बुद्धि-बल पर आकृष्ट होकर रजिया ने उसे अपना कृपा-पात्र बना लिया था। इस पर मुख्य-मुख्य सरदारों तथा सेनापति ने रजिया के साथ विद्रोह कर दिया और रजिया को कैद करके पंजाब के शासक अलतूनिया की कैद में कर दिया।[1] परन्तु अलतूनिया ने उसे अपनी पत्नी बना कर फिर से दिल्ली पर आक्रमण किया परन्तु कैथल के निकट बहराम द्वारा पराजित होने के पश्चात् दोनों को मार डाला गया।[2]

गोस्वामी जी ने इन ऐतिहासिक तथ्यों को कुछ परिवर्तित रूप में उपन्यास में वर्णित किया है। सरदारों द्वारा विद्रोह किए जाने के पश्चात् रजिया उनके द्वारा कैद नहीं की जाती, प्रत्युत वह पंडित हरिहर शर्मा के मंदिर में शरण लेने के पश्चात् अदृश्य होती और पलायन करती है तथा एक जौहरी के रूप में अलतूनिया को मिलती है (दूसरा भाग पृष्ठ 96-104)। वह उसके साथ शादी नहीं करती, प्रत्युत अलतूनिया की कमजोरी का अपने स्वार्थ तथा महत्त्वाकांक्षा के लिए एवं अपनी लक्ष्य सिद्धि के लिए प्रयोग करती है। याकूब भी मारा नहीं जाता, प्रत्युत बहराम का मुख्य वजीर बनाया जाता है।

इस प्रकार यहाँ इतिहास की घटनाएँ कतिपय परिवर्तित रूप में उभर कर आई है। तिलस्म, ऐय्यारी तथा जासूसी के धुन्धलके में भी ऐतिहासिक प्रामाणिकता उपन्यास को अधिक विश्वसनीय एवं ठोस कथा-भूमि प्रदान करती है।

पं० बलदेव प्रसाद मिश्र के 'पानीपत' में वर्णित लगभग समस्त घटनाएँ ऐतिहासिक रूप में प्रामाणिक हैं। पेशवा बालाजी बाजीराव के राज्य काल की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ अत्यन्त कलात्मक रूप में एक विशिष्ट इतिहास दर्शन द्वारा अनुप्राणित होते हुए वर्णित की गई हैं।

निजाम को परास्त करके सजारा नदी के किनारे पेशवा का पड़ाव तथा वहाँ पर उत्तर भारत में दत्ताजी सेंधिया की पराजय का समाचार पहुँचना, इस पर सदा शिवराव भाऊ का यवनों के विरुद्ध अभियान का नेतृत्व करने को स्वीकार करना,[3] पूना में उत्साह तथा सेना की तैयारियाँ, पेशवा का दरबार[4] उसमें भाऊ को मुख्य सेनापति के रूप में नियुक्त करना व अन्यों को उसकी आज्ञा का पालन करने का आदेश देना आदि इतिहास सम्मत घटनाएँ हैं। सेना प्रयाण, राजा सूरजमल का

1 "The Cambridge History of India" Vol III, p 59-60

2 वही, पृष्ठ 61-62

3 पानीपत, पं० बलदेव प्रसाद मिश्र, पेज 5-14

4 वही, पेज 45-65

मराठो के साथ आकर मिलना,[1] मराठो के आपसी मतभेद,[2] रघुनाथ राव द्वारा अटक तक मराठो के राज्य की स्थापना[3] परन्तु दुर्रानी, नजीब खाँ तथा नवाब शुजाऊद्दौला की एक लाख 40 हजार सेना के साथ दत्ताजी सेंधिया का भयानक युद्ध एव पराजय,[4] फिर मराठो की 'सिकन्दरे की पराजय',[5] भाऊ के नेतृत्व मे मराठा सेना द्वारा कुंजपुरा को जीतना,[6] दुर्रानी द्वारा विपरीत परिस्थितियो मे यमुनापार किया जाना,[7] मराठा द्वारा दिल्ली पर जय पताका फहराना,[8] मराठो की सवारी, भाऊ द्वारा शाही तख्त का खण्डन किया जाना[9] आदि प्रमाणिक घटनाएँ हैं। इसी प्रकार युद्ध से पूर्व की भाऊ व दुर्रानी की किलेबदी का वर्णन, जनको जी का अपूर्व वीरत्व[10] तथा पानीपत की तीसरी लडाई का पहला प्रहर[11] एव 'प्रलय'[12] नामक परिच्छेदो मे किया गया वर्णन इतिहास सम्मत है।[13]

मराठो के चरमोत्कर्ष और उनकी पानीपत मे पराजय मे सम्बन्धित ऐतिहासिक घटनाओ को मिश्रजी ने अत्यन्त कलात्मक ढग मे अपने उपन्यास मे प्रस्तुत किया है।

ब्रजनन्दन सहाय के 'लालचीन' मे, दक्षिण भारत के बहमनी राज्य के इतिहास की कतिपय घटनाओ के आधार पर उपन्यास की रचना की गई है। लेखक ने स्वय एक लम्बी पाद टिप्पणी[14] मे बहमनी साम्राज्य की उत्पत्ति का पूरा प्रसग दिया है और तीन अन्तिम सुलतानो के जीवन व इतिहास के आधार पर उपन्यास की रचना की है।[15]

1 पानीपत, प० बलदेव प्रसाद मिश्र पेज 115-120
2 वही पेज 121-132
3 वही, पेज 172
4 वही, पेज 175-185
5 वही, पेज 185-208
6 वही, पेज 255-257
7 वही पेज 265-270
8 वही, पेज 273-285
9 वही, पेज 301-302
10 वही, पेज 336-343
11 वही, पृष्ठ 320-383
12 वही पृष्ठ 385-409
13 देखिए, मराठो का इतिहास, जेम्स ग्राण्टडफ अनुवादक कमलाकर तिवारी इ[illegible] मस्थान इलाहाबाद, 1905, पृष्ठ 370-399 यहाँ मराठो के उत्कर्ष की चरम सीमा तथा पानीपत की तीसरी लडाई का मराठा राज्य पर बुरा प्रभाव परिच्छेदों मे 'पानीपत' की घटनाओ का वर्णन किया गया है।
14 'लालचीन", ब्रजनन्दन सहाय पृष्ठ 280-284
15 'लालचीन" ब्रजनन्दन सहाय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा संवत् 1978 पृष्ठ 284 "इस उपन्यास में अन्तिम तीन सुलतानो के जीवन का एक पृष्ठ वर्णित है। पाठकों को [illegible] होगा कि कभी कभी सत्य घटना कल्पना से अधिक आश्चर्यजनक होती है।"

सुलतान गयासुद्दीन जब अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् शासन संभालता है, तदन्तर प्रजा-हित के कई कार्य करता है, परन्तु अपने गुलाम लालचीन को कोई विशेष उन्नति प्रदान नही करता। लालचीन इससे रुष्ट होकर अपनी लडकी लुत्फुन्निसा पर सुलतान को मोहित करवा कर[1] उसे अपने चगुल मे फसा लेता है। सुलतान जब लुत्फुन्निसा से मिलने लालचीन की दावत मे जाता है, तो लालचीन उसकी आखें निकाल कर[2] स्वय सत्ता सभाल लेता है। परन्तु बाद मे वह पराजित हो जाता है। अन्त मे लुत्फुन्निसा का शमश से विवाह हो जाता है और गयासुद्दीन मक्का को प्रस्थान कर जाता है।

जयन्ती प्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान' तथा गगाप्रसाद गुप्त के 'वीर पत्नी' मे वर्णित अधिकाश घटनाएँ पृथ्वीराज रासो तथा पारम्परिक लोक साहित्य पर आधारित है। मुहम्मद गौरी के साथ पृथ्वीराज के युद्ध तथा अन्त मे पृथ्वीराज का पतन ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक घटनाएँ है।

ब्रजविहारी सिंह के 'कोटारानी' नामक लघु उपन्यास का कथानक कल्हण की 'राजतरगिणी' मे लिया गया है। इस मत का स्वय लेखक ने 'भूमिका' मे स्पष्टीकरण कर दिया है।

हरिचरणसिंह चौहान ने अपने उपन्यास 'वीर नारायण' की घटनाओ की प्रामाणिकता के लिए 'निवेदन' मे टॉड कृत 'राजस्थान' को आधार के रूप मे स्वीकार किया है।

इस प्रकार प्रेमचन्द्रपूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो मे प्रयुक्त ऐतिहासिक युगो की घटनाओ की प्रामाणिकता इस शताब्दी तक उपलब्ध इतिहास-पुस्तको द्वारा सिद्ध होती है।

(IV) ऐतिहासिक उपन्यासो मे देशकाल (वातावरण)

ऐतिहासिक उपन्यास मे देश तथा काल की स्थितियाँ अन्य कोटियो के उपन्यासो मे अधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं[3] क्योंकि ऐतिहासिक उपन्यास मे एक ऐसे

1 "लालचीन" ब्रज नन्दन सहाय, पेज 19-20

2 वही, पेज 90-91

3 "हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो में इतिहास प्रयोग" डा० गोविन्दजी प्रसाद इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित) 1968, पेज 110, "यो तो देशकाल का उपयुक्त सामाजिक या सास्कृतिक चित्रण सभी उपन्यासो के लिए आवश्यक है किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासो का यह प्राण है जिनका मुख्य ध्येय किसी विशिष्ट युग के जीवन के विविध रूपो के साथ ही साथ कथा-वस्तु एव चरित्रो के नाटकीय स्पर्शो का सयोजन करना होता है। ऐतिहासिक उपन्यास लिखने वाला लेखक उस काल के वातावरण से बँधा होता है। ऐतिहासिक उपन्यासो मे लेखको की सब से बडी कुशलता देशकाल तथा ऐतिहासिक वातावरण के सजीव चित्रण मे निहित होती है। सच तो यह है कि ऐतिहासिक उपन्यासो मे ऐतिहासिक कथानक तथा पात्र उतने महत्त्वपूर्ण नही होते, जितना तत्कालीन युग, उस युग का रहन-सहन, आचार-विचार, रीति-रिवाज, विचार-धारा एव जीवन का आदर्श आदि।"

कालखण्ड का चित्रण एवं पुनः प्रस्तुतिकरण किया जाता है जिसका अब इस धरा पर कोई अस्तित्व नहीं रहा। अतीत के उस कालखण्ड को न तो लेखक ने और न ही पाठक ने कभी देखा अथवा अनुभव किया होता है। इस प्रकार के एक विशिष्ट कालखण्ड को औपन्यासिक कथा-भूमि का आधार बनाते समय लेखक को अत्यन्त सतर्क रहना पड़ता है। बहुत से विद्वानों का मत है कि ऐतिहासिक उपन्यास का निर्माण अपेक्षाकृत कठिन एवं जटिल कार्य होता है।

इस विशिष्ट कालखण्ड में घटित होने वाली घटनाएँ एक निश्चित देश में घटती हैं। यद्यपि भूमि एवं स्थान लगभग एक ही प्रकार के रहते हैं, प्रकृति एवं मौसम सनातन हैं, फिर भी मानव निर्मित किलों, महलों, बावलियों, नगरों, बाजारों आदि की स्थिति बदलती रहती है, उनके स्वरूप में परिवर्तन होता है। ऐतिहासिक कालखण्ड के पुनः प्रस्तुतिकरण के समय लेखक को इन सब बातों की ओर से सतर्क रहना होता है।

(अ) काल—समय का प्रवाह निरन्तर होता है। यद्यपि विचारकों एवं दार्शनिकों ने भूत, वर्तमान एवं भविष्य में काल को बाटने का प्रयत्न किया है, परन्तु यह केवल तार्किक कल्पना (हाइपोथीसिस) ही है।[1] काल के निरन्तर प्रवाह को अध्ययन की सुविधा के लिए विभिन्न युगों एवं काल-खण्डों में विभक्त किया जाता है। लगभग स्वच्छन्दता पूर्वक किसी भी समय से युग का आरम्भ एवं अन्त माना जा सकता है। इस प्रकार प्रत्येक युग का एक आरम्भ एवं अन्त होना अनिवार्य है।[2]

ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने जीवन-दर्शन तथा रुचि के अनुरूप एक विशिष्ट कालखण्ड का चुनाव स्वच्छन्दतापूर्वक करता है और उपन्यास में उस युग के वातावरण को पुनः प्रस्तुत करता है।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने अधिकांशतः भारतीय मध्ययुगों को अपने उपन्यासों की कथा-भूमि के लिए चुना है और मुहम्मद गोरी के आक्रमण से दिल्ली के अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह तक के काल-खण्ड की कलात्मक एवं औपन्यासिक अभिव्यक्ति की है।

1. ई० एच० कार के मतानुसार, इतिहास, में काल-विभाजन का विषय इसी प्रकार की समस्या है। इतिहास का कालों में विभाजन एक तथ्य नहीं है, प्रत्युत एक अनिवार्य तार्किक कल्पना अथवा वैचारिक उपकरण (Tool of thought) है। - What is History' Page 60

2 "The Notion of a period of history is not merely useful for examination purposes : periodisation is an essential part of historical work. And while the begining and end of an historical period must always be fixed in a more or less arbitrary manner, it remains true that every period must have a begining and end" W H Walsh "Meaning in History' "Theories of History " Page-302.

काल की स्थितियां—काल को सामान्यत चार स्थितियो मे विभाजित किया जाता है—आदिम युग, अतीत युग, वर्तमान युग तथा भविष्यकाल। आदिम युग उपन्यासो मे प्रागैतिहासिक काल खण्डो के रूप मे चित्रित किया जाता है। इसमे मिथक एव आदिम प्रतीको का प्रयोग किया जाता है। ऐतिहासिक अतीत के युग ऐतिहासिक उपन्यासो मे पुन प्रस्तुत किए जाते हैं। इनके निर्माण की प्रक्रिया मे इतिहास-परक कल्पनाएँ, निजधर कथाएँ तथा घटनाओ की पुनर्व्याख्याएँ मुख्य रूप से उभर कर आती हैं। वर्तमान युग, आधुनिक एव लेखक के समसामयिक अनुभवो का प्रतिनिधित्व करता है। ये समस्याएँ ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित युग के भविष्य के रूप मे उठती हैं। वे परम्परा एव रूढि रूप मे वर्तमान तक चली आती है जैसे विवाह-सस्कार आदि। भविष्यकाल सदैव साहित्यकार के मानस मे निर्मित एक यूतोपिया के रूप मे उभरता है, जिसमे वह अपने विशिष्ट जीवन-दर्शन के अनुरूप आदर्श समाधानो की परिकल्पना करता है। यूतोपिया की परिकल्पनाएँ ऐतिहासिक उपन्यासो मे विपर्यास प्रक्षेपण (Reversal Projection) द्वारा प्रस्तुत की जाती है। इस प्रकार प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप मे काल के यह सभी पक्ष ऐतिहासिक उपन्यासो की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।

अतीत एव ऐतिहासिक युग का समाज, अन्यान्य कलाएँ, परम्पराएँ तथा वेशभूषाएँ ऐतिहासिक युग के काल की विशिष्टताओ को स्पष्ट करती है।

(i) ऐतिहासिक यथार्थवाद—ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित अतीत के युगो मे वर्तमान के आरोपण को ऐतिहासिक यथार्थ कहा जाता है। राहुल सांकृत्यायन के मतानुसार—"हमारी भाषा मे तो वस्तुत ऐतिहासिक उपन्यास भी बहुत कम ही है और उनमे भी ऐतिहासिक यथार्थवाद की कसौटी पर उतरने वाले और भी कम है।"[1]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी ऐतिहासिक यथार्थवाद आशिक रूप से ही उभर सका है। लेखक के युग मे उपलब्ध इतिहास-ज्ञान तथा उसी के युग के मुख्य विचार एव धारणाएँ ही अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्व्याख्या को नियोजित करते हैं। ब्रजनन्दन सहाय के 'लालचीन', तथा प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'रजिया बेगम' मे ऐतिहासिक यथार्थवाद का उत्तम रूप उभर कर आया है।

'लालचीन' मे गुलाम लालचीन तथा 'रजिया बेगम' मे याकूब एव अयूब द्वारा की गई गुलामी के अन्यान्य पक्षो की विवेचना लगभग लेखक के युग की धारणाओ का प्रतिनिधित्व[2] करती है। यह ऐतिहासिक यथार्थवाद का उत्तम उदाहरण है।

(ii) आदर्श हिन्दू राज्य की प्राचीन धारणा का मध्य युगो मे प्रक्षेपण—विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो में, यद्यपि मुस्लिम भारत मे हिन्दू समाज, धर्म एव

1 'ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप', पेज 21

2 लेखक के युग का ऐतिहासिक उपन्यासो मे प्रतिबिम्ब तथा ऐतिहासिक यथार्थवाद का इसी अध्याय के अगले खण्ड मे विस्तार से वर्णन किया जाएगा।

संस्कृति के अस्तित्व के लिए संघर्ष को ही औपन्यासिक अभिव्यक्ति प्रदान की गई है तथापि लेखकों के मानस में जो आदर्श हिन्दू राज्य की धारणा थी और जो उनकी धार्मिक आकांक्षाओं एवं चेतना के अनुरूप थी, उनका अतीत के युगों में विपर्यास प्रक्षेपण भी किया गया है। यह साहित्यकार के युतोपिया की परिकल्पना के सिद्धान्त के अनुरूप है।

पं० बलदेव प्रसाद मिश्र, पं० किशोरीलाल गोस्वामी, बाबू लाल जी सिंह, अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह, युगलकिशोर नारायण सिंह, सिद्धनाथसिंह, गंगाप्रसाद गुप्त एवं जयरामदास गुप्त ने आदर्श हिन्दू सनातन-धर्मपरक विचारधाराओं को अपने उपन्यासों में अभिव्यक्त किया है।

मिश्र जी के 'पानीपत' में मराठों द्वारा समस्त भारत एवं 'रूम से शाम' तक हिन्दू राष्ट्र की स्थापना, गोस्वामी जी के 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' में आदर्श हिन्दू राजपूत अमरसिंह, राजसिंह एवं चन्द्रावत जी, राजपूत कन्या तारा तथा आदर्श ब्राह्मण के रूप में पंडित हरिहर शर्मा उनके आदर्शों का अतीत में प्रतिबिंबन करते हैं। कृष्ण प्रकाश तथा सिद्धनाथ अपने 'वीर चूडामणि' तथा 'प्रणपालन' में अपने परिकाल्पनिक आदर्शों को वर्णित करते हैं। लालजीसिंह तथा युगल किशोर ने 'वीरबाला' तथा 'राजपूतरमणी' में अपने आदर्शों के राजपूत राज्य तथा त्यागपूर्ण पात्रों को अतीत में वर्णित किया है। गंगाप्रसाद गुप्त ने 'हम्मीर'[1] के माध्यम से अपने जन्मभूमि-प्रेम को अतीत में प्रक्षेपित किया है। जयरामदास गुप्त, 'काश्मीर पतन' में खालसा सेना के आर्य वीरों द्वारा काश्मीरी ब्राह्मणों के उद्धार के माध्यम से अपनी युतोपिया-परक परिकल्पनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं।

इस प्रकार भविष्य के सम्बन्ध में विवेच्य उपन्यासकारों की युतोपिया-परक परिकल्पनाएँ अतीत भारत के कालखण्डों में अप्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त की गई हैं।

भारतीय मध्य युगों के पुनः प्रस्तुतिकरण का अध्ययन उस युग के चित्रण एवं विवरणों के माध्यम से किया गया है।

(iii) देशकाल के नियामक तत्त्व—एक सुनिश्चित स्थान (देश) एवं विशिष्ट समय (काल) का चित्रण करते समय कई तत्त्व उसमें नियोजित करते हैं जैसे पात्रों की वेशभूषा, ऐतिहासिक युग की मूर्तियाँ, सिक्के, भित्ति-चित्र, शिलालेख, वास्तुप्रवशेष-किलों, महलों, बावली आदि के खण्डहर। यह सामग्री देशकाल के पुनः प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया में अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है। यदि इन नियामक तत्त्वों को भलीभाँति निभाया जाए, तो चित्रण रोचक एवं सजीव होने के साथ-साथ विश्वसनीय एवं प्रामाणिक भी हो जाएगा।

1. हम्मीर, पेज 25, जब शत्रुता होने पर भी हम्मीर ने मालदेव की पुत्री के विवाह के निमन्त्रण को स्वीकार किया, तो—"केवल इसी आशा पर कि वे इसी बहाने से अपने पूर्व पुरुषों के निवास स्थान चित्तौर को एक बार देख सकेंगे। जिस चित्तौर पुरी में उनके पूर्व-पुरुषगण आनन्दपूर्वक किलोल करते थे जिस चित्तौर पुरी में स्वाधीनता शान्ति और आनन्द का पूरा-पूरा राज्य था, उसी चित्तौर पुरी को इस बहाने से एक बार वे देख सकेंगे।"

एक विशिष्ट ऐतिहासिक युग मे प्रयुक्त किए जाने वाले शब्द भी देशकाल के चित्रण में उपयोगी सिद्ध होते हैं। यथा हुजूर, आलीजान्, जहाँपनाह, आलमगीर, साहब, मालिक आदि।

(क) वस्त्राभूषण—विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे वेषभूषा[1] तथा पात्रो का आचार-व्यवहार बहुत सीमा तक ऐतिहासिक परिस्थितियो के अनुकूल किया गया है।

'पानीपत' मे दिल्ली विजय के पश्चात् जब मराठा सेना की सवारी निकाली गई उस समय मुख्य सेनापति भाऊ[2] तथा कुमार विश्वासराव[3] की वेषभूषा के वर्णन द्वारा पडित बलदेव प्रसाद मिश्र ने उस युग को अत्यन्त सजीव रूप से पुन प्रस्तुत किया है।

बाबू युगलकिशोर नारायण सिह ने 'राजपूत रमणी' मे मेवाड के महाराणा के वस्त्राभूषण का सजीव चित्रण किया है।[4] अखौरी कृष्ण प्रकाश सिह ने 'चूडामणि'

1 राहुल साकृत्यायन के मतानुसार—
'हर तीन-चार शताब्दी के बाद लोगों की वेशभूषा मे कितने ही अन्तर आ जाते हैं, जिसका ध्यान रखना जरूरी है। आज जिस तरह हमारे अपने देश मे प्रदेश के अनुसार लोगो के वस्त्र-लाभूषणो मे फर्क होता है, उसी तरह कुछ न कुछ पहले भी था, यह अध्ययन से मालूम होगा।", पेज 22

2 पानीपत' पेज 287
—'मरैठो के ठाठ को देख कर समस्त प्रजा चकित थी। सदाशिवराव भाऊ मस्तक पर लश्करी टोपी और शरीर पर कवच धारण किए घोडे पर सवार हुआ है। कमर में तलवार और हाथ मे बिजली के समान भाला शोभित है, भाऊ के चपल नत्र, नगरवासियों को चकित करते हुए चपला के समान चमक रहे हैं।"

3 'पानीपत', पेज 288
—"सम्पूर्ण भारतवर्ष मे विश्वासराव सब से अधिक सुन्दर गिना जाता था। आज वह रूप ऊपरी ठाठ से और भी अधिक दमक रहा है। बसन्ती रग की चन्देली पगडी शिखर पर शोभायमान है. आबदार हीरो का शिरपेच मोतियों के तरे सहित झूल रहा है। गुलाबी शरीर के ऊपर महीन मलमल का अगरखा शरीर की लालिमा को थोडा-थोडा प्रकाशित करता है। कण्ठ मे मोतियो की माला पडी है हाथ मे पहरी हुई हीरे की अगूठी दर्शकगण को चकित कर रही है। कानो में झूलते हुए मोतियो के बाले झूल-झूल कर अपनी सुन्दरता के झूले में नगर निवासियो को झुला रहे हैं। माथे पर लगे हुए कस्तूरी के तिलक ने मनोहरता का कौतुक करके सब को मोहित बना रखा है।"
कुमार विश्वास राव की युद्धवेष-भूषा भी उल्लेखनीय—है,—बाहो मे बाजू बन्द मगलसूत्र (तावीज)। माथे पर चन्दन की इतौर थी। बसन्ती रग के मनोहर वस्त्र वीरत्व की सीमा, हाथ में धनुष था कमर के कटिबन्ध में स्तम्भी तलवार विराजमान थी। पेट में कटारी और छुरा शोभाय मानथा।' पेज 373

4 'राजपूतरमणी' पेज 38 महाराना इस उच्च स्वर्ण सिंहासन पर सुशोभित हैं। इस समय वे अपने सिर पर अपने पूर्वजो का निष्कलक छत्र धारण किए हुए हैं। बदन मे बहु मूल्य वस्त्र, गले में हीरे पन्ने से जडी हुई माला, पहरे है,जिससे मुख की आभा और भी छटा पा रही है। हाथ मे सोने के मूठ की नगी तलवार लिए हैं।

मे मेवाड राज्य के एक पदाधिकारी कृष्णसिंह के ललाट पर त्रिपुण्ड लगाने का[1] वर्णन किया है।

राम जीवन नागर ने जगदेव परमार' मे जगदेव के वस्त्राभूषणो का सजीव चित्रण किया है। गौड देश के दिवान और राजगुरु राजा उदयादित्य के राज कुमार को इस रूप मे देखते है, 'सवार की अवस्था लगभग 15 वर्ष की होगी रंग कुछ साँवला, परन्तु देखने मे चित्ताकर्षक, शिर पर जिसके गुलाबी राजपूतो की सी पगडी, लम्बा अगरखा, रेशमी किनारे की धोती, कमर बन्धी हुई, एक ओर तलवार और दूसरी ओर कटार, हाथ मे भाला, कन्धे पर तीरो का कमठ और दूसरे हाथ मे चाबुक लिए अच्छे अरबी घोडे पर आते हुए सवार को देख कर दोनो उसकी ओर देखने लगे।'[2]

विवेच्य उपन्यासों मे नारियो की वेशभूषा एव शृगार का वर्णन भी किया गया है। मुन्शी देवी प्रसाद के 'रूठी रानी' मे उमादे की, 'सखियाँ उसे दुल्हन बना रही हैं, कोई उसके हाथ-पाँव में मेहदी लगाती है कोई मोतियो से माँग भरती है कोई चोटी मे फूल गूँथती है कोई दर्पण दिखा कर कहती है वाह अच्छी बनी है।'[3]

इसी प्रकार प० किशोरी लाल गोस्वामी ने रजिया के पुरुषोचित वस्त्रो का वर्णन किया है, "दर्बार के सिरे पर एक सोने के चबूतरे के ऊपर जडाऊ सिंहासन बिछा है और बादशाहो की तरह कवच और ताज पहिन कर सुलताना रजिया बेगम उस तख्त पर पुरुषोचित दर्प से विराजमान है।"[4]

एक ऐतिहासिक युग के पात्रो की वेशभूषा के वर्णन द्वारा विवेच्य उपन्यासकारो ने अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण के सफल प्रयास किए हैं।

(ख) पात्रो का आचार, व्यवहार एवं शिष्टाचार—देशकाल के चित्रण मे पात्रो, के आचार, व्यवहार एव शिष्टाचार के सम्बन्ध मे सावधानी अत्यन्त आवश्यक है। पाठको के रसबोध के सम्बन्ध मे आचार्य द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है •

"छोटी-छोटी बातो मे भी उसे सावधान रहना पडता है। सामान्य संबोधन शिष्टाचार के लिए प्रयुक्त शब्द और तत्कालीन अन्धविश्वासो के विरुद्ध प्रयोग किए जाने वाले वाक्यांश भी रस-बोध मे बाधक हो जाते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास के आलोचक को भी बहुत सावधानी बरतनी पडती है। जिस काल का उपन्यास लिखा जाता है उसकी रीति-नीति आचार-विचार वस्त्र-आभूषण, ठाट-बाट, साज-सज्जा सबके प्रति उसकी दृष्टि सजग होनी चाहिए।"[5]

1. वीर चूडा मणि" पेज 7
2. 'जगदेव परमार' पेज 24
3. "रूठी रानी' पेज 3
4. "रजिया बेगम, पहला भाग, पेज 7
5. "ऐतिहासिक उपन्यास क्या है ?" (पेज 17-18)

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने पात्रो के शिष्टाचार का वर्णन बहुत सीमा तक उनके युग की परिस्थितियो के अनुरूप ही किया है। परन्तु कही-कही लेखक के युग के शिष्टाचार भी अनैतिहासिक रूप से अतीत मे प्रक्षेपित हुए है।[1]

पात्रो के आचार-व्यवहार के वर्णन द्वारा 'पानीपत' मे मराठा युग के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे मिश्र जी को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। समस्त उपन्यास उसके पात्र, उनका आचार-व्यवहार, उनकी धारणाएँ, उनके विश्वास अत्यन्त सजीव रूप मे चित्रित किए गए हैं।

स्वामि-भक्ति, कर्त्तव्य-पालन तथा शौर्य-भावना के सम्बन्ध मे इस अध्याय के पिछले खण्ड मे अध्ययन किया जा चुका है।

"पानीपत" के 'दरबार' नामक परिच्छेद मे दरबारी सस्कृति, सामन्ती समाज एव राजनीति तथा पेशवा सरकार के प्रति मुख्य सामन्तो की स्वामि-भक्ति को सजीव रूप मे चित्रित किया गया है। पेशवा बाला जी बाजीराव के अन्त-पुर का चित्रण (पृष्ठ 45-51) पेशवा की पत्नी गोपिका बाई का राजनीतिक मामलो मे परामर्श देना, दरबार मे मुख्य-मुख्य दरबारियो के नाम तथा उनके बैठने के स्थान का वर्णन (पृष्ठ 53), पेशवा का व्याख्यान, सदाशिव राव भाऊ को मराठा सेना का मुख्य सेनापति बनाया जाना तथा अन्य सेनापतियो को मुख्य सेनापति के प्रति प्रतिबद्ध रहने के लिए प्रेरणा देना, दामा जी गायकवाड द्वारा पेशवा का अभिनन्दन तथा पेशवा द्वारा उन्हे गुजरात की स्वतन्त्रता प्रदान करने का वचन देना, पेशवा द्वारा सामतो एव सेनापतियो को विदाई का मान देना (पृष्ठ 53-64) आदि का चित्रण पात्रो की चारित्रिक विशेपताओ का अपने युग की विशिष्ट परिस्थितियो से प्राप्त करने के सिद्धान्त को परिपुष्ट करता है।

'पानीपत' मे प० बलदेव प्रसाद मिश्र एक पूरे युग को सजीव रूप मे प्रस्तुत करने मे सफल हुए हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' उपन्यासो मे पात्रो के शिष्टाचार का चित्रण उनके युग के अनुरूप किया है।

'तारा' के पहले भाग के पहले एव दूसरे परिच्छेद मे जहानआरा का दारा और तारा के साथ आचार-व्यवहार तद्युगीन मुगल सस्कृति के अनुकूल है (पृष्ठ 3-23)। इसी प्रकार दारा और सलावत खाँ (पृष्ठ 32-34) तथा सलावत खाँ, और नरुलहक (पृष्ठ 35-38) का शिष्टाचार भी युगानुरूप है। शाहजहान् और जहानआरा (पृष्ठ 96-103) का शिष्टाचार एव वार्तालाप ऐतिहासिक दृष्टि मे महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार उपन्यास के तीसरे भाग मे राजसिह और चन्द्रावत जी (पृष्ठ 22-34) का आपस मे मित्रता होने पर भी व्यवहार अत्यन्त औपचारिक

1 जार्ज लयूकास्स के मतानुसार—17वी शताब्दी के तथाकथित ऐतिहासिक-उपन्यास केवल बाह्यरुचि तथा बनावट मे ही ऐतिहासिक हैं। न केवल पात्रो का मनोविज्ञान प्रत्युत उनका शिष्टाचार भी लेखक के युग का है 'The Historical Novel" Page 19

स्तर पर चित्रित किया गया है। तारा के उद्धार की समस्या पर जब राजसिंह चन्द्रावत जी से परामर्श करते हैं, तो चन्द्रावत जी कहते हैं,—'माननीय, युवराज। आपकी बातो से मुझे ऐसा जान पड़ता है कि राजकुमारी जी के उद्धार का कोई सुगम उपाय आपने अवश्य सोच लिया है। फिर आप बुद्धिमान हैं और सब भाँति अपने कुल की रीति-भाँति को जानते हैं।'[1]

इसी प्रकार 'रज़िया बेगम' मे भी मुसलमानी सल्तनत एवं दरबारी संस्कृति के शिष्टाचार को सजीव रूप से प्रस्तुत किया गया है,—"एक बाँदी ने शाहाना आदाब बजा लाकर अर्ज किया कि,—जहाँपनाह। वजीर आजम दरे दौलत पर हाजिर है और हुजूर की कदमबोसी हासिल किया चाहता है।'[2]

याकूब जो कि एक गुलाम था जब रजिया की सहेली सौसन के साथ प्रेम-पाश मे बध जाता है और सौसन उनके साथ बराबरी का व्यवहार करती है, तो याकूब कहता है—"हजरत! एक अपने गुलाम के साथ आपको इस तरह की गुफ्तगू न करनी चाहिए।"

सौसन,—"लाहौल वलाकूवत, साहब! खुदा के वास्ते ऐसा बदकलमा जुबाने शीरीं से न निकालिए। आखिर मैं भी तो सुल्ताना की एक अदनी लौंडी ही हूँ।[3]

इसी प्रकार रजिया की लौंडी जोहिरा उसे कहती है,—"अय! हुजूर! मैं सदके, मैं कुर्बान। अय! तौबा! सर्कार की बलाएं लूं। मेरी सरकार के दुश्मनों का चेहरा आज इस कदर गमगीन क्यों नजर आता है? हुजूर मेरे तनोबदन के खून का हर एक कतरा इसी आर्जू मे है कि वह अपने तईं हुजूर की खिदमत मे [illegible] होकर खुशी-खुशी बिहिश्त हासिल करे।"[4]

(ग) भित्ति-चित्र एवं महलों के अवशेष—ऐतिहासिक युग के भित्तिचित्र किलो, महलो आदि के अवशेष अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण मे सहायक होते हैं। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार इस प्रकार की ऐतिहासिक सामग्री का प्रयोग दो प्रकार से करते हैं— ऐतिहासिक युग की स्थिति को पाद-टिप्पणी मे दे कर तथा स्पष्ट रूप से चित्रण द्वारा।

जयराम दास गुप्त ने अपने 'काश्मीर पतन' मे पहली पद्धति को अपनाया है। चौदहवें परिच्छेद मे आवडिन झील का वर्णन करते हुए लेखक ने झील मे [illegible] नामक एक जमीनी टुकड़े का वर्णन किया है पाद-टिप्पणी मे अपने [illegible] स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है—"सन् 1835 ई० एक फ्रांसीसी यात्री ने इसको

1. 'तारा', भाग तीन पेज 30
2. 'रजिया बेगम', भाग 1 पेज 31.
3 वही, पेज 61
4 'रजिया बेगम', पेज 92 (भाग 1)

का भ्रमण करते हुए जब इस स्थान को देखा था तो वहाँ पर एक छोटे से मंदिर के देखने का बयान करता है। यद्यपि इस समय उसका कोई निशान नही है।"[1]

महलो, नगरो, किलो एव बाजारो आदि का वर्णन भी किया गया है, जिसका अध्ययन अन्यत्र (भूचित्र शीर्षक के अन्तर्गत) किया गया है।

(घ) शासको की उपाधिया एव सबोधन—राजाओ एव शासको की उपाधियो एव विशेषताओ के आधार पर उन्हे जिन विशेषणो से आभूषित किया जाता था उन शब्दो के प्रयोग द्वारा भी अतीत के वातावरण को प्रभावशाली ढग से उभारने मे सहायता प्राप्त होती है।

श्यामलाल गुप्त के उपन्यास 'रानी दुर्गावती' मे अकबर को इस प्रकार सबोधित किया गया है—"जहाँपनाह ! शाहजहाँ आलमगीर जनाब इकरामुद्दौला अकबर दाम इकबाल आलीजाह बहादुर शाहशाह हिन्दुस्तान जहाँपनाह।"[2]

प० किशोरीलाल गोस्वामी मेवाड के युवराज राजसिंह को भुवनेश्वर मिश्र द्वारा यह कहलाते है,—"मेवाड-कुलकेशरी वीर-चक्र-चूडामणि श्री महाराणा जगतसिंह जी के आदरणीय पुत्र युवराज राजसिंह।"[3]

युवराज से मेवाड के महाराणा बन जाने के पश्चात् बाबू युगलकिशोर ने "राजपूत रमणी" मे उन्हे 'कुलभूषण' (पृष्ठ 30) तथा 'हिन्दूपति' 'सूर्यकुल भूषण' कहा है।[4]

बाबू सिद्धनाथ सिंह ने "प्रणपालन" मे चूडामणि को 'क्षत्रियकुल कमल दिवाकर' (पृष्ठ 9) कहा है।

जयराम दास गुप्त 'काश्मीर पतन' के सोहलवे परिच्छेद 'दरबार पजाब' मे महाराजा रणजीतसिंह के दरबार मे आते समय उच्चारित किए गए शब्दो[5] तथा काश्मीर के पडित बीरबर द्वारा महाराजा रणजीतसिंह को किए गए सम्बोधन[6] मे प्रयुक्त किए गए शब्दो द्वारा अतीत के वातावरण को सजीव ढग से पुन प्रस्तुत करते है।

1 "काश्मीर पतन", पेज 76-77
2 "रानी दुर्गावती", श्यामलाल गुप्त, पेज 4
3 "तारा" तीसरा भाग पेज 5
4 "राजपूत रमणी", पेज 34
5 "फतह ! फतह ! महाराजा साहब की फतह !!! खालसा जी की फतह श्रीवाहगुरु जी का खालसा, श्री वाहगुरु जी की फतह !!" पेज 85 काश्मीर पतन
6 वही, पेज 88
"प्रजा वत्सल ! कृपा सिंधो, धर्मावतार ! आज श्रीमान् के पूजनीय चरणकमलो मे मैं इस निमित्त से उपस्थित हुआ हूँ।"

(ब) देश

(1) स्थूल प्रकृति—ऐतिहासिक उपन्यास मे जिन घटनाओ का वर्णन किया जाता है वे एक सुनिश्चित स्थान पर घटित होती हैं। देश अथवा स्थान का वर्णन कई प्रकार से किया जाता है। प्रकृति-चित्रण सस्कृत एव हिन्दी के महाकाव्यो के समान ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी किया गया है।

मूल प्रकृति शाश्वत होती है, वह प्रत्येक युग मे लगभग एक-सी रहती है। ऋतुएँ, पशु-पक्षी, नदियाँ, फूल, समीर, वनस्पति, रवि-शशि आदि सभी कालो मे उपलब्ध होते है। इसलिए इनमे केवल देश-तत्त्व होता है काल-तत्त्व नही।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे सामान्यत पारम्परिक ढग से प्रकृति-चित्रण किया गया है। प्रकृति के शान्त एव सौम्य रूप के साथ-साथ उसके भयकर एव रौद्र रूप का भी चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त पारपरिक ढग के प्रकृति-चित्रण मे उसके उद्दीपन रूप को भी उभारा गया है।[1]

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' मे प्रकृति-चित्रण के माध्यम से अतीत के एक विशिष्ट काल-खण्ड के वातावरण को पुन प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया गया है। 'तारा' के तीसरे भाग के आरम्भ मे पर्वतीय मार्गो की कठिनाइयो की पृष्ठ-भूमि में प्रकृति का चित्रण किया गया है।[2] इस भाग के काल-रात्रि[3] नामक परिच्छेद मे प्रकृति का चित्रण पात्रो के मनोविज्ञान तथा स्थिति की जटिलता एव भयावहता, के अनुरूप किया गया है।

'रजिया बेगम' मे प्रकृति सामान्यत उद्दीपन रूप मे उभारी गई है। पहले भाग के गुलामी[4] नामक परिच्छेद मे अन्यान्य पक्षियो तथा शरद् ऋतु का सजीव चित्रण किया गया है। 'इश्क या फजीहत'[5] नामक परिच्छेद मे भी शरद् ऋतु का चित्रण विशिष्ट वातावरण के निर्माण के हेतु किया गया है। रजिया के शाही बाग[6] का विवरण भी प्रकृति की उन अनिवार्य पृष्ठभूमि का निर्माण करता है जिसके सम्मुख विलास की मध्ययुगीन एव सामती क्रीडाएँ की जाती थी। 'इश्क है इश्क!!'[7] नामक परिच्छेद मे भी प्रकृति का कामपरक चित्रण किया गया है।

'रजिया बेगम' के दूसरे भाग के 'कुछ जलन मिटी'[8] नामक परिच्छेद मे

1 'रीतिकालीन सौन्दर्य एव प्रकृति-चित्रण', शीर्षक के अन्तर्गत तीसरे अध्याय मे पारम्परिक प्रकृति-चित्रण का अध्ययन किया जा चुका है।
2. "तारा", तीसरा भाग पृष्ठ 1
3 वही, पृष्ठ 59-64
4 "रजिया बेगम", पहला भाग, पृष्ठ 21-26
5 वही, पृष्ठ 90-98
6 वही, पृष्ठ 22
7 वही, पृष्ठ 99
8 वही, पृष्ठ 81

मनोविज्ञान तथा प्रकृति का कलात्मक सम्मिलन किया गया है। मानवीय भावनाओ एव भावावेगो के साथ प्रकृति का यह सम्बन्ध गोस्वामी जी की वातावरण-निर्माण कला का प्रमाण है।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे 'मजारा नदी का किनारा[1] मे मजारा नदी का विस्तृत एव काव्यपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया गया है। 'शयनगृह' नामक परिच्छेद मे रात्रि का काव्यात्मक वर्णन किया गया है। 'सलीमगढ मे मल्लिका जमानिया' नामक परिच्छेद मे सूर्यास्त का कलात्मक चित्रण किया गया है। अहमदशाह दुर्रानी द्वारा यमुना पार करते समय की प्रकृति का चित्रण एक विशिष्ट ऐतिहासिक घटना के वातावरण के निर्माण मे कलात्मक रूप से सहायक सिद्ध हुआ है।[2]

बाबू युगलकिशोर नारायणसिह के "राजपूत रमणी" मे वसत ऋतु के प्राकृतिक सौन्दर्य का सजीव चित्रण किया गया है।[3] इसी प्रकार सातवें परिच्छेद के आरभ मे सैनिक तैयारियों की पृष्ठभूमि मे प्रभात का चित्रण किया गया है।[3अ]

बाबू लालजी सिह के 'वीरबाला' मे प्रकृति का अत्यन्त प्राजल भाषा मे चित्रण किया गया है।[4] यहाँ पर प्रकृति रीतिकालीन ढग से मानवीय मनोभावो की पृष्ठभूमि के रूप मे उभरी है।

अखौरी कृष्ण प्रकाश सिह के 'वीर चूडामणि' मे रीतिकालीन पद्धति मे प्रकृति-चित्रण किया गया है।[5]

जयरामदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' मे डल झील के रात्रि के समय के सौन्दर्य तथा चान्द की प्राकृतिक सुषमा का सजीव चित्रण किया गया है।[6] इसी प्रकार राजकुमारी जैनब का डलझील के किनारे मानसिक उधेड-बुन करने का चित्रण कलात्मक बन पडा है। इसी उपन्यास के झेलम नद का जन्म स्थान[7] नामक परिच्छेद मे झेलम के स्रोत के भौगोलिक वर्णन के साथ-साथ प्राकृतिक सौन्दर्य को भी चित्रित किया गया है।[8]

गगाप्रसाद गुप्त के 'पूना मे हलचल' नामक उपन्यास मे राजगढ के किले तथा खाई का भौगोलिक वर्णन प्रकृति के चित्रण से जडा हुआ है।[9]

1 "पानीपत", पृष्ठ 1-14
2 वही, पृष्ठ 265
3 "राजपूत रमणी", पृष्ठ 2
3 (अ) वही, पृष्ठ 48
4 "वीरबाला", पृष्ठ, 1, 12, 29
5 "वीर चूडामणि", पृष्ठ 92
6 "कश्मीर पतन", पृष्ठ 8
7 वही, पृष्ठ 136-140
8 वही, पृष्ठ 140
9 पूना मे हलचल", पृष्ठ 1

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे प्रकृति के भयकर स्वरूप का भी चित्रण किया गया है।

अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह के "वीर चूडामणि" मे भयकर प्रकृति-चित्रण उल्लेखनीय है—चित्तौड के पहाडी स्थानो मे, वर्षा काल के समय, प्रकृति भयकर रूप धारण करती है। पर्वत श्रेणी और अनन्त वन निविड अन्धकार मे आच्छादित हो रहे है। पर्वत, वन, मैदान, तराई, दरीये, आकाश और वृक्षो मे शब्द मात्र नही, मानो जगत्, शीघ्र ही प्रचण्ड पतन आता हुआ जान, भय से व्याकुल हो गया है। थोडे ही विलम्ब मे, भयानक आधी चलनी आरम्भ हुई। आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक दामिनी दमकने लगी और मेघ का गर्जन अनन्त मैदान मे शतशत बार शब्दायमान होने लगा। इस समय करोडो राक्षसो के बल की निन्दा करने वाला पवन भीषण गर्जन करता हुआ चलने लगा, मानो अनन्त पर्वतो को जड से कपाने लगा।[1] इस प्रकार प्रकृति मानवीय अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे महत्त्वपूर्ण रूप से उभरी है। मानवीय भावो का प्रकृति मे प्रतिविम्बन तथा प्रकृति का मानवीय भावो पर प्रभाव इस चित्रण की निरन्तर एव पारस्परिक प्रक्रिया है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे स्थान अथवा देश के वातावरण-निर्माण मे प्रकृति के वर्णनो का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है।

(ii) भू-चित्र (Landscape)—भूचित्रो मे प्रकृति के अतिरिक्त मानव-निर्मित नगर, किले, महल, बाजार, खेत, बावलियाँ आदि वर्णन के केन्द्र बिन्दु होते है। ये मूल रूप से ऐतिहासिक मानव से एव उसके कृतित्व मे सम्बद्ध होते हैं।

युद्ध-क्षेत्र, युद्ध करने की कला, भिन्न प्रकार की किलेबाजी, हथियारो का वर्णन कालानुरूप किया जाना चाहिए क्योकि वे समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं।

रामजीवन नागर ने जगदेव परमार मे, गुजरात देशातर्गत पाटन नगर के विशाल सहस्रलिंग तालाब (पृष्ठ 85) तथा पाटन नगर का चित्रण इस प्रकार किया है,—'पाटन की शोभा देखने ही योग्य थी। बाजार के बीच मे होकर पक्की सडक गई थी। दोनो ओर ऊँचे-ऊँचे मकान और दुकानें थी। नगर की बस्ती सघन, मकान कुशादा और हवादार, रग-बिरग के रगो से रगे हुए थे। मनुष्य स्वच्छ और सुन्दर तथा प्रसन्न मुख थे। बाजार मे दुकानें बडी क्रम पूर्वक लगी हुई थीं, ऊँची-ऊँची गद्दियो पर बैठे हुए बडे-बडे थोद वाले सेठ साहूकार लोग रुपयो के तोडे खनखना रहे थे बजाजों की दुकानें मनोहर रगो के सूती और रेशमी कपडो से सजी हुई थी, सोनारो के हथौडे और दरजियो की सुइयाँ तेजी से चल रही थीं, पान वाले स्वच्छ पात्रो मे कत्था, चूना आदि सजाकर शौकीनो की बाट देख रहे थे। इसी तरह सब लोग अपने-अपने धन्धो मे लगे हुए थे।[2]'

1 'वीर चूडामणि' पृष्ठ 1-4
2 "जगदेव परमार', पृष्ठ 96-97

यद्यपि बारहवी शताब्दी मे नगर के भीतर पक्की सडके नही भी हो सकती तथापि नागर जी नगर के वर्णन द्वारा अतीत के वातावरण को सफलतापूर्वक प्रस्तुत कर पाए है।

प० किशोरलाल गोस्वामी ने 'रजिया बेगम' मे रजिया के राजप्रासाद तथा दरबारे आम का वर्णन इस प्रकार किया है,—'आज राज प्रासाद ने कैसी अपूर्व श्री धारण की है। आज असख्य दीप-मालिकाओ से शाही कोट जगमगा रहा है, प्रकाश इतना अधिक है कि वहाँ पहुँच कर लोगो को दिन का भ्रम होता है और राजलक्ष्मी की अलौकिक सभा सामने क्रीडा करती हुई प्रत्यक्ष दिखलाई देती है। बडे भारी आलीशान दालान मे 'दर्बारे आम' सजाया गया है, हजारो सोने चादी के और जडाऊ झड लटक रहे हैं, जिनमे बिल्लौरी फानूस और घडियो मे काफूरी बत्तियाँ जल रही है।"[1]

"वीर चूडामणि" के लेखक ने इस उपन्यास मे चित्तौड के निकट की पर्वतीय शोभा का सजीव वर्णन किया है। इस भू-चित्र के माध्यम से मातृभूमि-प्रेम तथा आचलिकता की प्रवृत्ति उभर कर सामने आई है। भू-चित्र इस प्रकार है—"आह! क्या अनुपम शोभा है। पहाडो पर पहाड, जहाँ तक दृष्टि पहुँचती है, दो तीन हजार ऊँचे शिखर बराबर दिखाई देते है, उस पर्वत श्रेणी के पार्श्व मे चारो ओर नहाए हरे रग के अनन्त वृक्ष सूर्य के प्रकाश से अनन्त शोभा धारण कर रहे है—बीच मे झरने मी गुणो से बढ कर एक शृग से दूसरे शृग तक नृत्य कर रहे है।"[2]

इस प्रकार स्थानो, नगरो एव भू-चित्रो के वर्णन एव चित्रण के माध्यम मे अतीत युगीन वातावरण का निर्माण किया गया।

(iii) लोक-तत्त्व—लोक-तत्त्वो का मानवीय अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण, पुनर्व्याख्या एव पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोक-जीवन एव लोक-सस्कृति देश के चित्रण मे रग भरने एव चरित्र उभारने के कार्य मे अत्यन्त सहायक होते है। इसी प्रकार लोक गीत, लोक कथाएँ, लोक प्रथाएँ, लोक भाषा, लोक भूमि, (जन्म भूमि प्रेम) आदि के प्रयोग द्वारा इतिहास के ककाल मे जीवन भरा जाता है। अन्यान्य परपराएँ, प्रथाएँ, धारणाएँ, विश्वास, त्यौहार, पर्व, उत्सव एवं आन्दोलन आदि एक विशिष्ट कालखण्ड के जीवन के पुन प्रस्तुतिकरण को सजीव बनाने के साथ-साथ अधिक रोचक एव विश्वसनीय भी बनाते है, क्योकि इन परम्पराओ एव प्रथाओ के अवशेष वर्तमान मे उपलब्ध होते हैं।

मुशी देवीप्रसाद के "रूठी रानी" नामक उपन्यास मे लोक-तत्त्वो का प्रचुर मात्रा मे समावेश किया गया है। जैसलमेर की राजकुमारी उमा को शादी की तैयारी का वातावरण (पृष्ठ 3) शादी के रीति-रिवाज तथा अग्नि के फेरे लगवाने के

1 "रजिया बेगम" पृष्ठ 7
2 "वीर चूडामणि", पृष्ठ 5

व्याख्यापूर्ण वर्णन मे लोक-तत्त्व का प्रयोग किया गया है।[1] इसी प्रकार दारूडो शर्रांरो नामक लोकगीत का प्रयोग किया गया है। इसमे शराब पीने की अच्छाइयो और बुराइयो का वर्णन किया गया है।[2] ईश्वरदास बारहट नामक चारण जब रानी उमादे को राव जी के लिए मनाने को जाता है, तो उमादे के पारिवारिक इतिहास का वर्णन करके उसे मनाने की चेष्टा करता है।[3]

अन्त में राव मालदेव के देहान्त पर रानी उमादे सती होती है। रानी उमादे शादी की रात से लेकर अन्त तक रावजी से रूठी रहती है। सती होने के चित्रण द्वारा एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण किया गया है। यहाँ जन-सस्कृति तथा जन-परम्पराए भी उल्लिखित की गई है। इस प्रकार इस उपन्यास मे लोकगीत, लोक-कथाएँ तथा लोक-प्रथाएँ विशद् रूप से चित्रित की गई हैं।

गगाप्रसाद गुप्त के "हम्मीर" मे लोक-कथाओ तथा लोक-प्रथाओ के साथ-साथ लोक-भूमि अथवा जन्म-भूमि-प्रेम का अत्यन्त रागात्मक स्तर पर चित्रण किया गया है। हम्मीर के पिता अरुणसिंह अलाऊद्दीन के चित्तौड पर आक्रमण के पश्चात् चित्तौड से पलायन कर गए थे और अब चित्तौड पर अलाऊद्दीन के कठपुतली मालदेव का शासन था। अत्यन्त विपरीत परिस्थितियो मे हम्मीर, मालदेव द्वारा अपनी पुत्री से शादी के लिए भेजा गया नारियल स्वीकार करता है।[4] उसके मन्त्री उसे ऐसा करने से रोकते है परन्तु चित्तौड को एक बार देखने की कामना अपने पूर्वजो की धरती के प्रति रागात्मक प्रेम के वशीभूत वह यह न्यौता स्वीकार करता है।[5]

चन्द्रशेखर के "भीमसिंह" मे लोक-कथाओ, लोक-प्रथाओ, जन्म-भूमि प्रेम, परम्पराएँ, धारणाएँ, विश्वास, त्यौहार, पर्व एव उत्सवो का सजीव चित्रण किया गया है।[6] यहाँ परम्पराएँ एव विश्वास एक विशिष्ट वातावरण की उत्पत्ति करने के साथ-साथ भविष्य मे घटित होने वाली घटनाओ की ओर सकेत देने के साथ-साथ उन्हे नियोजित भी करती हैं।

रामजीवन नागर के "जगदेव परमार" मे अन्यान्य लोक-तत्त्वो के साथ-साथ लोक-भाषा का भी प्रयोग किया गया है।[7]

(iv) भारतीय मध्ययुगो का सामन्ती जीवन--विवेच्य उपन्यासो मे भारतीय मध्ययुगो के सामन्ती जीवन को पुन प्रस्तुत एव पुन व्याख्यायित किया गया है। मध्य युगीन सामन्ती जीवन का विस्तृत एव सहृदयता-पूर्ण चित्रण टाड ने राजस्थान

1 "रूठी रानी", पेज 8
2 वही० पेज 13-15
3 वही०, पेज 24-27
4 हम्मीर" पेज 24-25
5 "हम्मीर" पेज 26-27
6 "भीमसिंह", पेज 15-16
7 "जगदेव परिमार, पेज 83, 121-123

के इतिहास मे किया था। राजपूतो की एक "राष्ट्र" के रूप मे उद्भावना का टाड का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण इतिहास विचार था।[1] मुसलमानो के घोर विरोध तथा अत्यन्त विकट परिस्थितियो मे भी राजपूत समुदाय अधिकाशत अपनी सामन्तवादिता एव शूरता के कारण ही जीवित रहा।[2] टाड की इस ऐतिहासिक कृति का विवेच्य युग के अधिकाश उपन्यासकारो पर प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है।

सामन्ती युग की वास्तुकला, मूर्तिकला, सगीतकला, गोष्ठियाँ, सभाएँ, महलो की विविध रूपा सजावटें, वेशभूषाएँ तथा अन्त पुरो के वातावरण आदि का चित्रण सामन्ती युग को पुनर्जीवित करने मे अत्यन्त सहायक होता है। विवेच्य उपन्यासो मे भारतीय सामन्ती जीवन का उत्तम चित्रण एव निरूपण किया गया है।

(४) पात्र—ऐतिहासिक युगो के अन्यान्य ऐतिहासिक एव अनैतिहासिक, प्रसिद्ध एव अज्ञात पात्रो को उपन्यासो मे उभारा जाता है। पात्रो की चरित्रगत प्रवृत्तियाँ उनके युग की भिन्न स्थितियो के प्रभाव से ही अपना स्वरूप ग्रहण करती हैं। अन्यान्य सामाजिक, धार्मिक, एव जातीय मूल्य विशिष्ट कालखण्ड के अनुरूप पात्रो के चरित्र, एव उनके कार्यो को प्रभावित करते है। विभिन्न जातियो की एव नारियो की स्थिति भी काल के अनुसार परिवर्तमान रहती है।

विवेच्य उपन्यासो मे ऐतिहासिक कालखण्ड की स्थितियो को आंशिक रूप से ही ध्यान मे रखा गया है। कतिपय महान् ऐतिहासिक पात्र जब महान् ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने के कारण एव परिणामो के निमित्त के रूप मे उभरते है, तो एक विशिष्ट ऐतिहासिक वातावरण का निर्माण होता है। कई बार काल्पनिक पात्र ऐतिहासिक पात्रो की अपेक्षा अधिक सजीव रूप मे उभरते है तथा कई बार ऐतिहासिक अथवा काल्पनिक प्रसगो के माध्यम मे ऐतिहासिक सत्यो (ऐतिहासिक तथ्य नही) का उद्घाटन करते है। इस प्रकार वे कई बार महान् ऐतिहासिक पात्रो से भी अधिक प्रभावशाली एव चिर स्मरणीय बन जाते है। ऐतिहासिक तथ्यो एव ऐतिहासिक सत्यो के माध्यम मे एक समस्त अतीत का पुन प्रस्तुतिकरण एव उसकी पुनर्व्याख्या का कार्य पात्रो के माध्यम से ही पूरा किया जाता है, जो एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण करने मे सहायक सिद्ध होता है।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र के "पानीपत" मे सामान्यत सभी ऐतिहासिक पात्र लगभग सभी ऐतिहासिक घटनाओ के माध्यम से वातावरण निर्माण मे सहायक सिद्ध हुए है।

पडित किशोरीलाल गोस्वामी के "तारा" तथा "रजिया बेगम" नामक उपन्यासो मे ऐतिहासिक एव काल्पनिक पात्र अपने कार्य-व्यवहारो, शिष्टाचार, एव

1 Dr J S Grewal "British Historical writing on Muslim India" Page 321
2 वही, पेज 334

चारित्रिक, विशेषताओं के माध्यम से भारतीय मध्ययुगो के वातावरण के पुन प्रस्तुतिकरण मे सहायक सिद्ध हुए हैं।

युगलकिशोर नारायण सिंह के "राजपूत रमणी", श्यामलाल गुप्त के "रानी दुर्गावती", सिद्धनाथ सिंह के "प्रण-पालन', लालजीसिंह के "वीर बाला" अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह, के "वीर चूडामणि", गगा प्रसाद गुप्त के "हम्मीर' तथा "वीर पत्नी" आदि मे राजपूत पात्र अपनी चरित्रगत विशेषताओ द्वारा एक विशिष्ट वातावरण को उभारते हैं।

जयरामदास गुप्त के काश्मीर पतन मे सूबेदारों द्वारा काश्मीरी पंडितों पर अत्याचार करने तथा उनका खालसा सेना द्वारा उद्धार, चरित्रो के माध्यम द्वारा वातावरण निर्माण का एक उत्तम उदाहरण है।

(ii) कालानुरूप राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव जातीय मानदण्ड—विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित अतीत का अध्ययन उन मध्ययुगीन राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक एव जातीय मानदण्डो के आधार पर किया जाना चाहिए जो दरबारी सस्कृति तथा सामती सभ्यता की धारणाओ द्वारा रूपायित एव नियोजित होते हैं।

विवेच्य उपन्यासो मे वर्णित मध्ययुगीन भारत मे शासन एव राज्य की केन्द्रीय शक्तिका ह्रास होता जा रहा था, और बिखरे हुए हिंदू रजवाड़े आपसी फूट के कारण अपना-अपना राग अलाप रहे थे। मुसलमानों के भयावह आक्रमणों की पृष्ठ-भूमि में क्षात्र वीरता एव सामन्ती आदर्शों की धवल कीर्ति जो कभी-कभी स्पष्ट होती थी, उसी को अधिकाश उपन्यासकारो ने अपने उपन्यासो मे पुन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

समान्यत उस कालखण्ड के शासक एव साधारण जनता बहुत से अन्धविश्वासों एव रूढियो का शिकार हो चुके थे।

प० किशोरीलाल गोस्वामी, पडित बलदेवप्रसाद मिश्र, मिश्रबंधु लालजीसिंह, अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह, गगाप्रसाद गुप्त, जयरामदास गुप्त, युगलकिशोर नारायणसिंह, श्यामलाल गुप्त तथा बाबू सिद्धनाथसिंह आदि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने, मध्ययुगीन राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक एव जातीय मानदण्डों को अतीत के पुन. प्रस्तुतिकरण तथा पुनर्व्याख्या के समय प्रयुक्त किया है।

(iii) राजा और प्रजा के धर्म—हिन्दू राजाओ एव उनके उनकी प्रजाओं से सम्बन्धो को पौराणिक-आदर्शों के आधार पर वर्णित किया गया है। राजा को प्रजा का पिता एव रक्षक माना जाता था और प्रजा भी राजा के प्रति श्रद्धा एव स्वामि-भक्ति के भाव से परिपूर्ण थी। कई मुसलमान शासकों को भी न्यायप्रिय कहा गया है, जबकि औरंगजेब को अत्यन्त विलासी, क्रूर एव अत्याचारी कहा गया है।

'जगदेव परमार' मे राजा को प्रजा के रक्षक एव पिता के रूप मे चित्रित किया गया है। जब जगदेव की पत्नी रूपमती किसी भी पर पुरुष का मु ह तक नही देखना चाहती तो जगदेव उससे कहता है—"राजा हमारे पूज्य और पिता समान हैं, इनको मु ह दिखलाने मे कुछ चिन्ता नही है।"[1] इसी प्रकार पाटन नगर का राजा प्रजा के कर्तव्यो की विवेचना यू करता है,—"प्रजा का कर्तव्य है कि, वह राजा के नियमो के अनुसार चले, उसकी आज्ञा का पालन करे और कभी ऐसा काम न करे जिससे राजा के नाम मे बट्टा लगे' 'मेरे राज्य मे बाघ और बकरी एक घाट पर पानी पीते है।"[2]

सामान्यत सभी ऐतिहासिक उपन्यासो मे राजपूत एव हिन्दू राजा आदर्श शासक के रूप मे चित्रित किए गए है। कतिपय मुसलमान शासको को भी इसी रूप मे उभारा गया है, जैसे किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' मे शाहजहान्। इसके विपरीत सामान्यत सभी मुसलमान शासको को भ्रष्ट, अत्याचारी एव ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है, जैसे ठाकुर बलभद्र सिंह के 'जय श्री' मे मुहम्मद बिन कासिम को।

राजा एव प्रजा के पारस्परिक सम्बन्धो के चित्रो के माध्यम से एक विशिष्ट युग के वातावरण का निर्माण सामान्यत सफलतापूर्वक किया गया है। राजपूतो की अपने शासक अथवा राजा के प्रति अपार स्वामि-भक्ति एव राज-भक्ति इस प्रकार के वातावरण निर्माण के उत्तम उदाहरण है।

ग्राम व परिवार के तथा वर्णों के आपसी सम्बन्ध उपन्यासो मे बहुत कम उभर कर आए है। पारिवारिक सदस्यो के परस्पर सम्बन्ध कई स्थानो पर अत्यन्त सजीव बन पड़े हैं।

मध्य-युगो के वातावरण-निर्माण मे उद्दाम-भोग, अनुपम शौर्य, अद्वितीय कौशल व क्रूरता, भयकर प्रतिद्वन्द्विता, भोग-विलास, उन्मत्त काम, लीला-विलास तथा कला-विलास एक साथ अथवा आशिक रूप से लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासो मे चित्रित किए गए हैं। भारतीय मध्य-युगो के सामन्ती जीवन के अभिन्न अग के रूप मे ये सभी तत्त्व पात्रो के चरित्र[3] तथा घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया के नियामक के रूप मे उभारे गए हैं।

(V) ऐतिहासिक उपन्यासो मे उपन्यासकार के युग का प्रतिबिम्ब

ऐतिहासिक उपन्यासो मे अतीत युगो के देश एव काल के पुन प्रस्तुतिकरण का अध्ययन करते समय हमने देखा था कि लेखक के युग की मान्यताएँ एव

1 "जगदेव परमार", रामजीवन नागर, पेज 107

2 वही पेज 109

3 ऐतिहासिक उपन्यासो मे चरित्र तथा इतिहास चेतना शीर्षक के अन्तर्गत इस विषय का अध्ययन किया जा चुका है।

परिस्थितियाँ पर्याप्त मात्रा तक ऐतिहासिक यथार्थ के रूप में चित्रित की जाती हैं। इस सम्बन्ध मे, वास्तव मे, ऐतिहासिक उपन्यासकार की स्थिति इतिहासकार के समान ही होती है। वर्तमान मे होकर भी जब वह अतीत की ओर दृष्टिपात करता है, तो उसका कोण वर्तमान की सीमाओ को पार करता हुआ अतीत की ओर अग्रसर होता है। जब वह उस विशिष्ट अतीत को पुन प्रस्तुत करने की प्रक्रिया से गुजर रहा होता है, तो उसका युग अतीत के युग मे प्रतिबिम्बित होने लगता है।

इस सम्बन्ध मे कतिपय इतिहास दार्शनिको के मत उल्लेखनीय हैं। क्रोचे के मतानुसार सारा इतिहास समसामयिक इतिहास है।[1] ऐतिहासिक निर्णयो की व्यावहारिक आवश्यकताओ के सम्बन्ध मे क्रोचे ने कहा था कि घटनाएँ कितने भी सुदूर काल की दृष्टिगोचर हो, वास्तव मे इतिहास वर्तमान आवश्यकताओ तथा वर्तमान परिस्थितियो के सन्दर्भ मे लिखा जाता है, जहाँ कि वह प्रतिगुजित होता है।

इस प्रकार वर्तमान की समस्याओ के अनुरूप ही अतीत का पुनर्विलोकन एवं अध्ययन करना इतिहासकार एव ऐतिहासिक उपन्यासकार का कर्त्तव्य होता है।

इतिहासकार का मुख्य कार्य केवल (घटनाओं का) अभिलेख करना ही नहीं, उनका मूल्यांकन करना भी है, क्योंकि जब तक वह मूल्यांकन नही करता, वह कैसे जान सकता है कि क्या अभिलेख करने के योग्य है।[2]

"सभी ऐतिहासिक तथ्य इतिहासकारो की व्याख्यात्मक रुचियों के परिणाम-स्वरूप, हम तक पहुँचते हैं। ये रुचियाँ उनके युग के मानको द्वारा प्रभावित होती हैं।"[3]

क्रोचे के मत को स्पष्ट करते हुए ए० एल० राउस ने लिखा है कि हम अतीत को उन्ही साक्ष्यो द्वारा ही जो प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से वर्तमान में उपलब्ध हैं, अन्य किसी ज्ञान की तरह अपने मानस मे जान सकते हैं।[4]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो का युग सामान्यत निराशा एव गुलामी का युग था। सामाजिक एव सांस्कृतिक पुनरुत्थान की हिन्दू-धारणा अत्यन्त व्यापक रूप मे क्रियाशील थी। सनातन हिन्दू धर्म की मान्यताओ, परम्पराओ एव विश्वासों को पुन स्थापित किया जा रहा था। यद्यपि बीसवी शताब्दी के प्रथम दो दशको में ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध स्वातन्त्र्य-आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा था। परन्तु

1. B Croce, "History as the story of Liberty", English translation 1941, p 19 "The practical requirements which underlie every historical judgement give to all history the character of 'contemporary history', because, however remote in time events thus recounted may seem to be, the history in reality refers to present needs and present situations where in those events vibrate"
2. देखिए —"व्हाट इज हिस्टरी", ई० एच० कार, पृष्ठ 21.
3. वही, पीछे का आवरण पृष्ठ
4. ए० एल० राउस "दी यूज ऑफ हिस्टरी", पृष्ठ 44

विवेच्य उपन्यासकारो ने अपने उपन्यासो मे इस राजनैतिक उथल-पुथल को प्रतिबिम्बित करने का प्रयत्न नहीं किया। अप्रत्यक्ष रूप मे किशोरीलाल गोस्वामी ने 'रजिया बेगम' मे तथा ब्रजनन्दन सहाय ने 'लालचीन' मे गुलामी के सम्बन्ध मे मार्मिक एव मनोवैज्ञानिक विवेचनाएँ की हैं।

सामाजिक सुधार, साम्प्रदायिकता एव हिन्दू राष्ट्र की पुन स्थापना आदि अप्रत्यक्ष रूप से विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे वर्णित किए गए हैं। यह बीसवी शताब्दी की पहली दो दशाब्दियो की मुख्य समस्याएँ थी जिनका अतीत के कालखण्डो मे उद्घाटन[1] किया गया।

(क) **वर्तमान का प्रत्यक्ष चित्रण**—विवेच्य, ऐतिहासिक उपन्यासो मे उपन्यासकार के युग के प्रतिबिम्बन का सबसे भद्दा रूप है—अतीत का चित्रण करते हुए उपन्यासकार द्वारा एकदम ऐतिहासिक झटका देते हुए वर्तमान अथवा निकट अतीत के वर्णन एव सन्दर्भ देना। इस प्रकार ऐतिहासिक खोज के नाम पर भद्दापन उभर कर आता है।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र 'पानीपत' मे अफगानिस्तान के पठान आक्रमणकारियो द्वारा भारत पर निरन्तर आक्रमण किए जाने का वर्णन करते हुए अहमदशाह अब्दाली से सीधे ब्रिटिश साम्राज्यवादियो द्वारा उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्त पर सेना रखे जाने का सन्दर्भ देते हैं,—"यह पहाडी देश भारतवर्ष मे डाह करके इतिहास के पन्नो मे विख्यात हुआ है इस सूत्र के अनुसार भारत-भूमि को सदा ही कष्ट उठाना पडा है और आजकल कभी-कभी अग्रेजो को भी इसी कारण से सीमा पर युद्ध करना पड़ता है। जब तक इस कुढगे देश की प्रजा के हाथो मे परतन्त्रता की जंजीर नहीं पहिराई जाएँगी तब तक भारत के लिए यह देश एक भार के समान रहेगा।"[2]

पडित किशोरीलाल गोस्वामी के "रजिया बेगम" के "दर्बार-ई-सुल्ताना" नामक परिच्छेद मे रजिया के राज दरबार का वर्णन करने मे पहले गोस्वामी जी अग्रेजो की कचहरियो, हाईकोर्ट तथा लाट साहब की कौंसिल का सन्दर्भ देते हुए ट्यानसी द्वारा शाहजहान् और औरगजेब के दरबारो के आँखो देखे वर्णन का उद्धरण देते हैं। इस वर्णन मे लेखक की आप बीती तथा उसके युग की स्थिति स्पष्ट रूप मे वर्णित की गई है—"उस समय घूँस भी अवश्य चलती थी, और न्याय का अन्याय,

1 इस सम्बन्ध में गोपीनाथ तिवारी का मत उल्लेखनीय है 'ऐतिहासिक उपन्यासकार नवीन समस्याओ का उद्घाटन प्राचीन इतिहास के प्रकाश में करता है। लेखक एक विशेष समस्या को उठाता है। फिर इतिहास में उसी के अनुरूप घटना ढूंढता है। यदि मिल गई तो बहुत ठीक। यदि नितान्त साम्य न रखने वाली न भी मिली तब भी प्राचीन घटना का विश्लेषण नवीन समस्या के प्रकाश में कर देता है।"--"ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास" डॉ० गोविन्दजी सपादित ऐतिहासिक उपन्यास, पेज 61

2 "पानीपत", पेज 233

और अन्याय का न्याय भी प्रायः होता था पर सच्चा न्याय भी अवश्य होता था। उस समय स्टाम्पों की भरमार, वकील-मुख्तारों के हल्लान और मुहर्रिरों की तरीके रसूमात का बखेड़ा न था, और लोग सादे कागज पर अर्जी लिख कर पेश करते थे और कहीं-कहीं अपना उत्तर जबानी ही कह सुनाते थे, जिस पर जो कुछ फैसला होने को होता वह या तो उसी समय हो जाता या कई दिनों के भीतर ही खूब छानबीन के साथ उसका कुछ न कुछ निबटारा हो ही जाता था, पर आजकल की तरह वह खर्च इतना बढ़ा-चढ़ा न था कि लोगों को अखरता, या तबाह कर डालता था।[1]

"बारहवीं सदी का वीर जगदेव परमार" में पंडित रामजीवन नागर ने पुलिस के कोतवाल तथा कान्स्टेबलों की बेईमानी तथा लालच का वर्णन करने के साथ-साथ घड़ी के समय का प्रयोग भी किया है, जो 12वीं सदी का न हो कर इस लेखक के युग का है।[2]

इस प्रकार लेखक के युग का भारतीय मध्ययुगों में प्रतिबिम्बन एक स्वाभाविक दोष है तथा कथानक के प्रवाह में रसभंग की स्थिति उत्पन्न करता है। बहुत से ऐतिहासिक उपन्यासों में उपन्यासकार के युग का इस प्रकार का चित्रण किया गया है।

(ख) लेखक के युग का अप्रत्यक्ष प्रक्षेपण—भारतीय मध्ययुगों के मूल पात्रों तथा काल्पनिक चरित्रों की उद्भावना करने की प्रक्रिया में लेखक के युग के विचारों, मान्यताओं, धारणाओं तथा मानदण्डों का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार अतीत युग के समय की रूढ़ियों को तोड़ने के लिए अथवा उनके अनुरूप आधुनिक धारणाओं का समावेश चरित्रों के माध्यम से किया जाता है। यहाँ नैतिकता का द्वन्द्व तथा आस्था के स्थान पर बौद्धिकता का समावेश किया जाता है।

पंडित किशोरीलाल गोस्वामी ने "रजिया बेगम" तथा "तारा" में इस प्रकार अप्रत्यक्ष एवं कलात्मक ढंग से भारतीय मध्ययुग के दो भिन्न कालखण्डों में अपने युग की धारणाओं एवं मान्यताओं का प्रक्षेपण किया है।

"रजिया बेगम" में सुल्ताना एक बूढ़े फकीर के रूप में इस्लाम की शरह नई तरह विपरीत व्याख्या करती है, जब बहुत से मुसलमान मिल कर प० [illegible]

1 रजिया बेगम पेज 51

2 सवेरा होते ही जमादार उठा और कोतवाल के आने की राह देखने लगा। [illegible] बजते [illegible] मिनट पर कोतवाल साहब थाने में पहुँचे। फिर क्या देर थी [illegible] जमादार भी तुरन्त उनके पास गया और [illegible] राम को भी इस [illegible] की याद लेकर सामने हाजिर किया था। मैंने किस्से-किस्से [illegible] यह साथ की गठरी लेकर आऊँगा [illegible] एक गठरी हम [illegible] अब तक कोई रपट करने थाने पर आया नहीं, अब [illegible] हुक्म हो सो किया जाय"
—"जगदेव परमार" पृष्ठ [illegible]

धर्मों के मंदिर का नाश करने को उद्यत होते है तो रजिया उन्हे रोकती हैं और व्यंग्य करती है—"तब तो तुम लोग खासे फकीर हो और नाहक 'दीन", "दीन" का शोर मचा कर पाक इस्लाम मजहब के वसूलो पर दाग लगाते हो।"[1] इस प्रकार असहिष्णु मध्ययुगीन मुसलमान शासको के चरित्र के माध्यम से लगभग आधुनिक विचारों का निरूपण किया गया है। इसी उपन्यास के दूसरे भाग मे "फूट का फल" नामक परिच्छेद मे किशोरीलाल गोस्वामी एक धार्मिक नेता के माध्यम से तद्युगीन राजनीति का विशद् विवेचन करते है। रजिया के युग मे जबकि हिन्दू राजपूत राजा तो लगभग पराजित हो चुके थे परन्तु मुसलमान शासन भी अभी पूरी तरह से भारत मे दृढ नही हो पाया था, राजस्थान तथा मध्य भारत के अन्यान्य राजपूत राजाओ को जो अपना-अपना राग अलाप रहे थे। धार्मिक नेता स्वामी ब्रह्मानन्द अपने युग की राजनीति तथा उसकी पूर्व-पीठिका को इन शब्दो मे व्यक्त करते हैं—"यदि यहाँ के राजाओ मे एका होता और यहाँ के नरेश परस्पर मिले हुए एक दूसरे की सहायता पर सन्नद्ध रहते तो एक महमूद गजनवी तो क्या हजार महमूद की भी सामर्थ्य न होती कि वह भारतवर्ष की सीमा के पास तक भी अपने को लाने का साहस करता।"[2] वास्तव मे यह गोस्वामी जी के अपने युग की पुनर्उत्थानवादी धारणा की गूंज है, जिसे मध्ययुग मे प्रक्षेपित किया गया है। स्वामी ब्रह्मानन्द एक धार्मिक नेता के रूप मे राजस्थान के सभी राजाओ को एक कडी मे बांधने का विफल प्रयास करते है।[3] जयचन्द और पृथ्वीराज चौहान की आपसी फूट से शिक्षा लेने की बात कहते हुए गोस्वामी जी ने धर्म को वास्तव मे भारतीय एकता के मूल आधार तथा सपर्क-सेतु के रूप मे उपस्थित किया है। आर० सी० दत्त की अग्रेजी पुस्तक "भारत की मौलिक एकता" का यहाँ पर स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। गोस्वामी जी के युग मे अग्रेजी शासन के विरुद्ध क्रांतिकारियो के भूमिगत अड्डो का प्रतिबिंब रजिया के विरुद्ध उसके सरदारो द्वारा किए जाने वाले विद्रोह मे परिलक्षित होता है। रात्रि के समय उनका एक भूमिगत गृह मे मिलना तथा रजिया के विरुद्ध कई शिकायतो पर विचार-विमर्श करना गोस्वामी जी के युग की स्थिति को प्रतिबिंबित करता है।

1 "रजिया बेगम", पेज 29
2 'रजिया बेगम", दूसरा भाग, पेज 10
3 रजिया" दूसरा भाग पेज 11
नौ महीने तक राजस्थान के राजाओं के यहाँ गए और उन राजाओ को बहुत समझाया कि—"अपनी जननी समान जन्मभूमि के ऊपर अब वे दया करें और परस्पर मिलकर किसी एक राजा को अपना सम्राट बनावें तद तर सब के सब मिल कर दिल्ली के तख्त को उलट दें और अपवित्र भारत-भूमि का पुन संस्कार करके अपने देश की विलुप्त स्वाधीनता की पताका फिर से भारत के आकाश मे उड़ावें, क्योंकि इस समय दिल्ली की सल्तनत बिलकुल कमजोर हो रही है इस समय यवनों के पैर एक प्रकार से उखड गए हैं और गुलाम बादशाह शमसुद्दीन अलतिमश के शाही खानदान में घोर गृहविवाद उपस्थित हुआ है।"

"तारा" मे जहानआरा तथा तारा के बीच सांस्कृतिक विषयो पर वार्तालाप अतीत युगो मे लेखक के युग के प्रतिबिंबन का उत्तम उदाहरण है जबकि जहानआरा बाल्मीकि की रामायण की प्रशंसा करती है ।[1]

व्रजनन्दन सहाय के "लालचीन" में लालचीन के चरित्र-चित्रण के माध्यम मे नैतिकता के द्वन्द्व की आधुनिक एव लेखकयुगीन धारणा का चित्रण किया गया है। उसने सम्राट गयासुद्दीन को अधा बनाकर स्वय सिंहासन हथियाने का जो कुचक्र चलाया था, उसकी पृष्ठ-भूमि मे व्रजनन्दन सहाय ने उसके चरित्र के द्वन्द्व को कलात्मक ढग से चित्रित किया है—कुवासना की सफलता होते न होते लालचीन के मन मे खलबली मच गई। आत्मा की कठोर याचना सहने की इसमे अब शक्ति न रह गई। आतिथ्यसत्कार का भाग करते अब न बना। सुपुप्त करुणा इसके हृदय मे जाग उठी। धर्म ने अपनी ओर इसे एक बार और खीचा। आत्मा की पुकार यह पुन सुनने लगा। अनुताप के ताप मे व्याकुल होकर यह गयास के सामने ठहर नहीं सका।[2] इसी उपन्यास में आस्था के स्थान पर बौद्धिकता की आधुनिकतम धारणा का समावेश किया गया है। यहाँ "लालचीन" अपनी परिस्थितियो के प्रति असतुष्ट होकर विद्रोह करता है। उसकी पत्नी लालचीन के इस विद्रोह का अपनी महत्त्वाकाक्षाओ की पूर्ति के लिए प्रयोग करती है और लालचीन को स्वा-मिद्रोह के लिए उद्यत करती है।[3] यद्यपि यह एक ऐतिहासिक तथ्य है तथापि इसका चित्रण नितान्त नवीन ढग से किया गया है। विशेषत हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो के सदर्भ मे यह अत्यत महत्त्वपूर्ण है।

"लालचीन" तथा "रज़िया" दोनो ही उपन्यासो मे क्रमश लालचीन, याकूब तथा अयूब गुलाम होते हैं। इनका चित्रण करते समय लेखक के युग मे गुलामी की धारणा स्पष्ट रूप मे उभर कर आई है।

गयासुद्दीन द्वारा सिंहासनारूढ होने के पश्चात् जब "लालचीन" की कोई विशेष उन्नति नही की जाती तो वह असतुष्ट होने के साथ ही विद्रोह के दावानल मे जल उठता है। वह सम्राट गयासुद्दीन से कहता है—"उनके (गुलामो) साथ मनुष्य जैसा व्यवहार करना तो उचित है। हित-अनहित के विचारने की शक्ति दासो मे भी है। दुखसुख का वे भी अनुभव करते हैं। वे भी मर्म रखते हैं। उन्हें भी वेदना होती है। उनका भी हृदय न्याय और अत्याचार अनुभव करता है, हर्ष-विषाद प्रकट करता है। उनका भी मन उच्च अभिलाषा से भरा रहता है।"[4] इसी प्रकार "रज़िया बेगम" मे याकूब तथा अयूब अपनी वर्तमान गुलामी की स्थिति के बारे मे जब सोच-विचार करते हैं, तो उनके विचार लगभग आधुनिक स्तर के हैं।[5]

1 "तारा" पहला भाग पेज 12-23
2 "लालचीन" व्रजनन्दन सहाय, पेज 76
3 "लालचीन", पेज 40-42
4 "लालचीन", पृष्ठ 5
5 "रज़िया बेगम", पहला भाग, पेज 21-26

यद्यपि उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम दशक तथा 20 वी शताब्दी के पहले दो दशको में धर्म-निरपेक्ष राष्ट्रीयता की धारणा धीरे-धीरे उभर रही थी तथापि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार जाति-पाति अथवा चतुर्वर्ग एव चतुर्फल की धारणा के प्रवल पोषक थे। इसी के आधार पर विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे धर्म-निरपेक्ष राष्ट्रीयता के स्थान पर हिन्दू राष्ट्रीयता की धारणा का प्रतिपादन किया गया है।[1]

विवेच्य युग, एक महान् सांस्कृतिक, धार्मिक एव सामाजिक सम्मिलन तथा टकराहट की प्रक्रिया का युग था। यद्यपि सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार एक निश्चित सामाजिक, धार्मिक एव सांस्कृतिक धारणा के प्रति प्रतिबद्ध थे फिर भी उनके युग मे उभरने वाली उदारतावादी तथा मानवतावादी जीवन-दृष्टियाँ उभर कर आई हैं। मिश्र बन्धुओ के "वीरमणि" मे विवेच्य युग की धार्मिक एव सांस्कृतिक समस्याओ का कलात्मक ढग से प्रक्षेपण किया गया है।

विवेच्य कालखण्ड मे हिन्दू धर्म पर कई आपत्तियाँ लगाई जा रही थी, मिश्र बन्धुओ ने उनका मध्ययुगो मे प्रक्षेपण किया है। वीरमणि का शिष्य मकरद उनसे पूछता है—"महाशय, पृथ्वी पर हिन्दू, बौद्ध, ईसाई और मुसलमान नामक चार प्रधान मत हैं, सो इन में से तीनो अंतिम धर्मों के चलाने वाले एक-एक महात्मा थे, किंतु हिन्दूमत का प्रवर्तक कोई नही देख पडता। इसी प्रकार मुसलमानी मत के दो सिद्धांत परम दृढ एव प्रकट हैं, तथा दोनो मतो के सिद्धान्त भी सरलता से ज्ञात हो सकते हैं, किन्तु हिन्दू मत के सिद्धान्त क्या हैं, सो पूर्ण विचार से भी नही प्रकट होते और न आपने कुछ बताए। आपने तो आस्तिक तथा नास्तिक दर्शनो की साथ ही साथ शिक्षा दी आपने सभी आचार्यों की सदैव पूर्ण भक्ति सिखलाई किन्तु विचार करने मे उनके सिद्धान्तो मे अनेक छोटी बडी प्रतिकूलताएँ पाई जाती हैं। जिस हिन्दू-मत की आप सदैव प्रशसा किया करते हैं, वह केवल एक पसारी की दूकान है। उसमे निश्चित सिद्धान्ताभाव और आधारामाव के दो बडे दूषण समझ पडते हैं।"[2] हिन्दूमत पर यह दो आक्षेप लेखक के युग मे सामान्यत उभरते थे। मिश्र बन्धुओ ने वीरमणि के माध्यम से इन सशयो का समाधान प्रस्तुत किया है।[3]

विवेच्य उपन्यासकारो का युग ब्रिटिश पराधीनता का, राजनीतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त निराशाजनक कालखण्ड था। राजनीतिक स्वाधीनता के अन्यान्य प्रयत्नो के विफल हो जाने के पश्चात् भारतीयो ने अपने समाज, धर्म एव सस्कृति पर ईसाई मिशनरियो द्वारा कुठाराघात किए जाने के प्रतिक्रिया स्वरूप जो पुनर्उत्थानवादी धारणा उभरी थी, उसी को भारतीय मध्ययुगो मे प्रतिबिंबित एव प्रक्षेपित किया गया है। लेखक के युग का भारतीय मध्ययुगो मे प्रतिबिंबित किया जाना उनके द्वारा

1 जातिपाँति तथा हिन्दू राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में इस अध्याय के आरम्भ मे इतिहास की धारणाएं तथा पुनर्व्याख्याएँ शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन किया गया है।

2 "वीरमणि", पेज 12

3 "वीरमणि", पेज 13-20, इस विषय को जीवन-दर्शन शीर्षक के अन्तर्गत लिया जाएगा।

इतिहास में से चुने गए काल-खण्डों द्वारा भी प्रमाणित होता है। सामान्यतः विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने भारतीय अतीत के उन कालखण्डों को अपने उपन्यासों का आधार बनाया है जब या तो हिन्दू जाति (विशेषतः राजपूत) अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए घोर संघर्ष में रत थे अथवा समस्त भारत में हिन्दू राष्ट्र की स्थापना के लिए अदम्य वेग एवं प्रबल आकांक्षा द्वारा क्रियाशील थे और इसी रूप में लेखक के युग की धारणाओं का मध्ययुगों में प्रतिबिंबन किया गया है।

(VI) ऐतिहासिक उपन्यासों में उपन्यासकारों की जीवन-दृष्टियाँ एवं जीवन-दर्शन

इतिहास केवल अन्यान्य घटनाओं की शृंखला ही नहीं होती, इन घटनाओं की व्यवस्था करते समय, एवं उन्हें बुद्धिगम्य स्वरूप प्रदान करते समय इतिहासकार एक विशेष दर्शन की धारणाओं एवं मान्यताओं का प्रयोग करता है। अतीत की घटनाओं का विवरण यदि एक विशिष्ट इतिहास दर्शन द्वारा अनुप्राणित न हो तो उसे इतिहास कहना कठिन होगा। इतिहास दर्शन के कारण ही डॉ० ए० एल० राउस ने व्यक्तित्व, विवरण (Vividness) तथा सिजीवता (Vitality) के आधार पर सर विन्स्टन चर्चिल की 'वर्ल्ड क्राइसिस' को ट्राटस्की की हिस्ट्री ऑव द रशियन रैवोल्यूशन' से घटिया बताया था क्योंकि इसके पीछे इतिहास का कोई दर्शन न था।[1]

इतिहासकार जिस प्रकार मानवीय अतीत का अध्ययन एवं निरूपण एक विशिष्ट इतिहास-दर्शन के अनुरूप करता है उसी प्रकार ऐतिहासिक उपन्यासकार विशिष्ट अतीत के एक कालखण्ड के पुनः प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया में अपनी जीवन दृष्टि एवं जीवन-दर्शन का प्रयोग कर अपने ऐतिहासिक-उपन्यास को एक अर्थ प्रदान करता है। विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने सामान्यतः एक विशिष्ट एवं सुनिश्चित जीवन-दृष्टि एवं जीवन-दर्शन के आधार पर अतीत का पुनः प्रस्तुतिकरण किया है।

(i) हिन्दू-धर्म —हिन्दू-धर्म समाज एवं संस्कृति का पुनरुत्थानवादी जीवन-दर्शन इन उपन्यासों की आत्मा है। लगभग सभी उपन्यासकार हिन्दू-धर्म की सनातन मान्यताओं, धारणाओं परम्पराओं एवं विश्वासों के प्रति प्रतिबद्ध हैं। इसी जीवन दर्शन के अनुकूल भारतीय अतीत के उन युगों को चुना गया जबकि इन धारणाओं की रक्षा के लिए समस्त जाति एवं सम्प्रदाय अपने प्राणों की बलि देने को उद्यत था अथवा इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्राणोत्सर्ग कर दिया जाता था। इसी जीवन दर्शन के कारण सांप्रदायिकतापरक दृष्टिकोण ने लगभग सभी उपन्यासकारों को प्रभावित किया।

हिन्दू-धर्म एवं संस्कृति के पुनरुत्थान के साथ-साथ उसकी पुनः स्थापना की उत्कट महत्वाकांक्षा भी इसी जीवन-दर्शन का परिणाम थी।

1 *A. L. Rowse* - "The End of an Epoc" 1947, Page 282-83

इस जीवन-दर्शन के अनुरूप विवेच्य उपन्यासकारो ने समस्त प्रयुक्त भारतीय अतीत की पुन व्याख्या की है। राजपूताना के हिन्दू राजाग्रो एव राणाग्रो को आदर्श शासक के रूप मे तथा मुसलमान सम्राटो एव नवाबो को अत्यन्त कामुक, विलासी एव अत्याचारी के रूप मे चित्रित किया गया है। यहाँ तक कि अकबर को भी कामुक विलासी एव अत्याचारी के रूप मे प्रस्तुत किया गया। उदाहरणार्थ किशोरीलाल गोस्वामी के सोना और सुगन्ध व पन्ना बाई तथा श्यामलाल गुप्त के रानी दुर्गावती' उपन्यासो मे।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र का 'पानीपत' सनातन हिन्दू धर्म की पुन स्थापना के इतिहास दर्शन द्वारा आपोतित अनुप्राणित है। यहाँ हिन्दू राष्ट्रीयता की, धारणा लेखक के धार्मिक विश्वासो से जुड़कर उभरी है। दैवी शक्ति के रूप मे भगवान् की कृपा कार्य-सिद्धि के लिए अनिवार्य है, दैवी शक्ति यहाँ केवल प्रेरणा का स्रोत ही नही है, प्रत्युत घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को एक निश्चित दिशा तथा विशिष्ट स्वरूप भी प्रदान करती है। यही कारण है कि जय हो या पराजय दैवी शक्ति ही उसके लिए उत्तरदायी होती है, पात्र चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, वे जगदवा अथवा खुदा को ऐतिहासिक घटनाओ की नियोजक शक्ति के रूप मे स्वीकारते है।

मिश्र बन्धुओ ने हिन्दू मत पर लगाए जाने वाले अन्यान्य आक्षेपो का तार्किक ढग से खण्डन किया है। हिन्दू-धर्म के किसी एक अनुयायी प्रवर्तक के न होने तथा हिन्दू-धर्म मे अन्तर्विरोधो का एक विशाल सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर स्पष्टीकरण किया है। हिन्दू-धर्म के एक पुरुषावलम्बी न होने को बुद्धि-विकास के लिए उचित ठहराया है,—क्योकि अनुयायी प्रवर्तक के विचारो के आगे नही बढ सकते। जो विचार वह एक पुरुष कर गया है, उसके आगे बढना अनुयायी के लिए पातक है।' यह नभ मण्डलवत् एक महा विस्तृत धर्म है, और प्राय सभी बडे-बडे महात्माओ के सदुपदेश उसमे आदर पाते है। "इस भाँति किसी एक व्यक्ति की अधीनता न स्वीकार करने मे हिन्दू मत ने श्रेष्ठ मार्ग का अवलबन किया है ' किसी एक का मत मानने को बाध्य कर देने मे मनुष्यो की स्वतन्त्रता मे बाधा पडती है। जब तक उसके आचार शुद्ध है, तब तक विचारो के लिए हिन्दू किसी से लडने नही जाएगा, चाहे वह विष्णु, राम, कृष्ण, शिव, काली, महावीर,कलवावीर, आदि मे से किसी को भी माने। ध्यान रखना चाहिए कि यह वह उदार मत है कि जिसने एक द्वितीय धर्म चलाने वाले गौतम बुद्ध को भी अवतार कह कर पूजा और सैकडो वर्षों तक बौद्धमत को हिन्दूमत से पृथक् ही न माना।"[1]

मिश्र बन्धुओ ने हिन्दू मत को सांप्रदायिक न मानते हुए उसके एक बृहत्तर एव भौगोलिक स्वरूप का प्रतिपादन किया है।[2]

1 "वीरमणि' पृष्ठ 13-18

2 वही पृष्ठ 19 हिन्दू वास्तव' मे 'एक भौगोलिक शब्द है, न कि साम्प्रदायिक। हिन्द का प्रत्येक निवासी हिन्दू है। यह शब्द 'वास्तव मे-भारतवासी' के समान अर्थबोधक है, किन्तु

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में सनातन हिन्दू-धर्म तथा उसके पूरक के रूप मे जाति अभिमान के सामंती स्वरूप एव आधुनिक पुनरुत्थानवादी दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया है। तारा' मे जब अन्यान्य हिन्दू एव मुसलमान पात्र धर्म एव संस्कृति के सम्बन्ध में वार्तालाप करते हैं, तो गोस्वामीजी का आधुनिक पुनरुत्थानवादी जीवन-दर्शन अपने सर्वाधिक स्पष्ट रूप में उभर कर आता है। यहाँ धर्म के साथ-साथ साहित्य, भाषा तथा संस्कृति सभी क्षेत्रों मे हिन्दुओं को मुसलमानो की अपेक्षा बेहतर रूप मे उभारा गया है।[1] इसी प्रकार जब चन्द्रावती तारा की दारा के साथ शादी करने की अर्जुन की सलाह को ठुकराती है, तो हि धर्म का कट्टर सनातनी स्वरूप, उदयपुर के राजपूत राजाओ के प्रति गहरी भक्ति त मुसलमान विरोधी इतिहास-चेतना के साथ-साथ जातीय दर्प, आत्माभिमान एव ध निष्ठा का मध्ययुगीन स्वरूप उभरता है, जो प० किशोरीलाल गोस्वामी के जीव दर्शन के अनुरूप है। इसी प्रकार "रजिया बेगम" में हिन्दू-धर्म तथा इस्लाम दो को एक नवीन दृष्टि से देखा एव व्याख्यायित किया गया है।[2]

प० रामजीवन नागर का जीवन-दर्शन हिन्दू-मन तथा राजपूतों के प्रति अगाध श्रद्धा तथा दृढ विश्वास द्वारा रूपायित होता है। राजपूतों के अपार शौर्य ए वीरता के साथ-साथ उनके अन्तःपुरो की स्त्रियों का चित्रण करते हुए वे पौराणि आदर्शों के पुन प्रस्तुतिकरण तथा पुनर्स्थापन के जीवन-दर्शन के समर्थक हैं। नायव की मध्ययुगीन धारणाओ द्वारा अनुप्राणित होते हुए भी वे एक स्वर्णिम अतीत की परिकल्पना करते हैं। स्वर्णिम अतीत के इस चित्रण द्वारा वे पुनरुत्थानवादी जीवन दर्शन का निरूपण करते हैं।

ठाकुर बलभद्र सिंह 'वीर बाला वा जयश्री' मे सनातन धर्म परक नैतिक धारणा का प्रतिपादन करते हैं।[3]

चन्द्रशेखर पाठक के 'भीमसिंह' रामनरेश त्रिपाठी के 'वीरांगना' गिरिजानन्दन तिवारी के 'पद्मिनी' तथा रूपनारायण के 'सोने की राख' में हिन्दू-धर्म के मध्ययुगीन स्वरूप तथा उसके प्रति लेखको की व्यक्तिगत श्रद्धा एव प्रतिबद्धता उनके जीवन-दर्शन को रूपायित करती है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'हम्मीर', 'वीरपत्नी',जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान', हरिचरणसिंह चौहान के 'वीरनारायण' श्यामलाल गुप्त के 'रानी दुर्गावती, तथा ब्रजविहारी सिंह के 'कोटारानी' नामक विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासों मे हिन्दमन

बहुत दिनों से अब धर्म अथवा मत को अर्थबोधकता में रूढ़ि मान लिया गया है। हिन्दूमत का शुद्ध अर्थ भारतवर्षीय मत मानना चाहिए। धार्मिक विचार से प्रत्येक सदाचारी पुरुष हिन्दू है, चाहे जिस मत को वह मानता हो।'

1 "तारा" पहला भाग, पेज 12-23.
2. "रजिया बेगम", पहला भाग पेज 41-49, 50-59
3 "वीर बाला वा जयश्री" बलभद्रसिंह, पेज 20

तथा राजपूतो की नैतिक धारणाऐं लेखको के जीवन-दर्शन को उभारने के साथ-साथ उसको नियोजित भी करती हैं ।

बाबूलाल जी सिंह के 'वीरबाला' तथा युगलकिशोर नारायणसिंह के 'राजपूत रमणी' मे उदयपुर के महाराणा राजसिंह द्वारा रूपनगर की राजकुमारी का उद्धार करने तथा औरंगजेब के अत्याचारो के प्रति सशक्त एव सफल विरोध करने की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे लेखक राजपूतो की नैतिकता तथा हिन्दू मत की महानता का चित्रण करने के साथ-साथ उसके पुन स्थापन के जीवन-दर्शन का निरूपण करते है। इस विशिष्ट ऐतिहासिक युग मे एक सशक्त ऐतिहासिक आततायी औरंगजेब के विरुद्ध एक प्रबल हिन्दू राजा राजसिंह का अभियान इस प्रकार के जीवन-दर्शन को और भी मुखर करता है ।

अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह के 'वीर चूड़ामणि' तथा सिद्धनाथ सिंह के 'प्रण पालन' नामक उपन्यासो मे मेवाड के राणा लाखा तथा उनके सुपुत्र चूडाजी के अद्भुत त्याग तथा देशभक्ति के चित्रण के माध्यम से हिन्दू मत की महानता की धारणा का प्रतिपादन किया गया है ।

हिन्दू-धर्म के प्रति एक दृढ आस्था तथा गहरा विश्वास विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो के जीवन-दर्शन का मेरुदण्ड है जो उसके स्वरूप को निर्धारित एव नियोजित करता है ।

(ii) **हिन्दू राष्ट्रीयता**—हिन्दू-धर्म के पुनरुत्थानवादी जीवन-दर्शन के साथ-साथ हिन्दू-राज्य की परिकल्पना का मध्ययुगो मे प्रक्षेपण भी विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो के जीवन-दर्शन का महत्त्वपूर्ण अग है । यद्यपि लालजीसिंह के 'वीरबाला युगलकिशोर नारायण सिंह के 'राजपूत रमणी,' अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह के 'वीर चूड़ामणि,' सिद्धनाथ सिंह के 'प्रण पालन' जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान,' गगाप्रसाद गुप्त के 'वीर पत्नी,' एव हम्मीर' तथा जयरामदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' मे हिन्दू राष्ट्र की स्थापना का मौलिक जीवन-दर्शन अपने पूर्ण वेग से उपन्यास की घटनाओ के प्रवाह तथा हिन्दू पात्रो के क्रियाकलापो को नियोजित करता है तथापि वह इन उपन्यासो मे अपना पूर्ण स्वरूप प्राप्त नही कर पाया ।

पडित बलदेवप्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे हिन्दू राष्ट्रीयता का जीवन-दर्शन तथा हिन्दू राष्ट्र की पुन स्थापना का प्रयास अपने सपूर्ण रूप मे उभर कर आया है । 'शयन-गृह' नामक अध्याय मे मराठा सेना का मुख्य सेनापति सदाशिव राव भाऊ भारतवर्ष का नक्शा देखते हुए क्षत्रियो की पराजय से खिन्न हृदय होता हुआ तथा साथ ही भविष्य के प्रति आशावान् होता हुआ स्वय ही कह उठता है,—'यदि अब भी वीर-गण अपने गत गौरव को प्राप्त करने के लिए कमर बाँधें तो विजय लक्ष्मी उन पर दयालु हो सकती है । कारण कि मुगलो का बल इस समय क्षीण होता हुआ दिखाई दे रहा है । परन्तु अफगान लोगो मे अब तक साहस वीरत्व और उद्योग का

अभाव नही है । तथापि क्या चिन्ता है यदि हिन्दू प्रजा एकत्र होकर यत्न करेगी, तो अफगान लोग भी तृण की भाँति उड जाएँगे । महाराष्ट्री सेना की तत्परता और वीरता देख कर आशा होती है कि दुर्रानी अवश्य ही पराजित होगा ।"[1]

इस प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो मे हिन्दू-धर्म के समान हिन्दू राष्ट्रीयता का जीवन-दर्शन, मुसलमान विरोधी (अग्रेज विरोधी नहीं) धारणाओ पर आधारित है । यह जीवन-दर्शन सांप्रदायिकता तथा धर्म के सघातो के परिणाम-स्वरूप कड वार अत्यन्त प्रबल रूप मे उभर कर आता है ।

(*iii*) नारी—नारी के सम्बन्ध मे विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार लगभग मध्ययुगीन एव प्राचीन हिन्दू-दृष्टियो द्वारा प्रभावित हुए हैं । परन्तु कभी-कभी वे अपनी समयुगीन एव पुनरुत्थान वादी धारणा के अनुरूप नारी की आधुनिक धारणा का प्रतिपादन करते हैं ।

ईसाई तथा मुस्लिम धर्मो के सघातो के परिणामस्वरूप विवेच्य उपन्यासकार भारतीय नारी के मध्य-युगीन स्वरूप को अत्यन्त श्रद्धापूर्ण ढग से प्रस्तुत करते हैं । मध्य युगो मे भारतीय नारियो द्वारा पति की मृत्यु के पश्चात् जौहर-व्रत धारण करने की प्रथा का विवेच्य लेखको ने विपुल प्रयोग किया है । नारी के जौहर-व्रत धारण करने की प्रथा पर चन्द्रशेखर पाठक ने 'भीमसिंह', रामनरेश त्रिपाठी ने 'वीरागना', गिरिजा नन्दन तिवारी ने 'पद्मिनी', तथा रूप नारायण ने 'सोने की राख' की रचना की । इन उपन्यासो मे चितौड की महारानी पद्मिनी द्वारा असख्य राजपूत नारियो के साथ चिता मे जल जाने के भावोत्तेजक चित्रण द्वारा भारतीय नारी के प्रति गहन श्रद्धा तथा आदर का भाव उत्पन्न किया गया है ।

मु शी देवीप्रसाद ने 'रूठी रानी' मे राव मालदेव की रानी उमादे के माध्यम से भारतीय नारी के उदात्त स्वरूप को उभारा है । उमादे शादी की रात को ही अपने पति से रूठ गई थी । और अन्त तक रूठी ही रही । राव मालदेव की मृत्यु का समाचार मिलने के पश्चात् वह सती हो जाती है ।[2] इस प्रकार समस्त विवाहित जीवन मे निरतर रूठे रहने पर भी उसका सती होना मध्ययुगीन भारतीय नारी की गरिमा का परिचायक है ।

रामजीवन नागर के 'जगदेव परमार' मे भी राजा उदयादित्य के साथ उसकी बाघेली और सोलकिनी पति के साथ सती हुई,—और शास्त्र रीति तथा कुल रीति के अनुसार तीनो का दाहकर्म तथा उत्तर-क्रिया की गई ।[3] सती होने की प्रथा 18वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक चलती रही, यद्यपि वह अनिवार्य नही रह गई

1 'पानीपत', पेज 37-38
2 "रूठी रानी", मु शी देवीप्रसाद, पृष्ठ 46-48
3 "जगदेव परमार", पृष्ठ 167

थी। पंडित बलदेवप्रसाद के 'पानीपत' मे 'सती लक्ष्मी' नामक परिच्छेद[1] मे मराठा सेनापति बलवन्तराव मेढले के युद्ध मे मारे जाने के पश्चात् उसकी पत्नी लक्ष्मी बाई सती होने का निश्चय करती है। जनार्दन भानू (नाना फडनवीस) तथा सदाशिवराव भाऊ आदि लक्ष्मी को सती न होने की सलाह देते है तथा उसके लिए उसके छोटे से पुत्र आपाराव के सरक्षण को मुख्य कारण बताते है। परन्तु लक्ष्मी अपने दृढ निश्चय पर स्थिर रहती है और लेखक ने उसके सती होने का सजीव चित्रण किया है,— 'भूमि ने इस समय देव-भूमि का रूप धारण किया है। सती को देवी समझ कर मनुष्य उसके चरण मे कमल चढाते और प्रणाम करते है। सती आन्तरिक बुद्धि के प्रभाव से सबको आशीर्वाद देती चली जाती हे। पेशवा सरकार के सपूर्ण लशकर ने मान्यता करके सती को सम्मानित किया।'[2]

इस प्रकार पातिव्रत्यपूर्ण नारी विवेच्य लेखको की आराध्य देवी के रूप मे उभरी है। मध्ययुगीन सामन्ती सभ्यता एव सस्कृति मे स्वामिभक्ति तथा राज-भक्ति एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चारित्रिक विशेपता थी। पति की अर्धांगिनी के रूप मे नारी पति द्वारा स्वामिभक्ति एव कर्त्तव्य-पालन करने मे अपूर्व रूप मे सहायक होती है तथा इसके लिए वह अपने प्राणो का बलिदान भी दे सकती है।

बाबूलाल जी सिंह के 'वीर बाला' तथा युगलकिशोर नारायण सिंह के 'राजपूत रमणी' मे मेवाड के राणा राजसिंह के मत्री एव सेनापति चूडावत जी की पत्नी हाडी रानी जब अपने कारण चूडावत जी के कर्त्तव्य-पालन तथा स्वामिभक्ति मे रुकावट पहुँचते हुए देखती है, तो वह अपना सिर काट कर चूडावत जी को भेज देती है और दूत से कहती है,—'मैं अपना सिर तुम्हे देती हूँ इसे अपने स्वामी को मेरी ओर मे भेंट स्वरूप देना और कहना कि हाडी जी पहले ही सती हो गई। अब आप अपने दिल से सब शका त्याग कर रण-क्षेत्र मे जाइए। युद्ध मे जौहर दिखाइए और सफल मनोरथ हूजिए। अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण कीजिए। मैं पहले ही से स्वर्ग मे उनके स्वागत के लिए तैयार रहूँगी।[3] ठीक यही स्थिति लालजी सिंह के 'वीर बाला' मे भी उभारी गई है,—'हाडीजी ने चट-पट लिखने का सामान लेकर एक पत्र लिख सेवक के हाथ मे दिया और एक तीक्ष्ण खग उठा कर अपनी गर्दन पर मारी, फिर क्या देर थी सिर धड से अलग गिर पडा, रानी की सुन्दर प्रतिमा पृथ्वी पर छटपटाने लगी।'[4] भारतीय नारी के इस महान् पक्ष का उद्‌घाटन विवेच्य लेखको की नारी के प्रति जीवन-दृष्टि का उदाहरण है।

व्रजविहारीसिंह के 'कोटारानी' तथा श्यामलाल गुप्त के 'रूठी रानी' मे पति की मृत्यु के पश्चात् रानी दुर्गावती तथा कोटा रानी राजनैतिक एव कूटनीतिक

1 "पानीपत", पेज 363-364
2 "पानीपत", बलदेवप्रसाद मिश्र, पेज 368
3 "राजपूत रमणी", युगल किशोर नारायणसिंह, पेज 56-57
4 "वीर बाला", पेज 49.

मामलो मे सक्रियता मे भाग लेती हैं। रानी दुर्गावती गढ मण्डाले पर मुसलमान सेना के दो आक्रमणों को विफल करती है तथा तीसरे मे पराजित होकर लडाई में ही मारी जाती है और लेखक कह उठता है—'दुर्गावती तुम धन्य हो। जब तक भारत का इतिहास रहेगा तब तक तुम्हारा नाम नही भूल सकता।'[1] इसी प्रकार 'कोटारानी' मे रानी अमीर सिंह की सहायता से शाहमीर द्वारा छीना गया अपना राज्य वापिस प्राप्त करने मे सफल होती है। यह भारतीय नारी का एक अन्य स्वरूप है जिसे विवेच्य लेखको ने उभारा है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी तथा पडित बलदेवप्रसाद मिश्र के ऐतिहासिक उपन्यासो मे नारी की धारणा मूलत सनातन हिन्दू-धर्म तथा लेखको की समकालीन पुनरुत्थानवादी सामाजिक चेतना की अन्तर प्रक्रिया द्वारा निर्मित हुई है। पडित बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' मे नारी की सनातन हिन्दू-धर्मपरक धारणा का प्रतिपादन किया है। 'पार्वती जी का मदिर' नामक अध्याय के आरम्भ मे उन्होने एक पद्यांश प्रस्तुत किया है,—

> "अहो धन-धन भारत की बाला।
> जिनकी कीर्त्ति कथा सब जग मे गावत दस दिग्पाला ॥
> पतिव्रत रहत सदा ही राखे स्वामि ईश सम जानी ॥
> रहि है नाम अमर युग युगलो जबलो राम कहानी ॥"[2]

पेशवा बाला जी बाजीराव की पत्नी गोपिका बाई सदाशिवराव भाऊ को मुख्य सेनापति के रूप मे उत्तर भारत की ओर भेजते समय जब उस पर संशय प्रकट करती हैं, तो[3] वह एक सामान्य स्त्री की चारित्रिक विशिष्टता का उद्घाटन करती है। नाना फडनवीस का उनकी पत्नी के साथ व्यक्तिगत प्रेम तथा कुसगति मे पडना आदि मिश्र जी की नारी-धारणा को स्पष्ट रूप मे उभारते हैं। यहाँ उन्होंने पर स्त्री-गमन पर एक लम्बा भाषण दिया है।[4] तथा उससे शुद्धि का भी उपाय बताया है।[5]

इसके साथ मिश्र जी ने नारी के सम्बन्ध मे समकालीन धारणा का भी चित्रण किया है। सदाशिवराव भाऊ जी की पत्नी स्त्रियों को भी युद्ध मे साथ ले जाने के लिए कहती है।[6] इसी प्रकार दिल्ली विजय के समय तीन मराठा वीरांगनाएँ पुरुष वेष मे किले का दरवाजा खोलने मे सहायता करती हैं।[7] इस प्रकार यह लगभग आधुनिक दृष्टिकोण का प्रतिपादन करती हैं।

1 'रानी दुर्गावती'', श्यामलाल गुप्त, पेज 24
2 "पानीपत", पृष्ठ 29
3 वही पेज 46–49
4 वही, पेज 98–100
5 वही, पेज 101–102
6 वही, पेज 43–44
7 वही, पृष्ठ 278–280

पडित किशोरीलाल गोस्वामी ने 'तारा' मे मुगल शाहजादियो तथा राजपूत रमणियो के माध्यम से नारियो के सम्बन्ध मे अपनी दृष्टि का प्रतिपादन किया है। जहानआरा तथा रोशनआरा क्रमश दारा तथा औरगजेब की राजनैतिक स्तर पर सहायता करती है। जहानआरा का दारा तथा शाहजहान से अवैध सम्बन्ध औपन्यासिक एव ऐतिहासिक घटनाओ को नियोजित करता है। जहानआरा दारा को दिल्ली मे तथा शेष भाइयो को बगाल, कधार आदि भेजने की बात कहती है।[1] इस प्रकार जहानआरा सारे 'मुसलमानी सल्तनत की कुँजी' अपने हाथ मे रखती है जबकि रोशनआरा उसे हस्तगत करने के लिए विभिन्न षड्यन्त्रो का नेतृत्व करती है, इस प्रकार सक्रिय राजनीति को नियोजित करती हुई मुगल शाहजादियाँ सामान्यत अवैध रूप से शाहजादो एव गुलामो के साथ सेक्स परक सम्बन्ध रखती हैं। इसके विपरीत तारा तथा रभा जो राजपूत कुमारियाँ हैं दृढ एकनिष्ठ तथा उच्च स्तरीय चारित्रिक नैतिकता के पुंज के रूप मे उभारी गई हैं। तारा के माध्यम से गोस्वामी जी ने नारी के सम्बन्ध मे सनातन धर्म परक नारी धारणा का प्रतिपादन किया है—

> आजु भानु-प्रतिमा पै नैन उलूक चलावत,
> साम, दाम, बहु, भेद, दड, कर गहि नियरावत,
> मेटन चहत, सनातन धर्म, दग जग छावत,
> क्षत्रियबाला लेन चहत है, यवन सलावत ॥
> यह अपनी 'भावी पत्नी' की दुसह कहानी,
> सुनि, मन मे करि ग्लानि, विचार करौ, यदि मानी।[2]

वह राजपूतो की जातीय उत्तमता के प्रति सजग है तथा जाति, धर्म एव कुल के गौरव के प्रति जागरूक हैं—

> भूलि न धर्म-जाति कुल गौरव विनसन दैहौं।
> मरि जैहो, पै अधरम अरु अपजस नहिं लैहौं।
> होइ राज हसिनी यवन बक सौ अनुरागौं ?
> गगधार-सी विमल, कर्मनासा-रस पागौं ?
> चद छाडि, मग राहु रोहिनी कब अनुरागै ?[3]

इस प्रकार गोस्वामी जी ने नारी के सम्बन्ध मे दो परस्पर विपरीत जीवन-दृष्टियो को 'तारा' मे प्रतिपादित किया है।

पडित किशोरीलाल गोस्वामी ने "रजिया बेगम" मे तथा ब्रज नन्दन सहाय ने 'लालचीन' मे नारी के सम्बन्ध मे एक विशिष्ट जीवन-दृष्टि का प्रतिपादन किया है। 'रजिया बेगम' की रजिया तथा 'लालचीन' की कुलसुम को इन लेखकों ने क्रमश

1. "तारा", पृष्ठ 4–5
2. "तारा", भाग 3, पेज 19
3. वही, पृष्ठ 17

क्लियोपेट्रा तथा लेडी मैकबेथ के समान महत्त्वाकांक्षी रूप मे उभारा है। 'रजिया बेगम' में रजिया सत्ता हस्तगत करने के पश्चात् उसका पूरा भोग करती है परन्तु सत्ता खो जाने के पश्चात् वह अपने प्रति अलतूनिया के प्रेम का प्रयोग अपनी महत्त्वाकांक्षाओं तथा सत्ता पुन प्राप्त करने की योजनाओ की सिद्धि के लिए करती है। यह सब कुछ रजिया सेक्सपरक परिस्थितियों के माध्यम से करती है। 'लालचीन' मे कुलसुम लालचीन द्वारा सत्ता हथियाने के लिए किए गए षड्यत्रों मे सक्रिय भाग लेती है। जब लालचीन सम्राट के प्रति कुछ कोमल होता है तो कुलसुम अत्यत भयावह रूप से उसे सम्राट के विरुद्ध विश्वासघात करने के लिए सन्नद्ध करती है। इस प्रकार नारी के सम्बन्ध मे यह जीवन-दृष्टि लेखकों की बहुमुखी प्रतिभा की परिचायक है।

प० शेरसिंह काश्यप के 'आदर्श वीरागना दुर्गा' मे दुर्गा अपने बहनोई द्वारा छुए जाने पर उसे काट कर फेंक देती है—'यह हाथ इस पापी और चण्डाल के छू लेने से इस योग्य नहीं रहा कि बूंदी के धर्मात्मा राजा की सेवा कर सके।'[1] अनुभवानन्द के 'यमुना बाई' मे भी लगभग इसी प्रकार की नारी-धारणा का प्रतिपादन किया गया है।

गगाप्रसाद गुप्त ने 'हम्मीर' तथा 'वीर पत्नी' मे, जयन्तीप्रसाद उपाध्याय ने 'पृथ्वीराज चौहान' मे, अजोरी कृष्ण प्रकाशसिंह ने 'वीर चूडामणि' मे, सिद्धनाथ सिंह ने 'प्रणपालन' मे, तथा जयरामदास गुप्त ने 'काश्मीर पतन' में, नारी के सम्बन्ध मे सामान्य मध्ययुगीन क्षत्रिय कुमारियों की धारणा का प्रतिपादन रासोयुगीन तथा रीतिकालीन वैचारिक धरातल पर किया है।

(15) दास-प्रथा—दास-प्रथा मध्ययुगों की एक विशिष्ट एव मौलिक समस्या है जो सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक धरातल पर उभरती है। पडित किशोरीलाल गोस्वामी ने 'रजिया बेगम" मे तथा व्रजनन्दन सहाय ने 'लालचीन' मे दास-प्रथा के सम्बन्ध में अपनी जीवन-दृष्टियो का निरूपण किया है। 'रजिया बेगम' मे याकूब तथा अयूब जो वास्तव मे एक बड़े घराने मे सम्बन्धित थे और परिस्थितिवश उन्हें दास बनना पड़ा था। गुलामी के बारे में मौलिक रूप से सोचते हैं तथा अपनी स्थिति के लिए दैवी शक्ति को उत्तरदायी ठहराते हैं,—'ओफ! उस पाक पर्वरदिगार की क्या शान है कि गुलाम का खानदान बादशाही करे और अमीर खानदान गुलामी की जजीर से मजबूर किया जावे।'[2] गोस्वामी जी दासों के प्रति अपना विचार नौमन के शब्दों मे इस प्रकार व्यक्त करते हैं—'बी, गुलशन। यह तुम्हारा महज गलत खयाल है। क्या गुलामों को खुदा ने किसी और हाथ या

1 'आदर्श वीरांगना दुर्गा", शेरसिंह काश्यप सन् 1912 राष्ट्रीय' पुस्तक माला, अजमेर, पेज 40

2 "रजिया बेगम", पहला भाग, पेज 24

मसाले से बनाया है और क्या गुलाम इन्सान ही नही, गोया, तुम्हारे खयाल से निरा हैवान है। जरा तो तुमने इस बात पर गौर किया होता है कि वह शख्स जिसका कि नाम अब मालूम हुआ है कि 'याकूब' है, कितना खूबसूरत जवा-मर्द और दिलेर शख्स है।'[1]

'लालचीन' मे ब्रजनन्दन सहाय दासत्व की परिभाषा लालचीन के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत करते है—'दासत्व स्वयम् ही एक महायन्त्रणा है। सेवा मे मुझ से कभी त्रुटि नही हो सकती। किन्तु जब स्वामिभक्त दास उचित पुरस्कार नही पाता, उसका जी टूट जाता है और उसमे असतोष की मात्रा अवश्य ही बढ जाती है।'[2]

यहाँ दास-प्रथा का चित्रण वर्ग भावना तथा प्रारब्ध से एक साथ प्रभावित हुआ है। गयासुद्दीन लालचीन से कहता है—'दासो के साथ राजकुमारो का सा बर्ताव नही किया जा सकता। दोनो एक कक्षा मे नही रक्खे जा सकते। मैं समझता हूँ कि स्वतन्त्र मनुष्यो की श्रेणी मे गुलाम को बिठाना न्याययुक्त नही है। जब प्रारब्ध ने दासो को दासत्व की बेडी मे जकड दिया है तब उन्हे उचित है कि वे अपनी अवस्था का यथार्थ ज्ञान रख हर्षपूर्वक अपनी जीवन-यात्रा निर्वाह करे।"[3]

(४) **अन्य जीवन-दृष्टियाँ**—साम्प्रदायिकता,[4] विवाह तथा प्रेम[5] के सम्बन्ध मे विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अपने उपन्यासो मे स्थान-स्थान पर अपनी जीवन-दृष्टियो का प्रतिपादन किया है।

इस प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यास विशिष्ट जीवन-दर्शन एव जीवन-दृष्टियो द्वारा अनुप्राणित होते हुए अपनी सार्थकता एव अर्थवत्ता को प्रमाणित करते है।

---

1 "रजिया बेगम", पहला भाग, पेज 28
2 "लालचीन", ब्रजनन्दन सहाय, पेज 5
3 वही, पेज 5-6
4 साम्प्रदायिकता के प्रति लेखको की जीवन-दृष्टि के सम्बन्ध मे चौथे एव पाँचवें अध्याय मे अध्ययन किया गया है।
5 ऐतिहासिक उपन्यासों मे रोमास की ओर जाने की प्रवृत्ति के अन्तर्गत इनके प्रति लेखको की जीवन-दृष्टि का अध्ययन चौथे अध्याय मे किया गया है।

6 ऐतिहासिक रोमांसकार तथा ऐतिहासिक-रोमांसों में रोमांस के अनेकरूपेण संबंध

ऐतिहासिक रोमांसो मे तथ्यो की प्रामाणिकता तथा ऐतिहासिक उपन्यासो मे कल्पना की विश्वसनीयता के प्रश्न अनेक कथारूपो और व्याख्याओं को उभारते हैं। विशेष रूप से ऐतिहासिक रोमांसो मे रोमांसकारो के युग का तथा इतिहास-खण्ड का एक विचित्र अन्तर-रूपान्तरण होता है। हम इनकी छानबीन करेंगे।

इसके अलावा ऐतिहासिक रोमांसकार अपने युग की यथार्थता और अपनी *जीवन-दृष्टियो तथा सामाजिक दर्शनो से भी प्रभावित होते हैं।* इनके संयोग से भी रोमांस के अनेक रूपेण सम्बन्ध उभरते हैं। इस अध्याय मे हम इनका भी अन्वेषण करेंगे।

(1) ऐतिहासिक रोमांसों में रोमांस के तत्त्व

ऐतिहासिक रोमांस, इतिहास अथवा अतीत (ऐतिहासिक अतीत नही) के साथ रोमांस के अन्यान्य तत्त्वो के कलात्मक सम्मिलन मे अपने साहित्य-रूप की विशिष्टिता प्राप्त करता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो मे अधिकांशत भारतीय मध्ययुगो को कथाभूमि का आधार बनाया गया है। सामान्यत, इस कालखण्ड मे केन्द्रीय राज्यसत्ता हिन्दू राजाओ से छिन चुकी थी। कुछ राजाओ ने केन्द्रीय मुसलमान शासको की अधीनता स्वीकार कर ली थी, कुछ स्वतन्त्रता की भावना एव जातीय-अभिमान से प्रेरित होकर निरन्तर मुसलमान सम्राटो के साथ संघर्ष करते रहे। अपेक्षाकृत कम संख्या एव शक्ति के साथ विशाल एव प्रबल केन्द्रीय सत्ता के साथ संघर्ष, शौर्यपूर्ण जीवन के चित्रण के लिए उपयुक्त भूमि प्रदान करता है। शौर्यपूर्ण जीवन-रोमांसो का मूल तत्त्व है।

यद्यपि मध्य-युगो का शौर्यपूर्ण जीवन प्राचीन युगो के नायकत्व-पूर्ण जीवन से भिन्न अपना अस्तित्व रखता है परन्तु विवेच्य उपन्यासो मे शौर्यपूर्ण जीवन के चित्रण एव प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे नायकत्व-पूर्ण जीवन की कई विशेषताएँ भी आ गई हैं। इसका मुख्य कारण लेखकों की हिन्दू राजाओ एव योद्धाओ के प्रति अनन्य भक्ति

एव श्रद्धा है। सामान्यत रामायण, महाभारत आदि के पौराणिक एव समुद्रगुप्त आदि ऐतिहासिक नायक नायकत्वपूर्ण जीवन का प्रतिनिधित्व करते है तथा विक्रमादित्य आदि शौर्यपूर्ण जीवन-दर्शन के प्रतिपादन के माध्यम का कार्य करते है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत शौर्यपूर्ण जीवन को अभिव्यक्त किया गया है, जो किस्से कहानियो के साथ जुडा हुआ है। इन कथारूपो मे वर्णित अतीत इतिहास के स्थान पर किंवदतियो तथा वीरगीतो पर आधारित है। इस प्रकार इन ऐतिहासिक रोमासो मे ऐतिहासिक अतीत के स्थान पर लोक-अतीत का पुन निर्माण किया गया है।

यहाँ लोक-अतीत कई बार इतिहास के अनुगामी के रूप मे उभरा है, जैसे पडित किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक रोमासो मे। कई बार लोक-अतीत इतिहास तथा ऐतिहासिक धारणाओ एव मान्यताओ का अतिक्रमण भी कर जाता है जैसे गगाप्रसाद गुप्त एव जयरामदास गुप्त के ऐतिहासिक रोमासो मे। लोक-अतीत अपने विशुद्ध रूप मे केवल मेहता लज्जाराम के 'जुझारतेजा' मे ही उभर कर आया है।

मध्यकालीन शौर्यपूर्ण जीवन मानवीय एव अतिमानवीय स्तर पर अभिव्यक्त किया गया है। मानवीय स्तर पर वीरता एव साहस, स्वामिभक्ति तथा कर्त्तव्यपालन की धारणाएँ मुख्य हैं। अतिमानवीय स्तर पर बौद्धिकता विरोध, शास्त्रीयता विरोध तथा समकालीनता विरोध आदि धारणाओ द्वारा शौर्यपूर्ण जीवन-दर्शन रूपायित होता है। यह जीवन-दर्शन अतिप्राकृतिक एव अतिलौकिक व्यक्तियो एव घटनाओ के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। यह सभी तत्त्व वर्तमान की कथाभूमि पर प्रस्तुत नही किए जा सकते। ऐतिहासिक अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे भी इनके चित्रण के लिए कोई विशेष स्थान नही रहता, परन्तु लोकातीत एव काल्पनिक अतीत की किसी ज्ञात एव अज्ञात कथाभूमि पर रोमास के इन तत्त्वो का इतिहास मे समन्वय किया जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास की पृष्ठभूमि मे रोमास के अन्यान्य तत्त्व उभर कर आए हैं जो उन्हे ऐतिहासिक उपन्यासो से अलग करते हैं।

नायकत्वपूर्ण युगो मे महाकाव्यो का निर्माण किया जाता था जबकि मध्ययुगो मे रोमासो का प्रणयन किया गया जिनमे मध्ययुगो के अन्यान्य अन्धविश्वास तथा जादुई वस्तुओ मे विश्वास[1] रोमासो मे अभिव्यक्त किए गए। इनमे गोथिक रोमास

1 रोमासो में वर्णित अतिलौकिक एव अतिप्राकृतिक जीवन के चित्रण को अधिक स्पष्टता से समझने के लिए क्लेरा रीव द्वारा उपन्यास एव रोमास मे बताई गई भिन्नताएँ उल्लेखनीय हैं—'उपन्यास यथार्थ जीवन और व्यवहार का तथा उस काल का जिसमे वह लिखा गया है एक चित्र है। रोमास उदात्त और उन्नत भाषा में उसका वर्णन करता है जो न कभी घटित हुआ और न जिसके कभी घटित होने की संभावना है। उपन्यास ऐसी वस्तुओ का वर्णन करता या परिचित सम्बन्ध बतलाता है जो प्रतिदिन हमारे नेत्रो के सामने से गुजरती रहती

की विशेषताएँ यथा भय हिंसा, मृत्यु तथा आधिभौतिक एवं अलौकिक आदि तत्वों को भी स्थान दिया गया है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमानों में यह सभी तत्व मूलत: अथवा कुछ परिवर्तित रूप में उभर कर आए हैं।

नायक—ऐतिहासिक रोमानों का नायक सामान्यत: अन्य व्यक्तियों तथा अपने परिवेश एवं पर्यावरण की अपेक्षा उत्तम कोटि का व्यक्ति होता है। उसके कार्य अनुपम होते हैं। वे कई बार अतिप्राकृतिक एवं अतिलौकिक भी हो जाते हैं। उसके अस्त्र एवं उपकरण मोहक एवं चित्ताकर्षक होते हैं। इनकी सहायता से वह अपने शत्रुओं के अतिदानवीय कार्यों तथा भयावह तिलिस्मी भवनों का सामना करता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमानों में, हिन्दू तथा मुसलमान शासकों के अतिदानवीय व्यवहार का चित्रण विवेच्य युग की विशिष्ट साहित्यिक एवं दार्शनिक धारणाओं द्वारा रूपायित है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदय हारिणी' 'लवंग लता', 'कनक कुसुम' तथा 'मल्लिका देवी' आदि ऐतिहासिक रोमानों के हिन्दू नायक अतिदानवीय एवं दुराचारी मुसलमान खलनायकों का सामना करते हैं। लगभग यही स्थिति गंगाप्रसाद गुप्त, जयरामदास गुप्त, कार्तिक प्रसाद खत्री के 'कुँवरसिंह सेनापति' 'वीर जयमल व कृष्ण कान्ता', 'किशोरी व वीरबाला' 'प्रभात कुमारी' 'वीर वीरांगना' तथा 'नदा' आदि रोमानों के नायकों की भी है।

वातावरण एवं पात्र—ऐतिहासिक रोमानों का वातावरण अतीत के एक ज्ञात अथवा अज्ञात कालखण्ड के पुनर्निर्माण द्वारा उभारा जाता है। यहाँ देश एवं काल का बंधन ढीला हो जाता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमानों में सामान्यत: भारतीय मध्ययुगों का पुनर्निर्माण किया गया है। केन्द्रीय मुसलमान शासकों का अत्याचार एवं काम-लोलुपता तथा स्थानीय हिन्दू शासकों के विलास के साथ-साथ उनकी अनुपम वीरता एवं शौर्य के अतिशयोक्तिपूर्ण चित्रण द्वारा वातावरण का निर्माण किया गया है।

लगभग सभी ऐतिहासिक रोमानों में यद्यपि भारतीय मध्य युगों के कालखण्डों तथा तिथियों की ओर संकेत किया गया है तथापि वातावरण-निर्माण की प्रक्रिया में रोमान के अन्यान्य तत्वों के मिल जाने से वातावरण अलौकिक एवं वैचित्र्यपूर्ण भी हो गया है।

है, वरन् वह हमारे दैनिक जीवन के अनुभवों का चित्रण है, जो स्वयं के और हमारे मित्रों के जीवन में घटित होते हैं।
—Clara Reeve : Introduction to the progress of Romance Quoted from आलोचना, उपन्यास विशेषांक।

युद्धो का वर्णन करते समय अतिमानवीय नायक तथा अतिदानवीय खलनायक की भयानक टकराहट द्वारा अत्यन्त रोमाँचक एव भयानक वातावरण की उत्पत्ति की गई है ।

नायक एव नायिका के प्रेम-प्रसगो का चित्रण करते समय यद्यपि सामान्यत रीतियुगीन एव पारम्परिक शैली को अपनाया गया है तथापि बहुत सी नई-नई उद्भावनाओ द्वारा उससे अधिक रुचिकर एव मनोरजक वातावरण का निर्माण किया गया है ।[1]

रोमासो के पात्र सामान्यत अनूठे व्यक्तित्व वाले एव अदृश्य होते हैं । ऐतिहासिक रोमासो मे इनकी स्थिति कुछ परिवर्तित हो जाती है । यहाँ कई बार पात्र ऐतिहासिक भी हो सकते हैं जबकि उनके द्वारा किए गए कार्य अनूठे, अतिलौकिक एव अतिप्राकृतिक भी होते हैं । कई बार अनैतिहासिक अथवा काल्पनिक पात्र इतिहास-सगत घटनाओ की प्रक्रिया मे सहयोग प्रदान करते हैं, जैसे किसी ऐतिहासिक युद्ध मे अद्वितीय पराक्रम दर्शाने वाला कोई काल्पनिक योद्धा ।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के पात्रो की स्थिति मे यद्यपि वे नितान्त, असामान्य एव अलौकिक नही हो गए तथापि बहुधा वे अत्यन्त आदर्श एव नैतिक अथवा खल एव क्रूर रूप मे उभारे गए है ।

सामान्यत दो परस्पर विरोधी कोटियो के चरित्रो की उद्भावना करके विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो ने अपनी कृतियो मे इतिहास के साथ-साथ रोमास के तत्त्वो को भी कलात्मक ढग से उभारा है । पडित किशोरीलाल गोस्वामी, गगाप्रसाद गुप्त, जयरामदास गुप्त, तथा लज्जाराम शर्मा के ऐतिहासिक रोमासो मे पात्रो को इसी पद्धति से चित्रित किया गया है ।

रोमासो के पात्र दैवी फरिश्ते, डायने, परियाँ एव भूत आदि हुआ करते थे । ऐतिहासिक रोमासो मे वे योगिनी, योगी, सिद्ध, महात्मा, नजूमी आदि के रूप मे प्रस्तुत किए गए हैं । कई बार राजकुल अथवा नगर की अधिष्ठात्री देवी भी पात्रो के व्यक्तित्व एव क्रिया-कलाप को प्रभावित करती है ।

उदाहरणत. जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरांगना वा आदर्श ललना', मे नायिका कनक लता 'सिहवाहिनी वरदायिनी भक्तवत्सला दुर्गा माता' का पूजन करती है । माता स्वय दर्शन देकर उसे वर देती है ।[2] इसी प्रकार जब कनकलता के पिता

1 रोमासो मे कामुकता एव अश्लीलता के विषय के अन्तर्गत इस विषय का अध्ययन किया गया है ।

2 धूपदीप अक्षत फल इत्यादिक पूजा के सामानो से माता को सजा कर दुखिनी राजकुमारी ने विशुद्ध हृदय और एकाग्र चित्त होकर माता के चरणो पर सिर नवा दिया और ध्यान मे मग्न ऐसी तल्लीन हो गई इसके बाद एकाएक ठडा झोंका आया चारो सहेलियाँ तन्द्रावस्था

पर्वतसिंह को कनक द्वारा अहमदशाह की हत्या करने के सम्बन्ध मे विश्वास नही आता तो 'वीरवर पर्वतसिंह ने एकाग्रचित्त हो कुलपूजित अधिष्ठात्री देवी का ध्यान किया। साथ ही माता ने दर्शन दे कहा—"निस्सन्देह! उसकी मनोकामना पूर्ण होगी।"[1]

इसी प्रकार के अलौकिक तत्त्व अन्य ऐतिहासिक रोमांसो मे भी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होते हैं।

ऐतिहासिक रोमांसो मे तूफान, भूकम्प तथा भीषण वर्षा आदि दैवी प्रकोपों द्वारा भी घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया तथा पात्रो की विचारधारा को प्रभावित किया जाता है। अन्यान्य मध्ययुगीन रूढियाँ, अन्धविश्वास एव परम्पराएँ भी ऐतिहासिक रोमांसो मे इसी प्रकार से प्रस्तुत की जाती हैं।

प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक रोमांसो में भाग्य एव दैवी शक्ति के प्रति लेखकों का दृढ विश्वास इस प्रकार के प्रसगो की उद्‌भावना के लिए अनुकूल मानसिक भूमि प्रदान करता है।

अलौकिक शक्ति मे लगभग सभी विवेच्य रोमांसकारो का विश्वास उसे ऐतिहासिक एवं रोमांटिक घटनाओ के घटित होने की नियोजक-शक्ति के रूप मे उभारता है।[2]

आँधी एव तूफान आदि के भीषण स्वरूप का चित्रण करने मे उपयुक्त रोमांसिक वातावरण का निर्माण करने मे भी सहायता मिलती है और लगभग सभी रोमांसकारो ने इसका प्रयोग किया है।

साहसिकतापूर्ण कार्य—रोमांस के प्लॉट मे साहसिक कार्यों का वर्णन एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रोमांटिक तत्त्व के रूप मे किया जाता है। यद्यपि मध्ययुगो के नायक एव नायक युग के नायको मे अन्तर होता है तथापि विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो के नायक, नायक युग के नायकों की प्रतिछाया के रूप में उभर कर आए हैं।

सामान्य कार्य एव साहसिक कार्य मे उल्लेखनीय अन्तर होता है। विवेच्य नायक रोमांसिक ढग से लगभग असम्भव एव दुष्कर कार्यो का निष्पादन करते हैं। इस प्रकार की साहसिकता सामान्य ऐतिहासिक कार्यों, युद्धो एव विजयो से भिन्न होती है।

से हो गई। तब सिंहवाहिनी कृपालु माता प्रकट हुई। उसके सिर को उठाया और अनन्त मधुर मुस्कान लेकर कहा—'वत्स! चिन्ता नहीं! तू अवश्य अपनी प्रतिज्ञा को पूरी करेगी।'—'वीरबाला या आदर्श ललना' जयरामदास गुप्त उपन्यास बहार आफिस काशी, 1909 ई० पेज 54

1. वही, पेज 6?

2. इस सम्बन्ध में विगत अध्यायों में 'ऐतिहासिक रोमांस' शीर्षक के अन्तर्गत विस्तृत अध्ययन किया जा चुका है।

उदाहरणत. मेहता लज्जाराम के 'जुझार तेजा' मे तेजा डेढ सौ मीनो से अकेला ही जूझ जाता है ।[1] और दो बार उन्हे पराजित करता है ।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'कनक-कुसुम' मे पेशवा बाजीराव केवल पच्चीस सवारो के साथ निजाम के निमन्त्रण पर दौलताबाद के किले के पास सन्धि करने के लिए जाते हैं परन्तु निजाम धोखे से दो हजार सिपाहियो द्वारा आक्रमण करवा देता है । निजाम का सेनापति हसन खाँ पेशवा से हथियार डालने को कहता है । इस पर पेशवा उत्तर देते हैं—' अपने खत के इकरार के खिलाफ मुझे इस तरह एकाएक घेर लिया है, तो मैं अब अपनी तलवार से इस बात का फैसला करूँगा और जब तक मेरे शरीर मे बल होगा, यो नामर्दो की तरह अपने तई तुम जैसे काफिरो के हवाले कभी न करूँगा ।"[2]

इसी प्रकार गोस्वामी जी के 'हृदय हारिणी' मे नायक नरेन्द्र नायिका कनक कुसुम की एक मतवाले हाथी से रक्षा करते है ।[3] एक जहरीले तीर द्वारा हाथी को मार डालना अद्वितीय साहस एव शौर्य का प्रमाण है ।

नायक व खलनायक मे प्रबल सघर्ष—सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे साहसिकता के साथ-साथ नायक तथा उसके शत्रुओ मे भयावह एव प्रबल सघर्ष कथावस्तु का एक आवश्यक अग है । यह सघर्ष एक सामान्य टकराहट न हो कर नायक का अत्यन्त साहसिक कार्य होता है । सख्या मे बहुत कम होने पर भी अथवा अत्यन्त निर्बल एव विकट परिस्थितियो मे भी नायक अपेक्षाकृत अत्यन्त शक्तिशाली शत्रु से जूझ जाते है और अधिकाशत अपनी सहयोगियो के साथ लडते-लडते युद्ध मे ही समाप्त हो जाते है । इस प्रकार नायक का यह कार्य साहसपूर्ण होता है ।

उदाहरण स्वरूप जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरागना व आदर्श ललना' मे हाडी राजा पर्वतसिह, सिंध के बादशाह अहमदशाह के विरुद्ध अपनी अपेक्षाकृत अल्पसख्यक सेना के साथ जूझ जाते है और सभी शहीद हो जाते हैं ।[4]

1 'जुझार तेजा' महता लज्जाराम शर्मा गगा पुस्तक माला, लखनऊ दूसरा सस्करण सवत 1985 वि०, पृष्ठ 48 'एक ओर डेढ सौ और दूसरी ओर अकेला वह रणभूमि से विमुख होकर भाग जाना और मर जाना उसके लिए समान था । वह ऐसे नाक कटाकर जीने से सिर कटा कर मर जाने को सीधे स्वर्ग चला जाना समझता था । बस, इसलिए उसने अपने प्यारे प्राणो को समर-यज्ञ मे होम देने के दृढ स कल्प के साथ ही लुटेरो को ललकारा ।'

2 ' कनक कुसुम वा मस्तानी', किशोरी लाल गोस्वामी, पेज 7

3 'हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी' पेज 5-6

4 'यद्यपि एक एक राजपूत के सामने दस-दस तलवारे तनी हुई थीं, तथापि वे हिम्मत-पस्त न होकर और भी जोश के साथ लड रहे थे । युद्ध का परिणाम उन्हे पहिले ही मालूम हो गया था । राजपूतो की सख्या अब बहुत ही कम रह गई थी और असख्य मुसलमानो के लिए इन थोडे राजपूतों को तलवार की धार पर रख लेना कोई कठिन काम न था । यह भयानक घमासान युद्ध बहुत थोडी देर मे खतम हो गया और दुर्ग आहोर के वीर और आदर्श राजपूत एक एक करके कट गए । परन्तु मरने के पहले वे बीस हजार मलेच्छो को यमपुरी का रास्ता दिखा गये ।'—वीरागना, पेज 75-76

नायक की साहसिकता एव शत्रुओ से सघर्ष विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के प्लाट के अनिवार्य अश के रूप मे उभरा है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे सघर्ष का स्वरूप साम्प्रदायिकता के घने रंगो द्वारा प्रभावित होकर हिन्दू राजाओ और मुसलमान आक्रमणकर्त्ताओ के बीच भयानक युद्धो के वर्णन के रूप मे उभरा है। हिन्दू राजाओ की सेनाओ की सख्या आक्रमणकारी सेनाओ की सख्या से पर्याप्त कम होने के कारण इस प्रकार का सघर्ष अपना रोमासिक स्वरूप प्राप्त करता है। लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे नायक एव उसके शत्रुओं के बीच सघर्ष एक मुख्य कला-विचार के रूप मे वर्णित किया गया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदय-हारिणी' तथा 'लवगलता' मे बगाल के नवाब सिराजुद्दौला के साथ नायक नरेन्द्र एव लॉर्ड क्लाईव के सघर्ष का चित्रण किया गया है। 'कनक-कुसुम' मे पेशवा बाजीराव तथा निजाम की टकराहट को रोमासपरक रूप में चित्रित किया गया है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ' वा 'ससार सुन्दरी' मे शहजादा जहाँगीर तथा अबुलफजल के बीच नैतिक सघर्ष को उभारा गया है। अबुलफजल जहाँगीर एव मेहरुन्निसा के बीच आता है जिसके परिणामस्वरूप जहाँगीर अबुलफजल को बुन्देलखण्ड के नरसिहदेव द्वारा मरवा डालता है।[1]

इस प्रकार नायक एव खलनायक का प्रबल सघर्ष जहाँ एक ओर रोमाच एव भयानकता का वातावरण उभारने मे सहायक सिद्ध होता है वही दूसरी ओर रोमास के उपकरण के रूप मे ऐतिहासिक रोमासो को अधिक कलात्मक एव मनोरजक बनाता है।

नायक के दैवी कार्य—ऐतिहासिक रोमासो के नायक के कार्य सामान्यत दैवी एव अतिमानवीय होते हैं। कई बार वह अत्यन्त शक्तिशाली शत्रुओ को पराजित करता है। कई बार वह भयावह तिलिस्मो एव अतिदानवीय शासकों का सामना करता है। इस प्रकार वह दुष्कर एव असम्भव कार्य भी पूरे करता है।

लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू रजवाड़ो के राजकुमार अपनी ऐतिहासिक रूप से सीमित सैनिक शक्ति के साथ अत्यन्त शक्तिशाली एव प्रबल मुसलमान शत्रु के साथ भयानक सघर्ष करने की प्रक्रिया मे हिन्दू नायक लगभग दैवी स्तर की शक्ति का प्रदर्शन करते है और सामान्यत युद्ध मे लडते हुए स्वर्गलोक को सिधारते हैं अथवा कई बार विजय प्राप्त करते हैं। उदाहरणत किशोरीलाल गोस्वामी के 'कनक कुसुम' मे पेशवा द्वारा केवल पच्चीस तीस सवारो के साथ दो सहस्त्र मुसलमानी सेना के साथ जूझ पडना।

अन्तत रोमासिक नायक सक्रिय एव साहसिक कार्यो के स्थान पर मनन के कार्यों मे प्रवृत्त हो जाता है। यहाँ वह अद्वितीय योद्धा न होकर योगी, द्रष्टा अथवा

1. 'नूरजहाँ वा ससार सुन्दरी', गगाप्रसाद गुप्त, उपन्यास कार्यालय काशी, 1902, पेज 76-77

भोगी वन जाता है। मध्ययुगो की वैचारिक, सास्कृतिक एव धार्मिक पृष्ठभूमि[1] पर आधारित जीवन-दर्शन के अनुरूप नायक एव उसके दरवार राजसभा,[2] गोष्ठियो तथा रगमहलो[3] के वर्णन द्वारा नायक का वहुपक्षीय व्यक्तित्व उभारा[4] जाता है, जो ऐतिहासिक रोमासो के प्लाट को एक कलात्मक एव साहित्यिक स्वरूप प्रदान करता है।

मिथक—ऐतिहासिक रोमासो के प्लाट मे मिथक अथवा निजधर कथाओ का भी प्रयोग किया जाता है। कई वार यह स्पष्ट रूप से ही ले लिए जाते हैं और कई वार अनायास ही इनका समावेश प्लाट मे हो जाता है। रामायण, महाभारत आदि पुराणो की कथानक रूढियाँ तथा उनसे मिलती-जुलती घटनाएँ प्लाट मे समाविष्ट की जाती हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' मे नायिका लवग का सिराजुद्दौला के व्यक्तियो द्वारा हरण किया जाना, उसे कई दिनो तक सुरक्षित रूप मे अपने महल मे रखना तथा वाद में नायक मदन मोहन द्वारा उसका उद्धार किया जाना रामायण मे सीता हरण के प्रसग से एकदम मिलता-जुलता है। इसी प्रकार 'मल्लिकादेवी' मे भी नायिका का हरण एव उद्धार किया जाता है।

इसी प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे कथावस्तु के अन्यान्य तन्तुओ एव तत्वों के विकास की प्रक्रिया मे मिथको का वहुलता से प्रयोग किया गया है, जो सामान्यत मध्ययुगीन काव्य-ग्रन्थो एव पौराणिक ग्रन्थो से उभरते है।

रोमासो मे स्वप्नो से सादृश्य (Analogy) रखने वाली इच्छाओ, डायनो के दु स्वप्नो, दैत्यो तथा शत्रुओ का वर्णन किया जाता है। ऐतिहासिक रोमासो मे यह तत्त्व लोक-कथाओ तथा परी-कथाओ के माध्यम से आता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे इस प्रकार का भयानक तत्त्व अतिदानवीय मुसलमान शासको के भयानक एव भ्रष्ट व्यवहार तथा हिन्दू कुमारियो को प्राप्त करने के लिए किए गए अन्यान्य अत्याचार तथा उसका सामना करने मे अधिकाश

1 विवेच्य लेखको के धार्मिक विश्वासो के सम्बन्ध मे पिछले अध्याय मे विधिवत् अध्ययन किया जा चुका है।

2 राजसभाओ एव अन्त पुर की गोष्ठियो का अध्ययन चौथे अध्याय मे प्रवृत्तियों के अन्तर्गत किया गया है।

3 विलास एव मधुचर्या का अध्ययन कामुकता एव अश्लीलता शीर्षक के अन्तर्गत किया जाएगा।

4 प्राचीन एव मध्ययुगो मे जवकि कवीलो के स्थान पर एक केन्द्रीय सत्ता अथवा रजवाडो का उदय हुआ, तो केवल राजा (अथवा नायक) ही एकमात्र व्यक्ति था जो राजनैतिक निकाय को गति प्रदान करता था। मानवीय जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों मे शासक की इस महत्ता के कारण ही 'दरवारी सस्कृति' के युगो मे पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे वह इतना महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास दोनो मे ही नायक समस्त प्लाट को आच्छादित किए रहता है।

हिन्दू एवं राजपूत राजाओं का अपनी जान पर खेल जाना और सामान्यतः सम्पूर्ण विनाश को प्राप्त होना आदि महत्त्वपूर्ण रूप से ऐतिहासिक एवं रोमानी प्रवृत्तियों का कलात्मक सम्मिलन करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

खलनायकों की क्रूरता, उनका हिन्दू धर्म एवं जाति के प्रति [illegible] व्यवहार तथा इसके प्रतिक्रियास्वरूप अपेक्षाकृत निर्बल तथा संख्या में कम हिन्दू राजाओं का उनका सामना करना तथा अपने अस्तित्व की बाजी लगाना [illegible] सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में चित्रित किया गया है।

(II) ऐतिहासिक रोमांसों में रोमांटिकता

ऐतिहासिक रोमांसों में पात्रों एवं घटनाओं की ऐतिहासिकता का प्रश्न महत्त्वपूर्ण नहीं होता। रोमांटिकता अथवा रोमांसवाद की इतिहास धारणा के अनुसार व्यक्ति की स्वतन्त्र इच्छा तथा घटनाप्रवाह की निर्णायक शक्ति के रूप में उसकी क्रियाशीलता अधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

अतीत के किसी युग (अतीत का यह युग विशिष्ट नहीं भी हो सकता) के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में से गुजरते समय पात्रों की मनोकामनाएँ, इच्छाएँ, भावनाएँ एवं भावावेग उनके कार्यों एवं घटनाओं के स्वरूप को प्रभावित करते हैं। यह रोमांटिक प्रवृत्ति 'अन्तर्मुखी, भावाकुल तथा कल्पनाशील मन का सहज [illegible] होता है'। काव्य के अतिरिक्त यह राजनीति, धार्मिक एवं [illegible] जीवन [illegible] सभी क्षेत्रों में नैसर्गिक रूप से उभरती है। बाह्य जगत की अनेकरूपता [illegible] रोमांटिक [illegible] की अभिव्यक्ति के क्षेत्रों की भी कोई सीमा नहीं है।[1]

अन्तर्निहित वेग और अदम्य प्रेरणा [illegible] [illegible] रोमांटिक प्रवृत्ति एक क्षेत्र में कुंठित होने पर किसी न किसी दूसरे क्षेत्र में अपनी अभिव्यक्ति का मार्ग खोज लेती है।[2] मानव के [illegible] अस्तित्व [illegible] [illegible] रोमांटिक प्रवृत्ति सार्वयुगीन एवं सार्वभौमिक है [illegible]

रोमाटिक नायक आदर्श प्रेमी—रोमाटिक नायक सामान्यत आदर्शवादी प्रेमी होते हैं। वे नायिका से शारीरिक प्रेम के स्थान पर भावात्मक प्रेम करते हैं। वे सौन्दर्य एव प्रकृति के पुजारी होते हैं।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू राजकुमार अथवा राजा इसी प्रकार के आदर्श प्रेमी के रूप मे चित्रित किए गए है। कुछ मुसलमान नायक भी आदर्श रूप मे चित्रित किए गए हैं जबकि अन्य पाशविक एव अश्लीलता पूर्ण कृत्य करते हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदय हारिणी,' 'लवगलता' तथा 'मल्लिकादेवी' के नायक सामान्यत आदर्श रोमास-परक प्रेमी के रूप मे भावात्मक स्तर पर प्रेमिका के साथ प्रेम करते हैं। 'हृदय हारिणी' का नायक नरेन्द्र नायिका कुसुम के सम्पर्क मे बाज़ार मे फूल बेचते समय आता है और उसी समय नायिका पर आसक्त हो जाता है। इसी प्रकार 'लवगलता' का नायक मदनमोहन अन्त पुर के उद्यान मे लवग के हार को पाकर अपने विरह का वर्णन सस्कृत की शास्त्रीय पद्धति के माध्यम से करता है।[1] कनक 'कुसुम वा मस्तानी' मे पेशवा द्वारा कनक को अपनी पत्नी के रूप मे स्वीकार करना उनके आदर्श रोमाटिक नायक होने का प्रमाण है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'कुँवर सिंह सेनापति' तथा 'वीर जयमल वा कृष्णकान्ता' मे कुँवरसिंह तथा जयमल दोनो रोमाटिक नायको के रूप मे चित्रित किए गए है।

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरागना' मे मजुला तथा मधुर को आदर्श प्रेमी एव प्रेमिका के रूप मे चित्रित किया गया है।[2]

कार्त्तिक प्रसाद खत्री के 'जया' मे युवराज वीरसिंह जया का मरफगज खाँ से उद्धार करता है।[3] वह एक रोमाटिक नायक के रूप मे उभरा है।

जयराम लाल रस्तोगी के 'ताज महल या फतहपुरी बेगम' तथा गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ वा समार सुन्दरी' में जहाँगीर तथा शाहजादा खुरम को नितान्त रोमाटिक रूप मे चित्रित किया गया है।

इस प्रकार लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के नायक रोमाटिक एव आदर्श रूप मे चित्रित किए गए हैं। कही-कही नायको के स्वरूप कामुकतापूर्ण एव सेक्सपरक भी हो जाता है, परन्तु उनकी मूल एव आधारभूत चेतना एव चारित्रिक विशिष्टता रोमासपरक ही रहती है।

प्रेम, शृगार एव मधुचर्या—ऐतिहासिक रोमासो मे प्रेम, शृगार और मधुचर्या तीनो का समावेश किया जाता है, परन्तु इन पर पवित्रता, नैतिकता और भावावेश का आवरण होता है, मौलिक मानवीय भावनाओ एव आकांक्षाओ के

1 'लवगलता', पेज 30-33
2 'वीर वीरागना वा आदर्श ललना', जयरामदास गुप्त, पेज 34-37
3 ''जया'', पेज 30-33

अनुरूप इनका चित्रण किया जाता है। कई बार मुसलमान पात्रों की स्थिति में नैतिकता का उल्लंघन भी किया गया है।[1]

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में प्रेम, शृंगार और मधुचर्या का चित्रण रोमानिक दृष्टिकोण से रूपायित होता है।

नायक नायिका : आदर्शों के लिए बलिदान—रोमांसिक नायक एवं नायिका अपने व्यक्तिगत एवं नैतिक आदर्शों के लिए कई बार त्रासदी (Tragedy) का भी सामना करते हैं। वे अपने दुर्बल क्षणों की अभिव्यक्ति कर सकते हैं। इसके माध्यम से वे अपनी वास्तविक वस्तु-स्थिति एवं दृश्य-स्थिति की विवेचना रोमांसिक पद्धति से करते हैं। रोमांस में नायक सामान्यतः अति मानवीय स्तर के होते हैं।

उदाहरणतः जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरांगना' की नायिका कनकलता अपने सतीत्व की रक्षा करने के लिए अन्त में अहमदशाह की कटार से हत्या कर स्वयं अपनी सखी के साथ बुर्ज से झील में कूद जाती है।[2]

पं० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवंगलता' में नायिका का सिराजुद्दौला द्वारा अपहरण किए जाने के पश्चात् वह मुक्ति न मिलने की स्थिति में आत्महत्या की परिकल्पना करती है।[3]

इस प्रकार लगभग सभी विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में नायक, नायिका एवं स्वामिभक्त सेवक अपने आदर्शों के लिए अन्यान्य बलिदान करते हैं।

रोमांटिक प्रवृत्ति सामान्यतः अन्तर्मुखी होती है। प्रवृत्ति के इस अन्तर्मुखी स्वभाव के कारण नायक एवं नायिका का बाह्य जगत् के प्रति दृष्टिकोण भावावेग-मय एवं रोमांसपरक होता है। इसी कारण कई बार वे अपने दुर्बल क्षणों की मार्मिक अभिव्यक्ति करते हैं।

उदाहरणतः जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरांगना' में पर्वतसिंह की पुत्री कनकलता तथा उसका भाई सत्येन्द्र अहमदशाह की असीम शक्ति तथा अपनी दुर्बलता पर भावनापूर्ण ढंग से विचार करते हैं। कनकलता स्वयं को मरवा कर राजपूतों की समस्या के समाधान को कहती है।[4]

सामान्यतः नायिकाएँ ही इस प्रकार की अन्तर्मुखी दृष्टि से परिचालित होकर बलिदान करने को तत्पर होती हैं। विवेच्य-ऐतिहासिक रोमांसों में इस प्रकार की अन्तर्मुखता एवं बलिदानों का कलात्मक चित्रण किया गया है।

1 विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में प्रेम, शृंगार एवं मधुचर्या का अध्ययन कामुकता एवं अश्लीलता शीर्षकों के अन्तर्गत किया जाएगा।
2 'वीर वीरांगना या आदर्श ललना', जयरामदास गुप्त, पृष्ठ 94
3. 'लवंगलता या आदर्श बाला,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 56 'नाथ! तुम्हारे चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम है। बस अब मुझे कुछ न चाहिए। पहले तो मैं जहां तक हो सकेगा, यहाँ से भागने का प्रयत्न करूँगी, पर यदि ऐसा न हो सका तो कटारी ही मेरे धर्म बचाने में सहायक होगी।'
4 'वीर वीरांगना,' पृष्ठ 24-25

कवित्वपूर्ण वातावरण—कवित्वपूर्ण वातावरण, गजलें, गीत, सगीत तथा महफिले तथा नाच गाने विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे रोमासिक तत्वो के रूप के उभरे हैं। सामान्यत. सभी ऐतिहासिक रोमासो का वातावरण कवित्वपूर्ण है। नाच, गाने तथा महफिलो की इन कथारूपो मे भरमार है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लाल कुवर' मे 'ईद की मजलिस' नामक परिच्छेद मे मुलतान के सूबेदार जहाँदार के दरबार की महफिल का विस्तृत चित्रण किया गया है। निहायत हसीन और कमसिन नाजनीने और शराब इस महफिल की गजलो को और भी रगीन बना देती हैं।[1]

जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरागना' मे झील की बहार परिच्छेद मे सिंध के नवाब अहमदशाह ही 'सिल्वर लेक 'मे एक बजरे मे लगी महफिल और उसमें गाई गई कव्वालियाँ कामुकतापूर्ण एव अश्लील मधुचर्या को पुन प्रस्तुत करती हैं।[2]

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहा वा ममार सुन्दरी' मे शेरो तथा गजलो की भरमार है। वातावरण कामुकतापूर्ण तथा लगभग अश्लील है। जहाँगीर वा मिर्जा महमूद द्वारा 'गम गलत' करने के लिए नाज बेगम तवायफ 'को बुलवाना और उसमे इश्किया गजल' की फरमाइश[3] करना इसी का उदाहरण है।

कवित्वपूर्ण वातावरण का निर्माण लगभग सभी ऐतिहासिक रोमासो मे किया गया है, इसके लिए स्थान-स्थान पर गजलो, शेरो, दोहे एव कवित्तवो आदि का भी प्रचुरता मे प्रयोग किया गया है। वास्तव मे रोमाटिक वातावरण के निर्माण के लिए इस प्रकार की कवित्वपूर्ण परिस्थितियो की उद्‌भावना ऐतिहासिक रोमासो की कलात्मकता की अभिवृद्धि करती हैं।

(III) ऐतिहासिक रोमासो मे अश्लीलता

ऐतिहासिक रोमामो मे पात्रो एव घटनाओ का वर्णन एव चित्रण करने मे अश्लीलता का तत्व उभर कर आता है

अश्लीलता मे नग्नता, चुबन तथा भोग का खुला वर्णन किया जाता है। कई बार इन तीनो का वर्णन गन्दे एव भोडे ढग से किया जाता है। इनके चित्रण मे ईमानदारी तथा कलात्मकता का अभाव होता है। इसके साथ ही इसके चित्रण मे कोमलता तथा भावना नही होती। इस प्रकार यह अनियत्रित रूप से चित्रित किए जाते हैं। उदाहरणत बार-बार चुबन तथा अलिगन का वर्णन करना। यदि चुबन एव भोग दायित्वपूर्ण सबध के फलस्वरूप न हो तो भी वह अश्लील हो जाते हैं।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे अश्लीलता का चित्रण सामान्यत मुसलमान पात्रो के माध्यम मे किया गया है।

1 प० किशोरीलाल गोस्वामी, 'लालकुवर वा शाही रग महल', इलाहाबाद सन्1913पृष्ठ3-13
2 'वीर वीरागना वा आदर्श ललना', पृष्ठ 8-11
3 'नूरजहाँ', गगाप्रसाद गुप्त, उपन्यास कार्यालय काशी, 1902,,पृष्ठ 12-13

नग्नता एव खुला संभोग—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे नग्नता एव खुले सभोग का स्वरूप कुछ परिवर्तित रूप मे उभरा है। मुसलमान पात्रो की स्थिति मे सामान्यत नायिका के प्रति उनका आकर्षण ईमानदारी, कोमलता तथा भावना रहित होता है। मुसलमान शासक स्वतन्त्र और दायित्वपूर्ण सबध स्थापित करने के स्थान पर यौनपरक रूप मे नायिका के प्रति आसक्त होते हैं तथा इसी प्रकार के आकर्षण के वशीभूत होकर उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं।

नग्नता एव यौन की इस पृष्ठभूमि मे 'श्रवण' एव 'चित्रदर्शन' के माध्यम मे नायिका पर आसक्त होने की कथानक रूढि का विवेच्य रोमासो मे प्रयोग किया गया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता वा आदर्शबाला' मे बगाल के नवाब सिराजुद्दौला को नायिका लवगलता का चित्र सैय्यद की सदूकची से प्राप्त होता है। "चित्र" नामक परिच्छेद मे—"सिराजुद्दौला के तकिए सहारे से लेटा हुआ मोमी शमादान की रोशनी मे एक तस्वीर देख रहा है। वह रह-रह कर हुक्का भी पीता जा रहा है और कभी-कभी ठडी सास भी लेता जाता है"[1]

इसके बाद वह अपने मुसाहब नजीर खाँ से लवगलता को प्राप्त करने के उपायो पर विचार-विमर्श करता है, जो लगभग अश्लीलतापूर्ण हैं (पृष्ठ 26-29)। 'तस्वीर वाली'नामक परिच्छेद मे एक बुढिया लगवलता को बगाल के अन्यान्य नवाबो की तस्वीरें दिखाती है (पृष्ठ 40)। यह बुढिया वास्तव मे सिराजुद्दौला की कुटनी होती है। इसी प्रकार सिराजुद्दौला का लवगलता को भेजा गया पत्र भी अश्लीलतापूर्ण है—"प्यारी, लवगलता जब मे मैंने तेरी तस्वीर देखी है, मैं हजार जान मे तुझ पर फिदा हो गया हूँ। अब अगर तू मेरी जान बचाना चाहती है, तो जल्द मुझे अपना दीदार दिखा, वरना मैं तेरी जुदाई मे मर मिटूगा और मेरा खून तेरा दामनगीर होगा।'[2] "कुटिल कर्म" नामक परिच्छेद मे लगवलता का नवाब के व्यक्तियो द्वारा हरण कर लिया जाता है(पृष्ठ 46-48)। यह सब अश्लीलतापूर्ण है।

"लाल कुवर वा शाही रगमहल" नामक ऐतिहासिक रोमासो मे गोस्वामी जी ने जहादार के अश्लील व्यवहार का वर्णन किया है।[3] 'लाल कुवर" नामक एक वेश्या के प्रति नितान्त प्रेम तथा दरबार मे उसका चुबन अश्लीलतापूर्ण है,—'यह सुनकर लाल कुवर ने शाहजादे के मुँह की ओर अपना दाहिना कान किया और शाहजादे ने बेसाख्ता एक बोसा ले लिया।" शहजादे के विशेष खोजे मीरन का कार्य

1 'लवगलता वा आदर्श बाला', पृष्ठ 25-26

2 वही० पृष्ठ 45

3 "लालकुवर वा शाही रगमहल किशोरीलाल गोस्वामी इलाहाबाद सन् 1913"सब से बढ कर उसकी मेहरबानी रडियो पर थी और वह उन रडियों के हर एक नाज, नखरे भाव, हरकत और इशारेबाजी पर लहालोट होता हुआ उन्हें अमर ने तरोबार फूलों के गदो की मार से परेशान कर देता था।"

शाहजादे को नित्य नई-नई परियाँ उपलब्ध करना था । वह जहादार को लाल कुवर से भी बढिया नाजनी की सूचना देते हुए कहता है,—'अपने जासूसो से, जो इसी खास काम के लिए मुकर्रर हैं और सरकार से भरपूर इनाम पाते रहते हैं, मैंने आज तीसरे पहर यह खबर पाई ।"[1]

शाहजादा अपनी ब्याही हुई बेगमो को चुडैले कहता है (पृष्ठ 25) । 'ईद की तवायफ' नामक परिच्छेद मे रडी लाल कुवर तथा खोजा उसमान जो वास्तव मे मर्द होता है का व्यवहार अश्लीलतापूर्ण है । "लाल कुवर, (उससे भरजोर लपट और उसके गालो को चूमकर) "वल्लाह तुम तो लासानी जौहर रखते हो ।"

उसमान—"अजी, बो[1] मेरा असली जौहर तो तुम तव जानोगी, जब मेरी बगल गरम करोगी, लेकिन, अफसोस तुम्हारे, कुँआरपन या नथनी पर फतह पाना शहजादे ही की किस्मत मे वदा[2] है ।" कुँआरपन के बारे मे लालकुवर का कथन भी अश्लीलतापूर्ण है—"क्या रडियो की नौजवान छोकरियो का भी कुँआरपन कही जियादह दिन तक कायम रह सकता है ?"—उसमान ने भी भरजोर उसे सीने से लगा कर उसके कुदन से दमकते हुए गालो को चूम लिया ।[3] लाल कुवर अथवा उसमान का यह कृत्य अश्लीलतापूर्ण है ।

इसी रोमास में बेगमो की समलैंगिक यौन क्रियाओ का भी वर्णन किया गया है । जहाँदार की 'रगीली बेगम हमीदा' 'ईद की शब' को शराब मे धुत होकर गाने वालियो से 'कडकती हुई गजलें' सुन कर जौहरा नामक लौडी के साथ लपट कर सो जाना अश्लीलतापूर्ण है ।[4] रोमास के अन्त मे गोस्वामी जी ने अन्यान्य स्त्रियो के बदचलन हो जाने पर टिप्पणी की है, उनके मतानुसार—'बडे-बडे अमीरो के घराने की वे नौजवान औरतें, जिनके या तो शौहर नही हैं, यानी कुँआरी हैं या वे जो बेवा हैं, वे औरते अक्सर बदचलन हो जाती है और ऐसे ही गदे तरीके मे अपने दिल की हवस मिटाया करती है ।'[5]

'लखनऊ की कब्र व शाही महलसरा' मे अश्लीलतापूर्ण चित्रणो की भरमार है । महल की बेगमो का गैर-पुरुषो के साथ यौन-सम्बन्ध तथा अपनी दिली आरजू

1 'लालकुवर या शाही रग महल', किशोरीलाल गोस्वामी इलाहाबाद सन् 1913 पृष्ठ 21

2 लालकुवर, पृष्ठ 52

3 वही, पृष्ठ 53

4, लालकुँवर', पृष्ठ 85 "फिर तो उन दोनो ने एक दूसरे का खूब ही शराब पिलाई और जब शराब के नशे मे हमीदा मस्त हो गई तो जोहरा को भरजोर अपने सीने मे लपटाकर पलग पर लेट गई ।"

5 वही, पृष्ठ 98

'पूरी होने के पश्चात् उन्हें मार डालना नितांत अश्लीलतापूर्ण एवं भौंडे ढंग से चित्रित किया गया है। इस प्रकार का यौन-व्यवहार नितांत अश्लीलतापूर्ण है—'वह परिजमाल भी आज मेरे बगल मे बैठ गई और बडी मुहब्बत से मेरे गले मे बांह डाल कर उसने मेरे गालो का बोसा ले लिया। अल्लाह आलम। उस वक्त मैं सोता था या जागा, इसकी मुझे कुछ भी खबर नहीं और मस्ती के आलम में आकर मैंने भी उसे अपने सीने से लगा कर बेतहाशा बोसे लेने शुरू कर दिए। इसके अलावा जब मैंने कुछ और हाथ पैर मारने शुरू किए तो वह झिझक कर पलग से नीचे उतर गई और पास ही रखी हुई पीढी पर बैठ, फिर इस वक्त मैं तुमसे मिलूंगी, उस वक्त तुम अपने दिल के बिलकुल अरमान निकाल लेना।[1]'

बादशाह नासीरुद्दीन हैदर की अनुपस्थिति मे बेगम का यूसफ के साथ ठहरना और शराब आदि पीना अश्लीलतापूर्ण है। 'बादशाह सलामत तो शिकार के लिए कई दिनो से लखनऊ से बाहर गए हुए हैं, इसलिए मैं आसानी से यहाँ ठहर सकती हूँ। और अगर कोई ऐसी ही जरूरत आएगी तो मेरी लौंडी फौरन मुझे खबर देगी।'[2] इसी भांति मे यौन सम्बन्धों का सकेतात्मक चित्रण किया गया है, जो अश्लीलतापूर्ण है (पृष्ठ 46)। अश्लील चित्रो (पृष्ठ 59) द्वारा भी इसी प्रकार के वातावरण की उत्पत्ति की गई है।

अश्लीलता की इस धारणा मे सेक्स तथा अपराधपूर्ण कार्यों का चित्रण रोमांचक ढंग से किया गया है। यूसफ जब एक बेगम के रामहल मे कैद होता है तो 'चहार दरवेश' नामक किताब मे खून से लिखे हुए एक पत्र को पाता है जिसमे बादशाह नासीरुद्दीन हैदर का एक मुसाहब अपनी दास्तान लिखता है, जब बादशाह के हरम मे देहली की रहने वाली रण्डी मुश्तरी आई तो शहर के खूबसूरत नौजवान गायब होने लगे। मैंने इस राज का पता लगाने की ठानी।' एक रोज रात के वक्त मैं दर्याए गोमती के किनारे टहल रहा था कि इतने ही मे एक नवीस बुड्ढी मेरे पास आई और बोली 'अगर जिन्दगी का मजा चखना है, तो मेरे साथ आ।'[3] 'मैंने एक आलीशान कमरे के अन्दर अपने रूबरू एक निहायत हसीन नाजनीं को मुहब्बत की नजरों से घूरते और मुस्कराते देखा दर असल वह देहली वाली मुश्तरी रण्डी के अलावा और कोई न थी।

आखिर एक हफ्ते तक मैंने उस परिजमाल के साथ मजे उड़ाए और उसने अपने कमरे के करीब ही एक [illegible] निकम्मी कोठरी मे मुझे छिपा रखा।'[4]

बाबू जयरामदास गुप्त रस्तोगी के ताजमहल या फतहपुरी बेगम मे नादिरा

1. लखनऊ की कब्र व शाही महलसरा' दूसरा भाग पृष्ठ 42
2. 'लखनऊ की कबर', दूसरा भाग, पृष्ठ 69
3. वही, पहला भाग, पृष्ठ 33
4. वही पृष्ठ 33

ताज महल की वहन जहाँनआरा का कथन अश्लीलतापूर्ण है,—'अल्लाह। आज तो फलो से लदी हुई हो, हुस्न तरक्की पर है (पृष्ठ 36)।'

बाबू कार्तिकप्रसाद के 'जया' नामक ऐतिहासिक रोमास मे अलाउद्दीन के सिपहसालार सरफराज खाँ द्वारा जया का दो बार हरण किया जाना अश्लीलता की इसी धारणा के अनुकूल चित्रित किया गया है।[1] अलाउद्दीन के मरने की खबर जब सरफराज खाँ को मिलती है, तो वह स्वय ही जया को हथियाने का विचार करने लगा—'वह टकटकी लगाए जया की ओर निहार रहा था। उस अवस्था मे कामदेव ने उसे ऐसा विह्वल कर दिया कि एक साथ ही उसकी बुद्धि जाती रही और उन्मत्त सा हो वह खडा हुआ।'[2]

जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरागना' मे सिंध के नवाब अहमद की 'सिलवर लेक' मे महफिल तथा उसमे कव्वालो का गाना और किसी सुन्दरी की प्रशसा करना अश्लीलता पूर्ण है। अहमद की स्थिति उल्लेखनीय है,— यह तमाम शेर-ऐसे चुटीले, नुकीले और ऐसे लहजों मे गाए जाते थे कि बादशाह बेकरार हो गया। ऐसे जान पडने लगा कि उसका दिल अब आपे से बाहर हुआ चाहता है।'[3] अहमद खाँ के दरबार की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया गया है—'उसका दरबार इस समय विषय और विलास की चीजो से खचाखच भरा हुआ था। कितने ही गोइन्दे सुन्दरियो का पता लगाने के लिए छुटे हुए थे और कितने ही कव्वाल उनकी तारीफें सुनाने के लिए नौकर थे।'[4]

जब अहमद का दूत अपना सा मुँह लेकर लौट जाता है, तो निजामुद्दौला उसे समझाने का प्रयत्न करता है कि विजय प्राप्त करने के पश्चात् भी राजपूतनियाँ जल कर मर जाएँगी। इस पर अहमदशाह कहता है—'राजपूतनियो मे यह एक आले दरजे की गजब ढाने वाली हिम्मत है, मगर निजामुद्दौला चाहे कुछ भी हो जाए। पर मैं अपने जीते दम तक उसे छोडने वाला नही।[5] दायित्वपूर्ण सम्बन्धो तथा नैतिक ईमानदारी को ताक मे रख कर अहमदशाह का यह कथन नितान्त अश्लीलतापूर्ण है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ' मे जहाँगीर का मेहरुन्निसा को आलिंगन करने के लिए कहना अश्लीलतापूर्ण है—'मेहरुन्निसा हुजूर, फिर आप कहते क्या है ?

जहाँगीर। बस यही के गले से लग जा।
मेहरुन्निसा। यह तो हर्गिज न होगा।
जान जाए, पर आबरू न जाए।
जहाँगीर। देखो, आशिक को न तरसाओ।[6]
इस प्रकार के चित्रण अश्लीलतापूर्ण बन पडे है।

1 'जया' कार्तिकप्रसाद खत्री, पृष्ठ 20 तथा 84
2 वही, पृष्ठ 112
3 'वीर वीरागना, वा आदर्श ललना', पृष्ठ 10
4 वही, पृष्ठ 13
5 'वीर वीरागना, वा आदर्श ललना,' पृष्ठ 29-30
6 'नूरजहाँ', गगाप्रसाद गुप्त, उपन्यास कार्यालय काशी, 1902, पृष्ठ 3

अनैतिकता—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो में अनैतिकता का अध्ययन अच्छे-बुरे के मान दण्ड पर अथवा उचित अनुचित के मान दण्ड पर किया जा सकता है। सामान्यतः मुसलमान पात्रो का हिन्दू कन्याओ के प्रति आकर्षण तथा व्यवहार अनैतिक स्तर पर उभारा गया है। हिन्दू राजकुमारिया एव राजकन्याएँ या तो विवाहित होती हैं या उनकी सगाई किसी हिन्दू राजकुमार अथवा राजा से हो चुकी होती है अथवा वे वाग्दत्ता होती हैं। इस प्रकार की स्त्रियो के प्रति मुसलमान शासको का यौनाचारित आकर्षण अनैतिक है। मध्ययुगीन हिन्दू धर्म की धारणाओं एव मान्यताओ द्वारा परिचालित होकर विवेच्य रोमासकारो ने मुसलमान शासको की हिन्दू कन्याओ के प्रति इस धारणा को नितान्त अनैतिक एव अश्लील रूप मे प्रस्तुत किया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'हृदय हारिणी' एव 'लवगलता' मे सिराजुद्दौला द्वारा लवगलता का हरण (पृष्ठ 46-48) अनैतिकता-पूर्ण है जबकि पहले ही उसकी सगनी मदनमोहन से हो चुकी थी। 'लाल कुँवर' मे लाल कुँवर नामक वेश्या का ईद की रात को उस्मान नामक खोजे के साथ बार-बार आलिंगन तथा चुबन (पृष्ठ 51-59) नितान्त अनैतिकता-पूर्ण है। जबकि वह पहले ही शाहजादे जहाँदार के साथ रात्रि बिताने का वचन दे चुकी थी।

बाबू कार्तिकप्रसाद की 'जया' की नायिका जया वाग्दत्ता हो चुकी थी फिर भी अलाउद्दीन का सिपहसालार सरफराज खाँ उसका हरण करता है जो अनैतिक है। जया की सखी किशोरी कहती है,—'हमारी राजकुमारी वाग्दत्ता हो चुकी है। हमारे यहाँ जो कन्या वाक्‌दत्ता हो जाती है, वह ब्याही तुल्य ही मानी जाती है।[1] इस पर भी जब सरफराज नही मानता तो किशोरी कहती है,—'बलात् एक कुलवती अबला के कुल धर्म को नष्ट करने मे बादशाह उद्यत है, ऐसे स्वामी का साथ देना, या उसे कुपथ मे गिराने के लिए सहायता करना क्या विवेकी सेवक को उचित है ?'[2]

अचारित्रिकता—भारतीय मध्ययुगो मे चरित्र की कई परस्पर विरोधी धारणाएँ थी। हिन्दू एव मुस्लिम धार्मिक विश्वासो एव कार्य-कलापो मे परस्पर विपरीत चारित्रिक विशेषताओ का सम्पादन किया गया है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो ने सामान्यतः मुसलमान पात्रो के माध्यम से अचारित्रिकता को उभारा है। मुसमान शासको द्वारा लूटमार किया जाना, निरीह कन्याओ को कुटनियो के माध्यम से शासको को उपलब्ध करना, मुसलमान शाहजादो एव राजाओ का व्यभिचार, यौनाचार एव वेश्यावृत्ति आदि का वर्णन उनकी अचारित्रिकता एव अश्लीलता को उभारने के लिए किया गया है। वेश्याएँ

1 'जया' कार्तिकप्रसाद, पृष्ठ 18
2 वही, पृष्ठ 20

पूर्व हिन्दी उपन्यासो मे जिस सेक्स तथा अपराध की धारणाओ का प्राधान्य था। उसी के प्रभाव स्वरूप विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे मुसलमान पात्रो के माध्यम से अचारित्रिकता का वर्णन किया गया है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ' मे मेहरुन्निसा की अली-कुली खाँ से शादी हो जाने के पश्चात् भी जहाँगीर द्वारा गुलबदन नामक कुटनी को बगाल भेजना, कुटनी द्वारा मेहरुन्निसा को अली-कुली को तलाक देने की सलाह देना परन्तु असफल होकर (पृष्ठ 61) लौट आना आदि चरित्रहीनता के उदाहरण है।

जहाँगीर तथा मेहरुन्निसा के बीच आने के कारण जहाँगीर अबुलफजल के प्राणो का प्यासा बन जाता है। वह बुन्देलखण्ड के नरसिंह को अबुलफजल को कतल करने का काम सौंपता है (पृष्ठ 68)। 'तीन खून' नामक बयान मे जहाँगीर द्वारा, वादशाह बनने के पश्चात् मेहरुन्निसा को प्राप्त करने के लिए अपनी शक्ति एव सत्ता का दुरुपयोग करते हुए चित्रित किया गया है। इस प्रकार तीन व्यक्तियो की निर्मम हत्या करने के पश्चात् जहाँगीर मेहरुन्निसा को प्राप्त करता है, जो चरित्र-हीनता का परिचायक है।

जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरागना' मे सिन्ध का नवाव अहमदशाह कनक-लता को प्राप्त करने के लिए भयानक युद्ध करता है जिसमे सहस्रो व्यक्तियो की वलि चढा दी जाती है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता मे' सैयद अहमद जिन्हे नवाव की वडी वहिन नगीना वेगम व्याही गई है का व्यवहार एव कथन नितात अचारित्रिक है। सैयद ने दिल्ली की एक रण्डी फैजी को नवाव को उपलब्ध किया था। इस सम्बन्ध मे उसका सेठ अमीचन्द का कथन उल्लेखनीय है—"उस (फैजी रण्डी) से मेरी पहले की ही आश्नाई थी, चुनाचें सिराजुद्दौला के हरम मे दाखिल होने पर भी मैं चुपके-चुपके उसके पास जाया करता था। एक दिन रात के वक्त शराव के नशे मे गर्क हो, हम दोनो एक पलग पर सोए हुए थे कि सिराजुद्दौला वही पहुँच गया। आखिर, नींद, खुलते ही मैं तो अपनी जान लेकर वहाँ से भागा, पर उस रण्डी को उस जालिम ने जीती ही ईण्टो की दीवार मे चुनवा दिया। फिर तो वह मेरी जान लेने के फिक्र मे लगा।'[1] इसी प्रकार नवाव सिराजुद्दौला द्वारा लवगलता का हरण करवाया जाना तथा वलपूर्वक उससे शादी करने का प्रयत्न करना अचारित्रिक एव अश्लील है।

गोस्वामी जी के 'लाल कुँवर' मे शाहजादे जहाँदार की रण्डियो के प्रति असीम अनुकपा (पृष्ठ 4-12) तथा अपनी व्याही हुई वेगमो को चुड़ैलें कहना (पृष्ठ 25) भी अश्लील एव अचारित्रिक है।

'लखनऊ की कब्र' मे शाही महल की वेगमो का यूसुफ तथा अन्य पुरुषो ने

1 'लवगलता' पृष्ठ 4-5

यौन सम्बन्ध तथा कार्य पूरा होने पर उन्हें मार डालना चरित्रहीनता की पराकाष्ठा है। इसी प्रकार बादशाह नसीरुद्दीन हैदर की रण्डियों पर असीम अनुकम्पा भी अश्लीलता के स्तर पर उभारी गई है।

कार्तिकप्रसाद के 'जया' में अलाउद्दीन का जया को प्राप्त करने के लिए सेना भेजना तथा धोखे से उसके पिता रत्नसिंह को कैद करना (45-47) उसकी चरित्रहीनता का परिचायक है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में अश्लीलतापूर्ण वर्णनों एवं चित्रणों के माध्यम से पाठकों की सेक्स भावना को उभारा गया है। खुल कर सेक्स का वर्णन करने के पश्चात् नैतिक उपदेश दिया गया है।

निर्वसनता एवं नग्नता—विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में निर्वसनता एवं नग्नता का चित्रण आंशिक रूप से किया गया है। निर्वसनता की धारणा बर्बरता से जुड़ी हुई है। सामान्यतः मुग़ल लौंडियों एवं शाहज़ादियों के माध्यम से निर्वसनता की धारणा का चित्रण किया गया है जबकि नग्नता अथवा अंगों का वर्णन हिंदू राजकुमारों के सौन्दर्य के चित्रण के माध्यम से किया गया है। इस स्थिति में संतुलन एवं आत्म-विश्वास होता है। वस्त्रहीनता एवं अंगों का वर्णन प्यास, लालच, एवं वितृष्णा की भावनाओं की उत्पत्ति करता है। ये दोनों अश्लीलता के मुख्य तत्वों के रूप में विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में उभरे हैं।

निर्वसनता की धारणा विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसों में कतिपय परिवर्तित रूप में उभरी है। इनमें लौंडियों, शाहज़ादियों एवं रंडियों के अश्लीलतापूर्ण वस्त्राभूषणों एवं हावभावों का वर्णन किया गया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लाल कुंवर वा शाही रंग महल' में इसका वर्णन उल्लेखनीय है।—"उन सोलहों रंडियों में एक रण्डी, जो कमसिनी, खूबसूरती, नज़ाकत, नमकीनी, वज़हदारी, नाज़ो नखरे और तड़क भड़क में अपनी मण्डली में सभी से चढ़ी बढ़ी थी, बड़ी आनबान से वह ठुमरी गा रही थी ... इस ठुमरी को उस आफ़त की परकाला ने ऐसे नाज़ों अंदाज़ से गाया और ऐसे बेढब भाव बताए कि शाहज़ादे का दिल बाग़ बाग़ हो गया।"[1]

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त के "नवाबी परिस्तान व वाजिदअली शाह" में भी इसी प्रकार निर्वसनता की धारणा का चित्रण किया गया है—"आज शाही कमरा जो अमूल्य वस्तुओं से सजा हुआ था महलातों की आमद से खचाखच भरा हुआ है। सब की सब शाही निगाहों में जंचने के लिए खूब ही बनी हुई हैं। उनकी नज़ाकत की चाल ढाल मीठी बोलचाल तबियत पर क़यामत ढा रही है।"[2]

1. "लालकुंवर वा शाही रंग महल" पृष्ठ 6
2. नवाबी परिस्तान वा वाजिदअली शाह, दूसरा भाग, पृष्ठ 24

(१४) ऐतिहासिक रोमांसो में कामुकता

कामुकता मनुष्य मात्र की प्राकृतिक एव दार्शनिकतापूर्ण शारीरिक कामना होती है। यह शारीरिक कामना मानवीय भावनाओ एव मनोकामनाओ से प्रभावित होती है। अश्लीलता यौनपरक होती है जबकि कामुकता मे भावुकता का समावेश रहता है। कामुकता मे ईमानदारी और कलात्मकता, कोमलता तथा भावना और स्वतन्त्र एव दायित्वपूर्ण सबध स्थापित करने की इच्छा होती है। जबकि अश्लीलता मे इनका अभाव रहता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे कामुकता हिन्दू पात्रो के माध्यम से उभारी गई है। हिन्दू राजकुमार तथा राजकुमारियो के परस्पर प्रेम सबध तथा क्रिया-कलाप कामुकता की धारणा के अनुरूप हैं। सामान्यत सेक्स की भावना आचार-व्यवहार द्वारा आवेष्ठित नही होनी चाहिए।

कामुकता की धारणा—कामुकता की धारणा के अनुसार सेक्स मानवीय क्रियाओ का सर्वोत्तम रूप है। परन्तु जब इसका शोषण किया जाता है तो शरीर भी घुटन अनुभव करता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे वर्णित भारतीय मध्ययुगो की धारणाओ के अनुरूप परकीया-भाव, क्रीडा तथा लीला का चित्रण किया गया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' के 'हार' नामक परिच्छेद मे दिनाजपुर के बाईस वर्षीय राजकुमार मदनमोहन तथा रगपुर की राजकन्या लवगलता के एक उद्यान मे मिलने का वर्णन कामुकतापूर्ण ढग से किया गया है। अन्त पुर से सटे हुए इस उद्यान मे मदनमोहन उदासीन सा वेष बनाए हुए इधर उधर घूमते है और उन्हे एक हार मिलता है, उसे अपने हृदय से लगा कर वे कहते हैं—'हे मोती के हार ! तू धन्य है कि एक बेर सूई से अपना हिया छिदा कर प्यारी के स्तनो पर लोटा करता है, किन्तु एक मैं अभागा हूँ कि मदन-बाणो से हृदय मे सैकडो छेद कराने पर भी मुझे सपने मे भी प्यारी के दर्शन नही होते।[1]"

मदनमोहन का यह कथन लवगलता सुन लेती है, परन्तु वह मदन का सामना करने मे घबराती है फिर हार ढूँढने का बहाना कर वह मदन का सामना करती है। मदन उससे कहता है—"क्या आप ईश्वर की साक्षी देकर यह कह रही है ? क्या आपने मेरा कुछ भी नही लिया है ?"[2] यह सुन कर लवगलता काप कर गिरने ही लगती है कि मदन उसे थाम लेता है—लवग मदन मोहन के हृदय मे सिर रख कर कापने लगी, उसके सारे शरीर मे पसीने निकलने लगे और कलेजा बडे जोर जोर से धडकने लगा। मदनमोहन ने धीरे धीरे उसे टहलाते हुए लेजा कर उसी माधवकुज के अन्दर स्फटिकशिला पर बैठाया और बोला—"प्यारी ! यह प्रेम

1 'लवगलता वा आदर्श बाला', पृष्ठ 31.
2 'लवगलता वा आदर्श बाला', पृष्ठ 35

शास्त्र है, यहाँ पर तर्क शास्त्र की सत्ता नही चल सकती।"[1] इस प्रकार लवग लता तथा मदनमोहन का परस्पर सबध दायित्वपूर्ण तथा भावनापूर्ण होने के कारण अश्लीलता की कोटि मे नही आता।

गोस्वामी जी के "हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी" मे नायक नरेन्द्र तथा नायिका कुसुम कुमारी का प्रथम दृष्टि जनक प्रेम रोमासिक प्रकृति का होते हुए भी ईमानदारी तथा दायित्व की भावना से परिपूर्ण है। कुसुमकुमारी वा वीरेन्द्र के प्रेमपूर्ण हावभाव, (पृष्ठ 54) वीरेन्द्र द्वारा कुसुम के परीक्षा लेना, कुसुम का उसमे उत्तीर्ण होना (पृष्ठ 57-58) आदि उनके सबधो मे भावना, कोमलता, ईमानदारी तथा दायित्व की भावना को प्रमाणित करते हैं। अन्तत कुसुम वीरेन्द्र के गले मे वरमाला डाल देती है और स्वय को उसके अर्पित कर देती है,—'अब वीरेन्द्र अपने तई न सम्हाल सके और मारे आनन्द के इतने विह्वल हो गए कि उन्होंने झपट कर कुसुम को अपने हृदय से लगा लिया और उसके गालो को चूम कर कहा—'प्यारी' कुसुम! जैसे सर्वस्व दान दे बलि ने भगवान वान जी को सदा के लिए अपना रिनिया बना लिया था, वैसे ही तुम ने भी अपना सर्वस्व देकर मुझे सदैव के लिए अपना बिना दाम का ' "[2] इसी प्रकार उपन्यास के अन्त मे वीरेन्द्र कुसुम को गले से लगा लेते हैं (पृष्ठ 109)।

गोस्वामी जी के 'लालकुवर वा शाही रगमहल,' मे शाहजादे जहाँदार का अपने दरबार मे रडियो के साथ व्यवहार अत्यन्त कामुकतापूर्ण ढग से चित्रित किया गया है (पृष्ठ 6–12)। इसी प्रकार लालकुवर का खोजे उस्मान के साथ व्यवहार अत्यन्त कामुकतापूर्ण है (पृष्ठ 51-54)।

कार्तिकप्रसाद खत्री के 'जया' मे जब अलाउद्दीन का सिपहसालार सरफराज खाँ जया का अपहरण कर ले जा रहा होता है, तो मार्ग मे ही नायक वीरसिंह जया का उद्धार करता है। उस समय के युद्ध के प्रति जया की प्रतिक्रिया का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक ढग से चित्रण किया गया है जबकि वह वीरसिंह की अद्वितीय वीरता के दर्शन करती है। अभी वह वीरसिंह से मिल भी नही पाती कि उसके चचा बलभद्रसिंह उसे लेकर जैसलमेर चले जाते हैं। इस समय जया का अन्तर्द्वन्द्व उल्लेखनीय है—'इस समय यदि मैं उनका न मानती तो आर्य कुल की मर्यादा टूटती थी, क्योंकि जबलो मेरा उनसे परिणय न हो जाए तब लौं मुझे क्या अधिकार है कि मैं उनसे कुछ भी बोलू।"[3]

जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान वा वजिदअलीशाह' नामक ऐतिहासिक रोमान मे परकीया भाव, क्रीडा, मधुचर्या एव लीला आदि कार्य-कलापो का कामुकता

1 वही, पृष्ठ 35–36
2 'हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी,' पृष्ठ 60
3 'जया', पृष्ठ 37.

वर्णन किया गया है। नवाब वाजिद अलीशाह के सबध मे उसके परकीया भाव को उनकी एक बेगम जहाँनारा इस प्रकार स्पष्ट करती है—'तुम क्या जान कर भी अनजान बनती हो, जिसको 682 बेगमे है और इसके अलावे नइयो की ख्वाहिश लगी रहती है, भला वह किस तरह सब की खातिरदारी कर सकता है ? तिस पर उन बावनो के मारे उनके दमको फुरसत ही नही मिलती,'[1] इसी प्रकार की स्थिति महल की बेगमो की भी थी। जहाँनारा शमशेर को प्राप्त करने के लिए अपनी लौण्डी प्यारी को पच्चीस हजार तक देने को तैयार थी (पृष्ठ 18) इस प्रकार वह उसको अलीनकी खाँ की कैद मे छुडा कर एक गुप्त कमरे मे रखती है और उसकी खूब खातिरदारी करती है। (पृष्ठ 67–68) अन्त मे जब वह शमशेर से आत्मनिवेदन करती है और शमशेर कहता है कि उसका धर्म आडे आता है। इस पर जहाँनारा कहती है—"आह धर्म, यह कौन सी बडी बात है। इसको तो हम सब लोग मामूली समझती है।"[2]

वजीर अली नकी खाँ रौशनआरा को प्राप्त करने के लिए महरी की बहुत चापलूसी करता है। इस काम के लिए वह महरी को पच्चीस हजार रुपये देने को तैयार हो जाता है। (पृष्ठ 30–31)

'छुली छुलिय्या' नामक परिच्छेद मे नवाब खूब शराब पीने के पश्चात् परिजमालो के एक झुण्ड के साथ यह खेल खेलते हैं।[3]

यहाँ नवाब वाजिद अली शाह की मधुचर्या का भी कामुकतापूर्ण वर्णन किया गया है। सुबह उठते ही नवाब सब मे पहले शराब पीते है—मेहरी भी चुपचाप एक तरफ खडी है कि नवाब उठे और शराब का प्याला हाजिर करे। इतने मे नव्वाब उठे और मेहरी ने इशारा पाते ही तुरत प्याले मे गुलेगुलाब केतकी की शराब भरी और तशतरियो मे रख कर नव्वाब के सामने हाजिर किया।[4] 'मतवाला नवाब' नामक झलक मे भी मधुचर्या का सजीव चित्रण किया गया है, 'शराब ! शराब !! प्यारी सुलतान जहाँ जरा एक प्याला और तो देना।'

शराब की नशे मे बेहोश पडे हुए, नव्वाब वाजिद अली शाह ने अपनी खास दूसरी बेगम सुलतान जहाँ से, एक बहुमूल्य मशहरी तथा उसके बेशकीमत मखमली गद्दो ही पर से लेटे लेटे कहा · अभी बहुत जगह जाना बाकी है और मशहरी से चलकर वह वहाँ आए, जहाँ कहारिया हवादार लिए उन्ही के इतजार मे खडी थी।

1 'नवाबी परिस्तान वा वाजिदअली शाह,' भाग दूसरा, पृष्ठ 17

2 'नवाबी परिस्तान', पृष्ठ 69

3 वही, पृष्ठ-25 'जहाँ-अखमुनव्वल, अच्छा खेल हो बाजी—(उनको पकड कर और उनका बोना लेकर) हा ठीक है। अच्छा, मै चोर और तुम लोग अपनी भागती जाओ, मै सबको छूऊँगा' इसी प्रकार दौडते जब वे थक जाती, तब नव्वाब उनके सिर पर पहुँच कर उनके तमाम कपडे नोच खसोट डालते हैं।

4 'नवाबी परिस्तान,' दूसरा भाग, पृष्ठ 6

हवादार के समीप पहुचने पर उन्होंने सुलतान जहाँ के गुलाबी गालो को बोसो से लाल कर दिया। इसके बाद वह दूसरे महल की तरफ जाते दिखलाई पडने लगे।[1]

बाबूजयरामलाल रस्तौगी के 'ताज महल या फतहपुरी बेगम' मे शाहजादा खुर्रम स्वप्न मे शाहजादी ताजमहल से मिलते हैं। इस प्रसग का अत्यन्त रोमाटिक ढग से चित्रण किया गया है—'खुरम ताजमहल के बगल मे तख्त पर बैठ गया।'

'थोडी देर तक सकून रहा, किसी के जबान से कोई हर्फ न निकला। खुर्रम का बेताब दिल चाहता था कि ताजमहल को गले से लगा ले मगर उसकी नसीहत याद आजाती थी और दिल को आज नही और कभी, कह कर समझाता था।

खुर्रम ! प्यारी ताज महल ! एक बोसा !

ताज महल ! 'क्या'

खुर्रम ! 'बोसा'

ताज महल ! 'उहूँ'[2]

इस ऐतिहासिक रोमास मे नायक तथा नायिका का विरहवर्णन कामुकता-पूर्ण ढग से किया गया है। (पृष्ठ 25 और 15)

इस प्रकार कामुकता का कला विचार इन ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत कलात्मक ढग से उभरा है।

कामुकता की रोमासिक धारणा मे उदात्तीकरण—कामुकता की रोमासिक धारणा मे उदात्तीकरण (Invocation) के कार्य भी आ जाते है। यहाँ सेक्स कृत्य शरीर की कविता तथा सगीत के रूप मे उभरते हैं। जहाँ अश्लीलता मे निर्वसनता एव नग्नता का भौंडा चित्रण किया जाता है वहाँ कामुकता के अन्तर्गत सन्तुलित, स्वस्थ एव आश्वस्त शरीर के चित्रण मे कलात्मकता, कोमलता, तथा भावनाओ का समावेश किया जाता है। इस प्रकार अश्लीलता मे वर्णित की जाने वाली यौन वितृष्णा तथा लालच, अत्यानन्द (Ecstasy) तथा प्रेम मे परिवर्तित हो जाते हैं। राजपूत रमणियो के सौन्दर्य एव नखशिख वर्णन मे शारीरिक सगीत का उत्तम प्रणयन किया जाता है। कामुकता तथा अश्लीलता दोनो मे ही मानवीय शरीर तथा उसके सौन्दर्य को नकारा नही जाता।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे भारतीय मध्ययुगो के सामती जीवन को पुन निर्मित करते समय शारीरिक सौन्दर्य तथा मानवीय भावनाओ का स्वाभाविक मनोवैज्ञानिक एव दार्शनिक ढग से चित्रण किया गया है।

नखशिख-वर्णन—नखशिख-वर्णन विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो का एक महत्त्वपूर्ण अग है। सामान्यत रीतिकालीन कवियो की शैली मे नारी सौंदर्य का चित्रित किया गया है परन्तु कहीं-कहीं मौलिक ढग से नारी सौन्दर्य को सजीव रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

1 'नवाबी परिस्तान', दूसरा भाग, पृष्ठ 35 और 38
2 'ताज महल या फतहपुरी बेगम' पृष्ठ 28-29

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता वा आदर्श बाला' के 15वें परिच्छेद "रूप" मे लवगलता के नखशिख का अत्यन्त नवीन ढग से चित्रण किया गया है।

कवि मुख की उपमा चन्द्रमा से देते हैं–"एक तो चन्द्रमा की स्थिति सदा एक ही सी नही रहती, क्योंकि कभी वह घटता है, कभी बढता है और कभी एकदम से न जाने कहाँ गोता लगा जाता है। इसके अतिरिक्त गुरुपत्नी तारा के पातक से जिस प्रकार चन्द्रमा के मुख पर काजल पुत गया है, उसी से हम अपनी आदर्श बाला लवंगलता के निष्कलक मुख की उपमा दें, यह क्या कभी उचित होगा। वह उसके मुख की धोवन का भी मुकाबला नही कर सकता।"[1]

नेत्र की उपमा कमल से की जाती है—"जिसकी छटा सूर्य के बिना किसी काम ही की नही रहती, और जो चन्द्रमा से म्लान होता और तुषार से हतप्रभ हो जाता है। अतएव पाठक हमारी लवगलता के स्वय प्रभावान् और सदैव एक रस में पगे नैन, कमल की कुछ भी पर्वा नही करते और न कदापि उसके उपमेय ही हो सकते हैं।"[2]

कवि स्तन की उपमा शम्भु से देते है—"अजी। स्तन तो वह अलौकिक वस्तु है कि जिससे, समय-समय पर असख्य "चन्द्रचूड" की उत्पत्ति होती रहती है। कविवर" भानुदत्त ने बहुत ही ठीक कहा है कि—

"नखेन कस्य धन्यस्य चन्द्रचूडो भविष्यति।"

अतएव शिवकरी (कल्याणकारिणी) लवगलता के स्तन की महिमा का बखान कर कौन पाप का भागी हो!!![3] इसी प्रकार "हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी" के दसवे परिच्छेद "नखशिख" मे षोडषी कुसुम कुमारी के नखशिख का वर्णन कलात्मक एव साहित्यिक रुचि के अनुरूप किया गया।

गोस्वामी जी स्वय को कुसुम कुमारी के सौन्दर्य चित्रण के लिए असमर्थ पाते है। "यदि कोई चितेरा उसका चित्र बनाने बैठता तो उसे मूर्छा आ घेरती। फिर वह अपना सयानापन भूल जाता और कहता, देवी। तुझ सी तू ही है—सोचने की बात है कि चपा, चमेली, गुलाब, और जया कुसुम मे रग के समान पीले, सफेद, गुलाबी, और लाल रग के मेल मे बना हुआ कुसुम के सुकुमार शरीर का सा अलौकिक रग वह बापुरा चितेरा कहाँ से लाता?"

"भला यह भी कभी सम्भव था कि चतुराई का दभ करने वाला चतुरानन चेला चितेरा प्रलय पर्यन्त सिर पटकते रहने पर भी कभी अमल मदाकिनी की पीयूषधारा के उत्पत्ति स्थान से कुछ दूर हट कर भ्रू शैवाल रेखा के नीचे पलक पीजरे के भीतर मनोल्लास से खेलती हुई मतवाली मीन की जोडी का चित्र अकित कर सकता!!!

1. 'लवगलता वा आदर्श बाला' पृष्ठ 81
2 वही, पृष्ठ 81–82
3 वही, पृष्ठ 82

"यह भी उससे कब बन सकता है कि वह चितेरे का आचार, लड़ती हुई दो मछलियो के नीचे सुआ का चित्र लिखता, जो बिम्बफल के ऊपर बैठा हुआ कबूतर की पीठ पर केलि कर रहा है, जिसके दोनो ओर दो मतवाली नागिनें मचल-मचल कर बार-बार चन्द्र-बिम्ब से अमृत चूस-चूस, विष का उद्धार उगल-उगल कर देखने वालो के हिए मे उसे डस लेती है।।।"[1]

जयरामदास रस्तोगी के "ताज महल या फतहपुरी बेगम" मे शहजादी ताजमहल का सौन्दर्य वर्णन कामुकता-पूर्ण शैली मे किया गया है—'शाहजादी ताजमहल एक पाँव फर्श पर, दूसरा पलग पर रक्खे लेटी हुई है। नाजुक कलाई पेशानी पर पडी हुई है, गुलाबी दुपट्टे से उसका हुस्न फूटा पडता था, उसकी उठती हुई जवानी पर दुपट्टा कुर्बान हुआ जाता है। सब्ज रेशमी कुर्त्ता उसके गोरे बदन को छिपाए हुए था, जिस पर सुर्ख अतलशा का सलूक्य पहने थी। इस वक्त की लिबास ताजमहल के नाजुक बदन पर बहुत ही भला मालूम होता था। जवानी का जोश कूट-कूट कर भर दिया गया था। खुश बजह मौतियो की पाँवजेब कदमो को चूम रहे थे और पांव के कभी इधर उधर करने मे छातो के भनकार सितम ढा रही थी।"[2]

कार्त्तिक प्रसाद के "जया" मे नायिका के सौन्दर्य चित्रण द्वारा शरीर के सगीत उसके ताल एव लय की सजीव अभिव्यक्ति की गई है। जया का रथ से उतरते समय का वर्णन अत्यन्त कलात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया है—"सुन्दरी का अग-प्रत्य ग ऐसा सुन्दर और सुडौल था, मानो विधाता ने बडी सुघरता से साचे मे ढाला हो। कद की लम्बी,इकहरा बदन, हुम्पयाओ के पजे ठुमके। कटि क्षीण। जवाँ और माँसल। नवयौवन के उभाड से ऐसी शोभा को प्राप्त थी कि जैसे सुकुमार माधवी लता फूलो के बोझ से लचके खाती हो, वैसे ही वह सुकुमारी दो सहेलियो के हाथो पर हाथ धरे उस ककरेली धर्ती पर उगलियो और ऐडी पर बोझ दिए लचके खाती लमलाती चली जाती थी।"[3]

इस प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे भारतीय मध्ययुगो का पुनर्निर्माण करने की प्रक्रिया मे दरबारी सस्कृति एव सामन्ती सभ्यता का लगभग वास्तविकता-पूर्ण चित्र उभारने के लिए कामुकता के विभिन्न स्वरूपो का चित्रण किया गया है। यह चित्रण सामान्यत कलात्मक एव सुरुचिपूर्ण ढग से किया गया है। परन्तु कई बार यह विकृत होकर अग्राह्य भी बन जाता है।

(४) ऐतिहासिक रोमांसो में साम्प्रदायिकता

20वी शताब्दी के पहले दो दशको मे पुनरुत्थानवादी आन्दोलन समस्त भारत मे अपने पूर्ण वेग से फैल चुका था। इसी पुनरुत्थानवादी आन्दोलन के फलस्वरूप दो मुख्य भारतीय जातियो की परस्पर विपरीत धारणाएँ, धार्मिक विश्वास

1 'हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी,' पेज 75-76
2 'ताजमहल या फतहपुरी बेगम,' पेज 35
3 'जया', पेज 6

एव परम्पराएँ एक दूसरे से टकराई। इस टकराहट के फलस्वरूप दो धर्मों,दो सस्कृतियो तथा दो राष्ट्रो की धारणा ने जोर पकडा। दो की यह धारणा एकतापरक नही प्रत्युत्त परस्पर विपरीत होने की पोषक थी। धार्मिक अन्ध-विश्वास, कठमुल्लापन एव रूढियाँ इस विरोध का मौलिक कारण थी। यद्यपि कई राजनैतिक एव प्रगतिशील सस्थाएँ तथा नेता हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा एक राष्ट्र की धारणा का प्रबल रूप से पोषण कर रहे थे तथापि विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो पर इस प्रगतिशील विचारधारा का किंचित मात्र भी प्रभाव नही पडा। सामान्यत सभी रोमासकारों ने मध्ययुगीन भारतीय धार्मिक विश्वासो एव सनातन हिन्दू धर्म की धारणाओ, मान्यताओ एव परम्पराओ के आधार पर भारतीय मध्ययुगो के सामन्ती जीवन का पुन निर्माण किया है। पुन निर्माण की प्रक्रिया मे साम्प्रदायिकता की भावना गहन रूप से समस्त कथाशिल्प एव घटनाओ के स्वरूप को प्रभावित करती है।

हिन्दू धर्म के प्रति प्रतिबद्ध—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकार हिन्दू जाति की श्रेष्ठता एव पावनता तथा मुसलमान, यवन, एव मलेच्छ जातियो की हीनता एव अशुद्धता का प्रतिपादन करते हैं। ऐसा करते हुए वे हिन्दू नेताओं को महान् एव देवता के रूप मे चित्रित करते हैं जबकि मुसलमान शासको को वर्बर एव राक्षसी रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

हिन्दू पावन एव श्रेष्ठ, मुसलमान अशुद्ध एव हीन—साम्प्रदायिकता की इस इतिहास-धारणा के अनुसार प्राचीन भारतीय इतिहास के स्वर्णयुग, उस युग के आदर्श हिन्दू राजा, पौराणिक नायक यथा राम, कृष्ण आदि को आदर्श के रूप मे स्वीकार किया गया है जबकि यवन एव मलेच्छ सस्कृतियो को विदेशी तथा आक्रमणकारी शक्तियो के रूप मे प्रस्तुत करते हुए उनके भयानक स्वरूप का उद्घाटन किया गया है। यहाँ भारतीय सस्कृति की नैतिकता को पवित्र तथा यवन नैतिकता को व्यभिचारी के रूप मे चित्रित किया गया है।

दो जातियो, धर्मों एव सस्कृतियो मे खान, पान, भाषा एव भेष के अन्तर को भी साम्प्रदायिकता की धारणा के अनुरूप प्रस्तुत किया गया है।

किशोरी लाल गोस्वामी के 'लवगलता' तथा 'हृदयहारिणी' नामक रोमासो मे मुसलमान विरोधी साम्प्रदायिक भावना प्रखर रूप से उभर कर आई है जिसमे सिराजुद्दौला को 'इन्द्रिय परायण और हठी' कहा गया है। सिराजुद्दौला द्वारा लवगलता का हरण, उसे प्राप्त करने के लिए कुटनी को भेजा जाना तथा सिराजुद्दौला द्वारा लवगलता के प्रति अश्लील व्यवहार (पृष्ठ 58) उसके अतिदानवीय रूप को उभारता है।

किशोरी लाल गोस्वामी की इतिहास धारणा यद्यपि मुसलमानो के प्रति विरोध पर आधारित है तथापि वे अग्रेजो के पक्षपाती थे। "भाग्यवश मुसलमानो के भयानक अत्याचारो से पीड़ित अनेक देश हितैषियो की भरपूर सहायता भी मिली,

और सच तो यों है कि यदि उस समय यह देश अंग्रेजों के हाथ में न जाकर किसी दूसरी अत्याचारी जाति के हाथ में जाता तो आज दिन यहाँ वालों की दशा कैसी शोचनीय स्थिति को पहुँचती, इसके स्मरण मात्र से ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अतएव कृतज्ञ भारतवासी अंग्रेज जाति के इस उपकार को कभी न भूलेंगे।'[1]

अंग्रेजों के पक्षपाती होते हुए भी गोस्वामी जी उनके द्वारा पूरा सामाजिक न्याय न दिए जाने के प्रति सजग थे—'अंग्रेजों ने मुसलमानों के अत्याचार से इस अधकटे देश का पिण्ड छुड़ाया। यद्यपि अभी तक अंग्रेजों ने उस उत्तम नीति का व्यवहार भारतवासियों के साथ प्रारम्भ नहीं किया है, जैसा कि वे अपने गोरे भाइयों के साथ करते हैं, पर तो भी यहाँ वालों को इस बात पर सन्तोष है कि उनका गला अत्याचारियों से छूटा।"[2]

"लाल कुँवर वा शाही रंग महल" में शहजादे जहाँदार को अत्यन्त कामुक एवं अश्लील रूप में चित्रित करने के पश्चात् गोस्वामी जी अपना विचार इस प्रकार व्यक्त करते हैं—"बड़े ताज्जुब का मुकाम है कि परमेश्वर ने ऐसे-ऐसे आवारों को उनकी किस तपस्या के फल से ऐसी बेअन्दाजा दौलत और हिन्दुस्तान की हुकूमत बख्शी थी।"[3] इसी प्रकार वजीर अलीनकी खाँ द्वारा रोशनआरा को प्राप्त करने के लिए महरी को पच्चीस हजार रुपए तक देना तथा हमीदा बेगम का अपनी लौण्डी लेला के साथ समलैंगिक यौनाचार (पृष्ठ 85) आदि मुसलमान संस्कृति के व्यभिचारी स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं।

"कनक कुसुम वा मस्तानी" नामक ऐतिहासिक रोमांस में किशोरीलाल गोस्वामी ने पेशवा बाजीराव को निजाम द्वारा धोखे से एकांत जगह पर निमन्त्रित करके दो हजार सिपाहियों द्वारा उन पर आक्रमण करवा के मुसलमान जाति की नीचता एवं बर्बरता का चित्रण किया है। केवल बीस पच्चीस व्यक्तियों द्वारा दो हजार यवनों का भयानक संग्राम हिन्दू नेता की महानता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इसके ठीक विपरीत जब निजाम पेशवा की हिरासत में आ जाता है, तो वे उसके साथ बहुत अच्छा व्यवहार करते हैं। निजाम द्वारा मराठों के विरुद्ध किए गए कुकृत्यों की ताड़ना करने के पश्चात् बाजीराव निजाम से कहते हैं—"हमारे धर्म शास्त्रों में विजित शत्रु के साथ मित्रवत् व्यवहार करना ही लिखा है। पर आपने तो मुसलमानों की ही कूटनीति का पास किया। अगर मुसलमान बादशाह छल छिद्र और धोखेबाजी को काम में न लाते तो यह देश कभी उनकी गुलामी में दाखिल न होता।"[5] इस प्रकार किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने ऐतिहासिक रोमांसों में हिन्दुओं

1 'लवंगलता वा आदर्श बाला,' पृष्ठ 8
2 'हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी,' पृष्ठ 29
3 'लालकुंवर वा शाही रंग महल,' पृष्ठ 16
4 'कनक कुसुम वा मस्तानी,' पृष्ठ 3-8
5 वहीं, पृष्ठ 46

को अत्यन्त अच्छा एव मुसलमानो को अत्यन्त बुरा चित्रित किया है, जो उनकी मूल साम्प्रदायिक प्रवृत्ति के अनुरूप है।

जयरामदास गुप्त के "वीर वीरागना वा आदर्श ललना" मे सिन्ध के नवाब अहमद शाह को अति कामुक, अश्लील एव व्यभिचारी के रूप मे चित्रित किया गया। (पृष्ठ 9-11, 13, 15, 30, 38-39) इसके विपरीत राजपूत राजा पर्वत सिंह को पावन, महान्, पवित्र तथा नैतिक एव धार्मिक कारण (Cause) के लिए जी जान की बाजी लगा देने वाले अत्यन्त शूरवीर नेता के रूप मे चित्रित किया गया है। कनकलता के सौन्दर्य की प्रशसा सुनते ही अहमद शाह उस पर लट्टू हो जाता है।[1] कनकलता को पाने के लिए वह कूटनीति व युद्धनीति दोनो का आश्रय लेता है। जो उसे एक बर्बर, अशुद्ध, हीन एव व्यभिचारी के रूप मे प्रस्तुत करते है। इसके विपरीत पर्वत सिंह का अहमद शाह को उत्तर उसके जातीय अभिमान तथा नैतिक चेतना को प्रतिबिम्बित करता है—"ऐ घमण्डी! याद रख, तेरी यह मशा प्रलय तक कामयाब न होगी, एक कुलीन प्रतिष्ठित हिन्दू जान देना स्वीकार कर लेगा किन्तु अपनी प्रतिष्ठा-पूर्ण बालिका को देना मरते दम तक, कभी भी स्वीकार न करेगा। बस तेरे लिए इसी मे भलाई है कि आगे से तू कनकलता को अपनी लडकी की तरह ख्याल कर। नही तो तलवार लेकर समर भूमि मे आ।"[2]

इस प्रकार इन ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू जाति की श्रेष्ठता, पावनता, महानता और नैतिक पवित्रता तथा मुसलमान जाति की हीनता, अशुद्धता, बर्बरता तथा व्यभिचारिता का चित्रण किया गया है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो का साम्प्रदायिक दृष्टिकोण ऐतिहासिक दृष्टि के विरुद्ध सकीर्ण, सामतीय आधार को लेकर चलता है। साम्प्रदायिकता की इस धारणा मे अर्थ के स्थान पर धर्म, धार्मिक विश्वास, धार्मिक परम्पराएँ एव रूढियाँ नियोजक शक्ति के रूप मे उभर कर आई हैं। इस प्रकार इन ऐतिहासिक रोमासो मे सामन्तवादी तथा प्रतिक्रियावादी जीवन-दर्शन ही मुख्य रूप से उभरा है।

(VI) ऐतिहासिक रोमांसो में तिलिस्म और जासूसी

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के काल खण्ड मे हिन्दी उपन्यासो मे विशिष्ट साहित्यिक कारणो से तिलिस्म एव जासूसी की प्रवृत्तियाँ अत्यन्त व्यापक रूप से उभरी हैं। यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे तिलिस्म एव जासूसी कुछ विशेष अर्थवान् नही है तथापि युग विशेष की परिस्थितियो के प्रभाव स्वरूप

1 'वीर वीरागना वा आदर्श ललना,' पृष्ठ 13
—अहमद शाह के हृदय मे विषय के इतने उमग भरे हुए थे कि उसके सामने किसी सुन्दरी का जिक्र करना ही काफी था। जहाँ किसी ने किसी प्रौढ़ा वीरागना की प्रशसा की वहाँ वह उस पर लट्टू हो जाता।

2 'वीर वीरांगना वा आदर्श ललना,' पृष्ठ 40

विभिन्न ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों में तिलिस्म एवं जासूसी का यथा-स्थान चित्रण किया गया है।

किशोरीलाल गोस्वामी के 'लखनऊ की कब्र या शाही महलसरा' नामक ऐतिहासिक रोमांस में तिलिस्म तथा जासूसी जैसा वातावरण अतीत की पृष्ठभूमि पर अत्यन्त कुशलतापूर्वक उभारा गया है। किशोरी लाल गोस्वामी की उपन्यास-कला में कहानी कहने की एक विशिष्ट प्रवृत्ति जो उन्हें अत्यन्त रोचक बना देती है इस ऐतिहासिक रोमांस में पूर्ण चर्मोत्कर्ष पर उपलब्ध होती है।

उपन्यास के सभी पाठ इसमें तिलिस्म एवं जासूसी के वातावरण एवं विवरणों से आच्छादित हैं। प्रत्येक में शाही महलों के गुप्त मार्गों तथा उनके निर्माण की रहस्यमय कहानियों के माध्यम से इन तत्त्वों को और भी सघन रूप से उभारा गया है।

"कनक कुसुम वा मस्तानी" में दौलताबाद के मशहूर किले का तिलिस्मपूर्ण वर्णन किया गया है—'यह किला महादेव की पिण्डी के समान एक खड़े पहाड़ पर बना है, जो प्रायः पांच सौ फुट ऊंचा और चारों ओर से बेलाग है। इस पहाड़ का अधोभाग प्रायः एक तिहाई तक छील कर दीवार की तरह सीधा कर दिया गया है। उस पर चढ़ने की राह किसी ओर भी नहीं है। पहाड़ के गिर्द खाई है और फिर खाई के गिर्द तिहरी दीवार। उन तीनों दीवारों के बाहर शहर बसता है और शहर के बाहर फिर शहर पनाह है। शहर पनाह के चारों ओर उस समय घोर जंगल था।"[1]

"लवंगलता वा आदर्श बाला' में नायिका का हरण किए जाने के पश्चात् उसे जिस कमरे में रखा गया था उसका वर्णन भी तिलिस्मपूर्ण ढंग से किया गया है।[2] इसी प्रकार जब मदन मोहन लवंगलता से मिलने जाता है, तो उन रास्तों का वर्णन तिलिस्मपूर्ण है—"दोनों अन्दर जाकर हेर-फेर के रास्तों से एक मसजिद तक पहुँचते हैं। वहाँ पर एक पत्थर को हटा कर वे एक सुरंग में पहुँचते हैं,—मोमबत्ती जला कर वे दोनों एक तंग रास्ते से पहिले तो बराबर नीचे ढाल पर उतरते गए, परन्तु फिर ऊपर चढ़ाव पर चढ़ने लगे। इसी प्रकार पांच सौ कदम चलने पर वे दोनों एक कोठरी में घुसे जहाँ पर एक सीढ़ियों का सिलसिला ऊपर की ओर गया था।"[3]

"लालकुंवर या शाही रंगमहल" में जब उस्मान नामक खोजे को कुछ नकाबपोश पकड़ कर ले जाते हैं और उससे जान बचाने के लिए पाँच हजार दिनारों

1 'कनक कुसुम व मस्तानी,' पृष्ठ 38
2 'लवंगलता वा आदर्श बाला,' पृष्ठ 55
—"वह कमरा बिलकुल आबनूस की लकड़ी से बना हुआ था और जब उसका दरवाजा बन्द कर दिया जाता तो भीतर वाले को यह नहीं मालूम होता था कि दरवाजा कहां पर है, या उसका निशान कहाँ है।"
3 'लवंगलता', पृष्ठ 64

की माँग करते हैं तो नकाब पोश उसे एक तिलिस्मी पुतला दिखलाते हैं,—"वह कद आदम पुतला लोहे का बना हुआ था, सो ज्यो ही उस नकाब पोश ने उसके कान मे ताली लगाई, त्यो ही उस पुतले के सारे बदन मे से हजारो नश्तर निकल कर झूमने लगे।"

पस, उस पुतले की तरफ अगुली से इशारा करके उस नकाब-पोश ने उस से कहा—"अय गुनाहगार ! अब तू इस पुतले के साथ जकड कर बाँध दिया जाएगा और ये नश्तर तेरे तमाम बदन मे घूम-घूम कर बात की बात मे तेरे टुकडे-टुकडे कर डालेंगे।"[1] इसी ऐतिहासिक रोमास मे दसवें परिच्छेद "ईद का कैदी" मे जासूसी वातावरण की उत्पत्ति की गई। (पृष्ठ 88-94)

"नवावी परिस्तान वा वाजिदअली शाह" मे तिलिस्मी तथा जासूसी वातावरण को वहुत से स्थानो पर उभारा गया है। दूसरे भाग की तीसरी झलक विचित्र हाथ मे जब शमशेर एक कोठरी मे कैद होता है, तो एक सुराख मे से गोरे रग का हाथ आगे बढ कर शमशेर सिंह की कलाई को जकड लेता है और अपनी ओर खीचना शुरू कर देता है।[2]

लगभग सभी ऐतिहासिक रोमासो मे तिलिस्म एव जासूसी का तत्त्व प्रचुर मात्रा मे प्रयुक्त किया गया है। यह तत्त्व प्रेमचन्द पूर्व युग मे इतना अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया था कि ऐतिहासिक रोमासो के अतिरिक्त ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी इसके प्रयोग सामान्यत दृष्टिगोचर होते हैं।

तिलिस्म एव जासूसी का चित्रण यद्यपि रोमाटिक प्रवृत्ति के अनुरूप नही होता तथापि विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे यह ऐतिहासिक परिस्थितियो मे इस प्रकार से जोडा गया है कि रोमासो के अन्यान्य तत्त्वो को उभारने मे सहायक सिद्ध हुआ है।

(VII) ऐतिहासिक रोमांसों मे इतिहास की स्थिति

ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास दोनो ही मानवीय अतीत को आधार बना कर एक सुरुचिपूर्ण कथारूप का निर्माण करते है। ऐतिहासिक उपन्यासो मे उपन्यासकार अपेक्षाकृत अधिक ऐतिहासिक एव अधिक प्रामाणिक होने को प्रयत्नशील रहता है। इस प्रकार एक विशिष्ट ऐतिहासिक अतीत के एक सुनिश्चित काल खण्ड का पुन प्रस्तुतिकरण करते हुए वह इतिहास की पुनर्व्याख्या करता है। इसके विपरीत ऐतिहासिक रोमासकार मानवीय अतीत के किसी काल खण्ड को जो ऐतिहासिक नही भी हो सकता अपने कथानक का आधार बनाता है। वह ऐतिहासिक पात्रो एव ऐतिहासिक घटनाओ को तो लेता है परन्तु उसका सम्पूर्ण दृष्टिकोण

1 लाल कुवर,' पृष्ठ 60

2 नवाबी परिस्तान वा वाजिद अली शाह, दूसरा भाग, पृष्ठ 8

गैर-ऐतिहासिक (अनैतिहासिक नही) भी हो सकता है। इस प्रकार वह मानवीय अतीत का अपनी मनोभावनाओं, आकांक्षाओं तथा कल्पना के अनुरूप पुनर्निर्माण करता है। इस प्रकार ऐतिहासिक रोमांसों मे इतिहास की स्थिति एव स्तर ऐतिहासिक उपन्यासों की अपेक्षा नितान्त भिन्न प्रकार का होता है।

यद्यपि इतिहास की मूल चेतना की रक्षा करते हुए ऐतिहासिक उपन्यास के समस्त पात्र एव घटनाएँ काल्पनिक एव इतिहास समर्थित नही भी हो सकती है।[1] तथापि ऐतिहासिक रोमांस में ऐतिहासिक पात्रो के माध्यम से रोमांसपरक एव रोमांटिक विषयो की उद्भावना की जाती है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसकार सामान्यत ऐतिहासिक रोमांसो की भूमिका, 'निवेदन एव उपोद्घात् मे ऐतिहासिक अतीत का तथ्यपूर्ण एव सूचनात्मक विवरण देकर उसे पृष्ठभूमि में रखते हुए लोकातीत तथा अतीत कालखण्ड का रोमांसपरक पुनर्निर्माण करते हैं। सामान्यत. इन विवरणों का रोमांसो के मुख्य प्रतिपाद्य विषय के साथ कोई प्रवृत्ति-मूलक सम्बन्ध नही होता।

किशोरीलाल गोस्वामी मे 'मल्लिका देवी वा वग-सरोजनी' के दूसरे सस्करण के दूसरे भाग के आरम्भ मे 'विशेष व्यक्तव्य' के अन्तर्गत 'नव्वाब तुगरल खाँ' के राजत्व काल का ऐतिहासिक विवरण दिया है। इसी सस्करण के उपोद्घात मे 'मुसलमानी राजत्व काल' के नव्वाबो का ब्यौरा प्रस्तुत किया है।[2] इन विवरणों मे दिल्ली के बादशाह गयासुद्दीन बलवन के काल मे बगाल के सूबेदार तुगरल खां बनाम मगसुद्दीन के विद्रोह का ऐतिहासिक ब्यौरा दिया गया है। उपोद्घात में नव्वाबो की तालिका दी गई है।

'लवगलता वा आदर्श बाला मे किशोरीलाल गोस्वामी ने 'कुटिल चक्र' नामक पहले परिच्छेद मे अग्रेजो तथा बगाल के नवाब सिराजुद्दौला के मध्य राजनैतिक मतभेदो का ऐतिहासिक चित्रण किया है।

गोस्वामी जी ने 'हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी', 'कनक कुसुम व मस्तानी'

1 'ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप,' डॉ० गोविन्द जी, पृष्ठ 138—"किसी युग की स्पिरिट का बोध कराने के लिए वह उसका वर्णन किसी दूरस्थ देश की तरह कर सकता है, किन्तु इसके लिए यह आवश्यक नही है कि वह अतीत की वास्तविक घटनाओं अथवा इतिहास समर्थित घटनाओं का आधार ले। यदि अतीत की वास्तविक घटनाओं से वह ऐसा करता है तो यह उसके लिए अतिरिक्त गौरव की बात है, किन्तु यदि वह वास्तविक घटनाओं और पात्रो का आधार न लेकर कल्पित घटनाओ एव पात्रो के माध्यम से ऐसा करता है और फिर भी इतिहास की मूल चेतना की रक्षा कर पाता है, तो वह कल्पित वस्तु-विधान के कारण ही निम्नकोटि का ऐतिहासिक उपन्यास नही कहा जा सकता। अत' ऐतिहासिक उपन्यास की प्रत्येक घटना काल्पनिक भी हो सकती है और वह किसी घटित हुई किसी विशिष्ट घटना के बिना भी, इतिहास की भाववृत्ति को उपस्थित कर सकता है।"

2 'मल्लिका देवी वा वग सरोजनी,' किशोरीलाल गोस्वामी, द्वितीय सस्करण, सन् 1917 ई० के विशेष व्यक्तव्य एव उपोद्घात देखिए।

नामक ऐतिहासिक रोमासो मे स्थान-स्थान पर ऐतिहासिक सूचनाएँ प्रसग के अनुरूप वर्णित की है।

'लखनऊ की कब्र' तथा 'लाल कुवर' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे गोस्वामीजी ने कृतियो के आरम्भ मे लम्बे-लम्बे उपोद्घात् देकर इन ऐतिहासिक रोमासो की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का तथ्यात्मक चित्रण किया है।

लगभग यही स्थिति जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान व वाजिदअली शाह' की भी है। जहाँ लेखक ने कृति के आरभ मे समस्त ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का तथ्यपरक वर्णन किया है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि कृतियो के बीच कथानक की समस्त प्रक्रिया मे इस प्रकार की ऐतिहासिकता का नितान्त अभाव है।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र के 'अनारकली', लज्जाराम शर्मा के 'जुझार तेजा' तथा स्वामी अनुभवानन्द के 'यमुनाबाई' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे इतिहास केवल नाम मात्र को ही उभर पाया है जहाँ लोकतत्व एव लोक अतीत इतिहास पर हावी रहता है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ', कुवरसिंह सेनापति, 'वीर जयमल व कृष्ण कान्ता', जयरामदास गुप्त के 'किशोरी वा वीर बाला,' 'माया रानी', 'कलावती', 'प्रभात कुमारी', 'वीर वीरागना व आदर्श ललना', एव 'रानी पन्ना', कार्तिक प्रसाद खत्री के 'जया,' मथुरा प्रसाद शर्मा के 'नूरजहाँ' तथा जयराम लाल रस्तोगी के 'ताजमहल व फतहपुरी बेगम' मे रोमाटिकता तथा रोमास के अन्यान्य तत्व इतिहास एव ऐतिहासिक प्रमाणिकता पर हावी रहते हैं।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे यद्यपि 'उपोद्घातो', 'भूमिकाओ' एव 'निवेदनों' के माध्यम से कृतियो की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का तथ्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है तथापि कृतियो के कथानको की मूल प्रक्रिया मे इतिहास तथा ऐतिहासिक प्रामाणिकता को केवल एक औपचारिकता के रूप मे ही निभाया गया है। इतिहास या तो लोक कथाओ एव लोक गाथाओ के नीचे दब जाता है अथवा रोमाटिकता एव रोमास के अन्यान्य तत्व उस पर इतना छा जाते हैं कि कई बार तो वह अत्यन्त धूमिल हो जाता है अथवा कई बार अपना मौलिक स्वरूप खो बैठता है।

यद्यपि ऐतिहासिक रोमासो की आलोचना के लिए ऐतिहासिक तथ्यो की प्रामाणिकता को एक निश्चित मानदण्ड के रूप मे स्वीकार नही किया जा सकता तथापि उनमे ऐतिहासिक तथ्यो एव घटनाओ के स्वरूप की विकृतियाँ कई बार कलात्मक दोष बन जाती हैं। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे इस प्रकार के कई दोष दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु भारतीय मध्ययुगो, दरबारी सस्कृति एव सामन्ती सभ्यता का पुनर्निर्माण करने मे इन ऐतिहासिक रोमासो का योगदान निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है।

———

7 ऐतिहासिक रोमांसों में वैयक्तिक अतिरंजनाएँ तथा तत्त्वपरक विकृतियाँ

इस अध्याय के पहले हम ऐतिहासिक रोमासकारो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे रोमास के अनेक रूपेण सम्बन्धो का व्यापक विश्लेषण कर चुके हैं। उनसे स्पष्ट हो चला था कि ऐतिहासिक रोमासो मे स्थिति कुछ भिन्न है क्योंकि इनमे एक ओर तो वैयक्तिक तत्त्वो (प्राइवेसी) की विशिष्ट अतिरजनाएँ मिलती हैं—विशेष रूप से चरित्रो और यूतोपियाओ के सदर्भो मे तो दूसरी ओर तत्त्वपरक विकृतियाँ भी मिलती हैं, जो सेक्स, सप्रदाय (जाति), सस्कृति (युग) और घटनाओ के सदर्भो मे विशेष रूप से उद्घाटित होती हैं।

हिन्दी के मनगढ वाल्टर स्कॉट किशोरीलाल गोस्वामी मे दूसरे पक्ष को भी प्रमुखता हो गई है जबकि परवर्ती ऐतिहासिक रोमासकार इनसे छुटकारा पाते चले गए हैं।

अब हम सविस्तार विश्लेषण करेंगे।

(1) ऐतिहासिक रोमांसो में वैयक्तिता (प्राइवेसी) की अतिरंजना

ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत लोकातीत का पुनर्निर्माण किया जाता है जो ऐतिहासिक अतीत के अनुकूल भी हो सकता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार को ऐतिहासिक तथ्यो, घटनाओं एव पात्रो के अधिक निकट रह कर ही इतिहास की धारा के अनुरूप अतीत का पुन. प्रस्तुतिकरण तथा उसकी पुनर्व्याख्या करनी होती है। इसके समानान्तर ऐतिहासिक रोमासकार पर इतिहास के बधन ढीले हो जाते हैं और वह अतीत के पुनर्निर्माण के साथ-साथ अन्यान्य वैयक्तिक तत्त्वो को भी कलाकृति मे सम्मिलित कर सकता है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे लेखक की वैयक्तिता, *यथा उसका* कुछ वस्तुओ के प्रति लगाव, घटना, पात्र, स्थान एव प्रकृति का एक विशिष्ट पद्धति से चित्रण करना, विशिष्ट चरित्रो तथा विशिष्ट आदर्शों के प्रति ' लेखक का रुझान एव प्रतिबद्धता आदि तत्त्व उभर कर आए हैं। उनके युग के (समकालीन) विशिष्ट तत्त्व तथा अंग्रेजो का विरोध करने के स्थान पर मुसलमानो का विरोध करना, मर्यादा और पुनर्उत्थान का स्थापन, नारी उद्धार तथा समाज सुधार आदि ऐतिहासिक रोमासो मे प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से चित्रित किए गए हैं।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो के ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्वो एव इतिहास विचारो यथा स्वयवर एव दिग्विजय, हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष, शूरता एव कामुकता तथा इतिहास एव काल के प्रवाह मे अन्त पुर, राज-सभा, युद्ध-स्थल एव मत्रणा-गृह आदि के प्रभाव का चित्रण किया गया है ।

इन वैयक्तिक तत्त्वो का समावेश अतिरजित रूप मे किया गया है। मौलिक मानवीय भावनाओ एव भावावेगो का अतीत की ऐतिहासिक अथवा अनैतिहासिक कथा-भूमि मे प्रक्षेपण ऐतिहासिक रोमासो के कलात्मक मूल्य को अतिरिक्त महत्त्व प्रदान करता है ।

(क) **समकालीन युग के विशिष्ट तत्त्व**—उपन्यासकार के वैयक्तिक तत्त्वो के साथ-साथ उसके युग के विशिष्ट तत्त्व ऐतिहासिक रोमासो मे अप्रत्यक्ष रूप से उभर कर आते हैं। ऐतिहासिक अतीत के पुर्ननिर्माण मे जिस प्रकार लेखक अथवा इतिहासकार के युग के मान-दण्ड इतिहास की प्रक्रिया को नियोजित करते हैं, ऐतिहासिक रोमासो मे समकालीन युग के विशिष्ट तत्त्व उसमे कुछ परिवर्तित रूप मे रोमासो मे अभिव्यक्त किए जाते हैं।

(1) **नारी-उद्धार एव समाज-सुधार**—यद्यपि विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकार हिन्दू धर्म के प्राचीन एव सनातन स्वरूप एव धारणाओ को पुन स्थापित करने के पक्षपाती थे तथापि वे आशिक रूप से नारी-उद्धार[1] तथा समाज-सुधार मे भी रुचि रखते थे। इसमे नारी शिक्षा तथा समाज के अन्यान्य अन्धविश्वासो एव रूढियो के विरुद्ध अपने मत का प्रतिपादन करना भी सम्मिलित है । सामान्यत विवेच्य लेखक नारी के परम्परागत स्वरूप एव उसके सम्बन्ध मे धारणाओ के पक्षपाती थे जबकि वे उसे आदर्श रूप मे प्रस्तुत करते हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक रोमासो का नामकरण इसी आधार पर किया गया है। उदाहरणत 'हृदयहारिणी' मे कनकलता को 'आदर्श रमणी', 'लवगलता' मे लवग को 'आदर्श वाला' तथा 'मल्लिकादेवी' मे मालती को 'बगसरोजिनी' कहा गया है। 'लवगलता' तथा 'मल्लिका देवी' मे नायिकाओं का मुसलमान शासको द्वारा अपहरण किया जाता है तथा नायक उनका उद्धार करते हैं। इसी प्रकार 'हृदयहारिणी' मे भी नायक-नायिका का एक मतवाले हाथी द्वारा कुचले जाने से बचा कर उद्धार करता है।

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त ने 'किशोरी वा वीर बाला' मे किशोरी को 'वीर बाला' के रूप मे तथा 'वीर वीरागना' मे कनकलता को वीरागना एव आदर्श ललना के रूप मे वर्णित किया है। कनकलता अन्त मे अहमदशाह को कटार से मार कर इसे चरितार्थ करती है। 'किशोरी वा वीर बाला', 'माया रानी', 'कलावती', 'प्रभात

1. नारी उद्धार के सम्बन्ध में विवेच्य लेखको की धारणाओं का अध्ययन नारी के सम्बन्ध में उनकी जीवन दृष्टि शीर्षक के अन्तर्गत पाँचवें अध्याय में किया गया है।

कुमारी' तथा 'रानी पन्ना' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे भी जयरामदास गुप्त ने राजपूत नारियो की वीरता का चित्रण किया है।

कार्तिकप्रसाद खत्री के 'जया' मे जया का चरित्र तब बहुत जटिल हो जाता है, जब एक ओर वह एक वीर क्षत्राणी के रूप मे उभरती है तथा दूसरी ओर अत्यन्त कोमल एव रोमासिक नायिका के रूप मे,[1] यहाँ भी सरफराज द्वारा हरण किए जाने के पश्चात् जया का नायक वीरसिंह द्वारा उद्धार किया जाता है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ', बलदेवप्रसाद मिश्र के 'अनारकली,' जयराम लाल रस्तोगी के 'ताजमहल व फतहपुरी बेगम' तथा मथुराप्रसाद शर्मा के 'नूरजहाँ' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे मुसलमान नायिकाएँ सामान्यत सेक्सपरक एव रोमासपरक कामुकता की चारित्रिक विशेषताओ से युक्त हैं। यहाँ नारी-सुधार अथवा नारी-उद्धार के स्थान पर नारी का सेक्स की दृष्टि से शोषण किया गया है।

युगो के दासत्व के कारण हिन्दू समाज, सस्कृति एव धर्म अत्यन्त शोचनीय दशा को प्राप्त हो चुके थे। इसके उद्धार एव सुधार के लिए ब्रह्म-समाज, आर्य समाज, थियोसोफिकल सोसायटी तथा रामकृष्ण मिशन आदि सस्थाएँ सक्रिय रूप से क्रियाशील थी।[2]

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो के युग का यह एक विशिष्ट तत्त्व था जिसने लगभग सभी ऐतिहासिक रोमासो की रचना-प्रक्रिया को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया।

नारी-उद्धार एव समाज-सुधार के तत्त्वो का विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे सम्मिलत लेखको की रचना-प्रक्रिया के सिद्धान्तो के अनुकूल उभर कर आया है। ये दोनो तत्त्व मूलत रोमासिक प्रवृत्तियो के विपरीत होते हुए भी लेखको के युग के एक सशक्त इतिहास-विचार एव साहित्य-विचार होने के कारण विवेच्य कृतियो मे उभर कर आए हैं।

(ख) ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्व—लेखक तथा उसके युग के वैयक्तिक तत्त्वो के साथ-साथ विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो में ऐतिहासिक अथवा अतीत काल के विशिष्ट एव निजी तत्त्वो को भी समाविष्ट किया गया है। इन तत्त्वो के आधार पर घटनाओ के चुनाव तथा उनका अतिरंजित चित्रण रोमासकार की उनके प्रति गहन रुचि का परिचायक है।

(i) स्वयवर एव दिग्विजय—स्वयवर एव दिग्विजय की मूल इतिहास-धारणा मुख्यत ऐतिहासिक उपन्यासो मे एक पारम्परिक इतिहास-विचार के रूप मे उभर कर आई है तथा ऐतिहासिक रोमासों मे ये धारणाएँ अप्रत्यक्ष रूप मे उभर कर

1 'जया' कार्तिकप्रसाद खत्री, पृष्ठ 27 तथा 6

2 चौथे अध्याय मे सास्कृतिक पुनर्जागरण शीर्षक के अन्तर्गत समाज-सुधार मे [illegible] का अध्ययन किया गया है।

आती है जबकि राजकुमारी अथवा नायिका अपने वर का स्वय चुनाव करती है तथा विवाह से पहले नायक-नायिका का मिलन तथा उनके भावावेगो का चित्रण किया जाता है।

इसी प्रकार अपेक्षाकृत कम सख्या मे होने पर भी शक्तिशाली मुसलमान शत्रुओ का सामना करते समय राजपूतो की अपार वीरता एव अनुपम शौर्य दिग्विजय की इतिहास धारणा का आभास देते हैं।

स्वयवर तथा दिग्विजय की धारणा यहाँ राज्यश्री तथा कीर्ति की धारणा के साथ-साथ उभरी है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' तथा 'हृदयहारिणी' मे नरेन्द्र का लॉर्ड क्लाईव की ओर से प्लासी की लडाई मे भाग लेना इसी का परिचायक है। 'मल्लिका देवी' मे नरेन्द्रसिंह का गयासुद्दीन बलबन के साथ मिलकर तुगरलखाँ को पराजित करना भी राजसी कीर्ति, राज्यश्री एव दिग्विजय के आभास को प्रतिबिम्बित करते हैं। 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे केवल पच्चीस सवारो के साथ पेशवा बाजीराव का निज़ाम की दो हजार सेना के साथ भिड जाना तथा उनमे से अधिकांश को युद्ध-क्षेत्र मे ही खेत कर देना लेखक की इसी प्रवृत्ति का परिचायक है।

कार्तिकप्रसाद खत्री के 'जया' मे वीरसिंह द्वारा अलाउद्दीन के सिपह-सालार सरफराज खाँ को पराजित करना तथा जया का उद्धार करना यद्यपि एक सामान्य घटना है तथापि राजपूतो के सख्या मे कम होने तथा प्रबल शत्रु को पराजित करने से दिग्विजय की प्राचीन इतिहास धारणा का आभास मिलता है।

इसी प्रकार जयरामदास गुप्त के 'वीर-वीरांगना वा आदर्श ललना' मे पर्वत-सिंह अपने सामन्तो तथा योद्धाओ के साथ सिन्ध के नवाब अहमदशाह के विरुद्ध युद्ध करता हुआ रणभूमि मे ही खेत रहता है। युद्ध-भूमि मे शत्रु के साथ लडते हुए मर जाने मे जिस मध्ययुगीन राजपूती एव सामन्तवादी नैतिकता को उभारा गया है वह दिग्विजय तथा राज्यश्री की इतिहास धारणाओ के साथ जुडी हुई है।

विवेच्य लेखक स्वयवर का चित्रण पारम्परिक ढग से करते हैं। गगाप्रसाद गुप्त के 'वीर पत्नी' तथा जयन्तीप्रसाद उपाध्याय के 'पृथ्वीराज चौहान' मे स्वयवर का वर्णन लेखको की रुचि के परिचायक हैं, यद्यपि ये दोनो इतिहास कथा पुस्तके ऐतिहासिक उपन्यासो की कोटि मे आती हैं तथापि इनका भारतीय मध्ययुगो के विशिष्ट वैयक्तिक तत्त्वो के साथ गहन सम्बन्ध है।

(ii) **हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष**—हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष, विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे वर्णित भारतीय मध्ययुगो का मुख्य एव केन्द्रीय इतिहास विचार था जिसने विवेच्य लेखको को सर्वाधिक प्रभावित किया। वास्तव मे लेखक स्वय इस साम्प्रदायिक इतिहास दृष्टि के पक्ष मे थे कि मुसलमान शासक सदियो तक अपनी हिन्दू जनता का

शोषण करते रहे हैं। मुसलमान शासको के साथ-साथ मुसलमान इतिहासकारो के प्रति भी इन लेखको ने स्पष्ट रूप से अविश्वास की घोषणा की है।[1]

प्रेमचन्द पूर्व लगभग सभी ऐतिहासिक रोमासों मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष का अतिरजनापूर्ण वर्णन किया गया है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' तथा 'हृदयहारिणी' मे नरेन्द्र तथा मदनमोहन लॉर्ड क्लाईव के साथ मिलकर बगाल के नवाब सिराजुद्दौला के विरुद्ध युद्ध मे भाग लेते हैं। 'कनक कुसुम व मस्तानी' नामक ऐतिहासिक रोमास मे पेशवा बाजीराव बहुत कम सवारो के साथ ही निजाम की दो सहस्र सेना के साथ युद्ध के लिए जूझ पडते हैं। यह हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष का विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो की मुसलमान-विरोधी इतिहास-धारणा तथा हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष के इतिहास-विचार का उत्तम उदाहरण है। 'मल्लिका देवी वा बंग सरोजिनी' नामक ऐतिहासिक रोमास मे गोस्वामीजी उपन्यास के नायक नरेन्द्र को बगाल के नवाब तुगरल खाँ के विरुद्ध बलबन की सहायता करते हुए दर्शाकर हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष के स्थानीय स्वरूप को उभारते हैं। यह इसलिए कि नरेन्द्र केन्द्रीय शासक बलबन की स्थानीय शासक तुगरल के विरुद्ध सहायता करता है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'कुंवरसिंह सेनापति' तथा 'वीर जयमल व कृष्ण कान्ता' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष की मध्ययुगीन इतिहास-धारणा का प्रतिपादन किया गया है। 'कुंवरसिंह सेनापति' मे नायक कुंवरसिंह तथा रशीद खाँ की आपसी टकराहट[2] का चित्रण हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष को अच्छे एव बुरे तथा नैतिक एव अनैतिक स्तरों पर उभारता है। 'वीर जयमल व कृष्ण कान्ता' मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष स्थानीय राष्ट्रीयता की पृष्ठभूमि में उभरा है।

जयरामदास गुप्त के 'किशोरी वा वीर बाला', 'वीर वीरांगना' तथा 'प्रभात कुमारी' नामक ऐतिहासिक रोमासों मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष का स्वरूप राजपूतो की मध्ययुगीन नैतिकता तथा सामन्तवादी प्रवृत्तियो की पृष्ठभूमि मे तथा हिन्दू राष्ट्रीयता के सदर्भ में उभारा गया है।

कार्तिकप्रसाद खत्री के 'जया' में अलाउद्दीन द्वारा अपने सिपहसालार सरफराज खाँ को 'जया' को हस्तगत करने के लिए भेजने के फलस्वरूप उत्पन्न परिस्थिति के कारण राजपूतो तथा मुसलमानों के कई युद्धों के रूप मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष का इतिहास-विचार उभारा गया है।

यद्यपि ऐतिहासिक रोमासो मे ऐतिहासिक अतीत के स्थान पर लोकातीत के चित्रण को प्राथमिकता दी जाती है तथापि विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारों ने हिन्दुओ एव राजपूतों की शूरवीरता तथा मुसलमानो की अनैतिकता एवं अत्याचार

1 देखिए 'तारा' का निवेदन।
2 'कुंवर सिंह सेनापति' गगाप्रसाद गुप्त, पृष्ठ 14-20

की धारणा को उभारने के लिए भारतीय इतिहास के मुसलमान युग को अपने ऐतिहासिक रोमासो की कथा-भूमि का आधार बनाया है। जहाँ उन्हे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष के मध्ययुगीन इतिहास-विचार को उभारने के लिए उपयुक्त भूमि प्राप्त होती है।

(iii) शूरता एव कामुकता—विवेच्य रोमासकारो ने सामान्यत अपनी कृतियो के प्लाट के लिए मुसलमान युगों को ही चुना है। महमूद गजनवी के आक्रमण से लेकर दिल्ली के अन्तिम मुगल बादशाह बहादुर शाह तक के काल खण्ड मे शूरता तथा कामुकता दोनो ऐतिहासिक युगो के वह विशिष्ट तत्त्व हैं जो विवेच्य ऐतिहासिक रोमासों की रचना-प्रक्रिया को गहराई तक प्रभावित करते हैं।

एक सशक्त मुसलमान केन्द्रीय शक्ति के विरुद्ध हिन्दू रजवाडो के राजाओ के सख्या मे बहुत कम होने पर भी प्रबल विरोध किया जाना शूरता की धारणा के अनुरूप है और विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो ने अपनी कृतियो मे इसका विपुलता से प्रयोग किया है।

इन ऐतिहासिक रोमासों मे शूरता की इतिहास-रोमास-धारणा, कामुकता तथा अश्लीलता[1] के तत्त्वो के साथ मिलकर उभरी है। सामान्यतः मुसलमान शासकों के कामुकता द्वारा प्रेरित अभियानो का सामना करने के लिए हिन्दू शासको द्वारा उनका वीरतापूर्वक सामना किया जाना भारतीय मध्ययुगो के शूरता एव कामुकता के विचार के अनुरूप चित्रित किया गया है। उदाहरणार्थ जयरामदास गुप्त के 'वीर वीरांगना व आदर्श ललना' मे राजकुमारी कनकलता को प्राप्त करने के लिए जब सिन्ध का नवाब अहमदशाह आक्रमण करता है, तो पर्वतसिह उसका सामना करते हुए रणभूमि मे ही स्वर्गलोक को सिधार जाता है। इसी प्रकार सरफराज खाँ अलाउद्दीन के लिए जया का अपहरण करता है जबकि नायक वीरसिह उसका उद्धार करता है।

इस प्रकार मुसलमान शासको की कामुकता तथा हिन्दू शासको की शूरता एक दूसरे के पूरक के रूप मे इतिहास एव ऐतिहासिक घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया को नियोजित करती है।

(iv) अन्त पुर, राज-सभा, युद्ध-स्थल, मन्त्रणा-गृह एव आश्रम—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे भारतीय अतीत के जिन युगो का पुनर्निर्माण किया गया है उन काल-खण्डो मे अन्तःपुर, राजसभाएँ, युद्ध-स्थल, मन्त्रणा-गृह एव आश्रम आदि वे विशिष्ट स्थल होते थे, जो दरबारी सस्कृति के इतिहास विचार के अनुरूप समस्त राजनैतिक निकाय को गति देने के साथ-साथ उसे नियोजित भी करते थे।

1 कामुकता तथा अश्लीलता के सम्बन्ध मे विवेच्य लेखको की धारणाओ का 'ऐतिहासिक रोमासों मे कामुकता' तथा 'ऐतिहासिक रोमासो में अश्लीलता' शीर्षकों के अन्तर्गत छठे अध्याय में विशेष अध्ययन किया गया है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे अन्त पुर, राज-सभाएँ, युद्ध-स्थल एव मन्त्रणा-गृह ऐतिहासिक एव राजनैतिक घटनाओ को नियोजित करने वाले निकाय के स्थान पर शासक के नितान्त व्यक्तिगत मामलो को, जो कि सामान्यत किसी नारी को प्राप्त करने से सम्बन्धित होते थे, को ही मुख्य स्थान दिया गया है।[1]

भारतीय मध्ययुगो के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे जब इतिहास और अतिकल्पना मिलते हैं तो युद्ध-स्थल एव मन्त्रणा-गृह का चित्रण अधिक सजीव हो जाता है। इन ऐतिहासिक रोमासो मे मन्त्रणा-गृह तथा युद्ध-स्थलो को रोमासिक धारणाओं के आधार पर उभारा गया है। वास्तव मे यह रोमासिक आधार भारतीय मध्ययुगो का एक विशिष्ट तत्त्व है।

विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे लेखको की वैयक्तिकता, उनके युग के विशिष्ट तत्त्व तथा कृतियो मे वर्णित ऐतिहासिक काल के विशिष्ट तत्त्वो का समावेश अतीत के पुनर्निर्माण को अधिक सजीव एव बुद्धिगम्य बनाने मे सहायक सिद्ध हुआ है।

(II) ऐतिहासिक रोमांसों मे तथ्यो तथा घटनाओ की अवनमित (असामान्य) विकृतियाँ

ऐतिहासिक रोमासो मे रोमास के तत्त्वों के सम्मिलन मे उनमे आशिक रूप मे दुष्कर एव असभव घटनाओ एव प्रसगो की उद्भावना की कलात्मक पृष्ठभूमि का निर्माण होता है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे घटनाओ एव तथ्यो की असामान्य विकृतियाँ प्रेमचन्दपूर्व के साहित्यिक युग की विशिष्ट प्रवृत्तियो के प्रमाण-स्वरूप उभर कर आई है।

रोमास के अन्यान्य तत्त्वो यथा बौद्धिकता विरोध, शास्त्रीयता विरोध समकालीनता विरोध तथा जादू-टोना आदि का ऐतिहासिक रोमासो मे प्रयोग करने की प्रक्रिया मे सामान्यत अलौकिक, असम्भव एव असामान्य तत्त्व इन कथा-रूपो मे उभर कर आते हैं।[2] रोमास के ये तत्त्व कृतियो मे तथ्यो तथा घटनाओ की असामान्य विकृतियो का कारण बनते है।

रोमासों तथा ऐतिहासिक रोमासों मे 'अति' उपसर्ग का बहुत प्रयोग होता है। यह प्रयोग भी तथ्यो तथा घटनाओ की अवनमित विकृतियों के लिए उत्तरदायी है। विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो मे सामान्यत सेक्स, जाति, घटनाओं तथा युगो की धारणाओ के सबध मे तथ्यों एव घटनाओ को असामान्य रूप से विकृत रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

सेक्स

यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे एक साथ और लगभग एक ही ढग मे सेक्स तथा उसकी समस्याओ का चित्रण एव प्रतिपादन

1 ऐतिहासिक रोमासों मे अन्त पुर एव राजसभा की स्थिति का विशिष्ट अध्ययन चौथे अध्याय मे किया गया है।

2 ऐतिहासिक रोमासों में 'कामुकता के तत्त्व' शीर्षक के अन्तर्गत छठे अध्याय मे इस विषय का अध्ययन किया गया है।

किया गया है तथापि ऐतिहासिक रोमासो से सामान्यत सेक्स का रूप असमान्य रूप से विकृत हो गया है। यहाँ कामुकता तथा अश्लीलता के माध्यम से सेक्स का चित्रण किया गया है।[1]

सेक्स के सम्बन्ध मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विकृति यह है कि विलास-लीलाओ का चित्रण करने की प्रक्रिया मे पतन दिखाते-दिखाते लेखक पतन का भोग करने लगते हैं। इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासकार मानवीय अतीत के पुनिर्माण की प्रक्रिया मे निर्वैयक्तिक चित्रण के स्थान पर स्वय भागीदार बन जाते हैं। अन्त पुरो, ख्वाबगाहो, प्रेम तथा नारी को लेकर वे सामान्यत उनके स्वरूप को असामान्य रूप मे विकृत कर देते हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने 'लखनऊ की कब्र' तथा 'लालकुंवर' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे सेक्स की अभिव्यजना इतने अतिरजित रूप मे की है कि वे विकृत हो गई हैं। उदाहरणत. 'लखनऊ की कब्र' के लगभग सभी भागो मे अवैध यौन सम्बन्ध, वेश्या-वृत्ति तथा नसीरुद्दीन हैदर की अदम्य सेक्स कामना इसके उदाहरण हैं। 'लखनऊ की कब्र' के चौथे हिस्से के सातवें, आठवें, नवें तथा दसवे[2] बयान मे शाहजादे द्वारा मशहूर रण्डी मुश्तरी के पास जाने का, रण्डियो के हावभाव का अतिरजित चित्रण तथा नसीर द्वारा सभी वस्तुओ के दाम दिए जाने की परिस्थिति उत्पन्न करके उसके ठगे जाने की प्रक्रिया का चित्रण यद्यपि सजीव एव वास्तविक है तथापि लेखक उसका चित्रण करते समय स्वय उसमे भागीदार बन जाता है।

इसी हिस्से के तेरहवे बयान मे (पृष्ठ 88-97) लियाकत जिसने नसीरुद्दीन को मुश्तरी मे मिलवाया था दो और नाजनीनो से मिलवाता है। यहाँ भी शाहजादे की कामुकता का विकृत चित्रण किया गया है,—'वे दोनो निहायत हसीन, कमसिन और नजाकत से भरी हुई थी, यहाँ तक कि अगर वे बाजार मे बैठती तो उनकी सानी की खूबसूरत रण्डी शायद देहली मे न दिखलाई देती, पर उनके हुस्न और भोले-पन को देख कर शाहजादा सन्नाटे मे आ गया और जहाँ वे दोनो बैठ गई थी, वही जाकर वह भी बैठ गया।'[3] इसी प्रकार पहले हिस्से मे यूसुफ नाम के चित्रकार का शाहीमहल की बेगमो के पास रह कर उनके साथ विलास की लीलाएँ तथा मधुचर्या आदि वास्तविक तो हो सकते है, परन्तु उनका विकृत रूप से चित्रण किया गया है। इमी हिस्से के चौथे बयान मे एक ऐसे अमीर मुसाहब की दास्तान लिखी गई है जो दिल्ली की मुश्तरी नामक रण्डी के जाल मे फस कर शाही महलो मे पहुँचता है,—एक हफ्ते तक मैंने उस परीजमाल के साथ मजे उडाए और उसने अपने कमरे के करीब ही एक तिलस्मी कोठरी मे मुझे छिपा रक्खा। आठवें रोज जब मैं नीद से

1 ऐतिहासिक रोमासो मे 'कामुकता' तथा 'अश्लीलता' शीर्षको के अन्तर्गत छठे अध्याय मे इस विषय का अध्ययन किया जा चुका है।

2 लखनऊ की कब्र, चौथा हिस्सा, पृष्ठ 39-65

3 वही, पृष्ठ 93

जागा तो मैंने अपने तईं इस अजीब इमारत के अन्दर पाया'[1] जहाँ वह घुटघुट कर मर गया।

तीसरे हिस्से के दसवें परिच्छेद में शाहजादा नसीरुद्दीन हैदर नकली दुलारी के साथ यौनाचार करता है तथा वह नसीर का सारा जर वा जवाहिर उनसे ठग लेती है। 'नसीरुद्दीन,—'हाँ, इस सदूक में एक करोड रुपये की लागत के जवाहिरात वगैरह हैं।'

यह सुन कर दुलारी बड़े प्यार के साथ नसीरुद्दीन के सीने से लिपट गई और बहुत ही नखरे से कहने लगी—

"वल्लाह, मैं तो आज यह सदूक ही तुमसे तोहफे में लूँगी।" नसीरुद्दीन—(उसके चम्पई गालों को प्यार से चूम कर) 'आहेलका, तुम्हारे हुस्न के ऊपर ये सब सदके है।।"[2]

'लखनऊ की कब्र' के समान 'लाल कुँवर वा शाही रग महल' में भी किशोरी-लाल गोस्वामी ने 'ईद की मजलिस' नामक परिच्छेद में जहाँदार का अपने राज-दरबार में गानेवालियों तथा रण्डियों के साथ व्यवहार का अतिरंजित एवं विकृत चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त लाल कुँवर नामक एक वेश्या के साथ ईद मनाने का कार्यक्रम बनाने के बाद भी वह और स्त्री प्राप्त करने के लिए भरसक प्रयत्न करता रहता है। अपनी ब्याही हुई बेगमों के सम्बन्ध में वह उन्हें चुड़ैलें कह कर पुकारता है।[3] यहाँ सेक्स का स्वरूप अत्यन्त विकृत हो जाता है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'नूरजहाँ' में जहाँगीर का मेहरुन्निसा के प्रति प्रेम सेक्स की विकृति का उदाहरण है। जब मेहरुन्निसा की शादी शाह अफगन से हो जाती है, तो वह गुलबदन नामक कुटनी को मेहरुन्निसा को अपनी ओर बरगलाने के लिए उसके पास भेजता है। जहाँ वह कई अमानुषिक कार्य करती है।[4] जब गुलबदन कुटनी असफल होकर लौटती है, तो जहाँगीर बुन्देलखण्ड के राजा नरसिंह को अबुल-फज़ल के कत्ल करने का काम सौंपता है।[5] जिसे वह पूरा करता है।[6] बादशाह बनने के पश्चात् वह कई बहानों से शेर अफगन की मृत्यु करवा कर स्वयं नूरजहाँ के साथ शादी करता है। इस प्रकार से सेक्स का अत्यन्त विकृत रूप उभारा गया है।

जयरामदास गुप्त के 'नवाबी परिस्तान या वाजिदअली शाह' में भी सेक्स का विकृत रूप में चित्रण किया गया है। नवाब वाजिदअली शाह का विलास, उनकी

1 लखनऊ की कब्र,' पहला भाग, पृष्ठ 33-34
2 'लखनऊ की कब्र,' तीसरा भाग (हिस्सा), पृष्ठ 86-90
3. 'लालकुँवर,' पृष्ठ 25
4 नूरजहाँ ' गगाप्रसाद गुप्त, पृष्ठ 56-63
5 वही पृष्ठ 69
6. वही, पृष्ठ 76

मधुचर्या तथा नित्य नई-नई नाजनियो को अपने हरम मे दाखिल करना आदि सभी कुछ इसी प्रवृत्ति के परिचायक हैं। 'नवाव और रोशनआरा' नामक झलक मे नवाव रोशनआरा नामक स्त्री को अपने हरम मे दाखिल करने के लिए कई लालच वगैरह देता है।[1] नवाव के साथ-साथ शाही हरम की बेगमे भी अन्य लोगो के साथ अपने यौनपरक सम्बन्ध रखती हैं जो कि सेक्स के विकृत रूप को उभारता है। 'अब भी उज्र है' नामक झलक मे जहाँनआरा नामक बेगम शमशेर के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है।[2] जब जहाँनआरा शमशेर से प्रणय निवेदन करती है और वह कहता है कि 'मेरा धर्म आडे आता है,' तो जहाँनआरा उससे कहती है,—'आह धर्म यह कौन सी बडी बात है। इसको तो हम सब लोग मामूली समझती हैं मगर आपको जो इसका ख्याल हो, तो जिस तरह आप इतने दिनो तक रहे हैं उसी तरह हमेशा रह सकते हैं। आप तो भला इस जगह आराम से रहेंगे, मगर आप ही के ऐसे और तो महल मे खोजो के भेष मे दिन को खिदमतगुजारी किया करते हैं।"[3]

इस प्रकार लगभग सभी ऐतिहासिक रोमासकारो ने सेक्स को असामान्य रूप से विकृत रूप मे प्रस्तुत किया है। परन्तु यहाँ यह ध्यान रखना होगा कि सेक्स की ये विकृतियाँ सामान्यत मुसलमान पात्रो के माध्यम से उभर कर आई हैं।

जाति—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकार सामान्यत मुसलमान विरोधी धारणा के प्रबल पोषक थे। इस विशिष्ट जीवन-दृष्टि को उभारने के लिए वे सामान्यत अतीत के युगो का पुनर्निर्माण करते समय मुसलमान पात्रो को बहुत बुरा तथा उसके विपरीत हिन्दू पात्रो को अत्यन्त नैतिकतापूर्ण एव आदर्श रूप मे चित्रित करते हैं। जातीयता के सम्बन्ध में यह विचार-धारा यद्यपि कुछ अशो तक ऐतिहासिक रूप से सत्य भी हो सकती है परन्तु इसका अतिरंजित चित्रण करके इसे विकृत बना दिया गया है। मुसलमान-विरोधी धारणा तथा हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष[4] मध्ययुगीन भारत मे राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक एव साम्प्रदायिक[5] धरातलो पर उभरा है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता', 'हृदयहारिणी' 'मल्लिका देवी' तथा 'कनक कुसुम' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू पात्रो को अत्यन्त उच्च-स्तरीय एव अति मानवीय तथा मुसलमान पात्रो को दुराचारी एव अति दानवीय

1 'नवाबी परिस्तान' दूसरा भाग पृष्ठ 10-13
2 'नवाबी परिस्तान,' दूसरा भाग, पृष्ठ 67-70
3 वही, पृष्ठ 69-70
4 हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष तथा मुसलमान विरोधी धारणा के सम्बन्ध में पाँचवें अध्याय मे 'इतिहास की पुनर्व्याख्या' शीर्षक के अन्तर्गत लेखको की इस विचार-दृष्टि का विधिवत् अध्ययन किया जा चुका है।
5 साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकारो की धारणाओं का अध्ययन 'ऐतिहासिक रोमासों में साम्प्रदायिकता' शीर्षक के अन्तर्गत छठे अध्याय मे किया जा चुका है।

धरातलो पर उभारा गया है, जो जाति के सम्बन्ध में लेखक की धारणा के विकृत स्वरूप का परिचायक है।

गंगाप्रसाद गुप्त के 'कुंवरसिंह सेनापति' तथा 'वीर जयमल वा कृष्णकांता', जयरामदास गुप्त के 'किशोरी वा वीर वाला','मायारानी,' 'कलावती', 'प्रभातकुमारी एवं वीर वीरांगना नामक ऐतिहासिक रोमांसो में भी लेखको की जातीय धारणा का विकृत स्वरूप उभर कर आया है।

कार्तिक प्रसाद खत्री के 'जया' में राजपूतो को अत्यन्त स्वामिभक्त तथा शौर्यपूर्ण[1] रूप मे चित्रित किया गया है जबकि अलाउद्दीन[2] तथा उसके सिपहसालार सरफराज खाँ[3] को अतिदानवीय रूप में उभारा गया है। अलाउद्दीन जया को पाने के लिए उसके पिता रतनसिंह को कैद कर लेता है और उन्हें कष्ट पहुँचाता है जबकि सराफराजखाँ अलाउद्दीन के मरने का समाचार पाकर स्वयं ही जया के साथ बलात्कार करने को तत्पर होता है।

इस प्रकार जातीय स्तर पर हिन्दुओं को अत्यन्त आदर्श एवं नैतिक तथा मुसलमानों को कामुक एवं अति दानवीय रूप मे उभारते समय विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसकार तथ्यो तथा घटनाओ को असामान्य रूप से विकृत कर देते हैं।

घटनाएँ—विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो मे भारतीय मध्ययुगो का पुनर्निर्माण करने की प्रक्रिया मे अपनी मौलिक जीवन-दृष्टि एवं जीवन-दर्शन के अनुरूप विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसकारो ने घटनाओ को विकृत रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। यद्यपि ऐतिहासिक रोमांसो मे ऐतिहासिक प्रमाणिकता के बन्धन पर्याप्त सीमा तक ढीले पड जाते हैं, परन्तु घटनाओ के स्वरूप को विकृत रूप मे प्रस्तुत करना विवेच्य लेखको का एक निश्चित एवं विशिष्ट जीवन-दर्शन के प्रति प्रतिबद्ध होना ही उत्तरदायी है।

भारतीय मध्ययुगो की अन्यान्य घटनाओ का चित्रण करते समय विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसकारो ने हिन्दुओ के कार्यों तथा अभियानों को बलिदान तथा त्याग के रूप मे चित्रित किया है जबकि मुसलमानो के आक्रमणो तथा उनकी युद्ध-नीति को कपटपूर्ण सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है। इस प्रकार की मौलिक प्रतिबद्धता के कारण विवेच्य कृतियो मे घटनाएँ सामान्यत विकृत रूप मे उभर कर आती हैं।

भारतीय मध्ययुगो में अधिकांशत मुसलमान शासको के साथ केन्द्रीय सत्ता तथा विशाल सेनाएँ हुआ करती थी और सामान्यत वे इस सत्ता का दुरुपयोग हिन्दू राजकन्याओ तथा सामान्य युवतियो को प्राप्त करने के लिए किया करते थे। इस

1 जया, कार्तिक प्रसाद खत्री, पृष्ठ 27
2 वही पृष्ठ 63
3 वही, पृष्ठ 108-112

हिन्दू एव राजपूत जाति अपनी पूरी शक्ति के साथ जान पर खेल कर अत्याचार का प्रतिकार किया करती थी।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'लवगलता' मे नायिका लवगलता का सिराजुद्दौला द्वारा हरण करवाया जाना तथा 'मल्लिकादेवी' मे मल्लिका आदि का बगाल के दुराचारी नवाब द्वारा हरण किया जाना तथा उनका उनके नितात विशुद्ध रूप मे उद्धार किया जाना मध्यकालीन कथानक-रूढियो का अनुकरण करने की प्रवृत्ति का परिचायक है।

इसी प्रकार के 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे निजाम द्वारा पेशवा बाजीराव को धोखे से सन्धि के लिए बुलवा कर उन पर दो हजार व्यक्तियो के साथ आक्रमण करवाना मुसलमानो के कपट को प्रतिपादित करना है तथा केवल पच्चीस या तीस सवारो के साथ मराठा वीर का उनसे जूझ पडना उनके बलिदान की धारणा का पोषण करता है।

कार्तिक प्रसाद खत्री के 'जया' मे अलाउद्दीन के सिपहसालार सरफराज खाँ द्वारा जया का हरण करने का प्रयत्न करना तथा राजपूतो द्वारा वीरतापूर्वक उसका उद्धार किया जाना जाति के सम्बन्ध मे लेखक के एक विशिष्ट इतिहास-विचार का प्रमाण है।

इसी प्रकार गगाप्रसाद गुप्त तथा जयरामदास गुप्त के ऐतिहासिक रोमासो मे हिन्दू पात्रो के कार्यो को बलिदान, त्याग एव किसी उच्च आदर्श को प्राप्त करने के हेतु किया गया प्रदर्शित करने के साथ-साथ मुसलमानो के आक्रमणो तथा उनकी युद्ध-नीति को अत्यन्त कपटपूर्ण, धूर्ततापूर्ण तथा बेहद भ्रष्ट रूप मे चित्रित किया गया है। इस प्रकार बलिदान तथा कपट के दो परस्पर विरोधी ध्रुवो की अन्त प्रक्रिया के माध्यम से घटनाओ को चित्रित एव प्रतिपादित करते समय उनका स्वरूप कई बार विकृत हो गया है।

युग—विवेच्य ऐतिहासिक रोमासकार लेखक, जाति एव घटनाओ के साथ-साथ दो परस्पर विरोधी युगों का चित्रण करते समय भी तथ्यो को सामान्यत विकृत रूप मे प्रस्तुत करते हैं।

इन लेखकों के मानस पर एक आदर्श युग की छाप बहुत गहराई तक उनके जीवन-दर्शन एव जीवन-दृष्टि को प्रभावित करती है। सामान्यत यह आदर्श युग सनातन हिन्दू-धर्म तथा प्राचीन युगो की महान् मान्यताओ, धारणाओ तथा विश्वासो के आधार पर परिकल्पित किया गया है। लेखक के युग की पुनरुत्थानवादी धारणा का इस आदर्श युग के स्वरूप पर महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभाव पडा है। वे इस आदर्श युग की परिकल्पना के साथ-साथ उसके मध्ययुगो मे तथा अपने युग मे पुनर्स्थापन के प्रबल पोषक थे। इसके विपरीत वे भारतीय मध्ययुगो के मुस्लिम युग को बेहद भ्रष्ट रूप मे उभारते है। इस प्रकार दो परस्पर विरोधी युगो की धारणाओ का

प्रतिपादन करते समय वे तथ्यो तथा घटनाओ को असामान्य रूप से विकृत रूप मे चित्रित एव प्रस्तुत करते हैं।

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे बाजीराव पेशवा को आदर्श युग के प्रतिनिधि के रूप मे प्रस्तुत किया है जबकि निजाम उलमुल्क को मुसलमान युग के बेहद भ्रष्ट प्रतिनिधि के रूप मे उभारा है। निजाम पेशवा को दौलताबाद के निकट सन्धि के लिए बुलवाकर अचानक उस पर आक्रमण कर देता है जबकि पेशवा निजाम के साथ बहुत अच्छा व्यवहार करता है। निजाम के दोषो तथा कुटिलताओ की ताडना करने के पश्चात् नवाब से कहता है—"हमारे धर्म-शास्त्रो मे विजित शत्रु के साथ मित्रवत् व्यवहार करना ही लिखा है। पर आपने तो मुसलमानो की ही कूटनीति को पास किया। अगर मुसलमान बादशाह छल-छिद्र और धोखे-बाजी को काम मे न लाते तो यह देश कभी उनकी गुलामी मे दाखिल न होता।' इसी प्रकार 'हृदयहारिणी,' 'लवगलता' तथा 'मल्लिकादेवी' मे किशोरीलाल गोस्वामी ने हिन्दू नायको तथा मुसलमान शासको को दो परस्पर नितान्त विरोधी स्वरूपो मे प्रस्तुत कर आदर्श युग तथा मुसलमान युग के अन्तरो को विकृत रूप मे प्रस्तुत किया है।

गगाप्रसाद गुप्त के 'कु वरसिंह सेनापति' तथा 'वीर जयमल वा कृष्ण कान्ता' तथा जयरामदास गुप्त के 'किशोरी वा वीर बाला', 'प्रभात कुमारी', 'रानी पन्ना', तथा 'वीर वीरागना' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे इस प्रकार के दो युगो की परस्पर विरोधी धारणाओ को उभारा है। कई बार इस प्रकार के चित्रण मे असामान्य विकृतियाँ भी आ गई है।

रोमास के तत्त्वो का ऐतिहासिक रोमासो मे सम्मिलन होने से अलौकिक, असम्भव तथा असामान्य तत्त्व घटनाओ तथा तथ्यो की असामान्य विकृति के लिए उत्तरदायी होते हैं।

इस प्रकार ऐतिहासिक रोमासो मे तथ्यो एव घटनाओ की असन्तुलित विकृतियाँ एक विशिष्ट इतिहास अभिप्राय एव साहित्यिक अभिप्राय के रूप मे उभारी गई हैं।

8 ऐतिहासिक उपन्यासों एवं ऐतिहासिक रोमांसों में कलापक्ष

इस अतिम अध्याय मे अब हम ऐतिहासिक उपन्यासो एव रोमांसों की उपन्यासकला, कथानक शैलियाँ, अभिव्यजना विधियाँ, भाषा-शैली आदि का निरूपण करेंगे।

यह खण्ड हमारे प्रतिपाद्य से दार्शनिक एव विश्लेषणात्मक दृष्टि से सीधे सबधित नही है। तथापि इतिहासदर्शन और भाषिकी मे जो परस्पर सम्बन्ध है उनके आधार पर शब्द-योजना एव पात्र-निरूपण के आधारो को विश्लेषित किया जा सकता है।

अतएव इस अध्याय मे दार्शनिक सदर्भों को छोडते हुए ही हम निरूपण करेंगे।

(क) प्रेमचन्द-पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास, रोमांस-धारा की उपन्यास-कला

मानवीय अतीत के अन्यान्य युगो की महत्त्वपूर्ण एव अभिलेखनीय घटनाओ का सकलन एव सम्पादन करना मूलत इतिहासकार का कार्य होता है। परन्तु जब मनीषी साहित्यकार अतीत युगो का अपनी औपन्यासिक कृतियो मे पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण करते हैं तो इतिहास एव कला के सम्मिलन से जिस कृति का निर्माण होता है वह ऐतिहासिक एव कलात्मक मूल्य की होती है। इस प्रकार यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यासकार एव ऐतिहासिक रोमासकार इतिहास से अपनी कृति के लिए सामग्री प्राप्त करता है, परन्तु उसकी कृति इतिहास न होकर कलात्मक महत्त्व की एक साहित्यिक कृति होती है।

इतिहास तथा ऐतिहासिक रोमास एव ऐतिहासिक उपन्यास को पृथक करने वाला मूल तत्त्व ऐतिहासिक घटनाओ के औपन्यासिक एवं कलात्मक प्रस्तुतिकरण मे निहित होता है।

ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास से कुछ सकेत प्राप्त करता है, परन्तु यह आवश्यक नही है कि घटनाओ के प्रवाह-क्रम की एक बनी बनाई कहानी हो। बहुत से ऐतिहासिक उपन्यास, इतिहास की एक पुस्तक मे सीधे ही कहानी प्राप्त करते हैं। उन्हे कल्पना (Fiction) द्वारा बढाया जाता है तथा कुछ परिवर्तनो के साथ दोहराया जाता है। इतिहास, प्लाट तथा साहसिकता के तत्त्व प्रदान कर सकता है तथा कल्पना

उन रिक्त स्थलो को भर सकती है जहाँ इतिहास अनौचित्यपूर्ण तथा अपूर्ण और निराशाजनक होता है ।

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की उपन्यास-कला का अध्ययन करने मे यह तथ्य और भी स्पष्ट हो जायेगा कि इतिहास तथा ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास यद्यपि लगभग एक ही उद्देश्य की ओर अग्रसर होते हैं तथापि वे एक समान नहीं होते और इसी मे ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की उपन्यास-कला का महत्त्व एव उद्देश्य निहित है ।

प्रेमचन्द तथा उनके युग के उपन्यासो, उनके शिल्प अथवा उनकी कला को प्रौढ़ एव स्तरीय कहा जाता है । उनके पूर्ववर्ती उपन्यासकारो को सामान्यत तथा ऐतिहासिक उपन्यासकारो को विशेषत. औपन्यासिक कला अथवा शिल्प की त्रुटियो एव अल्पताओ के लिए दोषी ठहराया गया है तथा उनकी उपन्यासकला की प्रौढता पर प्रश्नचिह्न लगाया गया है ।[1] इस प्रकार की स्थिति स्कॉट के ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो की कला के अध्ययन के अवसर पर भी उभरी थी ।[2]

प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमांसधारा की शिल्पकला की सामान्यतः उपेक्षा की गई है । उसे अप्रौढ एव अपेक्षाकृत कम कलात्मक भी समझा गया है । इस युग के मुख्य ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास लेखको के सम्बन्ध मे डॉ गोविन्द जी का मत उल्लेखनीय है—"गोस्वामी जी के ऐतिहासिक उपन्यासो के बारे मे, सच बात तो यह है कि उनमे इतिहास का आधार नाम-मात्र को ग्रहण किया गया है और लेखक की कल्पना और ऐतिहासिक चरित्रो को उनके यथार्थ-रूप मे न प्रस्तुत कर विकृत-रूप में प्रस्तुत किया गया है । गोस्वामी जी के ऐतिहासिक कहे जाने वाले उपन्यास तिलिस्म एव जासूसी कहे जाने वाले उपन्यासो

1 हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास का प्रयोग' पृष्ठ 288 —"इस काल के ऐतिहासिक उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि ऐतिहासिक उपन्यास लिखने के लिए जिन ऐतिहासिक विवेक अर्थात् सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक परिस्थिति, रहन-सहन, रीति-रिवाज आदि का ज्ञान तथा इतिहासमूलक कल्पना की आवश्यकता होती है उनका इस काल के ऐतिहासिक उपन्यासकारों मे पूर्ण अभाव था । सभवत इन्हीं कारणो से वे श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास नहीं लिख सके ।"

2 'ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास', गोपीनाथ तिवारी, पृष्ठ 63, "जिन परिस्थितियों में स्कॉट ने इन उपन्यासो को लिखा, उन पर विचार करते हुए कहना पडता है कि ये त्रुटियाँ क्षम्य हैं ।
(1) यह सब से पहला प्रयास था । पहली बार ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गए । आरम्भ में एकदम पूर्णता नहीं आ जाती । (2) उस समय तक स्कॉटलैण्ड के इतिहास का सम्यक् विवेचन नहीं हुआ था । स्कॉट को स्कॉटलैण्ड के ऐतिहासिक संग्रहों पर निर्भर रहना पड़ा था ... लिखे गए थे । (3) इनका प्रधान लक्ष्य लोकप्रिय उपन्यास लिखना, धन कमाना था न कि साहित्य की सेवा । (4) स्कॉट इतिहास खोजक थे ।"

से बहुत भिन्न नही जान पडते । उनके समकालीन कई उपन्यासकारो जैसे—गगाप्रसाद गुप्त, जयरामदास, बलदेवप्रसाद, ने भी कई ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना की, लेकिन उनके भी उपन्यास गोस्वामी जी के उपन्यासो की ही कोटि मे आते हैं ।[1]"

(ख) ऐतिहासिक उपन्यासो एवं ऐतिहासिक रोमांसो मे चरित्र-चित्रण

प्रेमचन्द-पूर्व हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र मे सामान्यत. आलोचक लेखको के चरित्र-चित्रण की तकनीक के प्रति उपेक्षापूर्ण भाव दर्शाते है। सामान्यत या तो इस ओर ध्यान ही नही दिया जाता और यदि दिया भी जाता है तो प्रेमचन्द-पूर्व की औपन्यासिक कृतियो मे चरित्र-चित्रण की तकनीक सम्बन्धी त्रुटियो की ओर ही ध्यान दिया जाता रहा है ।

वास्तव मे प्रेमचन्द-पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमासधारा मे चरित्र-चित्रण की तकनीक का सम्बन्ध जहाँ एक ओर अग्रेजी तथा बगला की लगभग आधुनिक पद्धति के साथ है वही दूसरी ओर यह तकनीक मध्ययुगीन भारतीय काव्यो, लोक-गाथाओ मे भी प्रभावित है। वास्तव मे भारतीय मध्ययुगो, अतीत के पात्रो तथा सामन्ती युगो एव दरबारी सस्कृति का पात्रो पर प्रभाव आदि का चित्रण करने के लिए मध्ययुगीन धारणाओ, मान्यताओ एव विश्वासो के अनुरूप काव्यो एव लोक-गीतो की पद्धति चरित्र-चित्रण की प्रक्रिया मे बाधक होने के स्थान पर सहायक सिद्ध हुई है । इसी के फलस्वरूप विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे काव्यो की कथानक रूढियो का विपुलता से प्रयोग किया गया है ।

(i) **पात्रो की दो विरोधी कोटियाँ**—सामान्यत सभी विवेच्य लेखको ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे पात्रो की दो परस्पर विरोधी एव सघर्षरत कोटियो की उद्भावना की है। एक ओर आचार-वान् एव उच्च नैतिक आदर्शो द्वारा परिचालित हिन्दू नायक एव पात्र है तथा दूसरी ओर मुसलमान पात्र अथवा खलनायक है, एक ओर चरित्रवान् एव पतिव्रता हिन्दू एव राजपूत रमणियाँ है तथा दूसरी ओर कामुक एव भ्रष्ट मुसलमान शाहजादियाँ एव बाँदियाँ हैं । इस प्रकार दो परस्पर विरोधी कोटियो के पात्रो की टकराहट एव सघर्ष की प्रक्रिया मे उत्पन्न अन्यान्य स्थितियो के प्रति अन्यान्य पात्रो की प्रतिक्रियाओ का कलात्मक ढग से चित्रण किया जाना विवेच्य लेखको की एक महत्त्वपूर्ण एव उल्लेखनीय उपलब्धि है ।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' नामक उपन्यास मे एक ओर अमरसिंह, राजसिंह तथा चन्द्रावत जी अत्युच्च नैतिकताओ द्वारा परिचालित हिन्दू नायको के रूप मे उभारे गए है, इनके विपरीत दाराशिकोह तथा सलावत खाँ को अत्यन्त कामुक, भ्रष्ट एव अत्याचारी के रूप मे प्रस्तुत किया गया है । इसी प्रकार एक ओर

1 'हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो मे इतिहास का प्रयोग,' पृष्ठ 143

दारा, रम्भा तथा चन्द्रावती को आदर्श राजपूत रमणियों के रूप मे चित्रित किया गया है, जो अपने नैतिक कर्त्तव्यो के लिए जान तक देने को तत्पर रहती हैं। इनके विपरीत मुसलमान शाहजादियाँ जहाँनआरा, रोशनआरा, मोती बेगम आदि नैतिक रूप से भ्रष्ट तथा षड्यन्त्रकारी स्त्रियों के रूप मे उभरी हैं। उदाहरण स्वरूप जहाँनआरा का दारा (पहला भाग, पृष्ठ 4) तथा इनायतुल्ला (दूसरा भाग, पृष्ठ 5-10) के साथ अवैध सम्बन्धो का चित्रण, सलावत और गुलशन का यौन सम्बन्ध (पहला भाग, पृष्ठ 54-57), सलावत तथा मोती बेगम का अवैध सम्बन्ध (दूसरा भाग, पृष्ठ 61-67) तथा नरुलहक का जौहरा नामक बादी के साथ यौन सम्बन्ध (पृष्ठ 39-44 पहला भाग) आदि का चित्रण। इस प्रकार, इस उपन्यास मे दो परस्पर विरोधी कोटियो के हिन्दू एव मुसलमान चरित्रो की उद्भावना गोस्वामी जी की उपलब्धि है।

'रजिया बेगम' मे चरित्र-चित्रण की पद्धति बदल जाती है, क्योकि वहाँ पर रजिया के चरित्र के कई रूपों मे से एक रूप हिन्दुओं के पक्षपात का भी प्रस्तुत किया गया है (पहला भाग, पृष्ठ 41-49)।

गोस्वामी जी के ऐतिहासिक रोमासो में इस प्रकार के विरोधी पात्रो का चित्रण अतिरंजित रूप मे किया गया है। यहाँ हिन्दू राजाओ एव शासकों के अतिमानवीय तथा मुसलमान शासकों के अतिदानवीय स्वरूप को उभारा गया है। 'कनक कुसुम वा मस्तानी' मे पेशवा बाजीराव को अतिमानवीय तथा निज़ाम को अतिदानवीय रूप मे चित्रित किया गया है। 'लवगलता' तथा हृदयहारिणी मे एक ओर नरेन्द्र एव मदनमोहन को आदर्श नैतिकतापूर्ण राजकुमारो के रूप मे उभारा गया है। इनके विपरीत बगाल के नवाब सिराजुद्दौला को कामुक, लम्पट, अत्याचारी एव अतिदानवीय रूप मे प्रस्तुत किया गया है। 'मल्लिका देवी वा बगसरोजिनी' मे भी उपन्यास के नायक नरेन्द्र को मध्ययुगीन सामन्ती नैतिकता के आदर्शों के अनुरूप उभारा गया है जबकि नवाब तुगरलखाँ को भ्रष्ट अनैतिक एव अतिदानवीय रूप मे चित्रित किया गया है। लगभग यही स्थिति 'हीरा बाई व बेहयायी का बोरका' नामक इतिहास-कथा की भी है जिसमे अलाउद्दीन को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे उभारा गया है।

जयरामदास गुप्त के वीर वीरांगना' मे पर्वतसिंह, सत्येन्द्र तथा मधुर को आदर्श राजपूतो के रूप मे तथा नवाब महमदशाह को अति कामुक तथा ऐतिहासिक आततायी के रूप में चित्रित किया गया है। जयरामदास गुप्त के ही 'काश्मीर पतन' मे जब्बारखाँ व अजीम खाँ को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है जबकि महाराजा रणजीतसिंह को काश्मीर के उद्धारकर्त्ता के रूप मे उभारा गया है।

बाबूलालजी सिंह के 'वीर बाला' तथा युगलकिशोर नारायणसिंह के 'राजपूत-रमणी' नामक ऐतिहासिक उपन्यासो मे औरगजेब को ऐतिहासिक आततायी के रूप

मे चित्रित किया गया है इसके विपरीत मेवाड के राणा राजसिह तथा उनके सहयोगी चन्द्रावत जी को आदर्श एव नैतिक हिन्दू राजा तथा नारियो एव निरीह जनता के सरक्षक एव उद्धारक के रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

अखौरी कृष्णप्रकाश सिह के 'वीर चूडामणि' तथा सिद्धनाथ सिह के 'प्रण-पालन' नामक ऐतिहासिक उपन्यासो मे मेवाड के राणा लाखा तथा उनके पुत्र चूडा जी के उदात्त चरित्र का चित्रण किया गया है। चूडा जी अपने पिता की आज्ञा का पालन करते हुए मेवाड के राजसिहासन के अपने अधिकार को त्याग देते है। इसके विपरीत मुहम्मद शाह लोधी को अनैतिक, भ्रष्ट एव ऐतिहासिक आततायी के रूप मे चित्रित किया गया है।

कार्तिक प्रसाद खत्री के 'जया' मे अलाउद्दीन तथा उसके सिपहसालार सरफराज खाँ को कामुक एव अतिदानवीय रूप मे उभारा गया है। इसके विपरीत नायक वीरसिह तथा रतनसिह को मध्ययुगीन सामन्ती नैतिकता के आदर्शों के पालक के रूप मे उभारा गया है।

मिश्र बन्धुओ के 'वीर मणि', चन्द्रशेखर पाठक के 'भीमसिह', राम नरेश त्रिपाठी के 'वीरागना', रूप नारायण के 'सोने की राख', गिरिजानन्दन तिवारी के 'पद्मिनी', बसन्त लाल शर्मा के 'महारानी पद्मिनी' मे अलाउद्दीन को ऐतिहासिक आततायी के रूप मे प्रस्तुत किया गया है जबकि उसके विपरीत मेवाड के राणा लक्ष्मणसिह तथा भीमसिह को अत्यन्त पराक्रमी तथा आदर्श हिन्दू शासको के रूप मे चित्रित किया गया है।

इस प्रकार विवेच्य ऐतिहासिक रोमासो एव ऐतिहासिक उपन्यासो मे दो परस्पर विरोधी एव विपरीत चरित्रो को हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष के मध्ययुगीन इतिहास-विचार के आधार पर उभारा गया है। चरित्र-चित्रण की यह तकनीक प्रेमचन्दोत्तर ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे भी पाई जाती है।

जब भी भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण किया जाएगा तभी हिन्दू तथा मुसलमानो के परस्पर विरोधी एव सघर्ष का वास्तविक इतिहास-विचार जो मध्ययुगो के कलात्मक प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया मे एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक अभिप्राय बन जाता है, चरित्र-चित्रण की इस तकनीक को जन्म देगा।

(ii) पात्र-द्वय की तकनीक—प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक रोमासो एव ऐतिहासिक उपन्यासो मे पात्र-द्वय की तकनीक के माध्यम से भी चरित्रो को उभारा गया है। सामान्यत नायक के साथ उसके मन्त्री अथवा एक प्रिय मित्र की परिकल्पना की गई है। इसके साथ-साथ नायिका के साथ उसकी एक अत्यन्त प्रिय सखी की भी उद्भावना की जाती है। कथानक के अन्यान्य मोडो से गुजरते समय नायक का मित्र तथा नायिका की सखी उनके अन्यान्य क्रियाकलापो मे अन्यान्य रूप से सहायक सिद्ध होते हैं। कई बार वे अपनी जान पर खेल कर अथवा अत्यन्त कठिन एव

दुष्कर कार्य सम्पन्न करके नायक अथवा नायिका की सहायता करते हैं। सामान्यत सभी कृतियों मे नायक-नायिका की शादी के साथ उनके मित्र एव सखी की भी शादी हो जाती है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' नामक उपन्यास मे पात्र-द्वय की तकनीक का सर्वोत्तम उदाहरण उपलब्ध होता है। यहाँ लेखक ने उपन्यास की नायिका तारा के साथ उसकी सखी रम्भा की उद्भावना की है। इसके साथ-साथ नायक राजकुमार राजसिंह के साथ उनके सखा एव मत्री चद्रावत जी को उभारा है और अन्त में तारा और राजसिंह के साथ-साथ रम्भा एव चन्द्रावत जी का ब्याह चरित्र-चित्रण की इस तकनीक को चरितार्थ करता है।

'रजिया बेगम' मे पात्र द्वय की यह तकनीक कुछ परिवर्तित रूप से उभर कर आई है। यहाँ पर दो त्रिकोनो का निर्माण होता है।
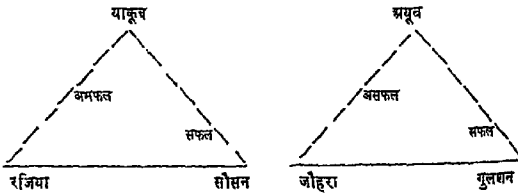
एक ओर रजिया तथा सौसन याकूब के प्रेम-पाश मे उलझती हैं तथा दूसरी ओर जौहरा तथा गुलशन अयूब की ओर आकर्षित होती हैं। परन्तु अन्त मे सौसन तथा गुलशन सफल होती हैं तथा रजिया एव जौहरा असफल रहती हैं।

'मल्लिका देवी वा बग सरोजिनी' मे गोस्वामी जी ने इस तकनीक का कुछ परिवर्तित रूप मे प्रयोग किया है। उपन्यास का नायक नरेन्द्र दोनो नायिकाओ मल्लिका देवी तथा मालती के साथ शादी करता है तथा उपनायक बलबन के पुत्र के साथ तुगरल की पुत्री शीरी के साथ प्रेम एव विवाह का चित्रण किया है।

इसी प्रकार बाबूलालजी सिंह के 'वीर बाला' तथा युगलकिशोर नारायणसिंह के 'राजपूतरमणी' मे उदयपुर के राणा राजसिंह के मन्त्री एव सखा अपनी जान पर खेल कर राणा को रूपवती का उद्धार करने मे सहायता प्रदान करते है।

पात्र-द्वय की, चरित्रांकन की तकनीक प्रेमचन्दोत्तर ऐतिहासिक उपन्यासो मे भी उपलब्ध होती है।

(iii) चरित्रों में विरोधाभास—यद्यपि विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो के चरित्रो के मानसिक द्वन्द्व तथा अन्तर्विरोधो का अत्यन्त आधुनिक स्वरूप प्राप्त नहीं होता तथापि प० बलदेव प्रसाद मिश्र के 'पानीपत' तथा व्रजनन्दन सहाय के 'लाल चीन' नामक ऐतिहासिक उपन्यासो मे मानसिक द्वन्द्व तथा

तथा मानव मन की अतल गहराइयो के गूढ रहस्यो तथा विरोधाभासो का अत्युत्तम चित्रण किया गया है।

प० बलदेवप्रसाद मिश्र के 'पानीपत' मे मराठा सेना के सेनापति सदाशिवराव भाऊ का चरित्र-चित्रण मानसिक द्वन्द्वो का अनुपम उदाहरण है। अजित सेना नामक अध्याय मे जब मराठो की विशाल वाहिनी उत्तर की ओर कूच करती है उस समय सेनापति गर्व मे सेना की ओर देखता है (पृष्ठ 110)। वह इससे पहले की अपनी विजयो का स्मरण करता है (पृष्ठ 111), तथा उसका हृदय आत्म-विश्वास से भर उठता है। परन्तु एकाएक भाऊ के हृदय मे सतोगुणी विचार उत्पन्न हुए और वह कुरुक्षेत्र बनाम पानीपत को हिन्दुओ की पराजय एव विनाश का कारण समझने लगता है और उसके हृदय मे भविष्य के अनिष्ट की आशका उत्पन्न होती है। सेनापति के मानस का यह द्वन्द्व अद्वितीय बन पडा है। 'परामर्श मे विघ्न' नामक अध्याय मे भाऊ मल्हारराव होल्कर, जनकोजी सिन्धिया, राजा सूरजमल तथा दामाजी गायकवाड के उचित परामर्श के विरुद्ध बलवन्त राव मेंडले तथा गोविन्द पथ बुन्देला की खुले मे युद्ध करने की सलाह मान कर तनाव, अन्तर्द्वन्द्व तथा अपराध-भावना अनुभव करता है—'सदाशिवराव भाऊ का मन निराश हो रहा था, न्याय-बुद्धि तो उसको अपनी ओर खेंचती थी, परन्तु निर्बल मन दूसरी ओर को गिरा पडता था।'[1]

'निद्रा मे सदाशिवराव भाऊ' नामक अध्याय मे सेनापति के मनोविज्ञान को स्वप्न मनोविज्ञान के साथ मिलाकर उभारा गया है (पृष्ठ 147,159)। यहाँ धार्मिक मान्यताओ, मानसिक दुर्बलता तथा मनोवैज्ञानिक तनाव की अभिव्यक्ति स्वप्न के माध्यम से की गई है। दिल्ली विजय के पश्चात् मराठो के दरबार मे एक बार फिर मराठा सरदारो की आपसी टकराहट और सेनापति का सिन्धिया व होल्कर के विरुद्ध मेडले की बातो को स्वीकार करना उसके मानसिक तनाव का कारण बनता है जिसे कलात्मक ढग से चित्रित किया गया है (पृष्ठ 297-298)।

व्रजनन्दन सहाय के 'लाल चीन' मे गयासुद्दीन के गुलाम लाल चीन अपने स्वामी गयासुद्दीन को कैद करने तथा उसका सिंहासन हथियाने का कार्यक्रम बनाता है, परन्तु ठीक इसी अवसर पर लाल चीन के हृदय मे एक भयानक द्वन्द्व उठ खडा होता है—'मन थिर न रहने के कारण इसके चित्त मे विकृति सी हो आई थी। शृ खलाबद्ध विचार इस समय इसके नही होते थे। भावो की मानो बाढ इसके हृदय सरोवर मे आ गई थी और भावो की तरग पर तरग उठने लगी थी।

'बहुत देर तक सुन्दर दालान मे लाल चीन इधर-उधर घूमता हुआ कुछ आप ही आप कह रहा था। अधिक देर तक जब अपने को सम्हाल न सका तो वह उच्च स्वर से बोल उठा 'नहीं' ! नही ! यह काम मुझसे नही होगा। यदि काम करते हीं,

1 'पानीपत,' प० बलदेवप्रसाद मिश्र, पृष्ठ 132

वह समाप्त हो जाता तो जहाँ तक शीघ्र होता उसे कर ही देना उत्तम था। यदि क्रिया के साथ उसके फल तथा परिणाम की इतिश्री हो जाती तो क्या भय था। यदि कार्य की सफलता के परिणाम का भी विनाश हो जाता तो सब ठीक था। किन्तु ऐसा होता तो नहीं।[1]

इस प्रकार के अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण एक कलात्मक उपलब्धि है।

(ग) चरित्र-चित्रण की सीधी या वर्णनात्मक शैली—सामान्यत विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासकार एवं ऐतिहासिक रोमांसकार चरित्रों की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन स्पष्ट रूप से स्वयं ही कर देते हैं। यद्यपि कलात्मक दृष्टि से इस प्रकार के चरित्र-चित्रण की तकनीक को बहुत उच्च कोटि का नहीं समझा जाता तथापि प्रेमचन्दपूर्व युग में जबकि हिन्दी उपन्यास अपनी शैशव-अवस्था में था, चरित्र-चित्रण की यह तकनीक ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है।

इस प्रकार का चरित्र-चित्रण लगभग सभी ऐतिहासिक उपन्यासकारों तथा ऐतिहासिक रोमांसकारों ने अपनी कृतियों में किया है। यहाँ वह सामान्यत पात्रों के स्वभाव, संस्कार, वेशभूषा, सौन्दर्य एवं अन्यान्य चारित्रिक विशेषताओं का स्वयं परिचय देते हैं।

कई बार विवेच्य लेखक अपनी कृतियों के प्रारम्भ में ही चरित्रों की विशेषताओं का वर्णन करते हैं, जो ऐतिहासिक एवं लोक अतीत के पुन प्रस्तुतिकरण एवं पुन निर्माण की प्रक्रिया में पात्रों के क्रिया-कलापों तथा उनकी अन्यान्य ऐतिहासिक एवं अनैतिहासिक घटनाओं के प्रति प्रतिक्रियाओं को नियोजित करता है।

पं० किशोरीलाल गोस्वामी ने 'तारा' नामक उपन्यास के प्रारम्भ में ही जहाँनारा की चारित्रिक विशेषताओं का प्रत्यक्ष वर्णन किया है,—'यद्यपि जहाँनारा बहुत ही पढ़ी लिखी, अरबी फारसी में फाजिल, दस्तकारी और मुसव्विरी में होशियार थी, पर ये तारा की दोनों तस्वीरें ' ' मनसुख ' असरफ खाँ की बनाई हुई थी जो कि जहाँनारा के हुक्म से बनाई गई थी।'[2] इसी प्रकार दूसरे भाग के प्रारम्भ में भी गोस्वामी जी जहाँनारा के चरित्र के सम्बन्ध में वक्तव्य देते हैं—'जहाँनारा अद्वितीय सुन्दरी थी और उसकी सुन्दरता ही उसके सभी कामों के साधने वाला अमोघ अस्त्र था। उसका सुन्दर मुखड़ा, चंचल और बड़ी नुकीली आँखें, मीठी और चित्त के लुभाने वाली बातें ऐसी थीं कि क्षण भर के लिए भी उन सभों के सुख लूटने की लालसा से प्राय बड़े ऊँचे दर्जे के दरबारी और राज कर्मचारी लोग भी उसके हाथ आत्मविक्रय कर डालते थे और वह (जहाँनारा) भी ऐसी चतुर, राजनीति में निपुण और रंगीली औरत थी कि बड़े-बड़े प्रतापशाली राज दरबारियों को मर्म

1 लाल चीन [illegible], पृष्ठ 76 77
2 'तारा' भाग 1, पृष्ठ 9

बतला कर अपना काम निकाल लेती थी ।[1] इसी प्रकार तीसरे भाग के प्रारम्भ मे गोस्वामीजी ने उदयपुर के राजकुमार राजसिंह की वेशभूषा तथा वीरता का चित्रोपम चित्रण किया है । उन सभो मे जो अपने बर्छे पर बोझ दिए हुए अधेड की ओर झुका हुआ था, अपनी बेशकीमत और भडकीली पोशाक और अपने देव दुर्लभ स्वरूप के कारण अपने सब साथियो का सरदार मालूम होता था । इसकी उम्र चौबीस-पच्चीस बरस के लगभग थी और उसके प्रत्येक अग की गढन ऐसी अनोखी थी कि देखने वालो पर उसका भरपूर असर पडता था और जो उसे देखता यदि वह सचमुच वीर होता तो चित्त से उस वीर युवा पर श्रद्धा करता था ।"[2]

'रजिया बेगम' मे गोस्वामी जी ने रजिया के सम्बन्ध मे उसके पर्दा-प्रथा के विरुद्ध होने के सम्बन्ध मे वक्तव्य दिया है—'पाठक लोग रजिया के स्वाधीन और पुरुषोचित हृदय का कुछ-कुछ परिचय अवश्य पावेंगे और यह भी समझ सकेंगे कि मुसलमानो मे पर्दे की चाल जितनी बढी चढी है, रजिया उतना ही उसके विरुद्ध आचरण करती थी ।'[3]

प० रामजीवन नागर ने 'जगदेव परमार' नामक उपन्यास मे जगदेव की वेषभूषा तथा उसके व्यक्तित्व का स्वय चित्रण किया है—'सवार की अवस्था लगभग 15 वर्ष की होगी, रग कुछ साँवला, परन्तु देखने मे चित्ताकर्षक, शिर पर जिसके गुलाबी राजपूतो की सी पगडी, लम्बा अगरखा, रेशमी किनारे की धोती, कमर बधी हुई, एक ओर तलवार और दूसरी ओर कटार, हाथ मे भाला, कन्धे पर तीरो का कमठा और दूसरे हाथ मे चाबुक लिए अच्छे अरबी घोडे पर आते हुए सवार को देख कर दोनो उसकी ओर देखने लगे ।'[4]

प० बलदेवप्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' नामक उपन्यास मे नाना फडनवीस के चरित्र का प्रत्यक्ष रूप से चित्रण किया है—'अनेक राजा-महाराजा को अपने वश मे लाता, बार-बार पेशवाओ को राज्याभिषेक देता, अग्रेज और टीपू को पराजित कर निजाम को इच्छानुसार नचाता, पेशवाई कीर्ति का प्रचार करता है, उन्नति अवनति के उदय अस्त मे भी तेजोमय प्रकाशमान होता हुआ वह ससार को चकित करने वाला होगा ।[5]

श्यामलाल गुप्त ने 'रानी दुर्गावती' उपन्यास मे दुर्गावती के साहस तथा धैर्य के सम्बन्ध मे स्वय वक्तव्य दिया है,—'दुर्गावती कच्चे हृदय की स्त्री न थी । वह समय की गति को भली प्रकार जानती थी । विपत्ति मे साहस ही काम आता है ।

1 'तारा' भाग 2, पृष्ठ 2
2 वही, भाग 3, पृष्ठ 6
3 'रजिया बेगम,' पहला भाग, पृष्ठ 8
4 'जगदेव परमार,' पृष्ठ 24
5 'पानीपत,' पृष्ठ 103

यह भी वह जानती थी। विपत्ति के समय सोच करने से कुछ लाभ नहीं होता, उसकी शान्ति करने योग्य उपायो को करना ही विपत्ति मे लाभदायक है।'[1]

मुन्शी देवीप्रसाद ने 'रूठी रानी' नामक उपन्यास के आरम्भ मे, उपन्यास की नायिका उमादे के चरित्र का स्वय चित्रण किया है—'उसके जन्म लेने से पृथ्वी पर नए ढग की चहल पहल मची थी। थोडे दिनो मे उसके सौन्दर्य की धूम राजपूताने मे मच गई।'' 'उसके आगे राजाओ की गुणावली सुनाती थी और उसके जी की थाह लेती थी पर वह अपने रूप के घमण्ड मे कुछ न सुनती थी। उसे केवल रूप ही का गुमान न था, दूसरे गुण भी रूप के सदृश ही रखती थी। मन के साहस और हृदय की उदारता मे भी कम न थी। स्वभाव ससार से निराला था। छुई मुई की तरह जरा किसी ने उगली दिखाई और वह कुम्हलाई।'[2]

इस प्रकार सामान्यत सभी विवेच्य उपन्यासकार अपने उपन्यासो मे चरित्र का चित्रण स्वय ही सीधी अथवा वर्णनात्मक शैली मे करते हैं। वे पात्रो के व्यक्तित्व को उभारने के लिए उनकी अन्यान्य चारित्रिक विशेषताओ का वर्णन करते हैं।

(४) सामूहिक चरित्रांकन—कई बार मानवीय अतीत का चित्रण, पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण करते समय विवेच्य लेखक किसी एक महान् व्यक्ति अथवा पात्र की चारित्रिक विशेपताओ के स्थान पर एक विशिष्ट युग के समूह के चरित्र की विशेपताएँ चित्रित करते हैं। इस प्रकार के चरित्रांकन मे सामान्यत सेनाओ, भीडो, जातियो तथा समुदायो आदि की चारित्रिक विशेपताओ का सामूहिक रूप से चित्रण किया जाता है।

बाबूलालजी सिंह ने 'वीरबाला' नामक ऐतिहासिक उपन्यास मे उदयपुर के महाराणा की सहायक राजपूत जातियो का सामूहिक चरित्रांकन किया है—'फिर महाराणा ने राठौड कुल कलश जयमल के वश के और जगावत कुल के सरदार और अपने कुल के अन्य सरदारो और कोटारी के चौहान, विजुली के प्रमार और झाला कुल आदि-आदि अपने समस्त सरदारो के प्रति कहा, वीरगण '' ...... मेवाड के आप ही लोग स्तम्भ स्वरूप हैं। उसकी सब प्रकार से रक्षा करना आप ही लोगो का काम है।'[3]

प० बलदेवप्रसाद मिश्र ने 'पानीपत' के 'अजित सेना' नामक अध्याय मे मराठा सेना का चित्रांकन अत्यन्त सजीव एव ओजपूर्ण भाषा मे किया है—'अमानुषी शक्ति सा चित्र दिखाती शौर्य-प्रवाह से मदोन्मत्त बनी प्रमत्त सेना विजयी निशान उडाती हुई तैयार हो गई, पेशवा जी जिसका अत्यन्त विश्वास करते थे, जिसके बल और जिसकी शूरता पर प्रजा को बडा भरोसा था, जिसकी विजय कीर्ति के यशोगान से शत्रुगण

1 'रानी दुर्गावती,' पृष्ठ 12
2 'रूठी रानी,' पृष्ठ 1
3 'वीरबाला' लालजीसिंह, पृष्ठ 33-34

कपायमान हुआ करते थे जिसका अद्भुत दृश्य मित्रो को हर्षित करता था, जिसकी प्राप्त की हुई कीर्ति से इब्राहीम खाँ गार्दी बहुधा गर्वित हो जाता था, जिसकी महानता भरी हुई कीर्ति सम्पूर्ण भारत-भूमि मे उस समय गरज रही थी, जिसके घोडो टापो से मध्य, दक्षिण हिन्दू स्थान भली भाँति से खुद गया था। वही अजित सेना आज दृढ निश्चय दिखाती, अनन्त पुण्य कर्मो के प्रभाव से राज-राजेश्वर पद को प्राप्त हुए पेशवा की कीर्ति को गाती, भारतवर्ष से मुसलमानो को निकालने की इच्छा करती, सनातन धर्म की महान् महिमा को दिखाती, अटक देश तक भगवे झण्डे को फहराती बनी-ठनी कूच करने की तैयारी करती है।"[1]

इस प्रकार सामान्यत जातियो, सेनाओं तथा भीडो की चारित्रिक विशेषताओ का अन्यान्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे सामूहिक चित्रांकन किया गया है।

(vi) घटनाओ, कथोपकथनो तथा पात्रो के माध्यम से चरित्र का उद्घाटन--सीधा अथवा वर्णनात्मक ढग से चरित्र-चित्रण करने के साथ-साथ विवेच्य लेखक कतिपय घटनाओ के घटित होने की प्रक्रिया के माध्यम से पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ को उभारते हैं।

कई बार दो अथवा अधिक पात्र वार्तालाप करते समय किसी अन्य पात्र अथवा स्वय अपनी चारित्रिक विशेषताओ का आभास दे जाते हैं। इसी प्रकार घटनाओ तथा तथ्यो के प्रति अन्यान्य पात्रो की प्रतिक्रियाओ की अभिव्यक्ति के माध्यम से भी चरित्रो का उद्घाटन किया गया है।

इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से पात्रो की चारित्रिक विशेषताओ को उभारने तथा उनके सम्बन्ध मे सकेत एव आभास देने की तकनीक कलात्मक दृष्टि से उच्च-स्तरीय तथा साहित्यिक बन पडी है।

प० किशोरीलाल गोस्वामी ने 'तारा' नामक उपन्यास मे कथोपकथन के माध्यम से दारा एव जहाँनारा के चरित्र को उभारा है। जब दारा जहाँनारा को तारा उपलब्ध करने को कहता है तो वह उसे उसकी बीबी मेहर-उलन्निसा, शाह बुखारा की भेजी हुई बगदादी बादी तथा फिरगिनो का सदर्भ देते हुए कहती है—"ईद की शब को कुरान की कसम खाकर,—मुझी से, जिसके साथ तुमने किसी किस्म का कौल व करार करना सरासर तुम्हारी बेहयायी और बेइनसाफी नही जाहिर करता। अफसोस! मैंने तुम्हारी कसम पर एतबार करके नाहक अपने तई आप बरबाद किया और अपनी पाक[2]"। 'इसी भाग मे सलावत के अत्यन्त अश्लील चरित्र को उसके इन शब्दो द्वारा उभारा गया है,—"या तो तारा को ही इस सीने मे लगाऊँगा, या उसी परी-पैकर के ऊपर निसार हो जाऊँगा।"[3] इसी प्रकार दूसरे भाग

1 'पानीपत,' भाग 2, पृष्ठ 104
2 'तारा,' भाग 1, पृष्ठ 3-4
3 वही, भाग 1, पृष्ठ 50

मे सलावत तथा रम्भा के कथोपकथनो के माध्यम से सलावत के अश्लील चरित्र को उभारा गया है। जबकि वह तारा मे शादी करने के पश्चात् भी रम्भा से यौन सम्बन्ध स्थापित करने की बात कहता है।[1] 'तारा के ही दूसरे भाग के जहाँनारा के कथोपकथनो के माध्यम से तारा की चारित्रिक विशेषताओ का चित्रण किया गया है—'इनायतुल्ला ! तारा ऐमी नेक, हुनरमद, खूबसूरत और दिमागदार लड़की है कि उसे देख, उस पर मुझे रश्क तो होता है।'[2] जब तारा का सौतेला मामा अर्जुन तारा की माँ चन्द्रावती से तारा का ब्याह दारा से करने को कहता है तो चन्द्रावती के उत्तर मे अमरसिंह, तारा तथा स्वय चन्द्रावती की चारित्रिक विशेषताओ को उभारा गया है,—"इतना तुम खूब याद रक्खो कि तारा उस हठी बाप की बेटी है कि जिसने अपने राज्य को तृण-समान त्याग दिया। फिर उम (तारा) के स्वभाव को भी मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि वह दारा के सामने जाने के पहले ही अपना काम आप तमाम कर डालेगी, क्योकि मान-सहित मरना, अपमान-सहित जीने की अपेक्षा करोड़ दर्जे बढ कर है। और मैं भी उस समय बहुत ही प्रसन्न होऊँगी जब यह बात सुन और जान लूंगी कि तारा ने यवन-ससर्ग से बचने के लिए अपनी जान दे दी।"[3]

'रजिया बेगम' नामक उपन्यास में गोस्वामी जी ने रजिया के कामुकतापूर्ण व्यवहार को सवाद के माध्यम से उभारा है—रजिया ने नर्मी के साथ कहा—'प्यारे। याकूब। यह सलतनत, यह तख्त, यह रियासत, यह रुतबा, यह जर और यह जवाहिर सब कुछ मैं तुझ पर निसार करती हूँ, क्या इतने पर भी तू मेरे हुकुम को न मानेगा और मेरे कहे मुताबिक न चलेगा।'[4]

इस प्रकार सवादो के माध्यम से चरित्रो की विशेषताओ को उभारा जाना गोस्वामीजी की एक कलात्मक उपलब्धि है।

रामजीवन नागर के 'जगदेव परमार' मे टोक-टोड़ा के राजा राजसिंह के सवाद के माध्यम से जगदेव के चरित्र की विशेषताओं का चित्रण किया गया है—'धारा नगर के राजा उदयादित्य का छोटा कुँवर जगदेव है, वह बड़ा स्वरूपवान, वीर्यवान और तेजस्वी है। यदि बन सके तो उसी के साथ वीरमती का विवाह कर देना चाहिए।'[5]

ठाकुर बलभद्रसिंह ने 'जयश्री वा वीर बाला' नामक उपन्यास मे जयश्री के ही सवाद के माध्यम से उसके धैर्य की चारित्रिक विशेषता को उभारा है। जब जयश्री व उसकी सखियो को भारत पर यवनों के आक्रमण की सूचना मिलती है और

1 'तारा' भाग 2, पृष्ठ 25-26
2. वही, पृष्ठ 8
3 वही, पृष्ठ 35
4. 'रजिया बेगम,' भाग-2, पृष्ठ 64-65
5 'जगदेव परमार,' पृष्ठ 38

सखियाँ घबराती हैं, तो जयश्री कहती है—'सखीन क्या करना चाहिए। किन्तु घबराने की अपेक्षा धर्मपूर्वक यह सब बात विचार कर उसमें बचने का प्रयत्न करना उचित है।'[1]

चन्द्रगमदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' में अमीर अबदुल्ल रहमान खाँ की मजनूँनता का चित्रण कथोपकथन के माध्यम से किया गया है। वह अपने ख्वाजासरा से कहता है 'औफ़ खाँ। बतलाओ, अब भी कोई सूरत कम में कम उसके मिलाप की निकल सकती है या नहीं! हाय! हाय!! औफ़ औफ़ खाँ! तुम नहीं जानते कि मुझे उसके इश्क ने कैसा खराब व खस्ता और परेशान हाल बना रखा है। यह तमाम अमीराना माल व सामान उसके बगैर मेरी जिन्दगी को तल्ख किए हुए हैं।'[2]

बाबू युगल किशोर नारायण सिंह ने अपने 'राजपूत रमणी' नामक उपन्यास में उदयपुर के महाराणा राजसिंह को लिखे गए रूपवती के पत्र के माध्यम से राणा तथा रूपवती के चरित्र को उभारा है—"श्रीमान् सूर्यकुल कमल, क्षत्रियकुल दिवाकर, हिन्दू सिरमौर, श्रीमान् हिन्दू-पति महाराणा साहिब के चरण कमल में एक अनाथिनी बालिका श्रीमान् की दासी का साष्टांग प्रणाम स्वीकार हो! ...परन्तु हाय जिन यवनों के नाम से मुझे घृणा, हार्दिक घृणा-रही है, जिन सनातन धर्म के शत्रु तुर्कों का नाम सुन कर मेरा हृदय काँप उठता है। जिनके स्पर्श से भी मुझे ग्लानि होती है। हाय! लिखते हुए हृदय फटता है कि मैं उनके साथ संसर्ग (ब्याह) कैसे करूँगी? नहीं-नहीं और कदापि नहीं।"[3]

अघोरी कृष्ण प्रकाशसिंह ने अपने वीर चूडामणि नामक उपन्यास में चूडाजी के साहस और शौर्य का चित्रण प्रत्यक्ष कथन एवं कथोपकथन के मिश्रित तकनीक के माध्यम से किया है—"चूडा जी का साहस और बल विपद में सहस्र गुणा बढ़ जाता था। कुमार ने बड़े गर्व से कहा, "मित्र आज मैं प्रण करके आया हूँ कि दुर्ग दखल करूँगा या प्राण दूँगा।"[4]

इस प्रकार विवेच्य लेखक भारतीय मध्ययुगों का पुनः प्रस्तुतिकरण एवं पुनर्निर्माण करते समय चरित्र-चित्रण की कई तकनीकों का प्रयोग करते हैं। यद्यपि सामान्यतः चरित्र-चित्रण की सीधी अथवा वर्णनात्मक शैली को ही अपनाया गया है फिर भी मध्ययुगों के पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उनके विशिष्ट युग की परिस्थितियों द्वारा नियोजित किया जाना तथा इसके लिए अन्यान्य तकनीकों का प्रयोग करना विवेच्य लेखकों की कलात्मक उपलब्धि है।

1. 'जयश्री का वीर बाला,' पृष्ठ 8
2. 'काश्मीर पतन,' पृष्ठ 28
3. 'राजपूत रमणी,' युगलकिशोर नारायणसिंह, पृष्ठ 41-42
4. 'वीर चूडामणि,' अघोरी कृष्ण प्रकाशसिंह, पृष्ठ 15-16

(ग) प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमांसो की भाषा-शैली

मानवीय भावो, भावनाओ, मनोकामनाओ, इच्छाओं, आकांक्षाओ, क्षुधाओ एव मनोभावो की अभिव्यक्ति की कहानी मनुष्य के सभ्य होने की कहानी के साथ जुडी हुई है। मानवीय क्रियाकलापो तथा घटनाओं की अभिव्यक्ति करने के लिए सभ्य होने के पश्चात् मनुष्य ने भाषा का आविष्कार किया होगा और मनुष्य की उन्नति के साथ-साथ भाषा भी उन्नति एव प्रगति की ओर बढती गई। धीरे-धीरे मानवीय अध्ययन एव ज्ञान के क्षेत्रो का विभाजन होने से साहित्य एक कला के रूप में उभरा। कथा साहित्य मानवीय भावों तथा विश्व की वास्तविकताओ का यथा-तथ्य वर्णन करने के लिए कदाचित् सब से अधिक समर्थ एवं महत्त्वपूर्ण है।

प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एवं ऐतिहासिक रोमास-धारा की भाषा एव शैली का अध्ययन करते समय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह होगा कि विवेच्य काल-खण्ड उपन्यास साहित्य का शैशव काल था और यह प्रकृति का नियम है कि आरम्भ में ही कोई साहित्यिक विधा अपनी पूर्ण प्रौढता को प्राप्त नही कर सकती। इस प्रकार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मे प्रेमचन्द पूर्व ऐतिहासिक रोमास एव ऐतिहासिक उपन्यासधारा की भाषा-शैली का अध्ययन न्याय-पूर्वक किया जा सकता है।

भाषा तथा शैली के सम्बन्ध मे डॉ० गोविन्द जी का मत उल्लेखनीय है—"भाषा मनोभावो की अभिव्यक्ति का साधन है और शैली उस साधन को उपयोग करने की रीति। यो तो सभी साहित्यिक कृतियों मे शैली का महत्त्व है, किन्तु कदाचित्, इसलिए कि उपन्यास जीवन की समग्रता का एक सश्लिष्ट एव सजीव चित्र प्रस्तुत करता है, उपन्यास मे उसका विशेष महत्त्व है।"[1]

विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एवं ऐतिहासिक रोमासो मे भाषा का स्वरूप भारतेन्दुयुगीन गद्य भाषा के अनुरूप है। प्रेमचन्दपूर्व युग मे तुकबदियो तथा नाटकीय भाषा का बोल बाला था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी गद्य की भाषा को एक निश्चित एव विशिष्ट रूप प्रदान किया जो जन सामान्य की भाषा के निकट होने के साथ-साथ साहित्यिक प्रयोग के लिए उचित सिद्ध हो सकती हो।

विवेच्य लेखको पर भाषा के सबध मे भारतेन्दु की धारणाओं का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। यद्यपि तिलिस्मी एव ऐयारी तथा जासूसी उपन्यासो

1. हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास का प्रयोग पृष्ठ 113.

की भरमार के फलस्वरूप भाषा के साथ खिलवाड किए जा रहे थे। फिर भी भारतेन्दु ने भाषा तथा शैली को एक निश्चित स्वरूप प्रदान किया।[1]

"उपन्यास मानव-जीवन की कथा है तो भाषा उसका माध्यम है, भाषा घटनाओ को स्वाभाविक रूप मे, मनोभावो को मूर्त रूप मे और अन्तर्द्वन्द्वो को व्यवस्थित रूप मे प्रकट करने का सर्वाधिक सशक्त माध्यम है। उपन्यास के प्राय सभी उपकरणो मे अनिवार्य अन्त सम्बद्धता के रूप मे जिस तत्त्व का महत्त्व सामान्य सन्दर्भ मे सब से अधिक है, वह भाषा-तत्त्व ही है।"[2]

उपन्यास मानव-समाज और जीवन के अत्यधिक निकट होता है और उसके माध्यम से जीवन तथा जगत् की वास्तविक एव यथार्थ अभिव्यक्ति की जाती है। विशेषत मानवीय अतीत के विशिष्ट एव सामान्य कालखण्डो का पुन प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण करने के लिए तथा विवरण को स्वाभाविक एव विश्वसनीय बनाने के लिए भाषा इतनी सशक्त होनी चाहिए कि अतीत के मनुष्यो के मनोभावों, कामनाओ धारणाओ, मान्यताओ अन्तद्वन्द्वो, आदि को बुद्धिगम्य एव स्पष्ट रूप मे प्रस्तुत कर सके।

प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यासकारो तथा ऐतिहासिक रोमासकारो ने भाषा को कोई विशेष महत्त्व नही दिया। उस काल-खण्ड मे हिन्दी गद्य भाषा का कोई विशिष्ट स्वरूप भी निश्चित नही हुआ था।

विवेच्य लेखको ने भी यद्यपि भाषा के सबध मे इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया तथापि वे भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण करते समय कई बार भाषा के उत्तम प्रयोग कर पाए हैं। उनकी भाषा का अध्ययन उनके द्वारा भाषा के पात्रानुकूल, अलकृत एव काव्यात्मक प्रयोगो द्वारा, उर्दू, अग्रेजी एव सस्कृत तथा ग्रामीण भाषाओ के प्रयोगो के शीर्षको के अन्तर्गत किया जाएगा।

(1) **पात्रानुकूल भाषा**—विवेच्य लेखको की कृतियो मे यद्यपि ऐतिहासिक काल के अनुरूप कई भाषा-दोष दृष्टिगोचर होते हैं तथापि पात्रानुकूल भाषा का उपयोग उनकी एक उपलब्धि है।

1 'किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासो का वस्तुगत और रूपगत विवेचन,' डॉ० कृष्णा नाग, आगरा 1966, पृष्ठ 347

"भारतेन्दु ने सरल सहज और सुन्दर शैली को चुना। उन्होंने भावों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का वह रूप चुना जो सर्वसाधारण की समझ मे आजावे। उनके विचार से हिन्दी भाषा मे उन सस्कृत शब्दों का प्रयोग हो सकता था, जो प्रचलित हैं तथा उर्दू और फारसी के वे शब्द भी आ सकते हैं, जिन्हें हिन्दी ने अपना लिया था। अपनी पीढ़ी और आने वाले युग के साहित्यकारों को अपने भावो को प्रदर्शन करने के लिए उन्होंने भाषा का माध्यम बताया है। बोलचाल के हिन्दी के शब्दों का प्रयोग आरम्भ हुआ, जिससे उस समय के साहित्य में सरलता, सजीवता मनोरजकता और स्वाभाविकता आई।"

2 'हिन्दी उपन्यास कला', डॉ० प्रतापनारायण टण्डन सन् 1965, पृष्ठ 234

प० किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासो मे पात्रो की भाषा उनकी जाति, स्तर एव स्थिति के अनुरूप नियोजित होती है। सामान्यत मुसलमान पात्र उर्दू एव अरबी मिश्रित उर्दू भाषा का प्रयोग करते हैं। हिन्दू पात्र भी कई बार उर्दू भाषा का प्रयोग करते हैं। सामान्यत हिन्दू पात्र हिन्दी एव सस्कृतनिष्ठ हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं।

इस सदर्भ मे आचार्य विजयशकर मल्ल का मत गोस्वामी जी की भाषा के सबध मे उल्लेखनीय है,—"गोस्वामी जी के उपन्यासो मे तीन प्रकार की भाषा मिलती है, उनके आरभिक उपन्यासो मे सस्कृतनिष्ठ, समास-बहुला और अलकृत भाषा का व्यवहार हुआ है। ऐतिहासिक उपन्यासो मे मुसलमान-पात्रो अथवा मुसलमानो से बातें करते हुए हिन्दू पात्रो की भाषा प्राय क्लिष्ट उर्दू हो गई है। उनके कई समकालीनो की तरह कही-कही उर्दू ढग के वाक्य-विन्यास भी इनकी भाषा मे मिलते हैं। प्रेम के प्रसग आने पर इनके बीच के उपन्यासो मे भाषा उर्दू की ओर प्राय झुक जाती है। कही-कही अग्रेजी की तरह के भी वाक्य मिलते हैं। गोस्वामी जी की प्रतिनिधि भाषा की जब हम अन्तरग परीक्षा करते हैं, तो कही-कही इनकी रूप-वर्णन क्षमता का बहुत सुन्दर रूप सामने आता है। 'यह उल्लेखनीय है कि अपने समकालीनो मे यह दोष इनमे सब से कम है और उन्होने उपन्यासो की वर्णन शैली का निश्चित रूप से पूर्वापेक्षा अधिक मनोरजक और कथानुरूप बनाया है। इन्होंने सम्वादो को अधिक स्वाभाविक बनाया और कुल मिला कर हिन्दी की औपन्यासिक भाषा को शिष्ट व्यावहारिक भाषा के अधिक से अधिक निकट लाने का उद्योग किया है।"[1]

"तारा" नामक उपन्यास मे गोस्वामी जी जहाँनारा से बात करते हुए तारा द्वारा भी उर्दू भाषा का प्रयोग करवाते हैं,—"मैं इस बात से पूरी आगाही रखती हूँ और अब अपने तईं भी मुसीबत मे फसी हुई समझती हूँ। मुझे यह भी मालूम है कि बड़े राजो-महाराजो का भी छुटकारा बादशाह की मर्जी के मुआफिक होना किए बगैर नहीं होता तो फिर मेरे पिता बादशाह-सलामत ही के जेर साए हैं और मैं यह भी बखूबी जानती हूँ कि बादशाह की अदूल-हुक्मी करना उनकी ताकत से बाहर है।"[2]

इस उपन्यास मे जहाँनारा की भाषा भी इसी कोटि की है—

"जहाँनारा—खूब। यह सुनकर मुझे निहायत खुशी हासिल हुई। सच है, गौहर सोने ही से जीनत पाता है। बीबी, तारा। सचमुच तुम बड़ी ही किस्मतवर हो कि हिन्दुस्तान के ऐसे नामी इज्जतदार, कट्टर हिन्दू और बहादुर राजा की रानी होगी।"[3]

1 विजयशकर मल्ल · आलोचना उपन्यास अक, अक्तूबर सन 1954 विशेष, पृष्ठ 75 76
2 'तारा,' पहला भाग, पृष्ठ 15
3 वही, पृष्ठ 23

'रजिया बेगम' नामक ऐतिहासिक उपन्यास के 'इश्क का आगाज़' नामक परिच्छेद मे बाँदी तथा वजीर-आज़म की भाषा उनके स्तर एव पद के अनुरूप है—"एक बाँदी ने शाहान आदाब बजा लाकर अर्ज़ किया कि,—"जहाँ पनाह। वजीर आजम दरे दौलत पर हाज़िर है और हुजूर की कदम बोसी हासिल किया चाहता है।" खुर्शेद,—"जी हाँ, जहाँपनाह। वह आज अलस्सुबह आया है, और जो कुछ इर्शाद हो, बसरो चश्म बजा लाने के वास्ते तैयार है।"[1] यह भाषा पात्रो के स्तर एव पद के अनुकूल होने के साथ-साथ पात्रो द्वारा उनके युग की विशिष्ट ऐतिहासिक स्थितियो द्वारा उनके चरित्र के नियोजित होने को भी प्रमाणित करती हैं।

इस प्रकार अधिकाश लेखको ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग कर भारतीय मध्ययुगो के चित्रण को अधिक वैज्ञानिक एव बुद्धिगम्य रूप मे प्रस्तुत किया है।

(ii) **अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा**—सामान्यत विवेच्य लेखक ऐतिहासिक घटनाओ के वर्णन एव चित्रण तथा अपने सनातन हिन्दू-धर्म परक जीवन दर्शन के प्रतिपादन मे ही व्यस्त रहे है। इस पर भी कही-कही वे अलकृत भाषा का प्रयोग मानवीय भावो एव प्राकृतिक सौन्दर्य का प्रस्तुतिकरण करने के लिए करते है।

गोस्वामी जी अपने ऐतिहासिक रोमास "मल्लिकादेवी" के छठे परिच्छेद "सखी सग" मे अत्यत अलकृत भाषा मे प्रकृति-चित्रण करते हैं—"सध्या होने मे अधिक विलम्ब नही था, भगवान भास्कर पश्चिमाकाश मे स्थित होकर अपनी कमनीय किरण माला समेट कर विश्रामार्थ शयन सदन मे पधारने का उद्योग कर रहे थे और प्रकाश लोभी पक्षिकुल इधर-उधर से गगन मण्डल में उड उड कर अपनी अपनी आर्तध्वनि से सूर्य देव की अस्त होने से वारण करने लगे थे, किन्तु दैनिक परिश्रम से वे इतने थक गए थे कि आश्रित और आर्त जीवो का आश्वासन किए बिना ही अस्तगामी हुए। उनके ऐसे निष्ठुर और अयोग्य व्यवहार से भग्न मनोरथ होकर पक्षिगण निज निज नीडो की ओर धावित हुए।"[2]

इसी प्रकार "कनक कुसुम" मे पेशवा बाजीराव जब निजाम के निमत्रण पर कुछ सवारो के साथ निजाम के साथ सधि करने के लिए जाते हैं और दो हजार सवारो द्वारा घेर लिए जाते हैं, तो मुसलमान सेनापति हसनखाँ द्वारा हथियार डालने को कहे जाने पर व्यग्य करते हुए कहते हैं—

"मैं नही जानता था कि निजाम इतना बडा ईमानदार और सच्चा आदमी है। खैर कुछ पर्वा नही, तुम तलवार पकडो।"[3] यहाँ पर भाषा की लक्षणा शक्ति का प्रयोग अत्यन्त कलात्मक ढग से किया गया है।

1 'रजिया बेगम' पहला भाग, पृष्ठ 31-32
2 'मल्लिका देवी,' दूसरा भाग, पृष्ठ 35
3 'कनक कुसुम,' पृष्ठ 6

अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह ने अपने "वीर चूडामणि" नामक ऐतिहासिक उपन्यास मे अलकृत भाषा के माध्यम से प्रकृति का मानवीकरण किया है—"पर्वत-श्रेणी और अनन्त वन निविड अन्धकार से आच्छादित हो रहे हैं। पर्वत, वन, मैदान तराई, दरीचे, आकाश और वृक्षों मे शब्द मात्र नही, मानो-जगत्, शीघ्र ही प्रचण्ड पतन आता हुआ जान, भय से व्याकुल हो गया है।"[1]

बाबू लाल जी सिंह ने "वीर बाला" मे प्रकृति का आलबन रूप मे चित्रण किया है,—ऐसे प्राकृतिक आनन्ददायक समय मे राजस्थान के रूप नगरीय राजभवनों मे एक लावण्यमती षोडशवर्षीया बालिका विषण्ण वदन करतल आश्रित कपोलो को अजस्र अश्रुधारा से भिगोती पृथ्वी सिंचन कर रही है'[2]। इसी उपन्यास में युद्ध की विभीषिका का वर्णन अलकृत भाषा मे किया गया है—'एक बार हरहराती हुई दोनो ओर की सेना जब आपस मे टकराती है, तो सैकडो मुण्ड बेल की तरह पृथ्वी को चूम लेते हैं। योद्धा बडे आवेश के साथ मुर्दो पर खडे होकर शत्रु के निदान के हेतु अग्रसर होने लगे। नररक्त से वसुधरा लाल हो गई, भास्कर की बालरश्मि उस पर पड कर स्वर्णरेखा की भाँति चमक रही है।'[3]

इस प्रकार लगभग सभी लेखको ने अपनी कृतियो मे अलकृत एव काव्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है।

(iii) उर्दू, सस्कृत एव अग्रेजी भाषा प्रयोग—विवेच्य लेखको की भाषा मे उर्दू, सस्कृत तथा अग्रेजी भाषा के शब्दो का प्रयोग लेखको की युगीन परिस्थितियो एव साहित्यिक प्रवृत्तियो के अनुरूप ही किया गया है। भारतीय मध्ययुगों के पुन. प्रस्तुतिकरण एव पुनर्निर्माण की प्रक्रिया मे अतिवादी मुसलमान तथा हिन्दू पात्रों के माध्यम से उर्दू, अरबी मिश्रित उर्दू तथा सस्कृत के तत्सम् शब्दो का प्रयोग विपुल मात्रा मे किया गया है। कही-कही अग्रेजी के शब्द भी अनायास ही प्रयोग मे लाए गए हैं जबकि यह एक ऐतिहासिक एव साहित्यिक त्रुटि है।

(क) उर्दू—गोस्वामीजी के 'तारा' तथा 'रजिया बेगम' नामक उपन्यासों, तथा 'लखनऊ की कब्र' एव 'लालकुवर नामक' ऐतिहासिक रोमासो मे उर्दू भाषा का प्रयोग खुल कर किया गया है जबकि 'लवगलता,' 'हृदय हारिणी,' 'गुलबहार' एव 'मल्लिका देवी' आदि ऐतिहासिक रोमासो मे भाषा का स्वरूप अधिकाशत सस्कृत-परक हो जाता है। इस सम्बन्ध मे आचार्य शुक्ल का मत उल्लेखनीय है—'एक और बात जरा खटकती है—वह है, उनका भाषा के साथ मजाक। कुछ दिन पीछे इन्हें उर्दू का शौक हुआ। उर्दू भी ऐसी वैसी नही उर्दू-ए-मुअल्ला। उर्दू जबान और शेरो सुखन की बेढगी नकल से जो असल से कभी-कभी साफ अलग हो जाती है,

1 'वीर चूडामणि,' अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह, पृष्ठ 1-2.
2. 'वीर बाला,' पृष्ठ 1–2
3 वही, पृष्ठ 86

उनके बहुत से उपन्यासो का साहित्यिक गौरव घट गया है। गलत या गलत मानी मे लाये हुए शब्द भाषा को शिष्टता के दरजे से गिरा देते है। खैरियत यह हुई कि अपने सब उपन्यासो को आपने यह मगनी का लिवास नही पहनाया। 'मल्लिका देवी या वग-सरोजनी' मे सस्कृत प्राय: समास-बहुला भाषा काम मे लायी गई है।[1]"

'तारा' के पहले भाग मे दारा के सम्बन्ध मे कथन उर्दू भाषा के प्रयोग का एक उत्तम उदाहरण है,—'दारा—उसी परीजमाल नाजनी की कि जिसके तीरे मिगजा का निशाना मेरा तायके दिल एक मुद्दत से बन रहा है।'[2]

इसी प्रकार 'लखनऊ की कब्र' मे उर्दू भाषा का प्रयोग व्यावहारिक पद्धति से किया गया है—'अल्लाह आलम ? यह नाज, यह नखरे, यह गुस्सा, यह सितम, यह कयामत, यह बेरुखी, खिजलाहट और मचलाहट को दूर करो और इत्मीनान रखो कि मैं अब न तो गैरहाजिर ही रहू गा और न तुमको यो चुपचाप कही चले जाने ही दू गा। चाहे जिस तरह हो, दिन रात मे एक मर्तबा तुम से जरूर मिल लिया करूँगा और तुम्हे रजीदा न होने दू गा।'[3]

(ख) सस्कृत—उर्दू के साथ-साथ विवेच्य लेखको ने अपनी ऐतिहासिक कृतियो मे सस्कृत भाषा का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया है।

प किशोरीलाल गोस्वामी ने 'मल्लिकादेवी', 'लवगता' तथा 'हृदय हारिणी' नामक ऐतिहासिक रोमासो मे सस्कृत भाषा का विपुल मात्रा मे प्रयोग किया है—

"सरला—अज्ञात कुलशीला के सग राजकुल का सम्बन्ध सराहनीय नही होगा।

नरेन्द्र—न हो। चाहे इस सम्बन्ध से त्रैलोक्य हमसे विमुख हो जाय, किन्तु सरला। मल्लिका के सग सघन कानन मे भी हम स्वर्गीय सुख का अनुभव करेंगे और मल्लिका बिना इन्द्र पद भी हमे भार ही विदित होगा। तुम निश्चय जानो, मल्लिका की प्राप्ति की आशा से हम अभी तक जीवन धारण कर रहे हैं।"[4]

अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह ने 'वीर चूडामणि' मे चूडामणि द्वारा अपनी प्रेमिका को लिखे गए पत्र मे सस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया है—

"हृदय मन्दिर की एक मात्र अधिष्ठात्री देवी।

आजकल मैं यवनो के युद्ध मे लीन हूँ, इसलिए क्षमा करना। आशा है कि मैं कुछ ही दिनो मे मुख चन्द्र को देख नयन-चकोरो को आनन्द दूँगा। परन्तु युद्ध मे वीर-गति को पहुँचे तो शोक नही करना पुन दूसरे लोक मे सयोग होगा। पत्र लिख कर विदा मांगता हूँ। यदि विजय भाग्यवश प्राप्त हुई तो फिर मिलू गा।

प्रेमथी चूडा"।[5]

1 रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 552-553
2 'तारा' भाग पहला, पृष्ठ 8
3 'लखनऊ की कब्र,' पाँचवाँ भाग, पृष्ठ 105
4 'मल्लिका देवी व वग सरोजिनी, पृष्ठ 123
5 'वीर चूडामणि,' पृष्ठ 37

इसी प्रकार बाबू लाल जी सिंह ने 'वीर बाला' नामक ऐतिहासिक उपन्यास मे युद्ध-क्षेत्र का वर्णन सस्कृत-परक भाषा मे किया है—'उस विस्तीर्ण मैदान की समस्त धरती मुसलमानी और राजपूत योद्धाओं से भर गई। अनेक तरह के पताकें हवा मे फहराने लगे, नाना भांति के रणवाद्य युद्ध-क्षेत्र मे गुंजारकर वीरों को उभारने लगे, दोनो ओर के वीर अपने-अपने स्थान पर डटे हुए इस उत्सव मे लीन हुए। हरावल मे खडे राजपूत योद्धा बडी सावधानी और फुर्ती से असिचालन करते हुए अपने को शत्रुप्रहार से बचाते हैं।"[1]

गोस्वामी जी के 'मल्लिका देवी' मे यवन एव हिन्दू पात्रो के माध्यम से उर्दू तथा सस्कृतनिष्ठ भाषा का एक साथ प्रयोग उल्लेखनीय है—यवन ने चिल्ला कर कहा,—'देख, काफिर। तुझे अभी जहन्नुम रसीद करता हूँ। दोजखी कुत्ते जरा ठहर जा।'

महाराज—'चुप रह, दुर्वृत्त, नरघातक, पिशाच ! तेरी मृत्यु सन्निकट है।'

यवन—'देख बुतपरस्त काफिर। अपने किये का नतीजा तू अभी पाता है।'[2]

इस प्रकार विवेच्य लेखको ने अपनी ऐतिहासिक कृतियो में उर्दू तथा सस्कृत भाषाओ के अन्यान्य प्रयोग किए हैं।

(ग) अग्रेजी—उर्दू तथा सस्कृत के साथ-साथ विवेच्य ऐतिहासिक रोमांसो एव ऐतिहासिक उपन्यासो मे अग्रेजी के शब्दो का भी प्रयोग किया है। उदाहरण-स्वरूप बाबू लाल जी सिंह ने 'वीर बाला' मे अग्रेजी 'चार्ज' शब्द का प्रयोग किया है—'सूर्य नारायण सहस्रो वीरो के साथ ससार से पयान कर गए दिवस कृत्य रणशायी योद्धाओ की आत्माओ के सग ससार से अलग हुआ। रात्रि ने चार्ज लेकर दुनिया पर अपना प्रभाव फैलाया, अंधेरा बढने लगा। बादशाह दिन भर के कठिन परिश्रम से भी अपना मनोरथ सफल न कर सके और सीसोदिया लोग तनिक भी स्थान से पीछे न हटे।'[3]

किशोरीलाल गोस्वामी 'लाल कुंवर' नामक ऐतिहासिक रोमास मे 'ईद में मुहर्रम' नामक परिच्छेद में, पाठको को महल में ईद में मुहर्रम का 'सीन' दिखाते हैं।'[4]

इस प्रकार के प्रयोग अस्वाभाविक मे प्रतीत होते हैं। यह एक कलात्मक त्रुटि है।

(iv) ग्रामीण भाषा प्रयोग—भारतीय मध्य युगो का चित्रण करते समय विवेच्य लेखक कई बार ग्रामीण एवं स्थानीय भाषाओं का भी प्रयोग करते हैं।

1 'वीरबाला,' पृष्ठ 78
2 'मल्लिका देवी,' पहला भाग, पृष्ठ 35-36
3 'वीरबाला,' पृष्ठ 82
4 लालकुंवर, पृष्ठ 35

प. रामजीवन नागर ने 'जगदेव परमार' मे सिपाहियो की कायरता का वर्णन करते हुए स्थानीय भाषाओ का सजीव चित्रण किया है—

'एक पुरबिया—भैया का कहि । हमहूँ अबही दुई महिना मे नव महरिया के लाए हन । जो हम मरिजैबे तो वह बिचारि केहकैर जीय का रोई, पर करनु का ? राजा केर अन्न जल लेत 2 बरिस हुइगे अब जो न जाई तोहू तो लोग बुरा कही ।[1]

मु शी देवी प्रसाद ने 'रूठी रानी' मे स्थानीय शब्दो, लोक गीतो एव लोक तत्वो का बहुतायत से प्रयोग किया है । उदाहरण स्वरूप—'दिन ढल गया, बाजारो मे छिडकाव हो गया । लोग बारात देखने के चाव मे घरो मे उमडे चले आते हैं । जोशी ने दरबार मे आ कर रावल से कहा—'सामेले (स्वागत) का मुहूर्त निकट है आप सवारी की आज्ञा दें ।'[2] इसी प्रकार कई लोक गीतो का भी प्रयोग किया गया है । उदाहरण—

ब्रज देसा, चन्दन रूखा मरु पहाडा मौड ।
गरुड खगा लका गढा, राजकुला राठौड ।।
दारूडो दाखारो .
दारु पीवो रण चढो, राता राखो नैन
वैरी थारा जलमरे मुख पावैला सैन ।।[3]

इस प्रकार ग्रामीण एव स्थानीय भाषाओ के प्रयोग के माध्यम मे विवेच्य लेखको ने जहाँ एक ओर मध्य युगो के चित्रण को अधिक बुद्धिगम्य एव स्वाभाविक बना दिया है वही दूसरी ओर इस प्रकार की भाषा के प्रयोग से कृतियो मे आँचलिकता का पुट आ गया है ।

(४) वाक्याशपरक भाषा प्रयोग—प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यास एव ऐतिहासिक रोमास लेखको द्वारा अपनी भाषा मे मुहावरो, लोकोक्तियो तथा भाषा के स्थानीय स्वरूपो का प्रयोग किया गया है । यद्यपि, सामान्यत इस काल-खण्ड के लेखको की भाषा किसी निश्चित स्वरूप को प्राप्त नही कर पाई थी फिर भी वाक्यांश परक भाषा प्रयोग विवेच्य लेखको की भाषा-शैली को अधिक समृद्ध तथा कलात्मक बनाने मे सहायक सिद्ध हुए हैं । इन लेखको की भाषा मे इस प्रकार के कुछ प्रयोगो के उदाहरण इस प्रकार है—

क्या पत्थर पर दूब जमाना चाहती है,[4] मेरे लिए आपने कुछ भी नही उठा रक्खा,[5] उत्तर को सुन कर बादशाह आग बबूला हो गया,[6] पहरे वाला सवार की

1 'जगदेव परमार,' पृष्ठ 83
2 'रूठी रानी,' पृष्ठ 6
3 वही, पृष्ठ 10
4 'राजपूतरमणी,' बाबू युगलकिशोर नारायणसिंह, पृष्ठ 23
5 वही, पृष्ठ 29
6 वही, पृष्ठ 62

इस सखावत पर बाग-बाग हो गया,[1] नवाब आध घण्टे तक खुशी के समुद्र में गोते खाता रहा,[2] भालो की मार के मारे यवन सिपाहियो के छक्के छूट गए,[3] दिन भर का भूला हुआ सायंकाल मिल जाए, तो भूला नही कहलाता,[4] राजपूत वीरो का सामना करना जरा टेढ़ी खीर है,[5] वीरता दिखा कर इनके दाहिने हाथ हो गए थे,[6] उपस्थित गणों के हृदय मे चूहे तो कूद रहे हैं,[7] बाल-बाँका नही हुआ होगा।[8] पाँव उखड़े हुए थे,[9] वह तो राजा के मुँह के बाल हो गया,[10] नौ-दो-ग्यारह हो जाऊँगी।[11] कलेजा मुँह को आता है।[12] रानी को बेटी के विधवा होने की आशंका से दुःख तो बहुत हुआ पर पति की बात मान कर वज्र की छाती करके चुप हो रही थी।[13] गुरु-गुरु विद्या और सिर-सिर बुद्धि,[14] हाथों-हाथ ले गए,[15] उल्टा ही 'अपनी जान को जोखूं मे पाया,[16] उनके सरदार भी अपनी सब सटपट भूल गए,[17] पट्टी पढी ही न थी,[18] निन्नानवें के फेर मे पड़ गए,[19] मैं अपनी मर्यादा छोड देती तो सौतें मुझ पर हँसती और कहती कि बस इतना ही पानी था।[20] आसा जी ने कडी बिगाड दी, पानी फेर दिया,[21] बनी बनाई बात दो कौडी की हो जाएगी,[22] लाखों की पुतली जानता हूं,[23] दूसरे का मुँह जोहना पडता है।[24] चित्त घटने की भी तो जगह

1 'रानी दुर्गावती, श्यामलाल गुप्त, पृष्ठ 3
2 वही, पृष्ठ 11
3 वही, पृष्ठ 16
4 'प्रणपालन,' बाबू सिद्धनाथ सिंह, पृष्ठ 37
5 'वीर चूडामणि,' अखौरी कृष्ण प्रकाश सिंह, पृष्ठ 23
6 वही, पृष्ठ 57
7. 'काश्मीर पतन,' जयरामदास गुप्त, पृष्ठ 93
8 'पूना मे हलचल गगाप्रसाद गुप्त पृष्ठ 47
9 वही, पृष्ठ 55
10 वही, पृष्ठ 70
11 वही, पृष्ठ 77
12. वही पृष्ठ 78
13 'रूठीरानी,' मुन्शी देवीप्रसाद जी, पृष्ठ 3
14 वही पृष्ठ 5
15. वही, पृष्ठ 7
16 वही, पृष्ठ 8
17 वही, पृष्ठ 8
18 वही, पृष्ठ 16
19. वही, पृष्ठ 32.
20 वही, पृष्ठ 36
21 'रूठी रानी,' मुन्शी देवीप्रसादजी, पृष्ठ 37
22 वही, पृष्ठ 42
23 'सौतेली माँ या अन्तिम युवराज,' जयरामदास रस्तोगी, पृष्ठ 6
24 वही, पृष्ठ 6

नही है,[1] कुछ दाल मे काला है,[2] उसका माथा ठनका,[3] होनहार बिरवान के होत चीकने पात,[4] रानी की जलती हुई अग्नि पर घी पड गया,[5] अब पछतायें क्या होत जब चिडिया चुग गई खेत,[6] खुशी के मारे फूल गया,[7] सुनते ही बघेली आपे से वाहर हो गई,[8] आनन्द के मारे फूले नही समाते,[9] छक्के छूट गए,[10] रानी के शब्द कटे पर नोन के समान,[11] सुनते ही राजा की आँखें खुल गई ।[12] वह उसी मे चौकडी मरा करता था,[13] तारा का बाल भी बाँका न होगा,[14] आग-बबूला होना,[15] हजार मुँह से सराहने लगी,[16] रभा की सारी अक्ल हवा हो गई,[17] मुँह की खाई,[18] अपना मुँह काला करेगी,[19] कोई बात उठा न रक्खी,[20] हाथ मलेगी,[21] सोना के ऐसे दाँत खट्टे किए,[22] नाको दम आ गया,[23] छक्के छूट गए,[24] आग-बबूला,[25] कलेजा मुँह को आने लगा,[26] आँखो मे भी नदियाँ उमडने लगी,[27] शहजादे का दिल बाग-बाग हो

1 'सौतेली मा' पृष्ठ 62
2 'नूरजहाँ,' गगाप्रसाद गुप्त, पृष्ठ 63
3 वही, पृष्ठ 88
4 'जगदेव परमार,' रामजीवन नागर, पृष्ठ 3
5 वही, पृष्ठ 8
6 वही, पृष्ठ 28
7 वही, पृष्ठ 38
8 वही, पृष्ठ 41
9 वही, पृष्ठ 50
10 वही, पृष्ठ 92
11 वही, पृष्ठ 130
12 वही, पृष्ठ 145
13 'तारा,' भाग 1, किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 89
14 वही, भाग 2, पृष्ठ 36
15 वही, पृष्ठ 67
16 वही, तीसरा भाग, पृष्ठ 43
17 'तारा,' भाग तीसरा, पृष्ठ 49
18 वही, पृष्ठ 69
19 'रजिया,' किशोरी लाल गोस्वामी, पृष्ठ 118
20 रजिया बेगम,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 8
21 वही, भाग 2, पृष्ठ 59
22 'कनक कुसुम,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 11
23 वही, पृष्ठ 26
24 'लवगलता,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 17
25 वही, पृष्ठ 53
26 'हृदय हारिणी,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 43
27 वही, पृष्ठ 46

गया,[1] चूड़ियाँ नहीं पहनी,[2] किसी ने चार आँखें तो नहीं हुई,[3] लट्टू हो जाना,[4] महाराज इत्ता आग भभूका नहीं हो गए,[5] आँख न उठाने पावेगा,[6] यह सुनते ही वह काठ हो गए,[7] फूले अंगो न समाई,[8] पीर में पलंग क्यो बनता है,[9] पैर उखड़ गए।[10]

इस प्रकार के प्रयोग कलात्मक रूप से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं तथा प्रेमचन्दपूर्व इतिहास आश्रित कथा-पुस्तकों की एक उल्लेखनीय उपलब्धि है।

(ग) शैली—सामान्यत. प्रेमचन्दपूर्व हिन्दी उपन्यासो मे से कतिपय अपवादो को छोडकर अधिकतर उपन्यासो मे कथावाचको जैसी शैली को अपनाया गया है। यहा लेखक प्रत्येक बिन्दु पर पाठक के साथ सीधा सम्पर्क रखते हैं और आवश्यकता पड़ने पर उसे समझाते भी हैं। एक किस्सागो के समान वे सारी कहानी कहते हैं। कई बार यह भी अनुभव होता है कि महान् ऐतिहासिक पात्र लेखक के हाथ की कठपुतली हैं जिन्हें वह आवश्यकतानुसार नचाता है।

कथावाचको जैसी शैली—पं० किशोरीलाल गोस्वामी, गगाप्रसाद गुप्त, जयराम दास गुप्त, अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह, बाबूलाल जी सिंह आदि अधिकांश विवेच्य लेखको ने अपने उपन्यासो मे कथावाचको जैसी शैली का प्रयोग किया है।

उदाहरण स्वरूप गोस्वामी जी 'तारा' के दूसरे भाग मे सलावत व रंभा की बातचीत के बीच स्वय पाठको को स्थिति से परिचित करवाते है—'पाठको को समझना चाहिए कि यद्यपि रम्भा यह बात बखूबी जानती थी कि गुशलन मेरी ही शरारत से दारा के जरिए अल्बार खाँ के हाथ से मारी गई, पर उसने सलावत को भुलावे मे डालने के लिए ही इस ढग से यह बात कही थी।"[11] लगभग यही स्थिति हृदयहारिणी में भी उभरी है—'आप हमको 'कवि' कह कर ताना न मारिए। क्योकि यदि हम कवि होते तो फिर इतना रोना ही काहे का था। सो हम न तो कवि हैं और न ही काव्य-विशारद। तो क्या हैं? एक महा नीरस, अल्हड जडोन्मत्त पिशाचवत्।"[12]

1 'लाल कुंवर,' किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 6
2 'ताजमहल या फतहपुरी बेगम,' बाबू जयरामलाल रस्तौगी, पृष्ठ 3
3 वही, पृष्ठ 20
4 'वीर वीरागना,' जयराम दास गुप्त, पृष्ठ 13
5 वही, पृष्ठ 17
6 वही, पृष्ठ 32
7 वही, पृष्ठ 86
8 'जुझार तेजा,' महता लज्जाराम शर्मा, पृष्ठ 20
9 वही, पृष्ठ 49
10 वही, पृष्ठ 50
11 'तारा,' दूसरा भाग, किशोरीलाल गोस्वामी, पृष्ठ 27
12 'हृदय हारिणी या आदर्श रमणी,' पृष्ठ 74

अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह अपने 'वीर चूडामणि' मे कहते है, "पाठक! कलेजा थाम कर रण का भयानक चित्र देखें। मेवाडी सेना का हर हर महादेव और एकलिंग की जय का शब्द दशो-दिशाओ मे गूँज उठा।"[1] इसी प्रकार वे अन्त पुर का चित्रण भी एक कथावाचक के समान करते हैं—

"पाठक! जरा अन्त पुरी मे तो चलें, देखे क्या होता है? एक भारी कमरे मे जहाँ सफेद सगमरमर की जमीन और दीवार है, जिसमे विविध प्रकार के लता, पत्र, पशु, पक्षी और मनुष्यो की मूर्तियाँ खुदी हैं, खूब मोटा गलीचा बिछा है।"[2]

बाबू सिद्धनाथ सिंह अपने 'प्रण पालन' नामक उपन्यास के अन्त मे कहते है,—"प्रिय पाठक गण! मैं अपने इस क्षुद्र निबन्ध को यही पर समाप्त करता हूँ।"[3]

जयराम दास गुप्त ने 'काश्मीर पतन' नामक उपन्यास मे 'विकट परामर्श' नामक परिच्छेद के आरम्भ मे लिखा है—"पाठकगण! प्रसिद्ध डिल के पश्चिमी किनारे से लगभग एक मील की दूरी पर चश्माशाही की इमारत स्थित है, जिसकी बनावट निशातबाग से बहुत कुछ मिलती-जुलती है।"[4]

बाबू युगलकिशोर नारायण सिंह ने अपने 'राजपूत रमणी' मे भी इसी प्रकार की कथावाचको जैसी शैली का प्रयोग किया है। चौथे परिच्छेद के आरम्भ मे वे लिखते हैं—"यद्यपि चैत्र का मास वसत ऋतु होने के कारण सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है, तो भी राजपूताने मे दोपहर के समय सख्त गर्मी पडती है जिससे प्रतीत होता है कि मानो जेठ की लूक चल रही हो। इसी वक्त मैं अपने पाठको को रूपनगर मे ले चलता हूँ।"[5] पाँचवें परिच्छेद मे वे कहते हैं—"औरगजेब को रूपनगर के रास्ते मे छोड कर अपने पाठको को हम पुनः मेवाड ले चलेंगे। इस बार हम सीधे मेवाड की राजधानी उदयपुर मे पहुँचेंगे।"[6]

श्यामलाल गुप्त ने भी अपने 'रानी दुर्गावती' नामक उपन्यास मे इसी शैली का प्रयोग करते हुए कहा है—"पाठको! आपको यह जानने की अवश्य लालसा होगी कि दुर्गावती कौन है और अकबर बादशाह से उसका क्या सम्बन्ध है?" [7]

इस प्रकार लगभग सभी विवेच्य कृतियो मे लेखको ने कथावाचक जैसी शैली को अपनाया है। यह हिन्दी के आरम्भिक उपन्यासो की मुख्य शैली है।

सौन्दर्यपरक भाषा-शैली का भी कई उपन्यासो मे प्रयोग किया गया है, जिसका अध्ययन 'अलकृत भाषा' शीर्षक के अन्तर्गत किया जा चुका है।

1 'वीर चूडामणि,' पृष्ठ 17
2 वही, पृष्ठ 72-73
3 'प्रणपालन,' पृष्ठ 54
4 'काश्मीर पतन,' पृष्ठ 44
5 'राजपूत रमणी,' पृष्ठ 21
6 वही, पृष्ठ 33
7 'रानी दुर्गावती,' पृष्ठ 6

उपसंहार

अतत. हमारे इस सपूर्ण अध्ययन के उपरान्त एक महाप्रश्न उभरता है—"इस युग मे इतिहास चेतना का स्वरूप क्या था ?"

दूसरा केन्द्रीय प्रश्न है—"लेखको का युग तथा उनके दृष्टिकोण क्या थे ?"

इन दोनो ध्रुवातो को स्पष्ट करके ही, आगे भी हम इतिहास-विषयक कलात्मक धारणाओ को अधिक स्पष्ट रूप मे समझ सकते हैं।

प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो के अनेक रूपेण अध्ययन के पश्चात् स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि विवेच्य लेखको द्वारा उनके युग में उपलब्ध अग्रेज इतिहासकारो एव पुरातत्त्वविदो द्वारा उपलब्ध आधुनिकतम् जानकारी तथा ज्ञान का प्रयोग किया गया था तथापि उनकी मूल इतिहास चेतना मध्ययुगीन एव आदर्शोन्मुखी हिन्दू मूल्यो वाली है। उनकी यह भारतीय इतिहास-चेतना कालचक्र, नियतिचक्र, कर्मचक्र एव पुरुषार्थचक्र के चार चक्रो तथा धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के चतुवर्ग मे जीवन एव इतिहास की अर्थवत्ता द्वारा अपना स्वरूप प्राप्त करती है। यहाँ काल के अनुक्रमाकित स्वरूप (Chronological Form) के अन्तर्गत आरम्भ, प्रयत्न, प्रत्याशा, नियताप्ति तथा फलागम की पाच स्थितियो को भी स्वीकार किया गया है। इस प्रकार की भारतीय इतिहास-धारणाओ को विवेच्य ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो मे प्रयुक्त किया गया है।

निष्कर्ष रूप मे इस इतिहास-चेतना के त्रिकोण का विन्यास चार चक्र, चतुवर्ग तथा पचावस्थाएँ करती हैं।

विवेच्य कृतियो मे नायक-पूजा की धारणा एक ही महान् व्यक्ति द्वारा ऐतिहासिक घटनाओ के नियोजित किए जाने की धारणा से जुड कर उभरी है। वे लेखकगण मानव की स्वच्छन्द इच्छा के इतिहास-सिद्धान्त मे विश्वास करते थे, परन्तु स्वेच्छा (फ्रीविल) की यह धारणा यदाकदा नियतिवाद अथवा निश्चयवाद की इतिहास-धारणा की पूरक के रूप मे उभर कर भी आई है।

इस प्रकार इन ऐतिहासिक उपन्यासो तथा ऐतिहासिक रोमासो मे आधुनिक तथा प्राचीन भारतीय इतिहास-धारणाओं का सम्मिलन उपलब्ध होता है।

साम्प्रदायिकता तथा हिन्दू राष्ट्रीयता की धारणा द्वारा अनुप्रेरित होकर इन लेखकों ने भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण एव पुन निर्माण करते समय उनकी पुनर्व्याख्याएँ भी प्रस्तुत की हैं। इसके अन्तर्गत वे प्रत्येक बुराई के मूल मे मुसलमानों को देखते हैं। बहुधा मुसलमान शासको को (ऐतिहासिक उपन्यासों में) ऐतिहासिक आततायी तथा (ऐतिहासिक रोमासो मे) अतिदानवीय रूप में प्रस्तुत किया गया है।

दूसरा केन्द्रीय प्रश्न लेखको के युग तथा उनके दृष्टिकोण का रहा है।

प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक कथाकारो का युग सास्कृतिक पुनर्जागरण तथा साम्प्रदायिकता का युग था। सास्कृतिक एव सामाजिक धरातलो पर भारत के स्वर्णिम अतीत की पुन स्थापना के पक्षपाती होने पर भी विवेच्य लेखक अग्रेज विरोधी नही थे। उनकी मूल चेतना मुसलमान-विरोध पर आधारित थी। इसी ने उनके समस्त जीवन-दर्शन को गहराई तक प्रभावित किया जो उनके उपन्यासो मे हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष के रूप मे उभर कर आया है।

परवर्ती लेखको पर प्रभाव—उपर्युक्त दो केन्द्रीय ध्रुव रहे है। इसके बाद इनमे कालानुरूप परिवर्तन होता गया। सामान्यत अधिकाश विद्वानो ने हिन्दी के इन आरम्भिक ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो को कोई विशेष महत्त्व प्रदान नही किया है। हमारा मत है कि पडित किशोरीलाल गोस्वामी, पडित बलदेवप्रसाद मिश्र, व्रजनन्दन सहाय, मिश्र बधुओ, अखौरी कृष्ण प्रकाशसिंह तथा रामजीवन नागर आदि ने ऐतिहासिक उपन्यासो की रचना करके उस पृष्ठभूमि का निर्माण किया जिस पर उनके परवर्ती लेखको ने प्रौढतर ऐतिहासिक उपन्यासो एव रोमासो की रचना की।

हिन्दू-मुस्लिम सघर्ष वह महत्त्वपूर्ण इतिहास-विचार है जिसके बिना भारतीय मध्ययुगो का पुन प्रस्तुतिकरण अथवा पुनर्निर्माण नही किया जा सकता। यही कारण है कि प्रेमचन्दपूर्व की इतिहास-कथाकृतियो की इस प्रवृत्ति का परवर्ती कलाकारो ने भी अपनी कृतियो मे प्रयोग किया है।

जनता से हटकर अन्त पुरो तथा राजसभाओ का चित्रण करने की प्रवृत्ति को परवर्ती लेखको ने आशिक रूप मे ही अपनाया है। यही स्थिति इतिहास से रोमास की ओर जाने की प्रवृत्ति की भी है। काल की धार्मिक-धारणा तथा हिन्दू राष्ट्रीयता की धारणा भी परवर्ती लेखकों द्वारा मूल रूढि मे ग्रहण नही की गई।

हिन्दी के परवर्ती ऐतिहासिक उपन्यासकारों मे वृदावनलाल वर्मा, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी राहुल साकृत्यायन, रांगेय राघव तथा यशपाल आदि उल्लेखनीय है।

वृन्दावनलाल वर्मा ने गहन इतिहास-खोजो तथा प्रौढ भौगोलिक अध्ययन के पश्चात् ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमासो का प्रणयन किया है। उनका मूल प्रेरणा-स्रोत अग्रेज-विरोधी था जबकि किशोरीलाल गोस्वामी अग्रेज भक्ति का रवैया अपनाते हैं। इसी प्रकार गोस्वामी जी जातीयता तथा वर्णाश्रम व्यवस्या के प्रबल पोषक थे जबकि वर्माजी ने इन बधनों को तोडने का भी प्रयास किया है। वर्माजी ने अपनी कृतियो मे लोक तत्त्वो का जो प्रयोग प्रस्तुत किया है, उसे मु शी देवीप्रसाद की 'रूठीरानी' तथा चन्द्रशेखर पाठक के 'भीमसिंह' मे प्रयुक्त लोक तत्त्वो की पद्धति के विकसित रूप में देखा जा सकता है।

सामान्यत सभी विवेच्य लेखक तथा विशेषत पडित किशोरीलाल गोस्वामी जहाँ सौन्दर्य तथा नखशिख वर्णन मे अधिक रुचि प्रदर्शित करते हैं वहीं आचार्य द्विवेदी 'बाणभट्ट की आत्मकथा' मे सस्कृति के विशद चित्रण प्रस्तुत करते हैं। तथापि पडित बलदेव प्रसाद मिश्र द्वारा 'पानीपत' मे वर्णित भारतीय सस्कृति तथा हिन्दू धर्म की विशद व्याख्याएँ आचार्य द्विवेदी की सास्कृतिक व्याख्याओ के पूर्ववर्ती होने का आभास देती हैं।

राहुल साकृत्यायन, यशपाल तथा रागेय राघव द्वारा अपने ऐतिहासिक उपन्यासो मे मार्क्सवादी दृष्टिकोण से इतिहास की पुनर्व्याख्या किया जाना प्रेमचन्द-पूर्व काल के ऐतिहासिक उपन्यासो से एकदम कट जाता है क्योकि उस कालखण्ड के ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अतीत का अध्ययन करते समय आर्थिक शक्तियो द्वारा सामाजिक सम्बन्धो के प्रभावित होने को दृष्टिगत रखते हुए अतीत का चित्रण नही किया।

इसी उपक्रम मे सामान्यत. इस कालखण्ड की ऐतिहासिक कथाकृतियो की लगभग उपेक्षा ही की गई है अथवा उनका आशिक स्वरूप ही उभारा गया है। अत हमारा विश्वास है कि प्रेमचन्दपूर्व ऐतिहासिक उपन्यासो एव ऐतिहासिक रोमानों को अधिक वैज्ञानिक पद्धति से सर्वांगीण प्रकाशित करने का हमारा यह प्रयास अब एक सम्पूर्ण सस्कृति को भी अधिकाधिक प्रकाशित कर सकेगा। अस्तु।

परिशिष्ट

चुनी हुई पुस्तको की सूची

क स	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	
(क)	मूल उपन्यास		
1	हृदय हारिणी वा आदर्श रमणी	किशोरीलाल गोस्वामी	1890
2	लवगलता वा आदर्श वाला	,,	,,
3	गुलवहार वा आदर्श भ्रातृ-स्नेह	,,	1902
4	तारा व क्षत्रकुल कमलिनी	,,	1902 हित-चितक प्रेस, काशी
5	कनक कुसुम वा मस्तानी	,,	1904, वृन्दावन
6	हीरावाई वा वेहयायी का वोरका	,,	1904, वनारस
7	सुलताना रजिया वेगम वा रग महल मे हलाहल	,,	1904 ,,
8	मल्लिका देवी वा वग सरोजिनी	,,	1905, काशी
9	लखनऊ की कब्र वा शाही महल सरा	,,	1906, काशी
10	सोना और सुगन्ध वा पन्ना वाई	,,	1909, वृन्दावन
11	लालकुवर वा शाही रगमहल	,,	1909, इलाहवाद
12	नूरजहाँ वा ससार सुन्दरी	गगाप्रसाद गुप्त	1902, काशी
13	पूना मे हलचल वा वनवासी कुमार	,,	1903, काशी
14	वीरपत्नी	,,	,, ,,
15	कुवरसिंह सेनापति	,,	,, ,,
16	वीर जयमल वा कृष्णकाता	,,	,, ,,
17	हम्मीर	,,	,, ,,
18	काश्मीर पतन	जयरामदास गुप्त	1907, काशी
19	किशोरी वा वीर वाला	,,	,, ,,
20	मायारानी	,,	1908, काशी
21	नवाबी परिस्तान वा वाजिद अलीशाह	,,	,, ,,
22	कलावती	,,	1909, ,,
23	प्रभात कुमारी	,,	,, ,,
24.	वीर वीरागना वा आदर्श ललना	,,	,, ,,
25.	रानी पन्ना वा राजललना	,,	1910, ,,
26	वीर नारायण	हरिचरणसिंह चौहान	1895, मथुरा

27	जया	बाबू कार्तिकप्रसाद खत्री	1897, काशी
28	अनारकली	बलदेवप्रसाद मिश्र	1900, मुरादाबाद
29	बारहवीं सदी का वीर जगदेव परमार	रामजीवन नागर	1912, बम्बई
30	पृथ्वीराज चौहान	जयन्तीप्रसाद उपाध्याय	1901, मुरादाबाद
31	कोटा रानी	ब्रजविहारी सिंह	1902, बम्बई
32	पानीपत	पं० बलदेवप्रसाद मिश्र	1902, कलकत्ता
33	पृथ्वीराज चौहान	"	" "
34	वीर बाला	बाबूलाल जी सिंह	1903, बम्बई
35	नूरजहाँ वा जहाँगीर बेगम	पं० मथुराप्रसाद	1905, काशी
36	पद्मिनी	गिरिजानन्दन तिवारी	1905, "
37	सौतेली माँ या अन्तिम युवराज	बाबू जयरामलाल रस्तोगी	1906, काशी
38.	रूठी रानी	मुंशीदेवी प्रसाद	1909, कलकत्ता
39	ताजमहल या फतहपुरी बेगम	बाबू जयरामलाल रस्तोगी	1907 भागलपुर
40	महाराणा प्रतापसिंह की वीरता	हरिदास माणक	1907, बनारस
41	रणवीर	बाबू सुशीलाल खत्री	1909, काशी
42	सौन्दर्य कुसुम वा महाराष्ट्र का उदय	ठा० बलभद्रसिंह	1909, काशी
43	वीरांगना	पं० रामनरेश त्रिपाठी	1911, फतहपुर
44	जयश्री वा वीर बालिका	ठा० बलभद्रसिंह	1911, काशी
45	सौन्दय प्रभा वा अद्भुत अँगूठी	"	1911, कलकत्ता
46	महारानी पद्मिनी	वसन्त लाल शर्मा	1912, आगरा
47	यमुना बाई	स्वामी अनुभवानन्द सरस्वती	1912, अलीगढ़
48	मेवाड़ का उद्धारकर्त्ता	माणिक बन्धु	1913, काशी
49	महाराष्ट्र वीर	बाबू रामप्रताप गुप्त	1913, कलकत्ता
50	जुझार तेजा	मेहता लज्जाराम शर्मा	1914, नागरी प्रचारिणी सभा
51	रजिया बेगम	बाबू व्रजनन्दन सहाय	1915, हिन्दी साहित्य पुस्तक
52	प्रण पालन	सिद्धनाथ सिंह	1915, काशी
53	वीर चूड़ामणि	मनोरी कृष्णप्रकाश	1915, पटना
54	राजपूत रमणी	बाबू युगलकिशोर नारायणसिंह	1916, काशी
55	सारबाँन	व्रजनन्दन सहाय	1916, काशी

56	वीरमणि	मिश्र बन्धु	1917, काशी
57	रानी दुर्गावती	बाबू श्यामलाल गुप्त	1917, ,,

(ख) आलोचनात्मक ग्रन्थ

1	इतिहास दर्शन	डॉ० बुद्धप्रकाश	
2	सस्कृत साहित्य का इतिहास	ए बी कीथ	डॉ० मगलदेव का अनुवाद
3	मध्यकालीन हिन्दी प्रबन्ध काव्यो मे कथानक रूढिया	डॉ० ब्रजविलास श्रीवास्तव	1968, वाराणसी
4	हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास	डॉ० कमलकुमारी जौहरी	1965, कानपुर
5	रामकृष्ण परमहस	रोमा रोला	1968, इलाहाबाद
6	बगला साहित्य का सक्षिप्त इतिहास	डॉ० सत्येन्द्रप्रकाश	1961, लखनऊ
7	आधुनिक साहित्य	आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी	2013, वि०
8	नया साहित्य, नए प्रश्न	,,	
9	ऐतिहासिक उपन्यास प्रकृति एव स्वरूप	डॉ० गोविन्दजी	इलाहाबाद
10	हिन्दी उपन्यास	शिवनारायण श्रीवास्तव	वाराणसी
11	आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास	श्रीकृष्णलाल	1952, प्रयाग
12	आधुनिक हिन्दी साहित्य पर विचार	डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी	दिल्ली
13	उपन्यास कला	विनोदशकर व्यास	1950, बनारस
14	काव्य के रूप	गुलाबराय	आगरा
15	कुछ विचार	प्रेमचन्द	1949, बनारस
16	हिन्दी साहित्य का आदिकाल	हजारीप्रसाद द्विवेदी	1952, पटना
17	हिन्दी साहित्य का इतिहास	रामचन्द्र शुक्ल	काशी
18	हिन्दी उपन्यास और साहित्य	ब्रजरत्नदास	2013, बनारस
19	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	त्रिभुवनसिंह	2012 ,,
20	हिन्दी कथा साहित्य	गगाप्रसाद पाण्डेय	2008, इलाहाबाद
21.	हिन्दी गद्य के विविध साहित्य रूपो के उद्भव का विकास	बलवन्तकोतमिरे	1958, ,,
22	साहित्य समीक्षा	सीताराम चतुर्वेदी	2010, काशी
23.	साहित्यालोचन	श्यामसुन्दरदास	प्रयाग
24	प्रेमचन्द . साहित्यिक विवेचन	नन्ददुलारे वाजपेयी	

25.	भारतेन्दु युग	रामविलास शर्मा	1951, आगरा
26	पूर्व मध्यकालीन भारत	रघुवीरसिंह	1988, प्रयाग
27	साहित्य का मर्म	हजारीप्रसाद द्विवेदी	
28	सस्कृत साहित्य मे रोमाटिक प्रवृत्तियाँ		
29	राजस्थान का इतिहास	कर्नल जेम्स टॉड (अ० केशवकुमार)	इलाहाबाद
30	हिन्दी साहित्य कोष	धीरेन्द्र वर्मा	वाराणसी स० 2020

(ग) पत्रिकाएँ

1 नागरी प्रचारिणी पत्रिका
2 साहित्य सन्देश का विशेषाक, वृन्दावनलाल वर्मा।
3 आलोचना का उपन्यास विशेषाक।

चुनी हुई पुस्तको की सूची (अंग्रेजी माध्यम में)

(क) इतिहास एव इतिहास दर्शन सम्बन्धी सहायक ग्रन्थ

1	*Mans Meyerhoff*	The Philosophy of History in Our Time
2	*V V Joshi*	The Problem of History and Historiography, 1947, Allahabad
3	*E H Carr*	What is History
4	*A L Rouse*	The Use of History, London
5	*Patrick Gardiner (Ed)*	. Theories of History, London
6	*Jane Ellen Harrison*	Ancient Art and Ritual, Oxford University Press, London
7	*C H Philips (Ed)*	. Historians of India, Pakistan and Ceylon, London
8	*Marx*	Critique of Political Economy
9	*Collingwood*	The Idea of History
10	*M Winternitz*	A History of Indian Literature
11	*B Croce*	History as the Story of Liberty, 1941
12	*Acton*	Home and Foreign Review, 1863
13	*H P R Finberg (Ed)*	Approaches to History
14	*J S Grewal*	The Medieval Indian State and some British Historians, Ph D Thesis of London University
15	*Hegel*	Lectures on the Philosophy of History, 1884
16	*A J Toynbee*	A Study of History, Part I
17	*Pathak*	Ancient Historians of India
18		The Cambridge History of India
19	*F E Pargitor*	Ancient Indian Historical Tradition, London, 1922
20	*Dr Tara Chand*	: History of Freedom Movement in India, Vol II, 1967
21	*West Geoffery*	Life of Annie Besant, London, 1929
22	*Romila Thapar*	, Communalism and Ancient Indian History.
23	*K K Dutta*	Renaissance, Nationalism and Social changes in Modern India, Calcutta, 1965
24	*Vincent A Smith*	The Oxford Students History of India

(ख) कथा साहित्य सबधी आलोचनात्मक और सहायक-ग्रन्थ

25	*David Daiches*	Literary Essays, London, 1956
26	*Abercrombee*	Romanticism
27	*R A Scott James*	Making of Literature
28	*Clara Reve*	. Introduction to the Progress of Romance
29	*Karl Backson and Arther Canz*	A Readers Guide to Literary Terms London, 1961
30	*S Diana Neil*	: A Short History of English Novel, 1951, London

31. *Ben Rau Redman* — A Treatise on Novel, 1930, New York
32. *W H Hudson* — An Introduction to the Study of Literature London
33. *E M Forster* — Aspects of Novel, London
34. *Ernest A Baker* — The History of English Novel, 1950, New York
35. *Wilbur L Cross* — The Development of the English Novel 1953, New York
36. *Percy Lubbonk* — The Craft of Fiction, 1921, London
37. *Ben Ray Rermad* — . The Modern English Novel, 1930 New York
38. *J W Beach* — The Twentieth Century Novels
39. *Cross* — English Novel
40. *Stoddard* — . Evolution of English Novels
41. *J Muller* — Modern Fiction
42. *A W Mendilow* — Time and Novel
43. *George Lucaks* — The Historical Novel
44. *P Penzoldt* — . Supernatural in Fiction
45. *Alex Comfert* — Novel and Our Time